...a Samaj Foundation Chennai

अग्निशिखा Vol. 33 2002-3

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

130717

Stock Verification-2024

Stock Verification-2024

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

130717

अग्निशिखा

अगस्त २००२ अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

सन्देश	श्रीअरविन्द	१
'सम्पादकीय' : भगवान् की चिट्ठी	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		५
श्रीअरविन्द प्रणाम !	छोटेनारायण शर्मा	८
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष		
युद्ध और राजनीति	नीरदवरण	९
श्रीअरविन्द के वचन		१६
हमारे महाराजा साहब	रवीन्द्र	२१
एक अनुभूति (पाण्डिचेरी आश्रम दर्शन)	छाया श्रीवास्तव	२८
श्रीमां के उत्तर		३१
सोसायटी समाचार		३७

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

प्रबुद्ध मन का कार्य

सत्ता को भगवान् तक ले जाने के लिये यह बहुत शक्तिशाली है और प्रगति के लिये बहुत उपयोगी हो सकता है।

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

सन्देश	श्रीमां	१
'सम्पादकीय' : आध्यात्मिक क्रान्ति (१)	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		५
आधुनिक भगीरथ	रवीन्द्र	८
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष		
युद्ध और राजनीति	नीरदवरण	१३
पाण्डिचेरी की सड़कें (कविता)	छाया श्रीवास्तव	२०
व्यर्थ में जीवन न गंवाओ	'श्रीमातृवाणी' खण्ड ७ से	२३
चैत्य चेतना को बनाये रखना	श्रीअरविन्द	२७
एकाग्रता	'श्रीमातृवाणी' खण्ड ७ से	३०
चेतना की स्थिति	श्रीअरविन्द	३४
सोसायटी समाचार		३५
Notice for Annual General Meeting		३७

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

मानसिक निष्कपटता

व्यक्ति दूसरों को या अपने-आपको छलने की कोशिश नहीं करता।

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

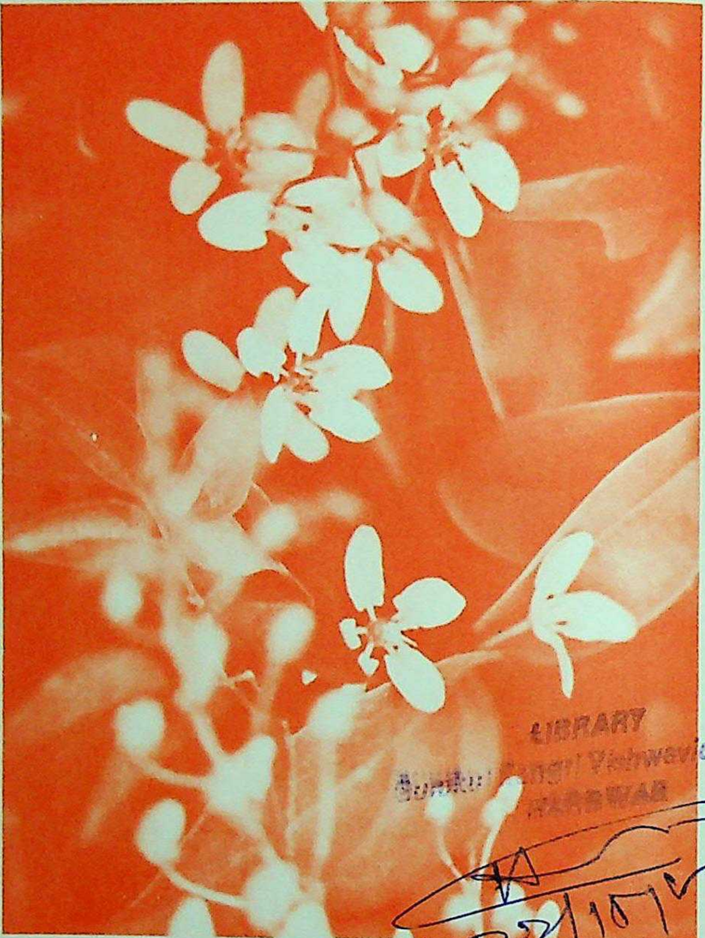

LIBRARY
Gurukul Kangri Vishwavidyalaya
HARDWAR

अग्निशिखा

सितम्बर २००३ अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

सन्देश	श्रीमां	१
'सम्पादकीय' : आध्यात्मिक क्रान्ति (२)	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		५
जाग्रत या स्वप्न ?	रवीन्द्र	८
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष		
पांच स्वप्न	नीरदवरण	१२
माताजी के उत्तर		१७
भगवान् के लिये प्रेम	श्रीअरविन्द	२८
एक मुख्याध्यापक के नाम पत्र		३३
जातक कथा		३४
प्रकृति की पकड़	श्रीअरविन्द	३६
सोसायटी समाचार		३७

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

तपस्या

ऐसा अनुशासन जो भागवत उपलब्धि की ओर ले जाता है।

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

33 3

LIBRARY

अग्निशिखा

अक्तूबर २००३ अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निशिखा नवम्बर २००२ वर्ष ३२, अंक ४, पूर्णांक ३८८

विषय-सूची

सन्देश	श्रीअरविन्द	१
'सम्पादकीय' : 'अपना हाथ जगन्नाथ'	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		५
वानर की दृष्टि से	रवीन्द्र	९
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष		
सावित्री	नीरदवरण	१३
नींद	श्रीअरविन्द	२१
महत्त्वाकांक्षा (१)	'श्रीमातृवाणी' से	२५
'ऋषिवर बोले' : कुछ सीख-भरी कहानियां (१)		२८
२ अप्रैल, १९७२ की वार्ता	श्रीमां	३२
खुले रहो	श्रीअरविन्द	३३
सच्ची भेंट	'श्रीमातृवाणी' से	३५
सोसायटी समाचार		३६

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

शुद्धीकृत स्वर्ण

भागवत सेवा में निहित यह अपनी शुद्धि पाता है।

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

33
5
Gurukul Kangri Vishwavidyalaya HARDWAR
27/11/03

अग्निशिखा

नवम्बर २००३ अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

सन्देश	श्रीमां	१
'सम्पादकीय' : कृपा-दृष्टि	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		५
भय पर विजय	रवीन्द्र	९
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष		
सावित्री	नीरदवरण	१४
सुनहरा नियम	नलिनीकान्त गुप्त	१७
महत्त्वाकांक्षा (२)	'श्रीमातृवाणी' खण्ड ५ से	२२
'ऋषिवर बोले' : कुछ सीख-भरी कहानियां (२)		२६
श्रद्धा, अभीप्सा, समर्पण	श्रीअरविन्द	३०
सोसायटी समाचार		३६

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

अभिव्यक्ति का प्रसारण

भागवत अभिव्यक्ति अधिकाधिक प्रसारित होती है।

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

33 5

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

LIBRARY Gurukul Kangri Vishwavidyalaya HARDWAR

27/11/03

अग्निशिखा

दिसम्बर २००३ अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

सन्देश	श्रीमां	१
'सम्पादकीय' : हमारा धर्म	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		५
आह, यह कापी!	रवीन्द्र	८
शारीरिक ऊर्जा	नलिनीकान्त गुप्त	११
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष		
परिचारक गण	नीरदवरण	१४
प्रश्नोत्तर	श्रीमां	२१
बच्चे को सिखाना चाहिये	'श्रीमातृवाणी' खण्ड ४	२५
कर्म	श्रीअरविन्द	३१
सोसायटी समाचार		३५

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

अतिमानसिक ज्योति के लिये भौतिक में अभीप्सा

गुच्छेदार, अध्यवसायी, आग्रही, व्यवस्थित और क्रमबद्ध

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी ६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

LIBRARY
Gurukul Kangri Vishwavidyalaya
HARIDWAR

33
6
27/11/03

अग्निशिखा

जनवरी २००३ अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निशिखा फरवरी २००३ वर्ष ३३, अंक ७, पूर्णांक ३९१

विषय-सूची

सन्देश	श्रीमां	१
'सम्पादकीय' : शुभ अवसर	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		८
श्रीमां	श्रीअरविन्द	१२
थोड़ी देर बाद का रास्ता	श्रीमां	१३
जापान की स्त्रियों से	श्रीमां	१८
बच्चों को पालना	श्रीमां	२१
भारत	श्रीमां	२३
योग	श्रीमां	२६
परिपूर्णताएं	श्रीमां	३१

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

स्पष्टवादिता

परिणाम की परवाह किये बिना जो कहना है
सचाई के साथ कहती है

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी–६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी

वका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

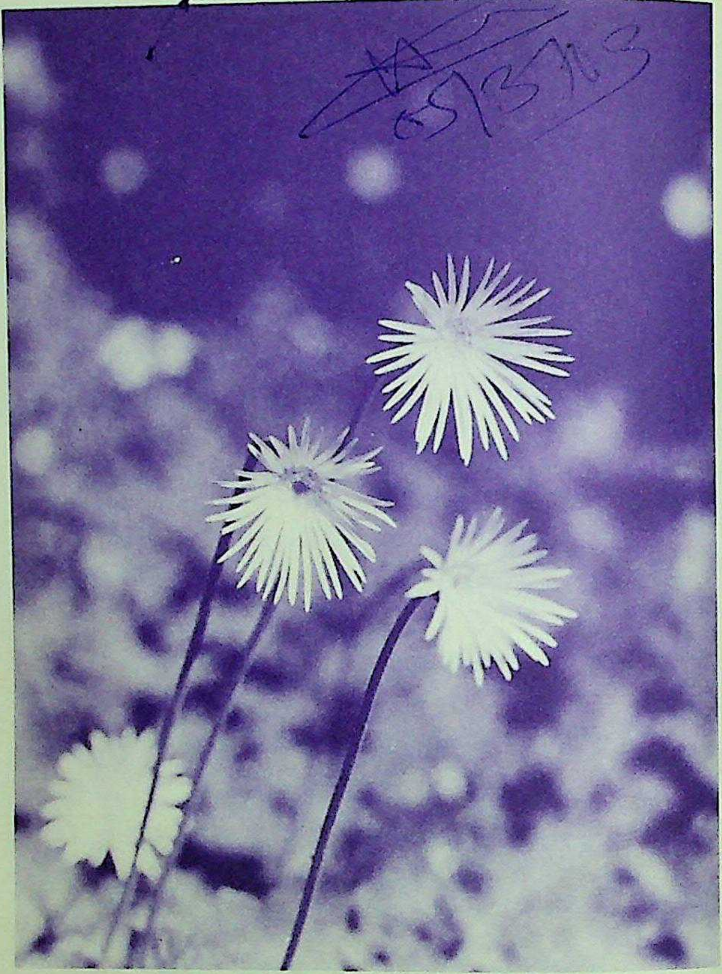

अग्निशिखा

फरवरी २००३   अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

सन्देश	श्रीमां	१
'सम्पादकीय' : २४ नवम्बर १९२६ की शाम	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		५
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष	नीरदवरण	९
परिचारक गण		
काश मैंने ...	रवीन्द्र	१७
भगवान् को सब कुछ करने दो	श्रीमातृवाणी खण्ड १०	२०
नर और नारी	श्रीमां	२२
भारत की नियति में परम श्रद्धा	श्रीमां	२४
मृत्यु का भय	श्रीअरविन्द	२७
माताजी के कुछ उत्तर	श्रीमां	३१
भारत का मिशन	श्रीअरविन्द	३५
गपशप तुम्हें नीचे गिराता है	श्रीमां	३६
सीख	श्रीमां	३७

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

ऐश्वर्य

बहुत ही आकर्षक लेकिन सावधान रहना
वह कटीला होता है।

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी–६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

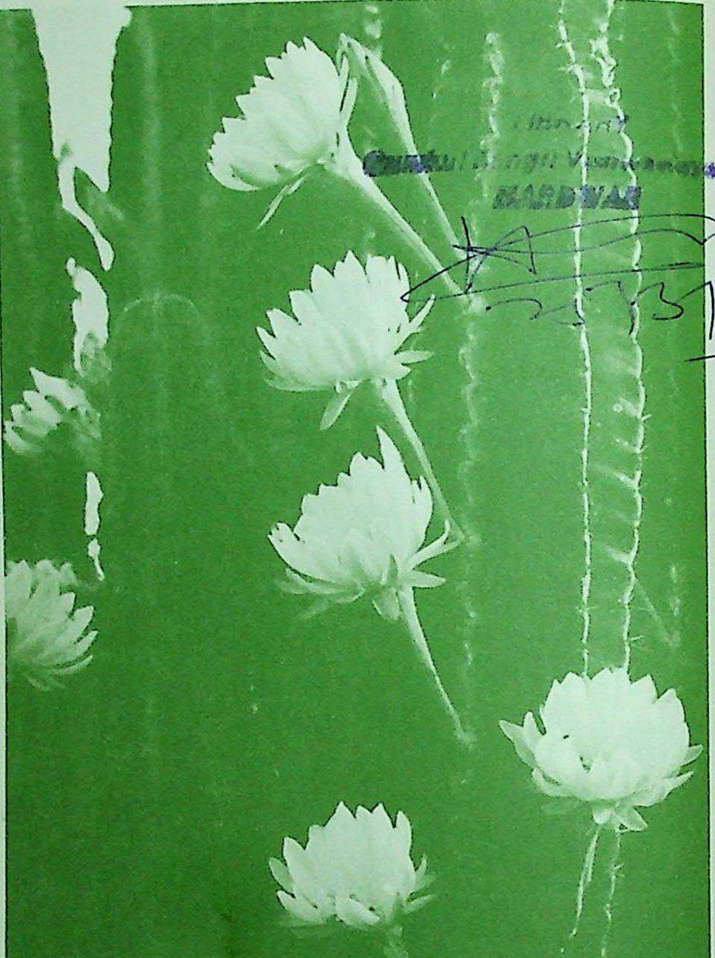

अग्निशिखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मार्च २००३ अखिल भारतीय पत्रिका

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

सन्देश — श्रीअरविन्द — १
'सम्पादकीय' : अनोखी दुर्गा-पूजा — अनुबेन — २
दैनन्दिनी — ५
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष — नीरदवरण — ८
परिचारक गण
आध्यात्मिक जीवन के लिये व्यावहारिक पथ-प्रदर्शन
(श्रीमां के वचन)
आरंभ कैसे किया जाये — १३
मन में शांति कैसे स्थापित की जाये — १६
एकाग्रता को विकसित कैसे किया जाये — १९
अपने निश्चय को दृढ़ कैसे बनाया जाये — २६
अच्छी तरह किस भांति सोया जाये — २९
सोसायटी समाचार — ३४

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

आध्यात्मिक प्रकाश की ओर मुड़ी हुई चेतना

हिन्दी — सूर्यमुखी

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी — ६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी - २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निशिखा

अप्रैल २००३ अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

सन्देश	श्रीमां	१
'सम्पादकीय' : अर्घ्य	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		५
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष	नीरदवरण	९
परिचारक गण		
अपनी समझ को विस्तृत कैसे किया जाये		
एक प्रार्थना	श्रीमां	१५
अन्य आयाम से समझना	श्रीमां	१५
प्रभु की उपस्थिति	श्रीमां	२०
'बुद्धि' और उसकी शुद्धि का अर्थ	श्रीअरविन्द	२५
बुद्धि में अशुद्धि के कारण और उनकी शुद्धि	श्रीअरविन्द	२८
राष्ट्रीय विद्यालय के विद्यार्थियों को परामर्श	श्रीअरविन्द	३२
सोच की परम्परागत लीक से बाहर निकलना	श्रीमां	३५

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

प्राण-ऊर्जा

शक्तिशाली और बहुविध, यह सभी आवश्यकताओं को पूरा करती है।

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी — ६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी - २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

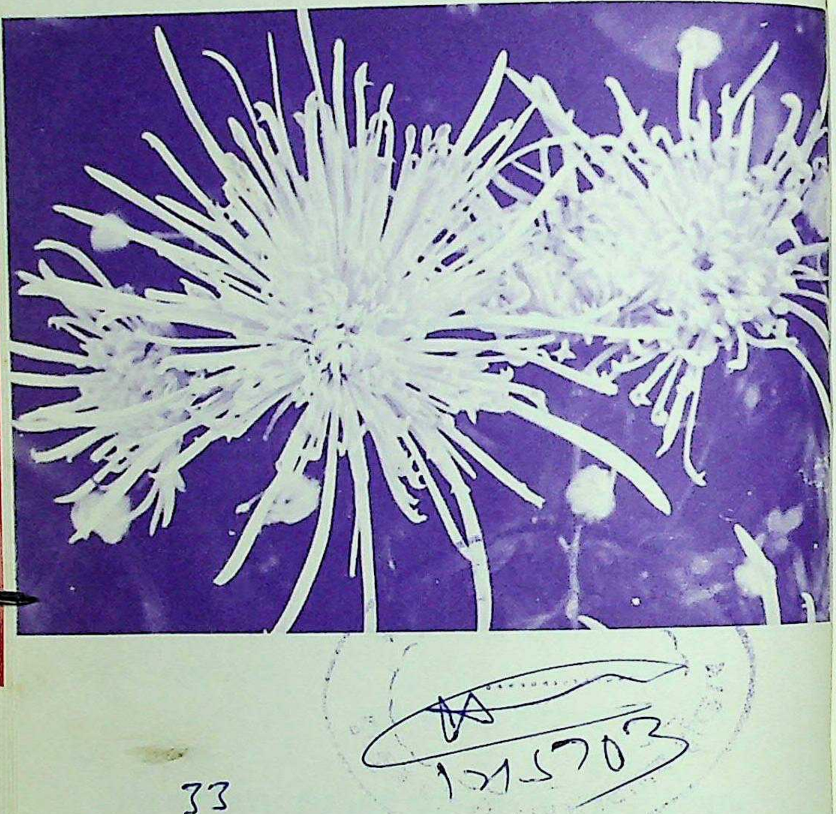

121-5703

33
10

अग्निशिखा

मई २००३ अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अग्निशिखा जून २००३ वर्ष ३३, अक ११, पूर्णांक ३९५

विषय-सूची

सन्देश	श्रीमां	१
'सम्पादकीय' : सरल उपाय	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष	नीरदवरण	९
परिचारक गण		
श्रीअरविन्द-वाणी :		
संसदीय शासन-प्रणाली के बारे में		१२
ज्योतिष और अन्तर्दृष्टि की भविष्यवाणियां — भाग्य और कर्मफल		१७
सुख की खोज		२१
प्रेम की संभावनाएं		२५
प्रेम और काम-वासना		३१
सोसायटी समाचार		३७

मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमां द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ

व्यवस्था

किसी चीज को उसके ठीक स्थान पर रखना
उसे उसका सच्चा मूल्य देना है।

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी — ६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पांडिचेरी - २
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

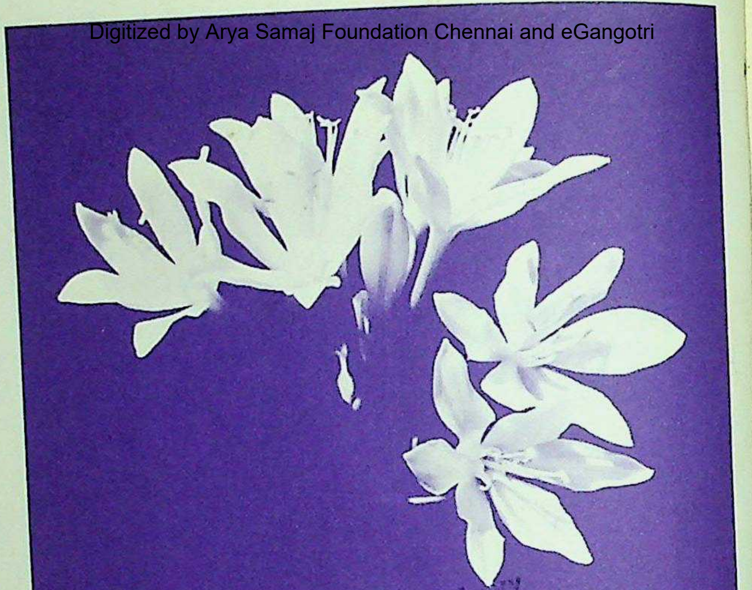

33
12

अग्निशिखा

जुलाई २००३

अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

हर एक की तरह तुम्हारी प्रकृति भी अधिकतर अहंकार-केंद्रित रही है और प्रायः सभी के लिये साधना के पहले चरण अहंकार-केंद्रित रहे हैं। इसमें सदा मुख्य विचार अपनी साधना, अपना प्रयास, अपना निजी विकास, पूर्णता और सिद्धि का होता है। अधिकतर लोगों के लिये यह अनिवार्य है क्योंकि उस व्यक्तिगत प्रयास के बिना पहले जरूरी परिवर्तन लाने के लिये पर्याप्त इच्छा या प्रोत्साहन न होगा। लेकिन इनमें से कोई भी चीज—विकास, पूर्णता या सिद्धि—पूर्णता की किसी मात्रा तक या अंतिम अवस्था तक तब तक नहीं पहुंच सकती जब तक यह अहंकार-केंद्रित वृत्ति, भागवत केंद्रित वृत्ति में न बदल जाये, जब तक कि वह दिव्य चेतना का विकास, उसकी पूर्णता और सिद्धि न बन जाये, इस शरीर में उसकी इच्छा और उसका यंत्र-विन्यास न बन जाये—और यह तभी हो सकता है जब ये चीजें गौण हो जायें और भगवान् के लिये भक्ति, भगवान् के लिये प्रेम, हृदय और शरीर में भगवान् के साथ ऐक्य एकमात्र लक्ष्य न बन जाये—बाकी सब कुछ दिव्य शक्ति द्वारा चरितार्थ होता है।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सम्पादकीय' :

भगवान् की चिट्ठी

मेरे पास एक चिट्ठी आयी। उसमें मां अपनी बेटी की शिकायत कर रही थीं। वे लिखती हैं, "मैं घर में कुछ नहीं कर पाती। मेरी कॉलिज जानेवाली लड़की हर चीज में कुछ-न-कुछ नुक्स निकालती है। अगर मैं उससे पूछूं कि "यह कपड़ा कल के लिये रखा है ?" तो बस, आग बबूला हो जाती है। सारे दिन मुंह फुलाये रहती है। मैं बाहर जाना चाहूं तो पूछेगी कि मैं कहां जा रही हूं। अगर उसे पसंद न हो तो कुछ न कुछ बखेड़ा खड़ा कर देगी ताकि मैं जा न पाऊं। नौकरों से कुछ कहूं तो भी वह उस दिन अबोला व्रत रखेगी क्योंकि वह समझती है कि घर उसका है और उसे सबके ऊपर हुकुम चलाने का अधिकार है। अब हाल ऐसा है कि मैं कुछ कहूं तो नौकर झट कह देते हैं, "छोटी बीबी से पूछूंगा।" मेरा जीवन असंभव हो गया है। मुझे ऐसा लगता है मानों मैं जेल में हूं। उसके डैडी के जाने के बाद ही वह उद्दण्ड बन गयी और अब तो बेटी न रहकर मेरी अफसर बन गयी है। कोई मिलने आये और उसे वह पसंद न हो तो कह देगी, "मां घर में नहीं हैं।" मैं उसे डांटना-धमकाना नहीं चाहती। समझा-समझा कर थक गयी, मेरी सारी बात सुनकर वह यह कहती है, "मां, तुम नहीं समझतीं। जमाना बदल गया है। मैं समझती हूं, इसलिये तुम्हारी रक्षा करती हूं।" अब आप ही बताइये मैं क्या करूं ? असल में उनके निधन के बाद मुझे ऐसा लग रहा था कि मैं लुट गयी। मुझे कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या करूं, क्या न करूं। समाचार सुनकर नातेदार-रिश्तेदार आये थे। उन दिनों मेरी बहन और बेटी ने घर संभाला था। बहन चली गयी। अब बेटी मेरी मुसीबत कर रही है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़ कर मैं भी चौंक गयी। मुझे कुछ सूझ नहीं रहा था कि ऐसी विचित्र परिस्थिति का उपाय क्या हो सकता है।

दो-तीन दिन सिर खपाने के बाद मैं अपनी सहेली के घर गयी। बात करते-करते मैंने उसे उस मां की उलझन सुनायी।

कुछ देर सोचने के बाद उसने कहा, "पता नहीं तुझे भायेगा या नहीं किंतु मैंने एक पत्रिका में पढ़ा तो बहुत अच्छा लगा।" वह 'अवेकनिंग' पत्रिका लायी। कहने लगी, "है तो थोड़ा हल्का-फुल्का फिर भी उसे ध्यान से देखो तो उसमें गहराई है।"

मैंने पढ़ा, प्रस्तुति का तरीका थोड़ा मजेदार, अजीब था किंतु हंसते-हंसते मैं गंभीर भी हो गयी। मैंने सोचा, "बस, यही उपाय है"—

लेखक का नाम है जोसेफ किब्लर।

भगवान् की ओर से तुम्हें चेतावनी

"मैं भगवान् हूं। आज तुम्हारी सारी समस्याओं को मैं संभालूंगा। कृपया याद रखो कि मुझे तुम्हारी सहायता की आवश्यकता नहीं है।

"अगर जीवन तुम्हारे सामने कोई ऐसी परिस्थिति ला खड़ा करे जिसे तुम संभाल न पाओ तो उसका निराकरण करने की कोशिश मत करना। अपने घर में एक बक्सा रखना जिस पर लिखा हो 'भगवान् के लिये काम' या संक्षेप में 'भ. के. लि. का.'। फिर उस समस्या का विवरण लिखकर बक्से में डाल दो। सभी परिस्थितियों का निराकरण होगा किंतु मैं अपने समय पर करूंगा, तुम्हारी इच्छा के अनुसार नहीं।

"एक बार बक्से में समस्या डाल दो, उसके बाद उसे पकड़ कर चिंता मत करते रहना। उसकी जगह तुम्हारे जीवन में जो अद्भुत बातें हैं, उनपर ध्यान देते रहना।"

मुझे उपाय तो मिल गया किंतु 'भगवान् की ओर से चेतावनी' शीर्षक और उसकी भाषा नवयुवकों को अच्छी लग सकती है, मेरी पत्र-लेखिका तो उसे मजाक ही समझ लेती!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने उसे पत्र लिखा—

प्रिय बहन,

आपकी समस्या अनोखी है। मैंने उसका इतना उग्र रूप पहले देखा या सुना न था। मुझे एक व्यावहारिक उपाय यह दीख रहा है कि जब आपकी बेटी घर में न हो तब आप अपने-आप कुछ काम शुरू कर दीजिये और एकाध नौकर को भी सहायता के लिये बुला लीजिये। जब आप स्वयं काम करेंगी तब सहायता करने से नौकर मुकर न पायेंगे। लेकिन सबसे रामबाण उपाय यह है कि जब आप परेशान हों तो भगवान् को एक चिट्ठी लिखिये। उसमें अपनी समस्या लिखकर अपने पूजा-घर में रख दीजिये। रात को चिट्ठी रखकर सवेरे उठा कर उसे एक बक्से में रख दीजिये। मुझे विश्वास है, भगवान् आपकी सहायता करेंगे और इतनी अच्छी तरह कि आप भी समस्या का हल पाकर आश्चर्य-चकित हो जायेंगी।

—अनुबेन

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा....... ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के ४0 रु० और पुरोधा के ५0 रु० शीघ्र भेजें। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायेगा, न ही अगला अंक वी० पी० पी० से जायेगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो ८00 रु० देकर अग्निशिखा के और १,000 रु० देकर पुरोधा के आजीवन सदस्य बन सकते हैं। आजीवन सदस्यता २0 वर्ष के लिये मानी जायेगी।

संपर्क-सूत्र—पुरोधा एवं अग्निशिखा
श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६0५ 00२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

अगस्त

१. अवतरण सभी कठिनाइयों पर विजय पा लेगा क्योंकि अवतरण का अर्थ है सभी कठिनाइयों पर विजय।
२. भागवत विश्व-जननी ने धरती पर नजर डाली है और उसे आशीर्वाद दिया है।
३. जब भौतिक जगत् भागवत भव्यता को अभिव्यक्त करेगा तब सब कुछ अद्भुत हो जायेगा।
४. प्रकृति हमें उदारता के साथ देती है और हमें प्रचुरता का आनंद प्राप्त होता है।
५. मनुष्य ने प्रकृति को दुःखपूर्ण बना दिया है।
६. अपनी कार्य-प्रणाली में हमें प्रकृति का दास न होना चाहिये।
७. भागवत चेतना सफलता और असफलता दोनों का, लक्ष्य की ओर एक और कदम के रूप में प्रगति के लिये उपयोग करती है।
८. भगवान् अपने-आपको अपनी समस्त सृष्टि को देते हैं। किसी एक धर्म के पास उनकी कृपा का एकाधिकार नहीं है।
९. एक-दूसरे का बहिष्कार करने की जगह धर्मों को एक-दूसरे को पूरा करना चाहिये।
१०. एक दिन आयेगा जब इस धरती की समस्त धन-संपदा, अंततः भागवत विरोधी शक्तियों की दासता से मुक्त होकर अपने-आपको सहज और पूर्ण रूप से भगवान् के कार्य के लिये अर्पित कर देगी।
११. उपहार में दी हुई चीज की अपेक्षा उपहार के साथ जानेवाले विचार, भावना और शक्ति बहुत अधिक मूल्यवान् और महत्त्वपूर्ण होते हैं।
१२. अमीर को भगवान् धन देते हैं, लेकिन गरीब के लिये अपने-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको दे देते हैं। सब कुछ इसपर निर्भर है कि गरीब धन को ज्यादा मूल्य देता है कि भगवान् को।

१३. केवल वही जो आज्ञा पालन करना जानता है शासन करने योग्य है।

१४. राजनीति में बने रहो और राजनीति में सत्य को लाने की कोशिश करो, यह प्रभावकारी आध्यात्मिकता की ओर बहुत निश्चित मार्ग है।

१५. यह सोचना भूल जाओ कि तुम पश्चिम के हो और दूसरे पूर्व के। सभी मनुष्य एक ही दिव्य कुल के हैं और धरती पर हम इस मौलिक एकता को व्यक्त करने के लिये हैं।

१६. संसार एक इकाई है। वह हमेशा इकाई रहा है और अब भी है। ऐसी बात नहीं है कि उसमें एकता नहीं है और उसे बाहर से लाना और आरोपित करना होगा।

संसार केवल अपनी एकता के बारे में सचेतन नहीं है। उसे सचेतन बनाना है।

१७. हम समझते हैं कि इस प्रयास के लिये यह समय सबसे शुभ है। क्योंकि इस तत्त्व को लाने के लिये नयी शक्ति, चेतना या ज्योति, जो चाहो कह लो, संसार में अभिव्यक्त हुई है और अब संसार में अपनी एकता के बारे में सचेतन होने की क्षमता है।

१८. अगर तुम धरती पर शांति चाहते हो, तो पहले अपने हृदय में शांति स्थापित करो।

१९. अगर तुम जगत् में ऐक्य चाहते हो, तो पहले अपनी सत्ता के विभिन्न भागों को एक करो।

२०. जगत् पर एक नये प्रकाश का उदय हो रहा है। जागो और उसे पाने तथा उसका स्वागत करने के लिये एक हो जाओ।

२१. भाग्य की घड़ी पर एक ही क्षण दुबारा नहीं बजता।

२२. यह न सोचो कि तुम क्या थे, केवल उसी के बारे में सोचो जो तुम बनना चाहते हो और तुम निश्चय ही प्रगति करोगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३. आओ, हम अपने-आप प्रगति करें, औरों से प्रगति करवाने का यह सबसे अच्छा उपाय है।
२४. सच्ची प्रगति है हमेशा भगवान् के अधिक निकट आना।
२५. पूर्णता पराकाष्ठा या अति नहीं, संतुलन और सामंजस्य है।
२६. जबतक तुम स्वयं पूर्ण न हो तबतक तुम और किसी से पूर्ण होने की आशा नहीं कर सकते। पूर्ण होने का अर्थ है ठीक वैसा होना जैसा प्रभु चाहते हैं।
२७. विजय की निश्चिति अधिकाधिक ऊर्जा के साथ अनंत धैर्य प्रदान करती है।
२८. आओ, हम सच्ची निष्कपट अभीप्सा के साथ सतत सद्भावना रखें, विजय निश्चित है।
२९. नयी शक्ति की अभिव्यक्ति के लिये नये रूपों की जरूरत है। समस्त भय, सारी अनबन, सभी झगड़े छोड़ दो। अपनी आंखें और हृदय खोलो—अतिमानसिक शक्ति मौजूद है।
३०. कठिनाइयां तो हैं ही, पर वे हैं उनपर विजय पाने के आनंद के लिये। बस आगे बढ़ते चलो, विश्वास बनाये रखो, सब ठीक हो जायेगा।
३१. हे भगवान्! मुझे सभी मानसिक प्रभावों से, जो मुझ पर हावी हैं, मुक्त कर दे जिससे कि मैं पूर्ण रूप से स्वतंत्र होकर तीर की भांति तेरी ओर आ सकूं।

LIBRARY Gurukul Kangri Vishwavidyalaya HARDWAR

तमिलनाडु में हिन्दी पढ़नेवाले, विशेषतः डाक-विभाग में हिन्दी जाननेवाले बहुत ही कम हैं। अतः आपसे अनुरोध है कि धनादेश अथवा पत्र भेजते समय आप अपना पता हमेशा अंग्रेजी में, स्पष्ट पढ़े जानेवाले बड़े अक्षरों में, पिनकोड के साथ लिखा करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द, प्रणाम !

हे ज्योतिर्मय, परम पुरुष, पुरुषोत्तम तुझे प्रणाम।
अंधकार में डूबी धरती को आलोक दिखाया,
मरणदंश पीड़ित मानव को दी चरणों की छाया,
जिन्हें मिला स्नेह ममता का दान नहीं जीवन में
उन्हें उठा धर दिया स्वयं जगज्जननी के चरणों में !
परम प्रेम के आश्रय प्रभुवर, तुमको सदा प्रणाम ! श्रीअरविन्द, प्रणाम !

धरती की जो प्यास पुरानी पल पल में बढ़ती थी,
युग युग के टूटे तारों में जो पीड़ा बजती थी,
दिया तृप्ति का दान मनोरम व्यथित उन्हीं प्राणों को
मधुमय नभ संगीत सुनाया धरती के कानों को;
हे देवता परात्पर चरणों में शत कोटि प्रणाम ! श्रीअरविन्द, प्रणाम !

पथहारे मानव को तूने जो है राह दिखायी,
उस पर चल नभ की रानी भूतल से मिलने आयी।
मर मानव के पास लिये वरदान देवता भू पर,
तेरे तप से उतर पड़ा हे अमृतमय योगेश्वर !
तेरे चरणों में हम सबका बारम्बार प्रणाम ! श्रीअरविन्द, प्रणाम !

—छोटेनारायण शर्मा
'पुष्प-गुच्छ' से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

युद्ध और राजनीति

दूसरे विश्व-युद्ध के बाद यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) की लेबर सरकार ने १९४६ में अपना विशेष मंत्रिमंडल भारत में फिर से भारतीय नेताओं से भारत-स्वाधीनता के बारे में बातचीत करने के लिये भेजा। भारत के एक लोकप्रिय अखबार ने मंत्रिमंडल के बारे में श्रीअरविन्द की राय पूछी तो उन्होंने कहा—

"श्रीअरविन्द का विचार यह है कि स्वेच्छा से अपनी व्यक्तिगत राय देना अनावश्यक है . . . उनका इस विषय में जो दृष्टिकोण है उसे सब जानते हैं। वे हमेशा भारत की पूर्ण स्वाधीनता के पक्ष में थे। इस स्वाधीनता की घोषणा सार्वजनिक रूप से करनेवाले वे पहले नेता थे। उनका कहना था कि किसी भी स्वाभिमानी राष्ट्र के लिये एकमात्र आदर्श होना चाहिये, बिना समझौते के पूर्ण स्वाधीनता-प्राप्ति। १९१० में उन्होंने अपनी कई भविष्यवाणियां छापने की अनुमति दी थी जिनमें उन्होंने लिखा था कि कई युद्धों के विराम के चार वर्ष बाद, संसार भर में क्रांतियों और विप्लवों के बाद भारत स्वाधीनता प्राप्त करेगा। हाल ही में उन्होंने कहा है कि भारत की आजादी आ रही है और उसे न कोई, न कुछ रोक पायेगा। वे पहले से जानते थे कि अंततः ब्रिटेन सौहार्दपूर्ण समझौता लेकर भारत के पास आयेगा और उसे स्वाधीनता देगा। भविष्य में उन्होंने जो देखा था, अब वह फलीभूत होने जा रहा है और ब्रिटेन के विशेष मंत्रिमंडल का आना उसका संकेत है। अब देखना है कि राष्ट्र के नेता इस अवसर का कितना उचित लाभ उठा पाते हैं और किस तरह पूरा-पूरा उपयोग कर पाते हैं। इसका तत्काल परिणाम कैसा भी हो, जो दिव्य शक्ति इस स्वाधीनता को लाने के लिये कार्य कर रही है उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई नकार न सकेगा। उसका अंतिम परिणाम है भारत की स्वाधीनता, और वह सुनिश्चित है।''

क्रिप्स की प्रस्तावना की अस्वीकृति के बाद जो हुआ उसे हम सब जानते हैं। ब्रिटेन के भेजे हुए मंत्रिमंडल के प्रस्ताव और उसकी असफलता, गड़बड़, अस्तव्यस्तता, विपत्तियां, भारत का विभाजन और रक्त-स्नान; और जो पर्वताकार भारी भूल हो गयी थी, बहुत देर बाद उसका पश्चात्ताप—यह सब हम जानते हैं। जब विभाजन को एक निर्णयात्मक तथ्य के रूप में स्वीकारा गया, तब श्रीअरविन्द की चारण-सी भविष्यवाणी और एक बार गूंज उठी, "किंतु किसी भी उपाय से हो, किसी भी तरीके से हो, विभाजन का अंत होना चाहिये, भारत की एकता को पुनः प्राप्त करना होगा, और वह पुनः प्राप्त होगी अवश्य, क्योंकि भारत के भविष्य के लिये एकता आवश्यक है।'' श्रीअरविन्द की गंभीर चेतावनी ने अतीत की घटनाओं को उचित प्रमाणित किया है और वर्तमान घटनाएं विभाजन के परिसमापन के तरीके की ओर इंगित कर रही हैं।[१]

मैं फिर से उस साधक-सहयोगी की बात करना चाहता हूं जिसके उद्धरण मैंने पहले भी दिये थे। क्रिप्स की समस्या पर वे माताजी के सिद्धांत की बात बता रहे थे, वे बोले, "उसके बाद प्रसिद्ध क्रिप्स-प्रस्ताव की बात आयी। शाम को दिल्ली से क्रिप्स का भाषण भारतीय जनता के लिये प्रसारित किया गया था। चारों ओर लोग उसकी चर्चा कर रहे थे। 'प' के कमरे में रेडियो रखा गया था और एक तार से उसे श्रीअरविन्द के कमरे से जोड़ दिया गया ताकि वे युद्ध के समाचार और संसार के कोने-कोने से आते अन्य सब समाचार भी सुन पायें।

दूसरे दिन दोपहर के लगभग डेढ़ या दो बजे के ऑल इण्डिया रेडियो समाचार के बाद 'प' के कमरे में तीन साधकों की गरमागरम बहस हो

[१] श्रीअरविन्द की भविष्यवाणी आधी सच हो चुकी है, यह देखकर हम प्रसन्न हैं क्योंकि बांगला देश अब पूरी तरह स्वाधीन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही थी जिसमें 'प' भी शामिल थे। 'प' ने आध्यात्मिक व्यक्ति का शुद्ध दृष्टिकोण अपनाया था जो बाह्य दृश्यों के पीछे की शक्ति को देख कर राय बनाता है। ऐसा लगा कि उन्होंने इस विषय पर माताजी से बात भी की होगी इसलिये वे बड़े विश्वास और जोर-शोर से कह रहे थे कि क्रिप्स-प्रस्तावना को हमें मान लेना चाहिये। दूसरे व्यक्ति, जो पुराने गांधीवादी थे और राजनीति में भाग ले चुके थे, उनकी राय यह थी कि प्रस्तावना को नकारना चाहिये। उन्होंने प्रस्तावना के पक्ष में और विपक्ष में चर्चा की और उनकी राय थी कि भारतीय नेता उसे नहीं मानेंगे। तीसरा व्यक्ति जिसे राजनीतिक अनुभव न था, प्रस्ताव को स्वीकार करने के पक्ष में था। चर्चा गरम होती हुई इतनी ज्यादा गरम हो गयी कि माताजी, जो अपने स्नानागार से अपने कमरे की ओर जा रही थीं, इस कोलाहल से आकर्षित हो गयीं। वे अपने कमरे में न जाकर 'प' के कमरे की ओर चल दीं। अंदर जाने से पहले ही उन्होंने पूछा, "क्या बात हो रही है ?" 'प' ने बताया कि एक व्यक्ति का कहना है कि क्रिप्स की प्रस्तावना को भारतीय नहीं मानेंगे। माताजी को मजा आया, उन्होंने पूछा, "क्यों ?" अबतक वे सामने की कुर्सी पर बैठ गयी थीं। यह दृश्य असाधारण और दिलचस्प था। माताजी जो अपने सुंदर जापानी किमोनो में अभी-अभी स्नान करके निकली थीं, कपड़े बदलने की चिंता किये बिना क्रिप्स-प्रस्तावना की अस्वीकृति के कारण जानने के लिये उत्सुक थीं। उन्होंने शांत और स्पष्ट आवाज में बोलना शुरू किया। हम समझ पाये कि जो मां कुछ क्षण पहले कमरे में आयी थीं और जो अब बोल रही हैं उनमें अंतर था। हम समझ पाये कि वे किसी अन्य स्तर पर पहुंच गयी हैं और उनकी आवाज उस स्तर से आ रही है।"

उन्होंने ऐसा कुछ कहा था, "हमें क्रिप्स-प्रस्तावना की बात पूरी तरह भगवान् के हाथों में पूरे विश्वास के साथ सौंप देनी चाहिये कि वे उसे धीरे-धीरे ठीक कर लेंगे। निश्चित रूप से प्रस्तावना में त्रुटियां हैं क्योंकि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य द्वारा बनायी गयी कोई भी वस्तु त्रुटिहीन नहीं होती। कारण यह है कि मनुष्य के मन की क्षमता सीमित होती है; फिर भी इस प्रस्ताव के पीछे भागवत कृपा उपस्थित है। भारत के द्वार पर सहायता देने के लिये कृपा आ खड़ी हुई है। ऐसे अवसर किसी भी राष्ट्र के इतिहास में विरल होते हैं क्योंकि कोई भी राष्ट्र सदियों की तैयारी के बाद भागवत कृपा के ऐसे विरल क्षणों को अपने सामने उपस्थित पाता है। अगर उनका स्वागत हो तो राष्ट्र पुनः जीवित हो उठता है और भगवान् की चेतना में नव जन्म लेता है, किंतु अगर कृपा अस्वीकृत हुई तो वह लौट जायेगी और राष्ट्र को भयंकर दुःख सहने पड़ेंगे, विपत्तियां उसे घेर लेंगी।

"डन्कर्क के पतन के बाद ही, अभी कुछ महीने पहले, वही भागवत कृपा फ्रांस के द्वार पर आ खड़ी हुई थी। वह कृपा चर्चिल के प्रस्ताव के रूप में आयी थी। प्रस्ताव यह था कि इंग्लैंड के साथ फ्रांस संयुक्त नागरिकता स्वीकार कर ले और इस तरह शत्रु का सामना दोनों साथ मिलकर करें। श्रीअरविन्द ने कहा कि यह विचार बिलकुल सही था और वह स्वीकृत होता तो उनके काम में बहुत सहायक होता। किंतु फ्रांस अपने सामान्य मानस से ऊपर न उठ पाया, उसने उसे नकार दिया। अब भागवत कृपा लौट गयी है और फ्रांस की आत्मा नीचे चली गयी है। अब पता नहीं सच्चा फ्रांस फिर कब उठ खड़ा होगा।

"किंतु युगों से तीव्र आध्यात्मिक विकास की अपनी पृष्ठभूमि के कारण भारत को इस प्रस्ताव के पीछे जो भागवत कृपा है उसे पहचान लेना चाहिये। यह प्रस्ताव केवल एक मानव का प्रयास नहीं है। यह सच है कि इसकी रचना मानव मन से निकली है, इसलिये इसमें अपूर्णताएं हैं किंतु इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। भागवत कृपा पर विश्वास रखो और भगवान् के ऊपर सब कुछ छोड़ दो, वे निश्चित रूप से कोई न कोई रास्ता निकाल लेंगे।

"भारत से मेरा उत्कट अनुरोध है कि वह इस प्रस्ताव को नकारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं। अभी-अभी फ्रांस ने जो भूल की है उसको भारत न दोहराये ! उस भूल के कारण फ्रांस अब रसातल में चला गया है।''

जैसे ही माताजी की बात समाप्त हुई वे अपने 'ड्रेसिंग रूम' की ओर बिना कुछ और बोले या किसी की ओर देखे बिना चल दीं। उस दिन १९४२, अप्रैल की पहली तारीख थी। जब माताजी 'प्रोस्पैरिटी'[१] का काम करके लौटीं तब उन्होंने हमें बताया कि श्रीअरविन्द ने सर स्टेफ़र्ड क्रिप्स को तार भेजा था और सर स्टेफ़र्ड क्रिप्स का जवाब में उत्साही तार भी आ गया था। दोनों तार नलिनी दा ने आश्रम के सूचना-पट्ट पर लगा दिये थे। हम दोनों संदेश पढ़कर उत्साह से भर उठे। दूसरा विषय, जिसका महत्त्व दूसरे विश्वयुद्ध से कम था किंतु जो था महत्त्वपूर्ण, जापान का आक्रमण था। जापान ने बौने हिटलर की न्याईं पूर्व में अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था। श्रीअरविन्द ने जापान के आक्रमण को कभी गंभीरता से नहीं देखा। इसके विपरीत उन्होंने एक बार ऐसा भी कहा था कि पश्चिम में हिटलर सर्वोपरि हो जाये, तो फिर अपनी सेना को वह पूर्व की ओर विजय के लिये भेजेगा, उस समय जापान की सेना हिटलर का सामना करने और उसकी आगे बढ़ती हुई सेना को रोकने में समर्थ होगी। जापान के शाही विजय-विस्फोट को समर्थन देती हुई उनकी इस उक्ति ने तत्काल तो मुझे चकरा दिया। क्या वे चाहते थे कि जापान का उठना हिटलर का पूर्व की ओर जो जटिल प्रहार होगा उसके लिये जबरदस्त मुठभेड़ में कामयाब होने के लिये या फिर अमरीका को युद्ध में भाग लेने के लिये बाधित करने के लिये एक युक्ति थी ? खैर, हमारे साथ जो बातचीत हुई उससे हमें पता चला कि जापान की नाटकीय विजय ने उन्हें इतना परेशान नहीं किया जितना हिटलर की विजय ने किया था। बाद में जापान का भारत के प्रति जो मनसूबा था, उसके बारे

[१] साधकों की जरूरतमन्द चीजें प्रदान करने का विभाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में जब उन्हें पता चला जिसमें हमारे गुमराह देशप्रेमियों की उसे जो सहायता प्राप्त थी, उसका पता चला तब श्रीअरविन्द ने हमसे कहा कि उन्होंने अपनी आध्यात्मिक शक्ति का प्रयोग जापान के विरोध में किया था और तब जापान के विजय का ज्वार, जो अपने साथ सब कुछ बहाये चला जा रहा था, तुरंत तेजी से और कुचलते हुए भाटे में बदल गया। अंत में वह विजय विशाल और शर्मनाक पराजय में बदल गयी।

हमने कलकत्ता और विशाखापट्टनम् पर जापानी बमबारी के बारे में सुना था। हमने यह भी सुना था कि जापानी युद्ध-पोत हिन्द महासागर में प्रवेश कर त्रिन्कोमलि तक पहुंच चुके थे और साथ ही हमने यह भी सुना कि भारत पर आक्रमण करने से पहले ही वे विस्फोटित होकर डूब गये। उत्तर-पूर्व में सुभाष बोस की 'इंडियन नेशनल आर्मी' आसाम में विजयी होती हुई आगे बढ़ रही थी और उसके पीछे-पीछे थी जापान की सेना! भारत की सेना आतंकित होकर पीछे हट रही थी। इसके साथ ब्रिटिश सरकार उसके साम्राज्य के गौरव के दिन गिनती के हैं, यह मानकर भारत छोड़ने की तैयारी कर रही थी। उस समय बंगाल के जो गवर्नर थे संभवतः केबिनेट मीटिंग में उन्होंने ऐसा कुछ कहा था, "इस समय खेल खतम हो रहा है।" जब यह वाक्य श्रीअरविन्द को सुनाया गया, तो उन्होंने कहा, "अब पहिया घूमेगा।" उस समय मित्र-राष्ट्रों के लिये सब दिशाओं में हताशा ही हताशा थी, अफ्रीका में, भारत में और यूरोप में भी मित्र-राष्ट्र हताशा देख रहे थे।

इधर आसाम में 'इंडियन नेशनल आर्मी' की विजय हो रही थी। उस विजय-घोषणा की घड़ी में भारत की नियति ने हस्तक्षेप किया। कई दिनों तक आसाम के सघन जंगलों को आकाश से बरसती भारी वर्षा ने आप्लावित कर दिया। ऐसी प्रलयंकारी वर्षा हुई कि आक्रमण करती सेना, जो मुक्ति देनेवाली थी, स्वयं सैलाब और कीच में धंसने लगी और उसे अपने-आपको प्रकृति के कोप से मुक्त करना पड़ा। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपयश के साथ पीछे हटने लगी। उस मौसम में वहां वर्षा होने की बात पहले सुनी नहीं गयी थी।

भारत की स्वाधीनता के विषय में हम माताजी का एक वाक्य उद्धृत करते हैं। १९२७ में एक साधक ने उनसे पूछा कि भारत किस तरह स्वाधीनता पायेगा, तो माताजी का भविष्य-सूचक उत्तर था, "जब एक जापानी युद्धपोत हिन्द महासागर में आयेगा।" वास्तव में माताजी ने भारत की स्वाधनीता का अंतर्दर्शन १९२० में किया था। उस समय माताजी और श्रीअरविन्द एक साथ ध्यान कर रहे थे। फिर माताजी चेतना के एक विशेष स्तर पर पहुंच गयीं जहां से उन्होंने श्रीअरविन्द से कहा—"भारत स्वाधीन है।"

श्रीअरविन्द—"कैसे ?"

माताजी—"बिना झगड़े के, बिना युद्ध के, बिना विप्लव के। अंग्रेज अपने-आप चले जायेंगे क्योंकि संसार की अवस्था ऐसी होगी कि भारत छोड़कर जाने के सिवा वे और कुछ कर न पायेंगे।"

सत्य-स्तर पर देखा हुआ वह अंतर्दर्शन सत्ताईस वर्षों के बाद भौतिक स्तर पर साकार हो पाया। आश्रम के शुरू के दिनों में माताजी साधकों के कमरे में जाया करती थीं। एक दिन 'अ' ने उनसे पूछा, "भारत स्वाधीनता किस तरह प्राप्त करेगा ?" उन्होंने उत्तर दिया, "सुनो ! अंग्रेजों ने भारत पर विजय प्राप्त नहीं की थी। तुम लोगों ने ही अपना राष्ट्र अंग्रेजों को सौंप दिया था। इसी तरह अंग्रेज भी अपने-आप तुम्हें तुम्हारा राष्ट्र वापिस सौंप देंगे। वे लोग बड़ी जल्दी में दे देंगे मानों उन्हें ले जाने के लिये जहाज प्रतीक्षा में खड़ा हो।" यह भविष्यवाणी कितनी सच थी!

—नीरदवरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द के वचन

(अगस्त-अंक में हम शिक्षा-पद्धति, धर्म, आर्थिक व्यवस्था, मानव एकता आदि विषयों पर श्रीअरविन्द से पूछे गये कुछ प्रश्नों के उत्तर दे रहे हैं।)

शिक्षा-पद्धति

भारत में अब लोग बड़ी गंभीरतापूर्वक यह अनुभव करने लगे हैं कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति संतोषप्रद बिलकुल नहीं है। इसे सुधारने के लिये इसमें क्या-क्या परिवर्तन ले आना आवश्यक है ?

इस दिशा में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह होगी कि युवकों के सामने जीवन का सर्वोत्तम, अर्थात्, उच्चतम और उत्कृष्ट लक्ष्य रखा जाये।

भारत के पतन का एक प्रधान कारण यह भावना रही है कि जीवन एक माया है। इस भावना के स्थान पर अब यह भावात्मक भावना रखनी चाहिये कि जीवन एक विकसनशील सद्‌वस्तु है और वर्तमान समय में यह एक युद्धक्षेत्र है जिसके द्वारा शाश्वत पूर्णता हमारे अंदर अपनी निजी मूर्ति गढ़ रही है। जीवन का अंतिम लक्ष्य है पूर्ण रूप से रूपांतरित हो जाना जिसमें कि वह पूर्णता की अभिव्यक्ति का पूर्णतः विकसित और सफल साधन बन जाये और इस तरह क्रमशः सामंजस्य और एकत्व का क्षेत्र बन जाये।

बच्चों को यह अभीप्सा करनी चाहिये कि वे समस्त मिथ्यात्व के विरुद्ध रूपांतर का महान् युद्ध सफलतापूर्वक लड़ने के लिये वीर योद्धा बनें। उन्हें भौतिक जीवन में सर्वांगीण परिपूर्णता के साधक और सिद्ध बनना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षा की यथार्थ पद्धति क्या है ?

उसे प्रत्येक बालक को उसकी स्वाभाविक परिपूर्णता की ओर ले जाना चाहिये और अंतरात्मा तथा आत्मा के सर्वोच्च पथ-प्रदर्शन के अधीन शरीर, प्राण और मन को पूर्ण रूप से विकसित करना चाहिये।

अध्यापक को अपने-आपको या अपने मतों को बालक के ग्रहणशील मन के ऊपर इस प्रकार लादने की चेष्टा नहीं करनी चाहिये कि वह उन्हें निष्क्रिय भाव से स्वीकार कर ले। उसे अपने को मात्र एक सहायक समझना चाहिये और सिखाने की अपेक्षा बच्चे के अंदर ज्ञान की प्यास को जगाने को अपना लक्ष्य बनाना चाहिये।

शिक्षण की अपेक्षा उदाहरण कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है, और उदाहरण से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है प्रभाव। प्रभाव अध्यापक का बाहरी अधिकार नहीं है, बल्कि वह उसके संपर्क की, उसकी उपस्थिति की, दूसरे की अंतरात्मा के साथ उसकी अंतरात्मा के सामीप्य की शक्ति, और नीरवता में भी दूसरे की अंतरात्मा के अंदर उस वस्तु को भर देने की शक्ति है जो वह स्वयं है और जो उसके अधिकार में है।

वह सबसे महत्त्वपूर्ण बात कौन-सी है जिसे देश को शिक्षा का उद्देश्य बनाना चाहिये ?

एक भागवत सद्‌वस्तु है जो अभिव्यक्त होना चाहती है। हमें उस सद्‌वस्तु को जानने तथा उसकी अभिव्यक्ति के लिये कार्य करने को अपना लक्ष्य बनाना चाहिये।

किस तरह सारे भारत के लिये विस्तृत रूप में शिक्षा की एक आदर्श पद्धति का निर्माण करना संभव बनाया जा सकता है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे पहले यह आवश्यक है कि समाज सफलता, आजीविका और धन को एकांतिक रूप से महत्त्व देना अस्वीकार कर दे और उसके स्थान पर यह आग्रह करे कि सबसे प्रधान आवश्यकता इस बात की है कि छात्र अपनी आत्मा के साथ संपर्क स्थापित करके अपना पूर्ण और सच्चा विकास साधित करे तथा शरीर, प्राण और मन के अंदर अपनी सत्ता के सत्य को वर्धित और अभिव्यक्त करे।

दूसरे, देश को शिक्षा की आवश्यकता को सबसे अधिक प्रधानता देनी चाहिये, और राष्ट्र के समस्त जीवन का संगठन इस प्रकार करना चाहिये कि वह शिक्षण की एक अविच्छिन्न प्रक्रिया बन जाये।

तीसरे, देश को पूर्णता प्राप्ति के आदर्श का प्रचार करने के लिये संपर्क स्थापित करने की सभी आधुनिक पद्धतियों का, जैसे, सिनेमा, टेलिविजन, पुस्तक, चित्र और पत्र-पत्रिकाओं का, पूरा-पूरा और समुचित उपयोग करना चाहिये।

चौथे, देशभर में, यहांतक कि गांवों में भी, स्थायी प्रदर्शनियों तथा अजायबघरों का निर्माण होना चाहिये जो कि उस प्रेरणाप्रद ज्ञान के केंद्र बन सकें, जिनमें क्रमविकास के आंतरिक तात्पर्य और उसके लक्ष्य का ज्ञान भी शामिल हो।

पांचवें, अध्यापकों को उस परिपूर्णता का सच्चा उदाहरण बनना चाहिये जो हमारा लक्ष्य है।

अंत में, संपूर्ण देश को अखंड रूप से अपने जीवन के सच्चे कार्य को ढूंढ़ निकालने और उसे संसिद्ध करने के कार्य में संलग्न हो जाना चाहिये।

भारत के लिये कौन-सी भाषा शिक्षा का माध्यम, राष्ट्र-भाषा और अंतर्राष्ट्रीय भाषा होनी चाहिये ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मातृभाषा शिक्षा का माध्यम होनी चाहिये।

सरल संस्कृत राष्ट्र-भाषा होनी चाहिये।

अंग्रेजी वर्तमान समय के लिये अंतर्राष्ट्रीय भाषा होनी चाहिये।

धर्म

विभिन्न धर्मों के बीच विरोध होने का क्या कारण है और उसे कैसे दूर किया जा सकता है ?

विभिन्न धर्मों के बीच विरोध होने का कारण यह है कि प्रत्येक धर्म यह दावा करता है कि एकमात्र सत्य वही है और वह अपने मत, विश्वास, पूजा-विधि, अनुष्ठान और विहित कार्यों के द्वारा अपने प्रति पूर्ण निष्ठा की मांग करता है।

इसका समाधान है, सबसे पहले, यह स्वीकार करना कि धर्म का सच्चा सत्य आध्यात्मिक अनुभूति में है जिसका कि बाहरी रूप धर्म है। इसलिये बाहरी रूप का अतिक्रमण करना, आध्यात्मिक अनुभूति पर जोर देना, और इसके साथ-ही-साथ, यह स्वीकार करना कि आध्यात्मिक अनुभूति के अनंत और यथार्थ अनेक भेद हो सकते हैं, उस समाधान का महत्त्वपूर्ण अंग है।

सच पूछा जाये तो धर्म पर जोर देकर संसार का पुनर्गठन नहीं किया जा सकता। नया जगत् धर्मों के परे चला जायेगा और आध्यात्मिक अनुभव की विशुद्धता पर बल देगा।

धर्मों को एक साथ युक्त नहीं किया जा सकता, परंतु आध्यात्मिक अनुभव को समन्वित किया जा सकता है।

अपने धर्म में भारतीय प्रयास कुछ हद तक इसी आंतरिक बोध के द्वारा परिचालित हुआ था; पर वर्तमान काल में वह नष्ट हो गया है, परंतु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब उस बोध को सुस्पष्ट और मौलिक रूप में हमें सामने रखना होगा और धर्म या धार्मिक भाव को पुनरुज्जीवित नहीं करना होगा, बल्कि आध्यात्मिक पूर्णता के आदर्श को सबके सामने रखना होगा जिसके अंदर आत्मा का सर्वांगपूर्ण साक्षात्कार और भौतिक जीवन में उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति भी सम्मिलित है।

भारतीय संस्कृति

भारतीय संस्कृति का लक्ष्य क्या होना चाहिये ?

भारत को आत्मा का ज्ञान है, अथवा यों कहें कि था। उसकी संस्कृति का लक्ष्य जड़तत्त्वमें, भौतिक जीवन में आत्मा को अभिव्यक्त करना होना चाहिये।

मानव एकता

राष्ट्रीय जीवन में, विशेष कर जब अंतर्राष्ट्रीयता और मानव-एकता के आदर्श का विकास हो रहा है, देशभक्ति का क्या स्थान है ?

जब मनुष्य अपनी चेतना में उन्नत होगा, वह पक्षपात और विरोध की अपेक्षा कहीं अधिक एकता और सामंजस्य के नियमों के अधीन जीवन-यापन करेगा, तभी अंतर्राष्ट्रीयता और मानव-एकता का आना संभव होगा। उसी तरह बहु-नागरिकता और विश्व-राज्य का आना भी संभव होगा।

देशभक्ति की भावना को जैसा आज समझा जाता है, अर्थात् उसे जो प्रतियोगिता और आधिपत्य-स्थापन समझा जाता है, वह गलत है। वास्तव में अपने देश से प्यार करना और अपने देश की उच्चतम अभिव्यक्ति के लिये कार्य करना सच्ची देशभक्ति है। यह पूर्णतः न्याय्य है और इसे सर्वदा बने रहना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्थिक व्यवस्था

आर्थिक व्यवस्था का लक्ष्य क्या होना चाहिये, विशेषकर जब कि आय और बेकारी की इतनी अधिक विषमता विद्यमान है ?

आर्थिक व्यवस्था का लक्ष्य उत्पादन का एक विशाल इंजन तैयार करना नहीं होगा, चाहे वह उत्पादन प्रतिस्पर्धात्मक हो या सहकारितामूलक, बल्कि लक्ष्य होगा मनुष्यों को—कुछ मनुष्यों को नहीं बल्कि सभी मनुष्यों को—प्रत्येक को उसके लिये उच्चतम संभवनीय मात्रा में—उनकी अपनी प्रकृति के अनुसार कर्म का आनंद प्रदान करना तथा आंतरिक रूप से वर्धित होने के लिये खुला अवकाश एवं साथ ही सबके लिये एक साधारणतः समृद्ध और सुन्दर जीवन प्रदान करना।

धन धन कमाने के लिये नहीं है। धन संसार को एक नवीन और उच्चतर सृष्टि के लिये तैयार करने के लिये है।

हमारे महाराजा साहब

पुरानी संस्कृत कहानियों में आता है कि कहीं किसी अंचल में महिलरोप्यम् नामक नगरी थी। उसी भांति हमारी कहानी के नायक कहीं किसी आमगाछी नामक राज्य के राजा थे। राजा तो बन गये भाग्य की कृपा से लेकिन राज्य करना इतना आसान न था। वह जमाना जा चुका था जब राजा अपनी प्रजा का स्वामी और मां-बाप होता था। अब तो राजाओं को भी सामान्य अफसरों के दफ्तरों की प्रदक्षिणा करनी पड़ती थी। जरा-जरा सी चीज के लिये उन्हें अपनी जूतियां घिसानी और खून सुखाना पड़ता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे राजा साहब हैं बड़े कर्मठ जीव। आलस्य तो उन्हें छू भी नहीं गया। विद्वत्ता उनके धान पर चरा करती है। उनके एक दीवान हैं—सर्वगुण-संपन्न। राजा साहब इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित हैं तो दीवान, दर्शन, काव्य-शास्त्र और वाक्पटुता के। दोनों में खूब गाढ़ी छनती है और जब गाली-गलौज की बारी आती है तो कोई किसी के पीछे नहीं रहता। राजा साहब अपनी विद्या को क्षण-भर के लिये नहीं भूल सकते। उन्होंने 'भृगु-संहिता' से लेकर 'राहुल सांस्कृत्यायन' तक और इधर सरहपा से लेकर प्रसाद तक सब स्थानों से, हर संभव और असंभव तरीके से अपने दीवान की सात नहीं, सतहत्तर पीढ़ियों का इतिहास निकाल बाहर किया है। उधर कवि दीवान ने राजा साहब की तारीफ में हिजो लिख-लिख कर एक अच्छा-खासा दीवान तैयार कर डाला है।

एक दिन बैठे-बिठाये पुरखों की बात चल रही थी। राजा साहब अपने पुरखों की और दीवान अपने पुरखों की विरुदावली सुनाने में लगे थे। राजा साहब के मतानुसार जयशंकर प्रसाद अपनी 'कादम्बिनी' नामक इतिहास पुस्तक में यह लिख गये थे कि उनके दीवान के पूर्वज डकैत थे। दीवान का आग्रह था कि उनके पुरखे शुद्ध सूर्यवंशी राजपूत थे। राजा साहब पर यह करारी चोट थी। अभीतक वे यही मानते आये थे कि वे ही भगवान् राम के एकमात्र वंशज हैं। यह नयी मुसीबत कहां से ?

लेकिन दीवान उन्हें नाराज भी न करना चाहता था। उसने झट तरकीब निकाल ली। भगवान् राम के पूर्वज थे हरिश्चन्द्र और उनसे ऊपर थे त्रिशंकु। दीवान की ऐतिहासिक अन्वेषण-कार्य की पिटारी में से राजा हरिश्चन्द्र के समय का लिखा हुआ एक कागज निकल आया जिसमें अंग्रेजी में स्पष्ट अक्षरों में लिखा हुआ वंश-वृक्ष था। उससे स्पष्ट पता लगता था कि त्रिशंकु बाबा के एक शंकु से भगवान् राम आदि का जन्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ, दूसरे शंकु से आमगाछी महाराज का और तीसरे से हमारे सुप्रसिद्ध दीवानजी के पूर्वज उपजे थे। इन सब बातों का खंडन करने के लिये महाराजा साहब को कुछ समय की जरूरत थी, इसलिये कुछ समय के लिये युद्ध-विराम की तरह विवाद-विराम पर हस्ताक्षर हो गये।

हम पहले ही कह आये हैं कि हमारे महाराजा साहब को आलस्य छू भी नहीं गया है, अब वे खाली बैठे क्या करते? उनका मन जरा असंतुष्ट होकर कहने लगा, 'अवहुं उधेल कान के रुई।' बस, राजा साहब कुरसी से उछल पड़े और उछलते-उछलते उन्होंने निश्चय कर डाला कि वे अपने राज्य के नाम से एक बड़ा-सा हस्पताल बनवा डालेंगे जिसमें जुकाम से लेकर ज़िया-बतीस तक और सिर-दर्द से लेकर पैर-दर्द तक, सभी रोगों का इलाज किया जायेगा। राजा साहब के मन में विचार कौंधते ही उसका क्रियान्वित होना जरूरी है। इसके लिये वे समुद्र में कूद सकते हैं, पेड़ पर उछल सकते हैं, टोकियो से टिम्बकटू तक वे पैदल चक्कर लगा सकते हैं।

अब एक मुश्किल आ पड़ी। आमगाछी राज्य इस समय 'कोर्ट ऑफ वार्ड्ज' में था, इसलिये राजा साहब स्वयं अपना पैसा भी पांच अफसरों की स्वीकृति के बिना खर्च न कर सकते थे। उन्होंने आव देखा न ताव, झट कलकत्ते जा पहुंचे और वहां के बड़े-बड़े डॉक्टरों, इंजिनियरों और ठेकेदारों से बातचीत करके एक बड़े-से हस्पताल का नक्शा बनवा लिया। नक्शा लेकर वे बिहार के एक बड़े माननीय नेता के पास पहुंचे। नेताजी कुछ अस्वस्थ-से थे इसलिये इन्हें अंदर जाने से रोका गया, परंतु ये तो उनके करीबी रिश्तेदार थे। इन्हें रोकने की हिम्मत करनेवाला भी चक्कर में पड़ गया। इन्होंने अंदर जाते ही नेताजी को अपना परिचय देना शुरू कर दिया 'मेरे मामा की सलहज के बहनोई के भाई की मौसी आपके ससुर के नाना के नाती की धेवती के गांव में ब्याही है, और एक बार मैं उस घर की चौपाल में बैठा था तब आपने वहां से गुजरते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे हाथ जोड़कर नमस्कार किया था।' नेता इनकी पटुता देखते ही प्रभावित हो गये और बोले, 'आपका काम मेरा काम है। फिर से आने का कष्ट न करें, मैं स्वयं ही आपके दरवाजे पर हाजिर हो जाऊंगा।'

बस, फिर क्या था। राजा साहब ने आस-पास के और इर्द-गिर्द के सभी लोगों को सुनाना शुरू किया कि नेताजी मेरे घर आनेवाले हैं, आप सबको मेरे घर की सफाई और पुताई में मदद देनी चाहिये क्योंकि मेरी इज्जत आपकी इज्जत है। दरवाजे पर कुछ रंग-रोगन किया गया और सामने एक सुन्दर-सा बगीचे का दृश्य देने के लिये इधर-उधर से पेड़ों की शाखाएं तोड़-तोड़ कर खोंस दी गयीं। लेकिन हाय, नेताजी को आते-आते कितना समय लग गया! रोगन पपड़ी बनकर उतर गया, टहनियां सूखकर लोगों के ईंधन के काम आ गयीं, फिर भी नेताजी न आये। अब राजा साहब का माथा ठनका। मार्च के महीने के साथ-ही-साथ वित्तीय वर्ष भी अपने अंत की ओर छिपकली की तरह शोर मचाये बिना, पर निश्चित रूप से सरकता जा रहा था। अब एक ही उपाय रह गया था कि पटने जाकर 'कोर्ट ऑफ वाईज' से अपना पैसा खर्च करने की स्वीकृति ले आयें। लेकिन वह भी इतना आसान न था। पहले जाते थे तो पांच पिछलग्गू साथ रहते थे जो कभी हा-हा खाते थे और कभी लड्डू-जलेबी उड़ाते थे। राजा साहब तीन खर्च करते तो वे पांच दिखाते और उनके अपने खर्च तो राजा साहब के सिर होते ही थे। उन्हीं की करतूतों से राजा साहब का राज कोरट हुआ था।

खैर, राजा साहब दौड़ते-भागते, हांफते-कांपते मुख्यालय में जा पहुंचे। वहां कोई कामता प्रसाद कुरसी पर बैठे थे। इन्होंने सोचा था कोई राजपूत होगा। उसे राजपूती खून की आन देकर बस में कर लेंगे। लेकिन यह तो कायथवा निकला। अब क्या करें ? यहां राजपूती शान से काम बिगड़ सकता है। राजा साहब ने झट मूंछें नीची कर लीं और मानवता के प्रति सहानुभूति की दुहाई देकर कामता बाबू को अपने बस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में करने की कोशिश करने लगे। चित्रगुप्त तो इनके पूर्वजों के बहुत ही घनिष्ठ मित्र थे। स्वयं हमारे राजा साहब के परदादा कामता बाबू के पड़नाना के लंगोटिया यार थे, और फिर, दोनों की ससुराल भी बस, मील-भर की दूरी पर थी। ऐसी अवस्था में कामता बाबू पर तो उनका अधिकार है। कामता बाबू को बस, एक कागज पर हस्ताक्षर ही तो करने होंगे, अपनी जेब से तो कुछ देना न पड़ेगा। और उस एक हस्ताक्षर के बदले उन्हें कितनी असीसें मिलेंगी! कामता बाबू के लिये इस चिरचिरा के कांटे से पिंड छुड़ाना मुश्किल हो गया। लेकिन वे भी कच्ची गोलियां न खेले थे। उन्होंने कुरसी से उठते हुए कहा, 'हां ठाकुर साहब, आपकी बात तो ठीक है, पर अब तो मेरे खाने का समय हो गया, और मेरी मुहर मेरे पी. ए. के पास है, और वह पहले ही किसी काम से निकल गया है। बाद में देखेंगे।' कहते-कहते वे कमरे से निकल मोटर में लद गये। उन्होंने तो क्या, उनके बड़े-बड़ों ने भी कल्पना न की थी और वे इसके लिये बिलकुल तैयार न थे। कामता बाबू जरा भारी-भरकम आदमी थे, वे मोटर तक पहुंचें-पहुंचें, उससे पहले राजा साहब उसमें विराजमान हो चुके थे और कामता बाबू के लिये स्थान बनाते हुए बोले, 'अच्छी तरह बैठिये . . . संकोच न कीजिये, आप ही की मोटर है। मैंने सोचा, अब आप अकेले कहां जायेंगे। मैं भी संग-संग चला चलूं। इधर मुझे भी घर का खाना खाये बहुत दिन हो गये, आज यह भी सौभाग्य मिलेगा। आप चिंता न करें, मैं ज्यादा नहीं खाता, मेरे लिये कोई खास तैयारी करने की जरूरत नहीं, जो कुछ आपके लिये बना होगा वही खा लूंगा।' कामता बाबू रईस आदमी थे, मुंह खोलकर 'ना' न कह सके। अंदर से जलते-भुनते राजा साहब को लेकर अपने घर पहुंचे। घर के लोग इनका हुलिया देखकर परेशान हो गये। ये थाली पर बैठे तो कामता बाबू की श्रीमती के प्राण सूखने लगे। इन्होंने परोसनेवाली को कष्ट देना उचित न समझा और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इधर-उधर देखे बिना उनके सभी व्यंजनों को शुरू में आधा-आधा तो कर ही डाला, उन्हें याद था, 'आधे में अध घर आधे में सब घर।' लेकिन वे ज्यादा मुरव्वत वाले निकले, उन्होंने हर चीज में थोड़ा-थोड़ा हिस्सा घरवालों के लिये छोड़ने का दृढ़ निश्चय कर लिया। गृहिणी इन्हें कनखियों से देखती थी और मन-ही-मन कुढ़ती जाती थी कि आज ही नन्हें का जन्म-दिन निकला—इतने पकवान बने, फिर भी घरवालों के लिये क्या बचेगा ? राजा साहब दत्तचित्त होकर आरोगते हैं। उनका विचार कहीं इधर-उधर नहीं जाता। अचानक खीर की पतीली खटकने लगी और सामने बैठी गृहस्वामिनी की उसांस निकल गयी। तब कहीं राजा साहब को ख्याल आया कि लगभग तीन-चौथाई भोजन उनकी उंगलियों में से गुजर चुका है। वे लोभी तो थे नहीं, थाली जैसी-की-वैसी छोड़कर उठ खड़े हुए और लगे खाट की तलाश करने।

अब कामता बाबू भी घबराये। सरकारी-गैर सरकारी, समय-असमय, सब विचार छोड़कर उसी समय एक अर्ध-सरकारी चिट्ठी लिखने बैठ गये और राजा साहब के हाथ में थमा दी। राजा साहब आराम से कामता बाबू का तौलिया लेकर उससे हाथ पोंछते हुए, डकारें लेते-लेते घर से बाहर हो गये। सारे घर ने लंबी सांस ली। गृहस्वामिनी ने कहा, 'जान बची तो लाखों पाये।'

घर से निकलकर राजा साहब को ख्याल आया कि आज वित्तीय वर्ष का अंतिम दिन है। आज पैसे न लिये तो सारा परिश्रम व्यर्थ जायेगा। देखा कोई आदमी रिक्शा में पश्चिम की ओर जा रहा था। इन्होंने आव देखा न ताव, बस, रिक्शा में कूद पड़े और लगे उस आदमी से बतियाने। पता लगा कि उनकी चचिया सास इनकी सलहज की दादी लगती हैं, बस, फिर क्या था ! ऊपर से, वह अपने-आप सरकारी खजाने में काम करता है जहां से इन्हें रुपये लेने हैं। हमारे राजा साहब ने कूटनीति से काम लिया। बोले, 'यार, तुम अच्छे मिले, मुझे महीना-डेढ़ेक यहां रहना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ेगा। सोचता था, कहां जाऊंगा। अब कोई चिंता नहीं, तुम्हारे घर पर ही डेरा रहेगा। बस, दो टिक्कड़ रोज दिलवा देना तो काम चल जायेगा।' बेचारा मंगल सिंह बिना बुलाई आफत को आते देख घबराया, बोला, 'जी ... जी ... वैसे तो ... आप अपने ही हैं, लेकिन इस मंहगाई के जमाने में ... जी, और आजकल घरवाली की तबियत ... बस आठ महीने ...' राजा साहब बोले, 'हां, भई, मैं भी किसी को तकलीफ नहीं देना चाहता, लेकिन करूं क्या ? सरकार से कुछ रुपया लेना है, इतनी दौड़-भाग की, तब कहीं इस कागज पर दस्तखत हुए। लेकिन अब दफ्तर का समय हो गया और आज वित्तीय वर्ष पूरा हो रहा है। आज तो पैसा मिलने से रहा, अब महीना-डेढ़ महीना जूते घिसाने ही पड़ेंगे, इसलिये मैं भी आपके यहां किसी कोने में पड़ा रहूंगा और उनकी मदद कर दिया करूंगा। खाने-पीने के लिये मुझे ज्यादा कुछ नहीं चाहिये। अब, भाई, तुम चाहे जो करो, मैं तो तुम्हारे दरवाजे से हिलूंगा नहीं, आखिर ले-देकर तुम ही तो एक अपने हो यहां पर।

बेचारा मंगल सिंह, 'मान न मान मैं तेरा मेहमान' से आजिज़ आ गया और बोला, 'लाइये, अपना कागज दिखाइये। मैं उसी विभाग में काम करता हूं। आज ही आपका काम करवा दूंगा और आप शाम की गाड़ी से जा सकेंगे।' बस, अंधा क्या चाहे ? दो आंखें। राजा साहब का काम पूरा हो गया और वे रुपये लेकर कायस्थों को, ठाकुरों को, यादवों को, सबको असीसते हुए घर की ओर चल पड़े। वे आशा कर रहे हैं कि उनके दीवान, उदीयमान कवि किंकर अपना अगला काव्य उन्हींके पराक्रमों को लेकर लिखेंगे। आप अपनी प्रति अभी से आरक्षित करा लें।

—रवीन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'एक अनुभूति'

(पांडिचेरी आश्रमदर्शन)

प्रवेश करते ही
बदल गया सब कुछ
रूप रस गंध का
अलौकिक अहसास
रग-रग को विमोहित करता
वातावरण का मधुमास
हँसते मुस्कुराते फूलों का
मौन स्वागत
नीरवता का प्रिय आलाप
पवित्रता का परिवेश
औ शान्ति की गहनता
छा गयी एक सचेत मूर्च्छा
तन मन सब भीग उठा
भीतर हृदय के भीतर हुई
बरसात से
कहीं कुछ है, जो दिव्य है
अलौकिक है अनिर्वचनीय है
माँ ने कहा था "फूल प्रकृति की
हँसी है, प्रसन्नता है"
और मुझे लगा यहाँ तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृति खिलखिला रही है
बचपन में सुनी कहानीवाली 'फूलकुमारी'
जो हँसती थी तो फूल झरते थे
मुझे यहाँ प्रत्यक्ष दिखी, हँसती हुई
वह हँस रही है और हर दिशाएँ
फूलों से, रंग-बिरंगे फूलों से
भरती जा रही हैं
अहा ! फूलों का ऐसा जमघट,
ऐसा सुमन-सम्मेलन,
प्रसूनों की ऐसी भीड़
पर सब के सब अनुशासन-बद्ध
एक दूसरे के सौन्दर्य को बढ़ाते हुए
दर्शकों की थकान को, व्यथा को हर कर
आनन्द का पान करा रहे हैं।
जड़ में भी चेतन को देखनेवाली 'माँ'
की समाधि पर
विशाल बाहुओं जैसे पत्र-समूहों वाला
वह वृक्ष, अनंत चेतना का जीवंत गवाह
वर्षों से वर्षों तक के विस्तार को
हरित-पत्र दल की अमर छाँव देता हुआ
मां की सेवा में दिन-रात प्रस्तुत
कितना भाग्यशाली है !
फूलों के बीच काँटे भी शुमार हैं
असंख्य किस्मों के कुसुम मध्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कैक्टस' की अनेकों जातियाँ
हँसी और मुस्कानों के बीच
दुःख औ दर्द की सच्चाइयाँ
भी दिखाती हैं कि
जीवन सिर्फ फूलों की सेज नहीं
जीवन सिर्फ कांटों भरी राह नहीं
'कैक्टस' में भी फूल खिलते हैं
फूलों में भी कांटे मिलते हैं।
फूल हों या शूल
सभी अनंत सत्ता को समर्पित
आत्म-तृप्त, आत्म-विभोर
सभी द्वैत को भूल
मानों कह रहे हों 'प्रेम केवल मनुष्य
की बपौती नहीं है, यहाँ तो
स्थूल-सूक्ष्म, स्थावर-जंगम, जड़-चेतन
सब कण-कण में व्याप्त उस
अगोचर के प्रेम में मगन
उसके प्रेम की अपार महिमा का
गुणगान कर रहे हैं,
गुणगान कर रहे हैं।'

—छाया श्रीवास्तव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमां के उत्तर

कहते हैं कि पेरू के पिछले भूकम्प में अस्सी हजार लोग मर गये थे, क्या यह संभव है कि जो लोग मरे हैं उन सबकी आत्मा ने एक साथ शरीर त्यागने का निश्चय किया ?

अधिकतर लोगों में चैत्य पुरुष भ्रूणीय होता है जो काफी विकसित नहीं होता तथा निर्णय नहीं करता।

कम ही संख्या में मनुष्यों का चैत्य व्यक्तिगत रूप से पूरी तरह सचेतन होता है और अपना व्यक्तिगत निश्चय करता है।

३० जून १९७०

हे मां, हे दिव्य जननी, तुम्हारी पवित्रता।

बस 'उन्हीं' का अस्तित्व रहे, 'उन्हीं' का अस्तित्व रहे! . . .

२ जुलाई १९७०

जब सत्य नजदीक आता है तो यदि मन उसे समझने की कोशिश करे तो सत्य चल बसता है।

मन की वृत्ति सत्य से विपरीत होती है—इसलिये वह उसे नहीं समझ सकता।

केवल मानसिक निश्चल-नीरवता में ही तुम सत्य को जान सकते हो।

४ जुलाई १९७०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब स्वयं शरीर भी आपकी इच्छा के अनुसार अपने पुनर्गठन के लिये अभीप्सा करना प्रारंभ कर रहा है।

मेरे आशीर्वाद उसके साथ हैं ताकि यह ऐसा अवसर बन जाये कि नया बल नयी चेतना के साथ अपने-आपको प्रतिष्ठित कर सके।
६ जुलाई १९७०

आपकी सहायता से सब कुछ संभव हो जाता है और फिर समय इतना महत्त्वपूर्ण नहीं प्रतीत होता।

तुम मेरी सहायता के बारे में आश्वस्त हो सकते हो; यह भौतिक अवस्थाओं पर निर्भर नहीं करती।
८ जुलाई १९७०

जब ध्यान सहज-स्वाभाविक रूप से आता है तो शरीर बहुधा शिथिल हो जाता है और नींद पूरी तरह से हावी हो जाती है।

यह संभवतः सामान्य नींद नहीं होती। शरीर उच्चतर शक्तियों को ग्रहण करने में समर्थ हो जाता है जो उसे ग्रहणशील आराम में डुबो देती है। चेतना उसके बाद आयेगी और फिर शरीर रूपांतरित होना शुरू होगा।
१० जुलाई १९७०

मेरा प्राणिक अहं खुशी के साथ औरों के दोष देखना जारी रखता है।

जब वह यह समझ जायेगा कि दूसरों के दोषों के कारण उसका अपना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम बढ़ जाता है तो वह खुशी गायब हो जायेगी।
१२ जुलाई १९७०

व्यक्तिगत प्रयास की अपेक्षा क्या प्रार्थना अधिक प्रभावकारी नहीं है ?

प्रत्येक की अपनी उपयोगिता है, लेकिन निस्सन्देह अपने अंदर निहित आस्था के कारण अभीप्सा और प्रार्थना अधिक प्रभावकारी हैं।
१८ जुलाई १९७०

क्या भगवान् द्वारा चुने हुए आदमी का व्यक्तिगत प्रयास दिव्य शक्ति के लिये आसान काम होता है ?

भगवान् के लिये सब कुछ आनंद होता है, परंतु इस शब्द को ऐसा अर्थ देना होगा जो मनुष्य के लिये अपरिचित है।
२० जुलाई १९७०

मनुष्यों से कुछ पाने के लिये हमें मांगना पड़ता है, लेकिन हम आपसे बिना मांगे ही बहुत पाते हैं !

क्योंकि बहुधा आदमी अपनी सच्ची आवश्यकताओं से अनभिज्ञ होता है और अधिकतर व्यर्थ की चीजें मांगता है, जब कि दिव्य चेतना हमेशा ठीक वही देती है जो आदमी के विकास और उत्थान के लिये जरूरी हो।
२४ जुलाई १९७०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब अहंकार की हानि होती है तो वह एक बड़ी उपलब्धि होती है।

कहा जा सकता है कि यह सच्ची सत्ता की पूर्ति होती है।
२६ जुलाई १९७०

जब आदमी योग में अपनी पूरी सत्ता के भाग लेने के लिये अभीप्सा करता है तो क्या यह कहा जा सकता है कि उसने पूर्ण योग शुरू कर दिया है ?

हां, जब शरीर के कोषाणुओं की चेतना भगवान् की उपस्थिति और उनके कर्म को देखती है तो तुम पूर्णयोग के ठीक मार्ग पर होते हो।
२८ जुलाई १९७०

माताजी ने किसी से कहा था कि भारत की रक्षा ऊपर से शक्ति के अवतरण पर निर्भर है।

तो माताजी, सारी बात घूम-फिर कर योग पर आ जाती है।

भारत यौगिक ज्ञान का अभिभावक है, लेकिन यह ज्ञान जड़वाद से ढक गया था। श्रीअरविन्द ने उसे जगाया है। अब केवल उसका प्रसार करना बाकी है।
३० जुलाई १९७०

क्या यह कहा जा सकता है कि अगर आदमी अब सच्चा और निष्कपट हो तो पिछली कोई भी भूलें ऐसी नहीं रहतीं जो सुधारी न जा सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई चीज ऐसी नहीं है जो सुधारी न जा सके, यहांतक कि सत्ता के अधिक शुद्ध और निष्कपट बनने पर पिछले कर्मों के परिणाम भी सुधर सकते हैं।

लेकिन यह कभी न भूलो कि दिव्य चेतना के लिये सत्ताओं और वस्तुओं के मूल्य मानव चेतना से अलग होते हैं।

१ अगस्त १९७०

जिसे अनन्त ने चुन लिया है वह बचकर निकल नहीं सकता, लेकिन यह भी सत्य है कि वह बचकर निकलना चाहता है। ऐसा क्यों होता है, माताजी ?

मनुष्य उससे डरते हैं जिसे वे नहीं जानते, विशेषकर उससे जो उनसे बहुत अधिक उत्कृष्ट हो।

३ अगस्त १९७०

अपने बारे में परेशान होने की जगह शरीर आपका निष्ठावान् सेवक होना चाहता है।

यह बहुत अच्छा है। उसे अधिकाधिक अवसर मिलेगा। अब भी सारा प्रयास भागवत कार्य के लिये दिया जा रहा है।

५ अगस्त १९७०

प्राण की शुद्धि बहुत बड़ी आवश्यकता बन गयी है।

प्राण अहंकार का दुर्ग है। अहंकार को पद छोड़ना होगा।

केवल एक इच्छा-शक्ति का मूल्य है—वह है परम प्रभु की इच्छा।

५ अक्तूबर १९७०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिक नीरवता के बिना मैं मार्ग पर प्रसन्न नहीं रहता।

अगर तुम्हें इच्छा के अनुसार मानसिक नीरवता प्राप्त होती है तो यह अपने-आपमें एक बड़ी प्राप्ति है और इससे तुम्हें उस दिन तक धैर्य प्राप्त होता रहेगा जबतक तुम्हारा सारा जीवन मानसिक नीरवता में से न गुजरे।
७ अक्तूबर १९७०

तुम्हारी विजय, हे दिव्य जननी, तुम्हारी ही विजय—यही हमारी एकमात्र आशा है।

विजय निश्चित है। हमें अपने-आपको उसे देखने के लिये तैयार करना, और उसमें भाग लेना है।
आशीर्वाद।
९ अक्तूबर १९७०

क्या मेरे अंदर अधैर्य का कम होना श्रद्धा के बढ़ने का चिह्न है?

यह निःसंदेह दिव्य प्रज्ञा पर प्रबुद्ध विश्वास की ओर पहला चरण है।
११ अक्तूबर १९७०

जब अभीप्सा बलवान् और निष्कपट हो तो चेतना में परिवर्तन आता है। उसे कैसे स्थिर रखा जाये ?

अभीप्सा को अधिकाधिक और बार-बार ऊपर उठने देना चाहिये।
१५ अक्तूबर १९७०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या मनुष्य का मन उसे वैश्व लय के साथ मिलने से रोकता है ?

बहुत बार विरोधी शक्तियों द्वारा भ्रष्ट हुआ प्राण और प्रायः हमेशा मन जो वैश्व लय के स्थान पर अपने नियम बिठाना चाहता है।
१७ अक्तूबर १९७०

सोसायटी समाचार

वार्षिक शैक्षिक शिविर तथा वर्कशॉप का आयोजन २० से २६ मई तक बीच ऑफिस में किया गया। इसमें देश भर से आये हुए करीब ५० शिक्षाविदों ने भाग लिया। इनका लक्ष्य था श्रीअरविन्द तथा श्रीमां के दृष्टिकोण से सर्वांगीण शिक्षा को समझने का प्रयास करना ताकि बच्चों को उसी तरीके से शिक्षा देने का प्रयास किया जा सके। इसमें शिक्षकों ने विभिन्न प्रकार के व्यावहारिक सुझावों पर भी काम किया, प्रकृति के साथ बच्चों का लगाव लगाने के लिये भी कई प्रयोग किये गये। यह शिविर इतना सफल रहा कि अन्तिम दिन सभी ने यह कहा कि शिक्षा के बारे में वे एक नया दृष्टिकोण लेकर घर जा रहे हैं।

हलद्वानी केन्द्र ने २० अप्रैल को वहां के स्थानीय जेल में श्रीअरविन्द की एक पुस्तक का हिन्दी अनुवाद बंटवाया। केन्द्र के श्री नानक चंद ने कैदियों को श्रीअरविन्द के बारे में, अलीपुर जेल की उनकी अनुभूति के बारे में बताया।

एक चीज के बारे में हम सुनिश्चित हो सकते हैं कि हिन्दू-मुस्लिम एकता राजनीतिक बैठ-बिठाव से या कांग्रेस की चाटुकारिता से नहीं पायी जा सकती। इसे हृदय में और मन में गहराई में जाकर खोजना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा क्योंकि अनैक्य के, अलगाव के कारण जहां हैं वहीं उनका उपाय भी खोजना चाहिये। समस्या को सुलझाने का प्रयत्न करते हुए यह अच्छा होगा कि हम याद रखें कि हमारे भेदभावों का सबसे बड़ा कारण है गलतफहमी, कि प्रेम ही प्रेम को बाधित करता है और बल ही बलवान् को मनाता है। अधिक अच्छी पारस्परिक समझ और सहानुभूति के द्वारा हमें गलतफहमी के कारणों को हटाने का प्रयत्न करना चाहिये। हमें अपने मुसलमान भाई के प्रति स्वदेशानुराग का अडिग प्रेम प्रसारित करना चाहिये। और सदा यह याद रखना चाहिये कि उसमें भी नारायण का वास है और उसे भी हमारी भारत माता ने अपने वक्ष में स्थायी स्थान दिया है। लेकिन उसके प्रति हमें अपनी गलत पहुंच को, स्वार्थपर दुर्बलता एवं कायरता के वश की जानेवाली चाटुकारिता को बंद करना होगा। हमें विश्वास है कि कठिनाई से बरतने का यही व्यावहारिक तरीका है। राजनीतिक प्रश्न के तौर पर हमें हिन्दु-मुस्लिम समस्या में कोई रस नहीं, राष्ट्र-समस्या के तौर पर इसका बड़ा महत्त्व है।

धार्मिक विचार और अनुभूति में से समस्त निम्नता, संकीर्णता तथा छिछलेपन का त्याग कर दो। विस्तृतम क्षितिजों से भी अधिक विस्तृत बनो, उच्चतम कंचनजंगा से भी अधिक उच्च बनो, गभीरतम समुद्रों से भी अधिक गभीर बनो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

If we allow a falsehood, however small, to express itself through our mouth or our pen, how can we hope to become perfect messengers of Truth? A perfect servant of Truth should abstain even from the slightest inexactitude, exaggeration or deformation.

अगर हम बहुत ही छोटे मिथ्याचार को, वह चाहे जितना छोटा क्यों न हो, अपने मुख या अपनी लेखनी से प्रकट होने दें तो हम सत्य के सच्चे सन्देश-वाहक बनने की आशा कैसे कर सकते हैं ? सत्य के सच्चे सेवक को जरा-सी भी भूल, जरा-सी भी अतिशयोक्ति या अशुद्धि से बचना चाहिये।

—श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सम्पादकीय' :

आध्यात्मिक क्रांति

(१)

सारे संसार में इस समय अंध अस्तव्यस्तता है, ऐसा कोई राष्ट्र बचा नहीं जहां सुख-शांति हो। जब पृथ्वी पर चारों ओर चीख-पुकार, आगजनी, अत्याचार का बोलबाला है तो भारत उस व्याधि से अछूता कैसे रह सकता है ? फिर भी हम भाग्यशाली हैं कि हमारे ऊपर भागवत कृपा का वरद हस्त है, क्योंकि हमारे सामने मानों भावी कार्य की रूपरेखा श्रीअरविन्द ने अतीत में प्रस्तुत की थी। अगर हम—केवल राष्ट्र का सत्ताधारी समूह नहीं—बल्कि हम सामान्य नागरिक उस रूपरेखा को अपना लें, तो बहुत संभव है, हम न केवल अपने राष्ट्र की सहायता कर पायेंगे बल्कि अपने जीवन को सार्थक बनाकर उसे उज्ज्वल क्रांति से भर देंगे। श्रीअरविन्द की रूपरेखा ऐसा चित्र खींचती है—

"... हम केवल सरकार में परिवर्तन लाने से संतुष्ट नहीं हैं बल्कि अपने राष्ट्र के निर्माण में हाथ बंटाना चाहते हैं। उस महत् कार्य में राजनीति एक छोटा-सा अंग मात्र है। हम अपने-आपको न केवल राजनीति में, न केवल सामाजिक समस्याओं के लिये समर्पित करेंगे; न केवल धर्मविज्ञान, दर्शन, साहित्य और विज्ञान को समर्पित होंगे, बल्कि हम इन सबको एक ही सत्ता में सम्मिलित करके राष्ट्र को पूर्ण करेंगे और वह सत्ता है धर्म। हम मानते हैं कि सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण काम है धर्म की सत्ता को प्राप्त करना। इस धर्म को हम सार्वभौमिक मानते हैं। यह धर्म ही जीवन का एक शक्तिशाली विधान है, मानव विकास-चक्र का महान सिद्धांत है, आध्यात्मिक ज्ञान और अनुभूति की राशि है जिसकी रक्षा करना हमेशा से भारत की नियति रहा है। भारत को केवल उसका रक्षक ही नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनना है, उसे उसका उदाहरण भी बनना है और यही उसका "मिशन" है। यही वह धर्म है जो सनातन और शाश्वत है। विदेशी शक्ति के दबाव के कारण भारत को जो आघात लगे, उसके कारण धर्म की बाहरी संरचना काफी हद तक भुलायी न गयी किंतु उसकी जीवंत वास्तविकता को लोग भूल गये। क्योंकि भारत के धर्म को जीवन में उतारा न जाये तो उस धर्म का अर्थ नहीं रहता। उसे जीवन के अंश के रूप में नहीं, बल्कि समस्त जीवन में व्याप्त होना चाहिये। इस धर्म की विशाल शक्ति को हमारे समाज में, हमारी राजनीति में, साहित्य में, विज्ञान में, व्यक्तिगत चरित्र में, स्नेह और अभीप्सा में फैलकर उन सबका पुनः निर्माण करना होगा। इस सनातन धर्म के मर्म को समझना, उसके सत्य की अनुभूति पाना, धर्म जिन उच्च भावनाओं को जगाता है उनका अनुभव करना और उन्हें जीवन में अभिव्यक्त करना, कार्यान्वित करना—यही कर्मयोग का अर्थ है। मैं मानता हूं कि मानव जीवन का आदर्श है योग और इसी योग के लिये भारत उठ रहा है। योग के द्वारा भारत अपनी सच्ची स्वाधीनता, ऐक्य और गौरव प्राप्त करने की शक्ति पायेगा और योग के द्वारा ही उन्हें सुरक्षित रखने की शक्ति भी पायेगा। मैं भविष्य में आध्यात्मिक क्रांति का आगमन देख रहा हूं। भौतिक जीवन तो मात्र उसकी परछाईं और प्रतिबिम्ब है . . .

"मैं जानता हूं कि भारत की नियति है अपने स्वतंत्र जीवन और अपनी स्वतंत्र संस्कृति को अपने बल से संपादित करना। उसके भाग्य में लिखा है कि वह संसार के सब राष्ट्रों की अगुआनी करे। भारत की नियति स्पष्ट है। अब यूरोप को देखें। वह अपनी राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और नैतिक समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने में असमर्थ रहा फिर भी समाधान पाने के लिये परीक्षण पर परीक्षण उत्तेजित हड़बड़ी में करता गया। किंतु असफलता पर असफलता उसके हाथ लगी, परंतु उसने इन असफलताओं को प्रगति का नाम दे दिया।

"हमें याद रखना चहिये कि हमारे साधन उतने ही उच्चाशयी होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहियें जितना हमारा उद्देश्य हो। साधन को खोजने के लिये और उनका उचित उपयोग कर पाने के लिये जिस शक्ति की हमें आवश्यकता है उसे हम अंतःस्थित शक्ति के शाश्वत स्रोत को ढूंढ़ कर ही प्राप्त कर पायेंगे।

"इस सनातन धर्म के बहुत धर्म-ग्रंथ, ज्ञान-ग्रंथ हैं, जैसे वेद, वेदांत, गीता, उपनिषद्, दर्शन, पुराण, तंत्रविद्या और वह न तो कुरान और न बाइबल को ही नकारेगा। लेकिन सनातन धर्म का सच्चा, सबसे अधिक प्रामाणिक धर्मग्रंथ मनुष्य के हृदय में विराजमान है जहां शाश्वत प्रभु का निवास होता है। हम अपनी आन्तरिक आध्यात्मिक अनुभूतियों के द्वारा ही संसार के धर्मग्रंथों का प्रमाण और स्रोत पायेंगे। और उसी स्रोत से हम ज्ञान के विधान को पायेंगे और प्रेम और आचार-व्यवहार द्वारा कर्मयोग का आधार और प्रेरणा प्राप्त करेंगे ...।"

(क्रमशः) —अनुबेन

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा...... ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के ४० रु० और पुरोधा के ५० रु० शीघ्र भेजें। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायेगा, न ही अगला अंक वी० पी० पी० से जायेगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो ८०० रु० देकर अग्निशिखा के और १,००० रु० देकर पुरोधा के आजीवन सदस्य बन सकते हैं। आजीवन सदस्यता २० वर्ष के लिये मानी जायेगी।

संपर्क-सूत्र—पुरोधा एवं अग्निशिखा
श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५ ००२

तमिलनाडु में हिन्दी पढ़नेवाले, विशेषतः डाक-विभाग में हिन्दी जाननेवाले बहुत ही कम हैं। अतः आपसे अनुरोध है कि धनादेश अथवा पत्र भेजते समय आप अपना पता हमेशा अंग्रेजी में, स्पष्ट पढ़े जानेवाले बड़े अक्षरों में, पिनकोड के साथ लिखा करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

सितम्बर

१. केन्द्रीय सत्ता वह है जिस पर और सब आश्रित होते हैं। अगर वह अपना पूरा-पूरा समर्पण कर दे, यानी अपनी अलग-थलग पूर्णता की मांग न करे, ताकि वह भगवान् का यंत्र बन सके, तो मन, प्राण और शरीर के लिये समर्पण करना आसान हो जाता है।

२. यहां एक चेतना कार्य कर रही है। हर एक जब कभी इस दिव्य चेतना के विरुद्ध जाता है तो हर बार जब वह ऐसा करता है तो अपनी चेतना में से कुछ खो बैठता है।

३. जब चैत्य सत्ता जागती है तो तुम अपनी अंतरात्मा के बारे में सचेतन हो जाते हो।

४. जब कभी कोई दिव्य चेतना के अनुसार काम करता है तो कुछ न कुछ लाभ उठाता है।

५. प्राणिक भक्ति मांगती और मांगती जाती है; वह अपनी ही शर्तें लगाती है; वह अपने-आपको भगवान् के अर्पण कर देती है परंतु अपनी शर्तों के साथ।

६. सभी पक्षपातों और अभिरुचियों से मुक्त होकर, पूर्ण अचंचलता और निश्चल-नीरवता में रहकर ही तुम सत्य का दर्शन कर सकते हो।

७. प्राणिक भक्ति भगवान् से कहती है : आप इतने महान् हैं, मैं आपकी पूजा करती हूं। अब आप मेरी इस इच्छा को, इस महत्त्वाकांक्षा को संतुष्ट करें, मुझे महान् बनायें, मुझे महान् साधक बनायें, मुझे बड़ा योगी बनायें।

८. निश्चल नीरवता में बड़ी-से-बड़ी शक्ति है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. आलोकित मन भी सत्य से मांग करता है। वह सत्य से कहता है, मेरे मत और फैसले को संतुष्ट करो। उसकी मांग होती है कि सत्य अपने-आपको उसके अनुरूप ढाले।

१०. बहुत निश्चल और स्थिर रहो, तब तुम मेरी सहायता का अनुभव कर सकोगे।

११. मन और प्राण दोनों में अपना समर्पण करते समय मोल-तोल का भाव होता है, परंतु चैत्य सत्ता और उसकी भक्ति में ऐसा कुछ नहीं होता, उसका सीधा भगवान् के साथ संबंध होता है। वह संबंध सच्ची भक्ति के योग्य होता है।

१२. प्रेम और आनंद में आगे और हमेशा आगे रहो, शांति हमेशा उठती जायेगी।

१३. चैत्य जानता है कि सत्य की आज्ञा का पालन कैसे किया जाये। वह सचमुच अपने-आपको भगवान् या गुरु के प्रति अर्पित करता है; और चूंकि वह सचाई के साथ अपने-आपको दे सकता है इसलिये सचाई के साथ पा भी सकता है।

१४. सरल रहो,
प्रसन्न रहो,
अचंचल रहो . . .

१५. जब मन अपने ही खेल खेल रहा हो और प्राण अपने ही आवेगों में बहा जा रहा हो तो चैत्य कहता है, "मुझे ये चीजें नहीं चाहियें, मैं इन चीजों के लिये नहीं, सत्य के लिये हूं।"

१६. . . . तुम अपना काम जितना अच्छा कर सकते हो करो, अपने-आपको हमेशा मेरी ओर खुला रखो—बस तुमसे यही मांग की जाती है।

१७. चैत्य सत्ता आभासों के चक्कर में आने से इंकार करती है। वह मिथ्यात्व के कारण अवसाद में आने से इंकार करती है; वह सत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को बढ़ा-चढ़ा कर भी नहीं कहती।

१८. केवल वही करो जो तुम परेशान हुए बिना मेरे सामने कर सकते हो। केवल वही बोलो जो तुम बिना कठिनाई के मेरे सामने बोल सको।

१९. और अगर चारों तरफ से हर चीज कहे कि भगवान् नहीं हैं फिर भी चैत्य इसे मानने से इंकार करता है और कहता है, "मैं जानता हूं, मैं उन्हें अनुभव करता हूं।"

२०. बहुत सीधे और सच्चे रहो। अपने अंदर किसी ऐसी चीज को आश्रय न दो जिसे तुम बिना डरे मुझे न दिखा सको। ऐसा कुछ भी न करो जिसके लिये तुम्हें मेरे सामने लज्जा आये।

२१. जब चैत्य सत्ता जागती है तो वह भावुकता-भरे मन से सारी गंदगी निकाल फेंकती है।

२२. मेरे साथ संबंध में बच्चे की तरह सरल और सहज रहो—यह तुम्हें बहुत-सी कठिनाइयों से बचायेगा।

२३. सचमुच और प्रभावी रूप से हमेशा मेरे निकट रहने के लिये तुम्हें अधिकाधिक सच्चा, मेरे प्रति खुला हुआ, निष्कपट होना चाहिये। सभी दुराव और कपट को निकाल फेंको। ऐसा निश्चय करो कि तुम कोई ऐसी चीज न करोगे जो मुझे तुरंत न बता सको।

२४. स्वयं आत्मा के अंदर समस्त संभव बल होता है लेकिन उसमें से अधिकतर पर्दे के पीछे रहता है।

२५. वास्तव में भगवान् हर व्यक्ति को वही देते हैं जिसकी वह उनसे आशा करता है।

२६. मैं आशा करता हूं कि दर्द चला गया होगा। जब ये चीजें आयें तो हमेशा माताजी को बुलाओ और उनकी शक्ति को अपने ऊपर कार्य करने दो।

२७. हमेशा माताजी पर भरोसा रखो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८. जो भगवान् को हर क्षण, हर गति में आंतरिक पथ-प्रदर्शक मानते हैं उनके लिये वे भाई की तरह निकट, मित्र, सदा निष्ठावान्, हमेशा सहायता करने के लिये तैयार होंगे।

२९. हे मेरे प्रभो, परम सत्य, मैं अभीप्सा करती हूं कि मैं जो भोजन लूं वह मेरे शरीर के सभी कोषाणुओं में तेरा सर्वज्ञान, तेरी सर्व शक्ति, तेरी समस्त उत्तमता भर दे।

३०. अगर केंद्रीय सत्ता में समर्पण करने की सच्ची इच्छा हो तो चैत्य सत्ता सामने आ सकती है।

आधुनिक भगीरथ

आपको धरती पर आये बहुत समय हो गया इसलिये अब याद न होगा कि हम सबको गुलाबी प्रकाश के चैत्य लोक से चलते समय कुछ-न-कुछ आदेश मिला था। हमारी पिछली तैयारी और भावी जीवन को दृष्टि में रखते हुए अंदर से एक प्रेरणा मिला करती है जो यह बताती है कि इस बार धरती के मंच पर हमारी क्या भूमिका होगी।

मुझे अभी तक धरती की आदत नहीं पड़ी है इसलिये यहां की भाषा मेरे लिये दुरूह है। जबतक हम पूरी तरह धरती के न बन जायें तबतक हमारे लिये देश और काल का विभाजन नहीं होता। भूत, भविष्य, वर्तमान, उत्तर, दक्षिण आदि शब्द हमारे लिये कोई अर्थ नहीं रखते, लेकिन इनके बिना धरती के वासी हमारी बात समझ ही नहीं पाते। देखूं, प्रयास तो करती हूं।

हां तो, जब मैं धरती के लिये रवाना हुई तो मुझे बताया गया कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् शीघ्र ही पृथ्वी तत्त्व की जड़ता को दूर करने के लिये, वहां के अंधेरे को प्रकाश में बदलने के लिये मानव रूप में प्रकट होनेवाले हैं। मेरा काम होगा मानव शरीर को उनकी चेतना, उनके प्रकाश, उनके आनंद को ग्रहण करने के योग्य बनाना। कहीं ऐसा न हो कि इनके अतिरेक से मानव शरीर ध्वस्त हो जाये।

मैंने अपने कार्यक्षेत्र की ओर नजर दौड़ायी। आह ! क्या वैविध्य था और उस वैविध्य में कितनी एकता थी ! वहां की हर चीज निराली थी। कोई दो मनुष्य, कोई दो फूल, कोई दो पत्ते ठीक एक जैसे न थे। मनुष्यों में कहीं हिम धवल वर्ण के ऊपर सुनहरे लहराते वेश थे तो कहीं आभा की कालिमा को लज्जित करता वर्ण और काली घुंघराली केशराशि। उनके बलिष्ठ शरीर ठोस धरती-तत्त्व से बने थे। इसी तरह से नाना प्रकार के वर्ण, नाना प्रकार की आकृतियां देखते ही बनती थीं।

मैंने धरती के वातावरण में उतर कर देखा। सभी भूखंडों में मानव शरीर को हृष्ट-पुष्ट और सक्षम बनाने के प्रयत्न हो रहे थे। बहुत-से किसी-न-किसी कठिन और दुःसाध्य कामों में लगे थे। कोई बिना जीन और लगाम लिये घोड़ों को सरपट दौड़ा रहा था तो कोई अपने वाहनों को संगीत की स्वर-लहरियों के साथ कदम मिलाना सिखा रहा था। कुछ लोगों ने दौड़ने को ही अपना चरम लक्ष्य मान लिया था और बाकी सब चीजें उसी पर न्यौछावर थीं, ये सब प्रयास तो कर रहे थे पर अपनी तपश्चर्या का अर्थ न जानते थे, उसके लक्ष्य से अपरिचित थे। मैंने कहा, 'बेचारे' !

जरा गौर से देखा। उन्होंने रथ को रथी से अधिक महत्त्वपूर्ण मान लिया था। उनकी दृष्टि में रथ को मजबूत बनाना, उसे सुन्दर रूप देना, रथों की प्रतियोगिता में सबसे आगे निकाल ले जाना ही एकमात्र करने योग्य काम था। इसके लिये वे सब कुछ कर सकते थे। नीति-अनीति, उचित-अनुचित का वहां कोई सवाल ही न था। उनकी दृष्टि में येन केन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकारेण विजयश्री लाभ करना ही एकमात्र महत्त्वपूर्ण काम था, वे उसके लिये सब कुछ करने को तैयार थे।

मैंने देखा इस सबसे उन्हें लाभ तो हुआ, वे जड़ता से ऊपर उठे, कुछ शारीरिक चेतना भी जागी फिर भी, वे असली चीज से कोसों दूर थे। दौड़ने में, भार उठाने में नये-नये कीर्तिमान बनते और टूटते जाते थे। ऐसा लगता था कि इसे छोड़कर उनके जीवन का कोई और लक्ष्य ही न था। इन चीजों का मानव जीवन में महत्त्व अवश्य है। रथ के लिये ये जरूरी हैं किंतु रथी की उपेक्षा करके नहीं। पश्चिमी भूखण्ड में उन्होंने, सत्य-चेतना की ओर से मुंह मोड़कर अपने-आपको इन्हीं चीजों में रमा दिया। वे जड़ता से काफी ऊपर उठ आये परंतु असली चीज ... उपेक्षित ही रही।

मैंने उधर से नजर घुमायी और पूरब की ओर देखा। मेरी नजर भारत पर जाकर अटक गयी। मेरी समझ में न आता था कि इसे देखकर हंसूं या रोऊं। हर एक पश्चिम की नकल करने में दत्तचित्त था। ऐसा लगता था मानों पूरब के निस्तार का एकमात्र रास्ता था बहुरूपिया बनकर पश्चिम की नकल करना। यहां घूरे के ढेर में अमूल्य रत्न पड़े थे परंतु उनकी तरफ किसी की नजर ही न जाती थी।

भारत पश्चिम के सभी देशों से बड़ा, दानवाकार देश था, वह उन छोटे-मोटे टटपूंजिया देशों का अनुसरण करता हुआ ऐसा लगता था मानों कोई हाथी मुरगी के छोटे-छोटे पद-चिह्नों पर चलने की कोशिश कर रहा हो। मुझे यह देखकर हंसी आ गयी, इसे तो सबका मार्ग-दर्शन करना चाहिये। यह कहां आ फंसा इन पिछलग्गुओं की भीड़ में।

मुझे चलते समय बताया गया था कि मुझे अपने काम में भारत से विशेष सहायता मिलेगी, मैं वहां की अवस्था को ज्यादा अच्छी तरह देखने के लिये नीचे उतर पड़ी। मुझे विशेष रूप से शारीरिक विकास के बारे में देखना था। मैंने देखा इस देश में एक समय था जब धनुर्विद्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को उपवेद का स्थान मिला था, यहां व्यायाम के इष्टदेव थे पूर्णतया भगवान् को समर्पित, शक्ति के पुंज हनुमान जी। उनका रोम-रोम भगवान् का था। वे मानव-जाति के आगे यह उदाहरण रखते थे कि शारीरिक और प्राणिक शक्ति किस तरह भगवान् को अर्पित की जा सकती है।

लेकिन आज भारतवासियों का क्या हाल है ? पश्चिम की देखा-देखी उन्होंने भी यह मान लिया कि प्रतियोगिताओं में जीतना, साम्मुख्यों में अधिक अंक पाना, नये कीर्तिमान स्थापित करना ही शारीरिक शिक्षा का चरम उद्देश्य है। अन्य देशों को हराकर अपने देश का मुख उज्ज्वल करना ही उनका लक्ष्य बन गया। और इसमें उन्हें हमेशा मुंह की खानी पड़ी। बात उनकी समझ में न आती थी कि उनका सब किया-कराया व्यर्थ क्यों हो जाता है ?

भारतवासी भूल गये थे कि उनके शारीरिक विकास का उद्देश्य दूसरों को मात देना नहीं, अपने सुन्दर, सुगठित, स्वस्थ, सुनम्य शरीर को भगवान् का मन्दिर बनाना था। उच्चतम कोटि के रथी के लिये एक पुनीत रथ तैयार करना था, आत्मा को एक ऐसा वाहन बनाना था जो उसके सर्वसमर्थ संकल्प को धारण कर सके। जो ऊपर से उतरती हुई चेतना, शक्ति और प्रेम की धाराओं को वहन कर सके, जो अपने अंदर जड़ता को सचेतन बना सके, एक शब्द में कहें तो भगवान् को अभिव्यक्त कर सके।

भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न होकर गंगा ने धरती पर आना स्वीकार किया तो भय था कि कहीं उसके वेग के कारण धरती रसातल में न चली जाये। उसके वेग को सहने के लिये साक्षात् शिवजी को आना पड़ा। भारत के शारीरिक शिक्षण का एकमात्र उद्देश्य यह है कि हर मनुष्य के अंदर सोये हुए शिव को जगाया जाये ताकि हर एक नयी चेतना के लिये गंगाधर बन सके। इस प्रयास से जो नये स्पंदन पैदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होंगे वे सब विघ्न-बाधाओं को उसी तरह बहा ले जायेंगे जैसे गंगा मार्ग में आनेवाली सब कठिनाइयों को, सब प्रकार के पाप-ताप को बहा ले जाती है।

और यह नवीन गंगा केवल सगर के पुत्रों का ही उद्धार न करेगी, वह केवल मानवजाति या प्राणी-जगत् का ही उद्धार न करेगी, वह प्रत्येक कण में भागवत चेतना को जगायेगी।

धरती की यही तो विशेषता है कि निम्नतम होते हुए भी उसमें उच्चतम बनने की क्षमता है। यह और बात है कि अन्य देशों की देखा-देखी अभी भारत ने भी कुबेर को अपना इष्टदेव बना रखा है और हर चीज में नफ़ा-नुकसान और आमदनी का मुंह देखा जाता है। मैं जानती हूं भारत का उत्थान तभी होगा जब यह अपने हर क्रिया-कलाप में भगवान् की अभिव्यक्ति के लिये तैयारी करेगा। जब तक कोई अन्य उद्देश्य भारत के आगे रहेंगा तबतक उसकी पराजय निश्चित है। मेरा काम होगा भारत को जगाना। उसकी आंखों में अंगुली डालकर दिखाना कि नव प्रकाश की गंगा तेजी से बढ़ती चली आ रही है। उसे अपने शरीर को ऐसा बनाना चाहिये कि वह आधुनिक भगीरथ बनकर उस प्रकाश को आत्मसात् कर सके, उसके साथ आनेवाली चेतना को अपना सके और उस दिव्य प्रेम का पात्र बन सके जो सबसे बड़ी शक्ति के साथ उतर रहा है।

—रवीन्द्र

'पुरोधा' अक्तूबर ७८' से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

युद्ध और राजनीति

अब भारत की स्वाधीनता-प्राप्ति के लिये कई लोग अनेक कारण बताते हैं, जैसे अगस्त में जोरदार आंदोलन के कारण, असहकार के कारण, आतंकवादी आंदोलन के कारण, सुभाषचन्द्र बोस की इण्डियन नैशनल आर्मी के कारण हमें स्वतंत्रता प्राप्त हुई, किंतु वह मुख्य कारण जिसने निर्णयात्मक भूमिका निभाई थी, या तो उसे पहचाना न गया या उसकी पूरी तरह से अवज्ञा कर दी गयी। श्रीअरविन्द ने जो कहा है उसके आधार पर हम दावे से कह सकते हैं कि उनकी शक्ति ने स्वाधीनता प्राप्त करने में भारत की सहायता की थी। उसी तरह उनकी शक्ति ही मुख्यतः मित्र-राष्ट्रों की विजय और जापान की पराजय की जिम्मेवार थी। वास्तव में बचपन से ही उनका चिरंतन स्वप्न यही रहा था कि भारत स्वाधीन हो। पांडिचेरी आकर भी, अपनी तीव्र साधना के काल में भी वह स्वप्न उनके मन में रमा रहा और वे भारत की स्वाधीनता के लिये अनथक, सूक्ष्म कार्य करते रहे जबतक कि उन्हें यह विश्वास न हो गया कि भारत की मुक्ति अवश्यंभावी हो गयी है। मैंने जब उनसे १९३५ में पूछा कि क्या अब भी वे भारत की स्वाधीनता के लिये प्रयत्न कर रहे हैं तो उन्होंने उत्तर दिया, "अब भारत की स्वाधीनता की बात निश्चित हो चुकी है। अपनी स्वाधीनता को लेकर भारत क्या करेगा यही प्रश्न है क्योंकि किसी ने उसकी चिंता नहीं की है . . . इसलिये अब मुझे इसकी चिंता करनी पड़ेगी।"

स्वाधीनता-प्राप्ति की सफलता के कई कारण हो सकते हैं जो भले ही अनिवार्य रहे हों किंतु हम उन्हें केवल आंशिक रूप में सहयोगी मान सकते हैं। इन कारणों में सुभाषचन्द्र बोस की 'इण्डियन नैशनल आर्मी'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के स्वाधीनता-प्राप्ति के दावे के बारे में मैं कुछ कहना चाहूंगा। स्वाधीनता के दावेदारों का चाहे जो अर्थ हो, लेकिन उस सेना ने जो भूमिका अपनायी थी वह अत्यंत खतरनाक परिणामों से भरी हुई थी। मुझे आश्चर्य हो रहा है कि हमारे देशवासियों को उसकी भनक तक कैसे न पड़ी! 'इण्डियन नैशनल आर्मी' शायद जानती न थी कि वह बहुत भयंकर साहस कर रही थी। क्या वह सोच रही थी कि जापान भारत को जीतने के बाद चुपचाप चला जायेगा और 'इण्डियन नैशनल आर्मी' को विजय का आनंद लेने का अवसर मिलेगा! या फिर 'इण्डियन नैशनल आर्मी' क्या इस धोखे में थी कि भारत जापान से युद्ध करके उसे भगा पायेगा? श्रीअरविन्द ने संकेत दिया था कि अगर जापान ने भारत में प्रवेश कर लिया तो हमारी कैसी दशा होगी—"जापान का साम्राज्य अभी युवा है। वह औद्योगिक और सैनिक शक्ति की नींव पर खड़ा है और उसका झुकाव पश्चिम की ओर है। जापान ब्रिटिश साम्राज्य से बहुत ज्यादा खतरनाक है। ब्रिटेन अब बूढ़ा हो चला है और हमारे लोगों ने उसके साथ व्यवहार करना भी सीख लिया है। ब्रिटेन अब लुप्त होने की तैयारी कर रहा है।"

युद्ध के समय आश्रम को भी काफी परेशानी और असुविधाएं झेलनी पड़ी थीं। विश्व-युद्ध के समय मित्र-राष्ट्रों को समर्थन देने के कारण हमें अपने देशवासियों के कोप का भाजन होना पड़ा और उनकी गालियां सहनी पड़ीं। ऊपर से आश्रम के साधकों की नाराजगी भी सुननी पड़ी। हमारे कई साहसी भारतीय वीरों ने इस भीषण युद्ध में अपना बलिदान दिया था। जिन क्षेत्रों में बमबारी का खतरा था, वहां रहनेवाले भक्तों के बच्चों के लिये आश्रम को अपना दरवाजा खोलना पड़ा। इस आकस्मिक बढ़ावे के कारण हमारा समूह एकदम बड़ा हो गया। तब हमारे सामने आर्थिक कठिनाई खड़ी हो गयी। हमारे साधन पर्याप्त न थे। सरकार के द्वारा लगाये गये प्रतिबंध और रोकथाम के कारण अति आवश्यक खाद्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामग्री में या तो कटौती की गयी थी या उनकी सप्लाई सरकार ने कम कर दी थी। इतनी मुसीबतों के बाद अंतिम तिनका अब गिरा! नियति का सबसे बड़ा व्यंग्य यह था कि आश्रम ने विश्व-युद्ध में इतनी सहायता दी थी फिर भी उसे शत्रु के 'एजेन्टों' और जासूसों का अड्डा समझा जा रहा था। हमें आशंका थी कि पुलिस तलाशी करेगी। इसके अलावा हवा में अफवाह फैली हुई थी कि आश्रम को तोड़-फोड़ कर छिन्न-भिन्न कर दिया जायेगा। उसका कारण यह हो सकता है कि ब्रिटिश सरकार कभी विश्वास नहीं कर पा रही थी कि उनके साम्राज्य के एक समय के कट्टर शत्रु, श्रीअरविन्द सचमुच उनके सहायक हो सकते हैं! कहीं ऐसा न हो कि उनका युद्ध का अनुदान केवल एक झीना परदा हो जिसकी आड़ में वे गुप्त रूप से क्रांतिकारी क्रिया-कलाप में लगे हों? दुर्भाग्यवश आश्रम में ऐसे साधक भी थे जो हिटलर की विजय चाहते थे, इसलिये नहीं कि उन्हें हिटलर के लिये प्रेम था बल्कि उन्हें अंग्रेजी हुकूमत से भयंकर घृणा थी। ऐसे साधकों के लिये श्रीअरविन्द ने एक सख्त संदेश भेजा था: "अगर कुछ लोग चाहते हैं कि आश्रम को विसर्जित कर दिया जाये तो वे आकर मुझसे कह सकते हैं और पुलिस उसे विसर्जित करे उससे पहले ही मैं स्वयं उसे विसर्जित कर दूंगा . . . संसार ने जितने संकट देखे हैं उन सबमें हिटलरवाद सबसे अधिक भयंकर है।"

एक और असुविधा जो कुछ देर बनी रही, वह थी जापानी वायु-सेना द्वारा पांडिचेरी पर बमबारी की संभावना। जैसे ही 'ब्लैक आउट' की संकट-सूचना सुनाई देती, आश्रम की सब रोशनियां गुल करनी पड़तीं। एक दिन संकट-सूचना का भोंपू सुनाई दिया, श्रीअरविन्द अपने बिस्तर पर बैठ गये, माताजी श्रीअरविन्द के कमरे में थीं, वे कुर्सी पर बैठ गयीं और हम दो, जो उस समय 'ड्यूटी' पर तैनात थे, वहीं बैठ गये। चंपकलाल माताजी के पास थे . . . थोड़ी देर बाद 'ऑल क्लियर' का संकेत सुनाई दिया, हम अपने-अपने काम में लग गये। एक दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द के 'टेबल-लैम्प' पर माताजी ने मोटा कपड़ा डाल कर उसे ढंक दिया और वे मुस्कुरा कर बोलीं, "प्रभु, आपका लैम्प तीनों सड़कों पर प्रकाश डालता है।" श्रीअरविन्द ने मुस्कुरा कर पूछा, "तो क्या मुझे भी कालिमा धारण करनी होगी ?" सचमुच कोई जापानी हवाई जहाज पांडिचेरी तक आया ही नहीं। मुझे माताजी और श्रीअरविन्द को किसी भावी संकट के लिये मनुष्यों की तरह व्यवहार करते हुए देखकर बड़ा मजा आता। उनके काम करने का तरीका यही था। मैं अपनी छोटी बुद्धि से यही सोचता था कि चूंकि, वे दिव्य व्यक्ति हैं और बहुत गुह्य शक्तियों के स्वामी हैं इसलिये ये सब मानवीय मापदण्ड उनके लिये अनावश्यक हैं और केवल बाहरी तौर पर किये जाते हैं। लेकिन मैंने इस प्रसंग और अन्य कई प्रसंगों में देखा कि माताजी गंभीरता से इन मानवीय उपायों में लगी रहती थीं। भले ही माताजी और श्रीअरविन्द को अंतिम सफलता का पूरा विश्वास हो फिर भी जबतक सफलता पूरी तरह प्राप्त न हो जाती, वे अपनी शक्ति का दबाव उस समस्या पर डालते रहते थे।

विश्व-युद्ध के समय बमबारी की संभावना के लिये सुरक्षा की काफी तैयारी होने लगी। खंदक खोदे गये और बालू के बोरों का अंबार लगाया गया। हमने सुना कि जब माताजी को इस तैयारी के बारे में बताया गया तो उन्होंने किसी से व्यक्तिगत रूप से कहा, "वातावरण में ऐसी दिव्य शक्ति और शांति फैली हुई हैं कि आक्रमण एकदम असंभव है।"

इस अध्याय को समाप्त करने से पहले मैं यह कहे बिना नहीं रह पाता कि सारा आश्रम भारत की स्वाधीनता में बहुत उत्सुकता से रस ले रहा था, हालांकि ऐसी भ्रांति फैली हुई थी कि हम केवल अपनी आध्यात्मिक मुक्ति में ही तल्लीन रहते हैं। जब भारत की मुक्ति का समाचार आया तो हमने उसका उत्सव बाहर की जनता की तरह उतने ही जोर-शोर से मनाया जितने उत्साह से वे मना रहे थे। हम विशेष रूप से प्रसन्न थे क्योंकि स्वाधीनता की विजय श्रीअरविन्द के जन्म-दिवस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर हुई थी। इस महान् मुक्ति-पर्व पर श्रीअरविन्द से भारत सरकार ने आग्रह किया कि वे राष्ट्र को संदेश दें। अगले अध्याय के आरंभ में मैं उनका पूरा संदेश दूंगा जिसे वे अपने "पांच स्वप्न" कहते हैं।

"इस अवसर पर माताजी ने पहली बार श्रीअरविन्द के कमरे की छत पर अपना ध्वज फहराया था। वे उसे भारत का आध्यात्मिक ध्वज मानती हैं। इसी दिन दोपहर को माताजी अपनी छत पर आयीं और आश्रमवासियों ने 'वन्दे मातरम्' गाकर उनका स्वागत किया था। अंत में उन्होंने ऐसी भाव-भंगिमा और मुद्रा के साथ "जय हिन्द" की घोषणा की थी कि हम आज तक उस क्षण को संजोए हुए हैं। उस शाम को आश्रम का अहाता बिजली के प्रकाश से जगमगा रहा था।"[२]

इस समय यह पूछना उपयुक्त होगा कि स्वाधीनता की तारीख और श्रीअरविन्द के जन्म-दिवस का यह तादात्म्य किस तरह हुआ ? क्यों और कैसे इस तारीख को चुना गया था और उसके पीछे कारण क्या था ? निश्चय ही इस तारीख के चुनाव के पीछे कोई प्रक्रिया या प्रसंग रहा होगा ! जनता के लिये इस तारीख का तब कोई महत्त्व न हो, किंतु हमारे लिये, श्रीअरविन्द के शिष्यों के लिये, बड़ा महत्त्व था। शायद भारत के मुक्ति-आंदोलन के इतिहासकार को इस तथ्य का पता हो किंतु मुझे संयोगवश ही उस तारीख के चुनाव का कारण पता चला। उस प्रसंग का उल्लेख "फ्रीडम एट मिड नाइट" में इस प्रकार हुआ था— भारत के विभाजन का निर्णय लॉर्ड माउण्ट बैटन ने ले लिया था। वे तब भारत के वाइसरॉय थे और उन्हें यह अधिकार दिया गया था। भारतीय नेताओं ने भी उसे मान लिया था। अब प्रश्न यह था कि "ट्रांसफर ऑफ पावर" कब हो ? किस तारीख को इस अदल-बदल के लिये चुना जाये ? वाइसरॉय ने 'प्रेस कॉन्फरेंस' के लिये पत्रकारों को

[२] नारायण प्रसाद—'श्रीअरविन्द आश्रम में जीवन' पुस्तक से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुलाया। देश-विदेश से तीन सौ पत्रकार आये थे। जब माउण्ट बैटन ने अपना भाषण समाप्त किया तो तालियों की प्रचण्ड गड़गड़ाहट से सारा हॉल गूंज उठा . . . हठात् . . . किसी अज्ञात भारतीय पत्रकार की आवाज उभर आयी, सारे हॉल में बिजली की कड़क-सा सन्नाटा छा गया। उसीका अंतिम प्रश्न था।

आवाज उभरी, "सर, अगर सब नेताओं ने स्वीकार कर लिया है कि 'ट्रान्सफर ऑफ पावर' के लिये जल्द-से-जल्द निर्णय लेना आवश्यक है तो आप के मन में इस कार्य के लिये तारीख भी निश्चित होगी ?"

माउण्ट बैटन का उत्तर था, "हां, अवश्य।" प्रश्नकर्ता ने जोर डाला, "सर आपने तारीख चुन ली है, तो फिर बताइये न वह कौन-सी तारीख है ?"

इन प्रश्नों को सुनते-सुनते वाइसरॉय के दिमाग में तेजी से गणना झनझना रही थी। वास्तव में उन्होंने कोई तारीख चुनी ही न थी, फिर भी उन्हें पता था कि यह कार्य जल्दी करना था . . . वे खचाखच भरे कक्ष की ओर ताकते रहे। पत्रकारों के चेहरे उन्हीं की ओर उत्सुकता से उठे हुए थे . . .

उन्होंने कहा, " 'मैंने ट्रान्सफर ऑफ पावर' के लिये तारीख तय कर ली है।"

उनके मन में तब भी मानों तेजी से घूमते हुए चक्र में थिरकती हुई संख्याएं सनसना रही थीं . . . फिर चक्र मानों चरमरा कर थम गया . . . माउण्ट बैटन ने उसी क्षण निर्णय ले लिया। उनके जीवन की अत्यंत विजयोल्लास की घड़ी के साथ यह तारीख जुड़ी हुई थी। वह ऐसा दिन, ऐसी तारीख थी जब बर्मा के जंगलों में जूझने और लंबा संघर्ष करने के बाद (दूसरे विश्व-युद्ध में) आखिरकार उस युद्ध का अंत हुआ था, जापानी साम्राज्य का बिना किसी शर्त के उनके सामने समर्पण हुआ था . . .।

बर्मा के जंगलों का विजेता जो भारत का मुक्तिदाता होने जा रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, भावनोन्माद से कांपती हुई आवाज में बोला, "भारतीय नेताओं के हाथों में 'ट्रांसफर ऑफ पावर' अगस्त १५, १९४७ को दिया जायेगा।"

अपनी ही बुद्धि से, स्वेच्छा से लिया गया यह निर्णय मानों पत्रकारों पर वज्रपात-सा गिरा। बकिंगहम राजभवन में, डाउनिंग स्ट्रीट (अंग्रेज सरकार का मुख्य दफ्तर) में, हाउस ऑफ कॉमन्स के गलियारों में, किसी को भी भनक न पड़ी कि भारतीय अभियान पर ब्रिटेन का परदा इतनी तेजी से गिर जायेगा। दिल्ली में भी वाइसरॉय के घनिष्ठ सहयोगियों में भी किसी को कानों कान खबर न मिली कि उनके साहब क्या करने जा रहे थे! इतना ही नहीं भारतीय नेता—जिनके साथ वे घण्टों बातचीत में बिताते थे—उन्हें भी पता न था कि वे इतनी उतावली में निर्णय करेंगे . . .

आजकल लोग कहेंगे, "इसमें क्या रहस्य है? जैसा कि माउण्ट बैटन ने कहा था, उस तारीख को उन्होंने इसलिये चुना क्योंकि वह दिवस उनके जीवन की एक गौरवशाली सफलता का हस्ताक्षर था।" फिर भी हम यह पूछ सकते हैं कि आखिर इतनी निश्चयात्मक उतावली में निर्णय क्यों लिया गया था? शायद वे यह न चाहते हों कि उनके चुनाव का कोई विरोध करे। अगर उन्होंने बहुत समय पहले घोषणा की होती तो संभव है, उसका विरोध किसी-न-किसी कारण को लेकर किया जाता।

अपनी विजय की स्मृति को जाग्रत् करने के लिये माउण्ट बैटन ने उस दिन को एक ऐसे अवसर के साथ जोड़ दिया जिसका प्रकाश वर्षों के बीतने के साथ-साथ सूर्य की न्याईं जगमगाता रहेगा जब कि उनकी विजय मंद पड़कर एक परछाईं मात्र रह जायेगी। अगर हमारे देशवासियों पर यह चुनाव छोड़ दिया जाता तो वे कभी इस तारीख को चुनने का स्वप्न तक न देख पाते किंतु एकमेव जो देखते रहते हैं और सब निश्चय लेते हैं उन्होंने यह तारीख चुन ली थी और उसे वह महत्त्व दिया जिसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह योग्य थी। जिन लोगों में सूक्ष्म दृष्टि होती है वे इस अविस्मरणीय तादात्म्य के पीछे उस रहस्यमय हाथ को देख पाते हैं।

जब हम श्रीअरविन्द का संदेश पढ़ते हैं तो हम देख पाते हैं कि वे सारे संसार में ऐक्य स्थापित करने में भारत की भूमिका को कितना महत्त्व देते हैं। मैं भारत के किसी भी ऐसे नेता को नहीं जानता जिसने इतने ओजस्वी शब्दों में भारत की नियति का वर्णन किया हो जैसा उन्होंने अपने 'स्वप्नों' में किया है।

माताजी का आग्रह है कि यह संदेश सारे भारत में बांटा जाये, लोग उसे पढ़ें और बार-बार पढ़ें क्योंकि आज संसार जिन समस्याओं का सामना कर रहा है उनका हल उस संदेश में है।

(क्रमशः)

—नीरदवरण

पांडिचेरी की सड़कें

चौड़ी-चौड़ी सड़कें
सड़कों के किनारे फुटपाथ
चलते-चलते आ जाता है चौराहा
और चारों दिशाओं में दूर तक जाती
लम्बी-चौड़ी सड़कें
निश्चित दूरी पर एक दूसरे को काटती हुई
नये चौराहे बनाती हुई सड़कें
साफ-सुथरी, पक्की, चिकनी
ताजी हवा से युक्त
प्रदूषण से मुक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कदमों को अनायास ही
खींचती सड़कें
जी हां, पाण्डिचेरी की सड़कें
अपने-आपमें अनुशासनबद्धता की
मिसाल हैं सड़कें
सैकड़ों वर्ष पहले बसे बसे
शहर का अत्याधुनिक शिल्प
बरबस ही मोह लेता है
सामने लहराता समुद्र
समुद्र को सीमाबद्ध करती सड़कें
सड़कों के फुटपाथ
इतने चौड़े कि सैकड़ों आदमी
कर सकते हैं मार्च एक साथ
कैसी दूरदर्शिता है
सड़क-निर्माण-शिल्प में
कितनी भव्यता है
न बच्चों के कुचलने का डर
न बूढ़ों के भटकने का भय
न हॉकरों का शोरगुल
न ठगों की भीड़भाड़
मौन रहकर लहरों की
भाषा को समझने की चेष्टा
अपने-आपको अनंत से
साक्षात्कार कराने का विशिष्ट अनुभव
महाऋषि ने चुना होगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस स्थान को अवश्य ही प्रकृति के
साथ प्रत्यक्ष वार्तालाप करने की चाह में
और बना दिया सुगम हम जैसों के लिये भी
महासागर न सही सिन्धु ही
गागर न सही बिन्दु ही
बहुत है सागर को समझने के लिये !
प्रातः सूर्योदय की अनुपम छटा
नीले लहराते आंचल से
मुख ऊपर को उठाता
रक्ताभ रवि
शुद्ध पवन के झोंकों से झंकृत
सागर की हौली हौली लहरें
संध्या को दौड़ती इठलाती
भागती गिरती
'हाइड एंड सीक' खेलती-सी लहरें
रात्रि में शांत काली चादर ओढ़
निद्रा में डूबी-सी स्वप्निल लहरें
और उन लहरों के किनारे
विद्युत् प्रकाश से जगमगाती सड़कें
बहुत देखे किनारे समुद्र के
किंतु सड़कों की मर्यादा से
मर्यादित समुद्री किनारा
दिखाती हैं सिर्फ
पांडिचेरी की सड़कें

—छाया श्रीवास्तव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यर्थ में जीवन न गंवाओ

मधुर मां, हम अपनी पुस्तकें कैसे चुनें ?

किसी जाननेवाले से पूछना अधिक अच्छा होगा। अगर तुम किसी ऐसे व्यक्ति से पूछो जिसमें, कम-से-कम साहित्य के लिये सुरुचि और कुछ ज्ञान भी है तो वह तुमसे बुरी तरह लिखी पुस्तकें न पढ़वायेगा। अब, अगर तुम कुछ ऐसी चीज पढ़ना चाहो जो आध्यात्मिक दृष्टिकोण से तुम्हारी सहायता करे तो यह और ही बात है, तुम्हें किसी ऐसे से सहायता मांगनी चाहिये जिसे कुछ आध्यात्मिक उपलब्धि हो।

देखो, दो एकदम भिन्न दिशाएं हैं; वे मिल सकती हैं क्योंकि हर एक चीज को मिलाया जा सकता है; लेकिन जैसा कि मैंने कहा, दो दिशाएं सचमुच एक-दूसरे से बहुत भिन्न हैं। एक में सतत चुनाव होता है, केवल उसी का चुनाव नहीं जो तुम पढ़ते हो, बल्कि उसका भी जो तुम करते हो, जो तुम सोचते हो, तुम्हारे समस्त क्रिया-कलाप का चुनाव। इसमें तुम्हें सख्ती के साथ वही करना होता है जो तुम्हें आध्यात्मिक पथ पर सहायता दे; यह जरूरी नहीं है कि वह बहुत संकीर्ण और सीमित हो, लेकिन उसे सामान्य जीवन की अपेक्षा जरा ज्यादा ऊंचे स्तर पर होना चाहिये, और उसमें इच्छा-शक्ति और अभीप्सा की ऐसी एकाग्रता होनी चाहिये जो तुम्हें पथ से इधर-उधर न भटकने दे, व्यर्थ में इधर-उधर न जाने दे। यह कठोर है; बहुत छोटी अवस्था में इसे अपनाना कठिन है, क्योंकि आदमी को ऐसा लगता है कि वह स्वयं जो यंत्र है, वह अभी काफी गढ़ा नहीं गया है या इतना समृद्ध नहीं है कि उसे वृद्धि और प्रगति किये बिना, जैसे-का-वैसा रहने दिया जाये। अतः, साधारण तौर पर, एक बहुत छोटी संख्या के अपवाद को छोड़कर, यह चीज बाद में, अमुक विकास और जीवन के कुछ अनुभव के बाद आती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। दूसरा मार्ग है सभी मानव क्षमताओं का यथासंभव अधिक-से-अधिक पूर्ण और समग्र विकास का, तुम्हारे अंदर जो कुछ है उस सबके, तुम्हारी समस्त संभावनाओं के विकास का मार्ग, फिर, सभी दिशाओं में जितना संभव हो उतने विस्तार में फैल जाना, अपनी चेतना को समस्त मानव संभावनाओं से भर लेने के लिये, सारे जगत् एवं जीवन को तथा मनुष्य और इन सबके कार्य को उनके वर्तमान रूप में जानना और भावी आरोहण के लिये , एक विशाल और समृद्ध आधार तैयार करना।

साधारणतः, बच्चों से यही आशा की जाती है; जैसा कि मैंने कहा, ऐसे बच्चे बहुत ही विरल अपवाद-रूप होते हैं जिनका चैत्य पुरुष इस बार जन्म लेने से पहले ही अनुभूतियां प्राप्त कर चुकता है, और जिसे और अधिक अनुभव की आवश्यकता भी नहीं होती, जो केवल भगवान् को पाना और उन्हीं को जीना चाहता है। लेकिन, ऐसे लाखों, करोड़ों में एक-आध ही होते हैं। अन्यथा, एक अवस्था तक, जबतक तुम बहुत छोटे हो, अपने-आपको विकसित करना, सब दिशाओं में जितना हो सके अपने-आपको फैलाना, अपने अंदर की सभी संभाव्यताओं को बाहर निकालना, और उन्हें अभिव्यक्त सचेतन, सक्रिय चीजों में बदलना अच्छा है, ताकि आरोहण के लिये ठोस नींव बन जाये। अन्यथा वह जरा निकृष्ट ही रहती है।

इसीलिये तुम्हें सीखना चाहिये, सीखने से प्यार करना चाहिये, हमेशा सीखना चाहिये, अपना समय नष्ट न करना चाहिये, ऐसी चीजों . . . हां तो, फालतू चीजों से अपने-आपको भरने या फालतू चीजें करने में समय नष्ट न करना चाहिये। तुम्हें हर चीज इस उद्देश्य से करनी चाहिये : अपनी संभावनाओं को बढ़ाओ, तुम्हारे अंदर जो संभावनाएं हैं उन्हें विकसित करो, नयी प्राप्त करो, और तुम जितने पूर्ण, जितने श्रेष्ठ मानव बन सकते हो बनो। यानी, इस दिशा में भी तुम्हें चीजों को गंभीरता से लेना चाहिये, यह नहीं कि चूंकि तुम यहां हो, अपना समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे-तैसे बिता दो, जितना संभव हो नष्ट करो, क्योंकि तुम्हें उसे किसी-न-किसी तरह बिताना तो है ही।

साधारणतः मनुष्यों की यही वृत्ति है : वे जीवन में आते हैं, उन्हें पता नहीं होता कि क्यों; वे जानते हैं कि उन्हें अमुक वर्षों तक जीना है, उन्हें पता नहीं होता कि क्यों; उन्हें लगता है कि उन्हें भी चले जाना होगा क्योंकि हर एक चला जाता है, और उन्हें फिर यह भी पता नहीं होता कि क्यों; और फिर, अधिकतर समय वे ऊबे रहते हैं क्योंकि उनके अपने अंदर कुछ नहीं होता, वे खोखली सत्ताएं होती हैं और खालीपन से ज्यादा उबाऊ और कुछ नहीं होता; अतः वे इसे मन-बहलाव से भरने की कोशिश करते हैं, वे बिलकुल बेकार हो जाते हैं, और जब वे अंत तक पहुंचते हैं तो वे अपना समस्त जीवन, सारी संभावनाएं नष्ट कर चुकते हैं—और सब कुछ गंवा बैठते हैं। तुम यह देखोगे : एक हजार आदमी लो, इनमें से कम-से-कम नौ सौ नब्बे इसी अवस्था में हैं। ऐसा होता है कि वे अमुक-अमुक परिस्थितियों में पैदा हुए हैं, और वे अपने समय को जहांतक बन पड़े अच्छे-से-अच्छी तरह बिताने की, जितना हो सके कम ऊबने की, जितना संभव हो कम कष्ट पाने की, जहांतक संभव हो मौज करने की कोशिश करते हैं; लेकिन परिणाम बिलकुल कुछ नहीं होता, हर चीज उबाऊ, निर्जीव, व्यर्थ और मूर्खतापूर्ण होती है। तो यह है स्थिति। मनुष्यों में बहुसंख्या ऐसों की है, और वे सोचते तक नहीं . . . वे अपने-आप से यह भी नहीं पूछते : "लेकिन वास्तव में, मैं यहां हूं किसलिये ? यह धरती क्यों है ? मनुष्य क्यों है ? मैं क्यों हूं ?" नहीं, ये सब बातें बिलकुल अरुचिकर हैं। एकमात्र रुचिकर चीज है अच्छी तरह से खाना, खूब मजा करना, खूब मन-बहलाव करना, अच्छी तरह शादी रचाना, बच्चे पैदा करना, धन कमाना और कामनाओं की दृष्टि से जितने भी लाभ हो सकते हैं, सब प्राप्त करना, और सबसे बढ़कर न तो सोचना, न विचारना और न कोई प्रश्न पूछना, और सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरह की तकलीफ से बचे रहना। हां, और फिर बिना बहुत अधिक अनर्थों के, इसमें से यों ही निकल जाना। यह साधारण स्थिति है; इसी को लोग समझदार होना कहते हैं। इस तरह से दुनिया अनन्तकाल तक गोल-गोल घूम सकती है, और वह कभी प्रगति न करेगी। इसीलिये वे सब चींटियों की तरह हैं; वे आते हैं, रेंगते हैं, मरते हैं, चले जाते हैं, फिर लौट आते हैं, फिर रेंगते हैं, फिर मरते हैं, और यही चलता रहता है। और इसी तरह शाश्वत काल तक चलता रहता है। सौभाग्यवश कुछ हैं जो और सबका भी काम करते हैं, लेकिन यही लोग हैं जो एक दिन सब कुछ बदल देंगे।

तो पहली समस्या है यह जानने की कि तुम किस तरफ होना चाहते हो : उन लोगों की ओर जो कुछ कर रहे हैं या उनकी ओर जो कुछ भी नहीं कर रहे; उन लोगों की ओर जो, शायद, यह समझ सकेंगे कि जीवन क्या है, और जो इसके लिये प्रयास करेंगे कि जीवन की किसी चीज में परिणति हो, या उनके साथ जो कुछ भी समझने की परवाह नहीं करते और अपना समय कम-से-कम कठिनाइयों के साथ बिताने की कोशिश करते हैं। और सबसे बढ़कर यह चाहते हैं कि कोई दिक्कत न हो !

हां तो, यह है स्थिति। यह पहला चुनाव है। इसके बाद और बहुत-से हैं।

तो यह लो, मेरे बच्चो !

अब, अगर तुम ध्यान करना चाहो, तो कह दो। हां या ना ? हां ? अच्छा ! अपनी चेतना से उस सबको निकालने की कोशिश करो जो अंधेरे रूप में व्यर्थ जीवन के साथ चिपका हुआ है।

२१ सितंबर १९५५ —श्रीमां

'श्रीमातृवाणी' खण्ड ७; पृ० ३०२-३०४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चैत्य चेतना को बनाये रखना

तुम जो कह रहे हो वह ठीक है। खुलने के लिये तुम्हारे मन, प्राण और चैत्य में शक्ति है परंतु बाहरी विचारों और भावों का बार-बार आना ही जोरदार बाधा देता है और इससे पिंड छुड़ाने के लिये सतत त्याग की जरूरत है। प्रकृति में कुछ ऐसी कठिनाइयां होती हैं जो आंतरिक शक्ति के बार-बार के स्पर्श से तेजी से झड़ जाती हैं परंतु जो हठ के साथ आती रहें, विशेषकर भौतिक क्षेत्र में, उन्हें प्रकृति से झड़ना स्वीकार करने से पहले समान रूप से सतत त्याग की जरूरत होती है।

*

'क' तुमसे जिस स्थिति को बनाये रखने के लिये कहता है उसे ऐसा व्यक्ति ही रख सकता है जो चैत्य स्थिति तक पहुंचने में सफल हो गया हो या जिसने उच्चतर आध्यात्मिक स्थिरता पा ली हो या जो स्वभाव से ही प्रफुल्ल और प्राण से बलवान हो। लेकिन ऐसे लोग कम होते हैं। औरों के लिये बिना उतार-चढ़ाव के पूरी तरह प्रसन्न और प्रफुल्ल स्थिति को बनाये रखना कठिन होगा। मेरा ख्याल है कि फिर भी अगर कोई कोशिश करे तो कर सकता है और निश्चय ही उस स्थिति में रह सकना चैत्य स्थिति या आध्यात्मिक स्थिरता तक पहुंचने और प्राणिक दुर्बलता और क्षुब्धता को दूर करने में सहायक होगा। तो अगर तुम कोशिश करो तो उसे पाने के लिये हमारी पूरी सहायता तुम्हारे साथ होगी।

*

अपने साथी कार्यकर्ताओं के साथ अपने संबंध में तुम्हें कोशिश यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनी चाहिये कि अपनी स्नायुओं और अपने चिड़चिड़ेपन को वश में रखो। उनके साथ गुस्से, चिड़चिड़ेपन या अभद्रता से बात न करो। इस समय अधिकतर कठिनाइयां उसी से आ रही हैं। अगर तुम्हें दृढ़ होना है तो तुम दृढ़ हो सकते हो पर साथ ही शांत और मधुर भी। अगर तुम इस बात का ध्यान रखो तो संभवतः स्थिति शीघ्र ही सुधर जायेगी ...

अगर तुम अपने-आपको माताजी के हाथ में छोड़ दो और सारी प्राणिक गतिविधियों को उनकी सामर्थ्य को सौंप दो तो कोई कारण नहीं कि तुम इन सब अग्निपरीक्षाओं को पार न कर पाओ और योग में प्रगति न करो।

१३-९-३४

*

रही बात काम की, मैं तुमसे पहले ही कह चुका हूं कि यह ठीक नहीं है कि तुम्हारे चले जाने से सामंजस्य और शांति आ जायेगी। जहां कहीं मनुष्य एक साथ काम करते हैं, वहां मतभेद, असहमति और स्वभावों की प्रतिकूलता तो रहेगी ही। अगर मानव स्वभाव बदले तभी यह हो सकता है, लेकिन यह एकदम नहीं हो सकता। तुम्हें स्थिरता में, धीरज के साथ माताजी के लिये काम करते जाना चाहिये ताकि तुम्हारे अंदर और दूसरों के अंदर परिवर्तन आ सके।

३-८-३५

*

यह तो स्पष्ट है कि तुम्हारी भौतिक चेतना और उसके साथ-ही-साथ तुम्हारा शरीर दोनों पिछले मानसिक संघर्षों के कारण थक गये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिम्मत न हारो। तुम जिस रिक्तता का अनुभव कर रहे हो उसमें ऊपर से सच्ची शक्ति आ सकती है और समस्त थकान और दुर्बलता को निकाल फेंक सकती है। उसके लिये माताजी की शक्ति तुम्हारे अंदर काम करेगी।

*

तुम्हारा पत्र पढ़कर मुझे खुशी हुई। तुमने जिन चीजों का वर्णन किया है वे चैत्य भाव हैं और यह संकेत देती हैं कि चैत्य सत्ता सामने आ रही है और उसके कार्य की अनुभूति हो रही है। इस बात का पूरा विश्वास रखो कि तुम सफल होओगे और अपने हृदय में माताजी की उपस्थिति और स्वयं अपने-आपको माताजी के अंदर अनुभव कर सकोगे।

१५-१०-१९३५

*

तुमने जो कुछ लिखा है वह सुनने में अच्छा लगता है। यह सच है कि नवजन्म हुआ है और तुम्हारे अंदर अंतरात्मा निश्चय ही विकसित होगी। भूतकाल के लिये परेशान न होओ। उसका जो भी अंश बच रहा है वह निश्चय ही चैत्य प्रकृति के विकास के साथ झड़ जायेगा और ये चीजें भूले हुए दुःस्वप्न या पूर्वजन्म की चीजों की तरह रह जायेंगी। तुम्हें बस माताजी की ओर अधिकाधिक खुलना चाहिये, उनकी शक्ति तुम्हारे अंदर अधिकाधिक जोर से काम करेगी, तुम उनके प्रेम और कृपा को सदा अपने साथी और रक्षक के रूप में अनुभव करोगे।

१६-१०-१९३५

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाग्रता

मधुर मां, आपके बहुत सारे फोटो हैं जिनमें से हर एक में अलग भाव है, तो जब हम इनमें से किसी एक पर एकाग्र होते हैं, तो क्या हम जिस फोटो पर एकाग्र हों उससे हमारे लिये कोई फर्क पड़ता है ?

अगर तुम जान-बूझकर करते हो, तो हां, निश्चय ही। अगर तुम इस चित्र को किसी विशेष कारण से चुनते हो और उसको किसी और कारण से, तो निश्चय ही उसका प्रभाव होता है। यह ऐसा है जैसे तुम मां के एक रूप की जगह दूसरे रूप पर एकाग्र होते हो; उदाहरण के लिये, अगर तुम महाकाली या महालक्ष्मी या महेश्वरी पर एकाग्र हो, तो परिणाम अलग-अलग होंगे। तुम्हारे अंदर जो भाग इन गुणों को उत्तर देता है, वह जागेगा और ग्रहणशील बन जायेगा। तो, वही बात है। लेकिन अगर किसी के पास एक ही फोटो है, वह चाहे कोई-सी क्यों न हो, और वह उस पर एकाग्र हो, चूंकि उसके पास एक ही है इसलिये इसमें और उसमें चुनाव न करे, तो इसका कोई महत्त्व नहीं है कि वह कौन-सी है। क्योंकि फोटो पर एकाग्र होने का तथ्य ही व्यक्ति को 'शक्ति' के संपर्क में ला देता है, और यही चीज है जो जरूरी है, हर किसी के लिये, जिसमें प्रत्युत्तर देने की सहज क्षमता है।

केवल तभी जब एकाग्रता करनेवाला व्यक्ति किसी विशेष संबंध के लिये अपनी कोई विशेष इच्छा अपनी एकाग्रता में जोड़ देता है तो उसका असर होता है। अन्यथा संबंध अधिक व्यापक होता है, और वह हमेशा एकाग्रता करनेवाले की अभीप्सा या आवश्यकता की अभिव्यक्ति होता है। अगर वह बिलकुल तटस्थ हो, अगर वह चुनाव न करे, किसी वस्तु-विशेष के लिये अभीप्सा न करे, अगर वह यूं हो जाये, कोरे कागज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की तरह, और बिलकुल तटस्थ, तो उसकी एकाग्रता का उत्तर वे शक्तियां और वे रूप देंगे जिनकी उसे जरूरत है और शायद व्यक्ति अपने-आप यह न जानता हो कि उसे कौन-सी विशेष वस्तुओं की जरूरत है, क्योंकि बहुत कम लोग अपने बारे में सचेतन होते हैं। वे एक बहुत अस्पष्ट-सी भावना में जीते हैं, उनके अंदर अस्पष्ट अभीप्साएं होती हैं जो मुश्किल से पकड़ में आती हैं; वह कोई व्यवस्थित, समन्वित, संकल्पित चीज नहीं होती जिसमें स्पष्ट दृष्टि हो, उदाहरण के लिये उसमें यह स्पष्टता नहीं होती कि व्यक्ति किन कठिनाइयों पर विजय पाना चाहता है या कौन-सी क्षमताएं प्राप्त करना चाहता है; साधारणतः यह भी एक काफी विकसित अनुशासन का परिणाम है। ठीक-ठीक किस चीज की जरूरत है यह जानने के लिये जरूरी है कि तुमने बहुत मनन किया हो, बहुत अवलोकन किया हो, बहुत अध्ययन किया हो। वरना यह एक धुंधली-सी छाप होती है, तुम उसे पकड़ने की कोशिश करते हो और वह भाग निकलती है . . .। ऐसा ही है न ?

तो बस ?

प्रश्न पुस्तक से बाहर का है।

(एक और बालक) माताजी, यहां कहा है : "तुम एकाग्र होने की जगह शिथिल हो सकते और ध्यान कर सकते हो।"

यह बात कहनेवाली मैं नहीं हूं ! (हंसी) अच्छा। तो ? ध्यान करने और एकाग्र होने के बीच का फर्क ?

जी हां, माताजी, क्योंकि जब हम ध्यान करते हैं, तो क्या चेतना की एकाग्रता नहीं होती ?

ध्यान !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब प्रकार के अलग-अलग ध्यान हैं! साधारणतः लोग जिसे ध्यान कहते हैं वह है, उदाहरण के लिये, कोई विषय या विचार चुनकर उसके विकास का अनुसरण करना या उसका अर्थ समझने की कोशिश करना। उसमें एकाग्रता तो होती है परंतु उतनी पूरी नहीं जितनी स्वयं एकाग्रता में होती है, जिसमें केवल वही बिंदु रहना चाहिये जिसपर तुम एकाग्र हो रहे हो, उसके सिवा कुछ नहीं। ध्यान ज्यादा विश्रांतिमय क्रिया है, इसमें एकाग्रता से कम तनाव होता है।

जब तुम किसी ऐसी समस्या को समझने की कोशिश करते हो जो तुम्हारे सामने आती है, वह चाहे मनोवैज्ञानिक समस्या हो या परिस्थितिगत, और बैठकर उसे देखते हो, समस्त संभावनाओं को देखते हो, उनकी तुलना करते हो, उनका अध्ययन करते हो, तो यह एक प्रकार का ध्यान है; और जब भी ऐसी कोई चीज होती है तो तुम इसे सहज रूप से करते हो। उदाहरण के लिये, जब तुम्हें कोई निर्णय करना होता है और तुम्हें पता नहीं होता कि कौन-सा निर्णय हो, तो साधारणतः तुम मनन करते हो, अपनी तर्क-बुद्धि की सलाह लेते हो, सभी संभावनाओं की तुलना करते हो और फिर अपना चुनाव करते हो . . . न्यूनाधिक रूप से, हां तो, यह एक प्रकार का ध्यान है।

अब, ध्यान का एक और रूप होता है जिसमें हम किसी विचार पर एकाग्र होते हैं, अपने सारे मनोयोग को उसपर इस हदतक केंद्रित करते हैं मानों बस उसी का अस्तित्व है; तब यह एकाग्रता के समान है, परंतु समग्र होने की जगह वह केवल मानसिक होती है।

समग्र एकाग्रता के अंदर प्राण और भौतिक की समस्त गतियों की एकाग्रता भी आ जाती है। एक बिंदु पर ताकने की विधि (त्राटक) बहुत प्रसिद्ध है। तो देखो, यह भौतिक भी है, तुम्हारी आंखें इस बिंदु पर लगी रहती हैं, तुम जरा भी हिलते-डुलते नहीं . . . कुछ भी नहीं . . . तुम कुछ भी नहीं देखते, उस बिंदु से अपनी नजर नहीं हटाते और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामान्यतः परिणाम यह होता है कि अंत में तुम वही बिंदु बनकर रह जाते हो। और मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानती थी जो कहा करता था कि तुम्हें इस बिंदु के पार हो जाना चाहिये, यह बिंदु बन जाना चाहिये, यहांतक कि उस बिंदु को पार कर उसकी दूसरी ओर निकल जाना चाहिये, और तब तुम उच्चतर स्तरों की ओर खुलोगे। लेकिन यह सच है कि अगर तुम एक बिंदु पर पूरी तरह से एकाग्र होने में सफल हो जाओ तो एक क्षण आता है जब पूरा-पूरा तादात्म्य हो जाता है, और एकाग्रता करनेवाले और जिसपर एकाग्रता की जा रही है, उन दोनों में कोई अलगाव नहीं रहता। पूर्ण तादात्म्य हो जाता है। तुम अपने और बिंदु के बीच फर्क नहीं कर सकते। यह समग्र एकाग्रता है, जब कि ध्यान विचार की विशेष एकाग्रता है, एकांगी है।

मधुर मां, बिलकुल न सोचने के लिये उद्घाटन!

बिलकुल न सोचना आसान नहीं है; लेकिन अगर तुम पूर्ण एकाग्रता चाहते हो तो यह जरूरी है कि बिलकुल कोई विचार न रहे।

मधुर मां, क्या एकाग्रता और निदिध्यासन ('कान्टेम्प्लेशन) में कोई संबंध है?

सभी चीजों में हमेशा कोई संबंध हो सकता है, लेकिन सामान्यतः निदिध्यासन का अर्थ होता है ऊपर की ओर एक प्रकार का उद्घाटन। यह ऊपर की ओर एक प्रकार के निष्क्रिय उद्घाटन की अवस्था है। यह अभीप्सा का काफी निष्क्रिय रूप है। बल्कि यूं कहें, तुम यह क्रिया, तुम किसी चीज के खुलने, अभीप्सा में खुलने की क्रिया करते हो; लेकिन अगर निदिध्यासन काफी पूर्ण हो तो वह एकाग्रता बन जाता है। फिर भी यह जरूरी नहीं कि वह एकाग्रता हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब एकाग्रता होती है, तो जो भाग एकाग्र होता है . . . एकाग्रता सीमित होती है या फिर . . .

एकाग्रता सीमित अवश्य होती है। तुम एक साथ बहुत-से बिंदुओं पर एकाग्र नहीं हो सकते, तब वह एकाग्रता नहीं रह जाती।

२४ अगस्त, १९५५ —श्रीमां

'श्रीमातृवाणी' खण्ड ७, पृ० २६५-२६८

चेतना की स्थिति

. . . यह सब इस पर निर्भर है कि चेतना अपने-आपको कहां रखती और एकाग्र करती है। अगर चेतना अपने-आपको अहंकार में रखती या एकाग्र करती है तो तुम अहंकार के साथ तदात्म हो जाते हो—और मन में करे तो वह मन और क्रिया-कलाप के साथ तदात्म हो जाती है, इसी तरह और सब के साथ होता है। अगर चेतना अपना जोर बाहर की ओर डाले तो कहा जाता है कि वह बाह्य सत्ता में रहती है और अपने आंतरिक मन, प्राण और अंतर्तम चैत्य को भूल जाती है। अगर वह अंदर जाये और अपने केंद्रित करनेवाले बल को वहां रखे तब वह अपने-आपको आंतरिक सत्ता या और भी गहराई में जाये तो चैत्य सत्ता के रूप में जानती है; और अगर वह शरीर के बाद ऊपर ऐसे लोकों में चढ़े जहां स्वभावतः आत्मा अपने विस्तार और अपनी स्वाधीनता के बारे में सचेतन हो तो वह और अपने-आपको मन, प्राण और शरीर ही नहीं बल्कि आत्मा के रूप में जानती है। चेतना का यह बल ही सारा भेद करता है। इसीलिये तुम्हें अपनी चेतना को हृदय या मन में एकाग्र करना होता है ताकि तुम अंदर या ऊपर जा सको। चेतना की स्थिति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब कुछ निर्धारित करती है और आदमी को प्रधानतः मानसिक, प्राणिक, भौतिक या चैत्य बनाती है, बद्ध या मुक्त करती है, पुरुष में पृथक् या प्रकृति में आवेष्टित रखती है।

—श्रीअरविन्द

सोसायटी समाचार

श्रीअरविन्द सोसायटी की वार्षिक सार्वजनिक सभा ५ अक्तूबर २००२ को होगी जिसकी विस्तृत सूचना हम इस अंक में दे रहे हैं।

सोसायटी का नारी आयोग २१, २२ तथा २३ नवम्बर को 'बीच ऑफिस', पांडिचेरी में अपनी गोष्ठी लगायेगा। विषय है "संगठित सामूहिक कार्य"। सभी का इसमें स्वागत है।

नव-विहान २००३ का 'डेस्क कैलेण्डर' बना रहा है। इसमें बारह फूलों के रंगीन चित्र होंगे और साथ ही प्रत्येक पुष्प को दिया गया श्रीमां का आध्यात्मिक अर्थ भी होगा।

इस कैलेण्डर की विशेष बात यह है कि प्रत्येक पुष्प पोस्टकार्ड पर छापा गया है और पोस्टकार्ड को कैलेण्डर से निकाल कर बाद में आप उसका उपयोग भी कर सकते हैं। इन सभी चित्रों पर श्रीमां द्वारा दिया गया पुष्प का आध्यात्मिक अर्थ और पुष्प के बारे में अन्य जानकारियां भी दी गयी हैं। दाम है ५० रुपये। कृपया अधिक जानकारी के लिये नव-विहान, श्रीअरविन्द आश्रम, पांडिचेरी—६०५००२ से सीधा पत्र-व्यवहार करें।

कर्णाटक के सोसायटी के केंद्रों और शाखाओं की वार्षिक बैठक श्रीअरविन्द कम्प्लेक्स में १७ तथा १८ जून को हुई। इसमें कर्णाटक में सोसायटी के केन्द्रों के कार्य की गति को और तेज करने के कई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुझावों पर विचार-विमर्श किया गया।

बैंगलोर में श्रीअरविन्द कम्प्लेक्स, जे० पी० नगर में नयी अतिथि-शाला का उद्घाटन १७ जून को कर्णाटक की राज्यपाल श्रीमती वी० एस० रमा देवी ने किया। इसमें ४० लोगों के रहने की व्यवस्था है।

उज्जैन (म० प्र०) में "श्रीअरविन्द तथा वेद" विषयक सभा का आयोजन १५ जून को हुआ। विक्रम यूनिवर्सिटी के उप-कुलपति डॉ० आर० एस० गुप्त ने इसकी अध्यक्षता की तथा अन्य कई सम्माननीय सज्जनों ने भी इसमें भाग लिया।

चेन्नई (तमिलनाडु) शाखा में श्रीअरविन्द आश्रम के प्रो० किट्टू रेड्डी ने "भारत और उसकी नियति" विषय पर भाषण दिया, उसके बाद रुचिकर प्रश्नोत्तरों का सत्र भी चला।

अमृत संजीवनी न्यास के साथ मिलकर सोसायटी की गुजरात राज्य-समिति ने श्री चम्पकलाल जी की जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में ९, १० तथा ११ मई को तीन दिनों का कार्यक्रम रखा।

ओमपुरी (गुजरात) शाखा ने १२ से १६ मई तक पांच दिनों का शिविर लगाया जिसमें 'सावित्री-स्वाध्याय' हुआ।

राजकोट (गुजरात) शाखा ने १३ से १६ मई—चार दिनों का 'सर्वांगीण योग की साधना' विषयक शिविर लगाया।

वारांगल (आंध्र-प्रदेश) नगरपालिका ने सोसायटी की हनमकोंडा शाखा के निकट आवासीय इलाके को श्रीअरविन्द नगर नाम दे दिया है। शाखा से लेकर मुख्य रास्ते तक जानेवाली तीन किलोमीटर की सड़क का नाम भी श्रीअरविन्द मार्ग रख दिया गया है।

अप्रैल से जून तक सोसायटी के ये पांच नये केंद्र खुले—ऊटी में ऊधगमण्डलम् में, तमिलनाडु में गोबीचेट्टपलयम् तथा रामनाथपुरम में और राजस्थान में पिलानी तथा चिरावा में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

SRI AUROBINDO SOCIETY

Society House, Pondicherry — 605 002

Notice for the Annual General Meeting

The Annual General Meeting of the members of Sri Aurobindo Society will be held on Saturday, 5th October 2002 at 4 p.m. at its registered office at Sri Aurobindo Bhavan, 8, Shakespeare Sarani, Kolkata - 700 071 to transact the following business:

1. To confirm the minutes of the last Annual General Meeting held on 13th October 2001 and Extraordinary General Meeting held on 5th January 2002.

2. To consider and approve the audited Balance Sheet and Income & Expenditure Account of the Society for the year ended 31.03.2002.

3. To consider and adopt the Executive Committee's Annual Report of Activities for the year 2001-2002.

4. To appoint an auditor for the Society for the year 2002-2003.

5. To consider and approve amendment to Rules 3(b), 5 (a), 14 and 18:

   In the earlier alterations effected in Rules 3(b), 5 (a) and 14 an attempt was made to vest the General Secretary or subsequently the Member Executive — Administration with the powers of the formal head also and doing away with the post of Chairman. At a later stage the Registrar of Societies, Kolkata, took the view that the formal head has to be a separate functionary and

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

the Member Executive — Administration cannot also function as the formal head. Since the Registrar's view was in keeping with the statutory provisions the alteration in the above Rules to that extent had to be modified. But in the earlier alterations the post of Chairman had been deleted from the Rules & Regulations of the Society. Therefore, a modification in the Rules 3 (b), 5(a), 14 and 18 has to be carried out to restore the post of Chairman as the formal head of Sri Aurobindo Society.

6. To consider any other matter with the permission of the chair.

16th August 2002 — Pradeep Narang
Pondicherry — General Secretary

Note: The members are entitled to appoint proxy. Proxies must be deposited at the Registered Office of the Society at No. 8, Shakespeare Sarani, Kolkata - 700 071, during office hours, in advance but not less than 48 hours before the time fixed for holding the meeting.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

एक चीज के बारे में विश्वास रखो—तुम्हारा भविष्य तुम्हारे ही हाथों में है। तुम जैसा बनना चाहते हो वैसे ही बनोगे। तुम्हारे आदर्श और तुम्हारी अभीप्सा की ऊंचाई के अनुपात में तुम्हारी सिद्धि भी उतनी ही ऊंची होगी। लेकिन तुम्हें दृढ़ निश्चय रखना चाहिये और अपने जीवन के लक्ष्य को कभी न भूलना चाहिये।

—श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सम्पादकीय' :

आध्यात्मिक क्रांति

(२)

श्रीअरविन्द ने अपनी ओजस्वी वाणी से हमें झकझोर दिया है। उन्होंने कई संकेतों के द्वारा हमारा मार्ग-दर्शन भी किया है। अब दूसरे भाग में वे हमें बता रहे हैं कि हमें किस तरह का भारतीय, आर्य बनना चाहिये ताकि हम भारत माता की सेवा करके उसे राष्ट्र-परिवार में उचित स्थान पर स्थापित कर पाएं। क्या भारत के आर्य साहस से इस शुभ कार्य के लिये तत्पर होंगे ?

"हमारा उद्देश्य होगा मानवजाति के कल्याण के लिये भारत का निर्माण करना—यही उस राष्ट्रीयता की आत्मा है जिसकी हम घोषणा कर रहे हैं और उसी का हम अनुसरण करते हैं। मैं मानवजाति से कहता हूं: "वह समय आ गया है जब तुम्हें एक विराट् कदम उठाना है। तुम्हें सामान्य जीवन से ऊपर उठ कर उच्चतर, गहनतर और विशालतर जीवन में प्रवेश करना होगा क्योंकि सारी मानवजाति उस दिशा की ओर मुड़ रही है। मानवजाति को जो समस्याएं परेशान करती आ रही हैं उनका समाधान केवल आंतरिक राज्य पर विजय पाने से ही हमें प्राप्त होगा। हम प्रकृति की शक्तियों को अपने आराम और विलासिता की सेवा में जोत कर समाधान प्राप्त न कर पायेंगे; बुद्धि और आत्मा की शक्तियों पर प्रभुत्व पा कर, आंतरिक और बाह्य मानव की स्वाधीनता की रक्षा करके और बाह्य प्रकृति को आंतरिक शक्ति द्वारा जीत कर ही हम सच्चा समाधान पा सकेंगे . . .।

"हम राष्ट्र से कहते हैं: "प्रभु का संकल्प है कि हम अपना स्वत्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाए रखें, यूरोप का चरित्र न अपनाएं। अपनी सत्ता से विपरीत सत्ता के विधान के पीछे-पीछे चल कर हमने पुनः जीवित होने का प्रयास किया है। हमें पीछे लौट कर अपने अंदर स्थित शक्ति और जीवन के स्रोत को ढूंढ़ना होगा। हमें अपने अतीत का परिचय पुनः प्राप्त करना होगा और भावी काम के लिये उसे पुनः जगाना होगा।

"हमें भारतीय विचार और ज्ञान के दृष्टिकोण से यूरोपीय संस्कृति का पुनः निरीक्षण करना होगा और पश्चिम की हमारे ऊपर जो मुहर छपी हुई है उसे मिटा देना होगा। पश्चिम से हम जो लेना चाहेंगे उसे हम अपने भारतीयता के रंग में रंगकर अपनायेंगे। एक बार अपने धर्म को पुनः प्राप्त करके हम उसे न केवल अपनायेंगे बल्कि उसे अपने व्यक्तिगत जीवन में, कार्यों में, सामाजिक जीवन और राजनीतिक प्रयासों में पूरा बल लगाकर चरितार्थ करने का प्रयास करेंगे।

"हम हर व्यक्ति से और विशेष कर युवकों से—जो भारत का कार्य, संसार का कार्य, प्रभु का कार्य करने के लिये उठ रहे हैं—कहते हैं—

"अगर तुम अपने मन को यूरोपीय विचारों के अधीन रखो या तुम्हारी नजर भौतिक दृष्टिकोण से जीवन को देखती रहे और साथ ही तुम यूरोपीय आदर्शों को संजो कर रखना चाहो तो तुम अपने भारतीय आदर्शों को साकार न कर पाओगे। भौतिक दृष्टिकोण से तुम कुछ भी नहीं हो, आध्यात्मिक दृष्टि से तुम सब कुछ हो। केवल भारतीय हर बात पर, हर चीज पर विश्वास कर सकता है, हर बात, हर चीज को करने का साहस रखता है और सर्वस्व का बलिदान कर सकता है इसीलिये सबसे पहले भारतीय बनो। अपने पूवर्जों की विरासत पुनः प्राप्त करो। आर्य विचार, आर्य अनुशासन, आर्य चरित्र और आर्य जीवन को फिर से अपनाओ। वेदान्त, गीता और योग को पुनः पाओ। उन्हें अपनी बुद्धि में या भावनाओं में ही नहीं, अपने समस्त जीवन में पुनः प्रतिष्ठित करो। उन्हें जीवन में उतारो और तुम महान्, शक्तिशाली, सामर्थ्यवान्, अजेय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और निर्भीक बन जाओगे। फिर तुम न जीवन से, न मृत्यु से आतंकित होओगे। तुम्हारे शब्दकोश से कठिनाई और असंभव शब्द लुप्त हो जायेंगे, क्योंकि आत्मा में ही शाश्वत शक्ति होती है। अपने बाह्य साम्राज्य को पुनः जीत पाओ उससे पहले तुम्हें अपने राज्य को, अपने आंतरिक स्वराज्य को फिर से जीत लेना चाहिए। वहां, उस आंतरिक स्वराज्य में दिव्य मां का निवास है और वे पूजा की प्रतीक्षा कर रही हैं ताकि वे तुम्हें शक्ति दें। उन पर विश्वास रखो, उनकी सेवा करो, अपने संकल्प को उनके संकल्प में निमग्न कर दो, राष्ट्र की महानतर अस्मिता में अपनी अस्मिता को निमग्न कर दो, अपने स्वार्थ को मानवजाति की सेवा में बदल दो। अपने अंदर स्थित सर्व-शक्ति के स्रोत को पुनः प्राप्त करो और बाकी सब स्वयं ही आकर तुमसे जुड़ जायेगा—जैसे सामाजिक स्वस्थता, बौद्धिक उत्कर्ष, राजनीतिक स्वाधीनता, मानव विचार पर प्रभुत्व और संसार का नेतृत्व; सब तुम्हारे पास स्वतः आ जायेंगे।"

—अनुवेन

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा...... ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के ४० रु० और पुरोधा के ५० रु० शीघ्र भेजें। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायेगा, न ही अगला अंक वी० पी० पी० से जायेगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो ८०० रु० देकर अग्निशिखा के और १,००० रु० देकर पुरोधा के आजीवन सदस्य बन सकते हैं। आजीवन सदस्यता २० वर्ष के लिये मानी जायेगी।

संपर्क-सूत्र—पुरोधा एवं अग्निशिखा
श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

अक्तूबर

१. जो भगवान् पर भरोसा करता है उसे कहीं कोई भय नहीं। अगर वह अपने मन को स्थिर और हृदय को शांत रख सके तो हर स्थिति का सामना कर सकेगा।

२. हम अपने छोटे-से अहंकार की सीमाओं से जितना अधिक मुक्त होते चलें, उतने ही अधिक आश्चर्य अपने-आपको हमारे आगे प्रकट करेंगे।

३. विरोधी शक्तियों के बारे में सोचते रहना और उनसे डरना हमारे अंदर बहुत भयानक दुर्बलता का चिह्न है।

४. विरोधी शक्तियों को संसार में इसीलिये सहा जाता है क्योंकि वे मनुष्य की सच्चाई की परख करती हैं।

५. जब विरोधी शक्तियों के साथ ठीक तरह से व्यवहार किया जाता है तो वह सब जो कुरूप और मिथ्या होता है केवल सत्य और सुन्दरता के लिये स्थान छोड़कर गायब हो जाता है।

६. भगवान् की अपार दया के प्रति सच्ची कृतज्ञता के भाव के द्वारा आदमी बहुत से संकटों से बच सकता है।

७. अगर तुम एकमात्र भगवान् को ही चाहते हो, कोई निजी लाभ नहीं चाहते तो एकमात्र भगवान् ही तुम्हारी पुकार का उत्तर देंगे।

८. युद्ध करने के लिये जिन्होंने भगवान् का नाम लिया है, वर दे कि वे शांति स्थापित करते समय तेरी कृपा को भूल न जायें।

९. भगवान् हर जगह हैं और हर जगह परम रूप में सचेतन हैं। हमें ऐसी कोई चीज न करनी चाहिये जो भगवान् के आगे न की जा सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. भगवान् के अंदर ही संरक्षण है, उन्हीं की शरण लो और समस्त भय को दूर फेंक दो।

११. हम अपने-आपको पूरी तरह और सचाई के साथ भगवान् को दे दें, तब हम उनके संरक्षण का रस पायेंगे।

१२. हमेशा भागवत उपस्थिति पर एकाग्र होओ तो सुरक्षा अधिक सहज होगी।

१३. अमीर को भगवान् धन देते हैं, लेकिन गरीब के लिये अपने-आपको दे देते हैं। सब कुछ इस पर निर्भर है कि गरीब धन को ज्यादा मूल्य देता है या भगवान् को।

१४. एकता किसी बाहरी व्यवस्था से नहीं आती, वह आती है शाश्वत ऐक्य के बारे में सचेतन होने से।

१५. ठहरो और प्रतीक्षा करो। परिणाम निश्चित है—लेकिन मार्ग और समय अनिश्चित हैं।

१६. बीती को बीत जाने दो, केवल तुम्हें जो प्रगति करनी है उसी पर केंद्रित होओ।

१७. हम एक-एक कदम करके, सत्य से सत्य की ओर बिना रुके चढ़ते चलेंगे जबतक कि हम आगामी कल की पूर्ण उपलब्धि तक न जा पहुंचें।

१८. हम भविष्य के बारे में बहुत अधिक न सोचें, उसे भागवत कृपा की निगरानी में रहने दें।

१९. यह न सोचो कि तुम क्या थे, केवल उसी के बारे में सोचो जो तुम होना चाहते हो और तुम निश्चय ही प्रगति करोगे।

२०. जो आज नहीं किया जा सकता निश्चय ही वह बाद में किया जायेगा। प्रगति के लिये किया गया प्रयास कभी व्यर्थ नहीं हुआ।

२१. सफलता की घड़ी में मनुष्य को अपने-आपसे ऊपर उठने में अधिक जागरूक रहना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२. सफलता में से गुजरना दुर्भाग्य में से गुजरने की अपेक्षा अधिक कठिन अग्नि-परीक्षा है।

२३. विजय की निश्चिति हमारे विश्वास की सचाई में है।

२४. समस्त भय, सारी अनबन, सभी झगड़े छोड़ दो। अपनी आंखें और अपने हृदय खोलो—अतिमानसिक शक्ति मौजूद है।

२५. केवल सत्य ही जगत् को भागवत प्रेम को प्राप्त करने और उसे अभिव्यक्त करने की शक्ति दे सकता है।

२६. बीमारी तुम्हारे ऊपर विरोधी शक्तियों के द्वारा कठिन परीक्षा के रूप में डाली जाती है।

२७. तुम्हें कभी डरना नहीं चाहिये, तुम्हारी अधिकतर कठिनाइयां भय से आती हैं।

२८. वे चीजें जो तुम्हारी प्रकृति में बदलना नहीं चाहतीं, एक साथ मिल जाती हैं और बीमारी के रूप में बाहर आती हैं। सशक्त अभीप्सा और सर्वांगीण परिवर्तन ही करने लायक एकमात्र चीज है। तब सब ठीक हो जायेगा।

२९. लोग जो कहते हैं उसपर कान न दो और भागवत कृपा पर श्रद्धा बनाये रखो, यथासमय सब कुछ ठीक हो जायेगा।

३०. गलत चीजों की कल्पना करना बंद कर दो तो साथ ही तुम्हारे कष्ट समाप्त हो जायेंगे।

३१. हम जिस उत्साह के साथ मन से मिथ्यात्व का त्याग करते हैं उसी उत्साह के साथ शरीर को बीमारी को त्यागना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाग्रत या स्वप्न ?

सच कहता हूं, मेरे लिये जाग्रत और स्वप्न, दोनों अवस्थाएं एक जैसी हैं। स्वप्न में जो आनंद मिलता है या यातनाएं भोगता हूं उनका असर जाग्रत अवस्था के समान ही होता है, कभी-कभी उससे भी अधिक तीव्र। आप भले हंसी उड़ा लें पर कई बार मैं बड़ी गंभीरता से सोचता हूं कि इन दोनों में से किसे सत्य मानूं और किसे मिथ्या। अनुभूति के समय कम-से-कम मुझे तो दोनों एक-सी लगती हैं।

अब उस दिन की बात ले लीजिये, मैं सुनसान बीहड़ में चला जा रहा था। वहां कोसों तक आदमी की गंध तक न थी। मैं अन्यमनस्क-सा न जाने कहां खोया हुआ था। अचानक कुछ अजीब-सी गंध आने लगी। पांव ठिठके। मन ने कहा, "खबरदार, आगे न बढ़ो, कुछ अप्रिय होने को है।"

मैंने अपने-आपको डांट पिलाते हुए कहा, "छिः, यह कैसी भीरुता! जरा-सी दुर्गंध से ही इतना घबरा गये, यही है तुम्हारा साहस और यही है तुम्हारा शौर्य ? इसीके बल पर इस बियाबान में पांव रखा था ?"

मैंने हिम्मत करके डिगते हुए पैरों को ढाढ़स दिया और कदम आगे बढ़ाये : एक, दो, तीन। जी हां, अभी तीन ही कदम बढ़ पाया था कि पैरों तले की जमीन नीचे धंसने लगी। कहीं से आवाज आयी, "अब भी संभल जाओ, अब भी समय है।" मेरे वीरत्व-भरे मस्तिष्क को यह बात बहुत अपमानजनक लगी। उसने आगे कूच का हुकुम दे दिया।

मैं आगे बढ़ने लगा। आगे की जमीन घिनौनी, काली, लिजलिजी और रपटनी थी। यहां एक-एक कदम देख-भाल कर, नाप-तोल कर रखना जरूरी था। कोई बात नहीं, मैंने सोचा, जब आगे बढ़ना ही है, तो फिर इन छोटी-मोटी बातों से, इन जरा-जरा-सी रुकावटों से क्या डरना ! मेरे अंदर कभी सच्चा साहस जागता था और अभी अपने-आपसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डर को छिपाने का प्रयास होता था।

दुर्गंध बढ़ने लगी। सामने अंधेरा छाता जा रहा था। मैंने मानसरोवर से लौटे हुए मित्रों से राक्षस ताल की बात सुन रखी थी। मन में बार-बार उसी का ख्याल आने लगा। नहीं, यह उससे बहुत ज्यादा भयंकर था। चारों ओर मानों कीचड़-ही-कीचड़ का सागर था। जिधर आंख उठाओ उधर बदबूदार कीचड़। और कीचड़ भी ऐसी-वैसी नहीं, ठाठें मारती हुई। आपने बड़े-बड़े परनाले तो देखे होंगे। बस, यही समझ लीजिये कि दुनिया-भर के परनाले आकर उस ताल में खाली हो रहे थे और उसमें ऊंची-ऊंची लहरें पैदा कर रहे थे।

और झंझा—उसका तो कहना ही क्या था। ऐसा लगता था मानों सभी मरुतों ने मिलकर निश्चय कर लिया था कि आज सारे ताल को उलीच कर छोड़ेंगे। अंधकार ठोस पर्वत का रूप धारण किये बैठा था, उसे भेदने का व्यर्थ प्रयास करते-करते मेरी आंखों का तेल निकला जा रहा था।

मेरी टांगें जवाब दे रही थीं, कमर के लिये सीधा रहना असंभव हो गया था। मैंने इधर नजर दौड़ायी, उधर नजर दौड़ायी। लकड़ी का एक बड़ा-सा कुंदा दिखायी पड़ा। मैं धम्म से उस पर जम गया। लेकिन यह क्या? मेरे बैठते ही . . . मानों वह मेरे लिये ही प्रतीक्षा कर रहा था, एक बड़ी-सी लहर आयी और कुंदे समेत मुझे बहा ले गयी।

यह एक नया ही अनुभव था। कभी लगता था कि मैं आकाश में उछाला जा रहा हूं और कभी लगता कि मैं भंवर में धंसता चला जा रहा हूं। दोनों हालतों में कुंदे को पकड़े रहने में ही मेरे लिये एकमात्र आशा थी। समुद्र की लहरों में डोलती खाली बोतल या डाट की उपमा तो बहुत पढ़ी थी, लेकिन आज लग रहा था कि शायद मेरी अवस्था उससे भी अधिक दयनीय थी।

मैंने आंखें मूंद लीं, मुझे लगा कि केवल आंखें ही नहीं, नाक, कान,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुंह आदि सभी बंद कर लिये। मैं संज्ञाशून्य हो गया, केवल मेरे हाथ-पांव पूरे जोर से लक्कड़ के साथ चिपटे हुए थे। न जाने कब, हो सकता है कुछ ही पलों के बाद और यह भी हो सकता है कि कुछ युगों के बाद, मेरी आंखें खुलीं। सारा शरीर उस गंद से लथपथ था। मुझे लगा कि मैं उस राक्षस ताल के बीच में हूं और बड़े-बड़े दानवाकार अपने विशाल सींगों को इधर-उधर हिलाते, कभी-कभी जुगाली में मुंह चलाते इधर से उधर दौड़ते फिर रहे हैं। उनके पीछे-पीछे चले आ रहे थे गेंडों को भी मात करते मानवी जंतु।

मैं शायद डर की पराकाष्ठा को पार कर चुका था। इन दानवों को देख कर भी मैं पहले की तरह गुमसुम और निश्चेष्ट बना रहा। न मेरा दिल धड़का, न मुझे कोई घबराहट हुई। इन विशालकाय किमाकार दानवों के हिलने-डुलने से ही उस राक्षस ताल में एक नये प्रकार का आलोड़न शुरू हो गया। मुझे कुछ ऐसा आभास हुआ मानों यमराज के कुछ विशेष दूत उनके वाहनों के साथ क्रीड़ारत हैं और परिणामस्वरूप समस्त यमलोक का मंथन हो रहा है।

सच मानिये, इन सब यातनाओं के होते हुए, मेरे लगभग चेतनाशून्य होते हुए मेरे अंतर में कहीं पर एक आशा-तंतु लगा हुआ था। अटपटी भाषा के लिये क्षमा करें, मुझे स्पष्ट अनुभव हो रहा था कि एक बहुत ही क्षीण और साथ ही अत्यंत प्रखर ज्योति-किरण सारे ठोस अंधकार को भेदती हुई मेरे अंदर प्रवेश कर रही थी और मेरे अंतरतम की गहराइयों में पहुंचकर वहां प्रगाढ़ निद्रालीन आलोक को गुदगुदा कर जगाने की कोशिश कर रही थी।

न जाने कितना समय बीत गया। ज्योति प्रचंड हो उठी। मुझे लगा कि मेरी संज्ञा वापिस आ रही है। अंधेरा छंटने-सा लगा। वे दानवी आकार आंखों से ओझल हो गये। मेरे कानों में कोई स्वर्गिक तान अमृत घोलने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं आंखें मलता हुआ उठ बैठा। देखकर भी आंखों पर विश्वास न होता था। अभी कुछ समय पहले का भयंकर राक्षस ताल मानसरोवर में बदल गया था। सारा अंधकार न जाने कहां विलीन हो गया था और आगे से चली आ रही थी एक स्वर्ण तरी।

तो क्या मैं अभी तक स्वप्न देख रहा था या अब जो दिखायी दे रहा है वह स्वप्न है ? मैं अपनी आंखें मलता हूं, शरीर में चिउंटी काटकर देखता हूं, नहीं, मैं पूरी तरह जाग्रत हूं। मुझे स्वप्न तरी के नाविक की मधुर, सशक्त टेर सुनायी देती है, "अंधेरे अतीत को सदा के लिये बिदा दो, ज्योतिर्मय स्वर्णिम भविष्य तुम्हारे सामने है।"

मैं झटपट उठ बैठता हूं और बिना कुछ सोचे-विचारे नाविक पर पूरे विश्वास के साथ उस आलोक-निर्मित पोत में जा बैठता हूं और अखिल ब्रह्मांड में गूंजनेवाले साम गान के साथ स्वर मिलाता हुआ बढ़ चलता हूं। मुझे लगता है कि मैं सबमें हूं और सब मुझमें।

मुझे आगे बढ़ते हुए अतीत के चलचित्र दीखने लगते हैं। मैं देखता हूं कि यात्रा के आरंभ में ही इस मुक्ति की झांकी दिखायी गयी थी, आज उस दिन दिये गये वचन पूरे हो रहे हैं।

क्या आप बता सकेंगे कि यह स्वप्न है या जाग्रत, या दोनों के परे कुछ और ही ?

—रवीन्द्र

('पुरोधा' दिसम्बर ७८ से)

तमिलनाडु में हिन्दी पढ़नेवाले, विशेषतः डाक-विभाग में हिन्दी जाननेवाले बहुत ही कम हैं। अतः आपसे अनुरोध है कि धनादेश अथवा पत्र भेजते समय आप अपना पता हमेशा अंग्रेजी में, स्पष्ट पढ़े जानेवाले बड़े अक्षरों में, पिनकोड के साथ लिखा करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

पांच स्वप्न

१५ अगस्त, १९४७ स्वाधीन भारत का जन्मदिन है। यह दिन भारत के लिये पुराने युग की समाप्ति और नये युग का प्रारंभ सूचित करता है। परंतु हम एक स्वाधीन राष्ट्र के रूप में अपने जीवन और कार्यों के द्वारा इसे ऐसा महत्त्वपूर्ण दिन भी बना सकते हैं जो संपूर्ण जगत् के लिये, सारी मानवजाति के राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक भविष्य के लिये नवयुग लानेवाला सिद्ध हो।

१५ अगस्त मेरा अपना जन्मदिन है और स्वभावतः ही यह मेरे लिये प्रसन्नता की बात है कि इस दिन ने इतना विशाल अर्थ तथा महत्त्व प्राप्त कर लिया है। परंतु इसके भारतीय स्वाधीनता-दिवस भी हो जाने को मैं कोई आकस्मिक संयोग नहीं मानता, बल्कि यह मानता हूं कि जिस कार्य को लेकर मैंने अपना जीवन आरंभ किया था उसको मेरा पथ-प्रदर्शन करनेवाली भागवती शक्ति ने इस तरह मंजूर कर लिया है और उसपर अपनी मुहर भी लगा दी है और वह कार्य पूर्ण रूप से सफल होना आरंभ हो गया है। निःसंदेह, आज के दिन मैं प्रायः उन सभी जागतिक आंदोलनों को—जिन्हें मैंने अपने जीवन-काल में ही सफल देखने की आशा की थी, यद्यपि उस समय वे असंभव स्वप्न ही दिखायी देते थे—सफल होते हुए या सफलता के अपने मार्ग पर जाते हुए देख सकता हूं। इन सभी आंदोलनों में स्वाधीन भारत एक बड़ी भूमिका अच्छी तरह अदा कर सकता है और एक प्रमुख स्थान ग्रहण कर सकता है।

इन स्वप्नों में पहला था एक क्रांतिकारी आंदोलन जो स्वाधीन और एकीभूत भारत को जन्म दे। भारत आज स्वाधीन हो गया है पर उसने एकता नहीं प्राप्त की है। एक समय प्रायः ऐसा दीखता था मानों अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाधीन होने की प्रक्रिया में ही वह फिर से पृथक्-पृथक् राज्यों की उस अव्यवस्थापूर्ण स्थिति में जा गिरेगा जो ब्रिटिश-विजय से पहले विद्यमान थी। परंतु सौभाग्य से अब ऐसी संभावना हो गयी है कि यह संकट टल जायेगा और अभी पूर्ण न सही पर एक विशाल तथा शक्तिशाली एकत्व अवश्य स्थापित हो जायेगा। विधान-परिषद् की दूरदर्शितापूर्ण प्रबल नीति ने इस बात को संभव बना दिया है कि दलित वर्गों की समस्या बिना फूट-फटाव के हल हो जायेगी। परंतु हिंदुओं और मुसलमानों का पुराना सांप्रदायिक भेद देश के स्थायी राजनीतिक विभाजन के रूप में सुदृढ़ हो गया दीखता है। यह आशा करनी चाहिये कि इस तय किये गये विभाजन को पत्थर की लकीर नहीं मान लिया जायेगा और इसे एक कामचलाऊ अस्थायी उपाय से बढ़कर और कुछ न माना जायेगा। क्योंकि यदि यह बना रहे तो भारत भयानक रूप में दुर्बल और अपंग तक हो सकता है; गृह-कलह का होना सदा ही संभव बना रह सकता है, नये आक्रमण और विदेशी राज्य का हो जाना तक संभव हो सकता है। भारत की आंतरिक उन्नति और समृद्धि रुक सकती है, राष्ट्रों के बीच उसकी स्थिति दुर्बल हो सकती है, उसका भविष्य कुंठित, यहांतक कि व्यर्थ भी हो सकता है। यह नहीं होना चाहिये; देश का विभाजन अवश्य दूर होना चाहिये। हम आशा करें कि यह कार्य स्वाभाविक रूप से ही हो जायेगा, न केवल शांति और मेल-मिलाप की, बल्कि मिल-जुल कर काम करने की भी आवश्यकता को उत्तरोत्तर समझ लेने तथा मिल-जुल कर काम करने के अभ्यास और उसके लिये साधनों को उत्पन्न कर लेने से संपन्न हो जायेगा। इस प्रकार अंत में एकता चाहे किसी भी रूप में आ सकती है—उसके ठीक-ठीक रूप का व्यावहारिक महत्त्व भले ही हो, पर कोई प्रधान महत्त्व नहीं है। परंतु चाहे किसी भी उपाय से हो, चाहे किसी भी प्रकार से हो, विभाजन अवश्य हटना चाहिये, एकता अवश्य स्थापित होनी चाहिये और स्थापित होगी ही, क्योंकि भारत के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भविष्य की महानता के लिये यह आवश्यक है।

दूसरा स्वप्न था एशिया की जातियों का पुनरुत्थान तथा स्वातंत्र्य। और मानव सभ्यता की उन्नति के कार्य में एशिया का जो महान् स्थान पहले था उसी स्थान पर उसका लौट जाना। एशिया जाग गया है, उसके बड़े-बड़े भाग स्वतंत्र हो गये हैं या इस समय बंधन-मुक्त हो रहे हैं; इसके अन्य भाग जो अभी परंतत्र या अंशतः परतंत्र हैं वे भी, चाहे कैसे भी घोर संघर्ष में से गुजरते हुए, स्वतंत्रता की ओर बढ़ रहे हैं। केवल थोड़ा ही करना बाकी है और वह आज न सही कल पूरा हो जायेगा। उसमें भारत को अपनी भूमिका अदा करनी है और उसे उसने एक ऐसी सामर्थ्य और योग्यता के साथ करना शुरू कर दिया है जो अभी से उसकी संभावनाओं की मात्रा को तथा उस स्थान को सूचित करती है जिसे वह राष्ट्रों की सभा में ग्रहण कर सकता है।

तीसरा स्वप्न था एक विश्व-संघ जो समस्त मानवजाति के लिये एक सुंदरतर, उज्ज्वलतर और महत्तर जीवन का बाहरी आधार निर्मित करे। मानव संसार का वह एकीकरण प्रगति के पथ पर है, एक अधूरा आरंभ संगठित किया गया है पर वह बड़ी भारी कठिनाइयों के विरुद्ध संघर्ष कर रहा है। किंतु उसमें एक वेग है और वह अनिवार्य रूप से बढ़ता चला जायेगा और विजयी होगा। इस कार्य में भी भारतवर्ष ने प्रमुख भाग लेना प्रारंभ कर दिया है और यदि वह उस अधिक विशाल राजनीतिज्ञता को विकसित कर सके जो वर्तमान घटनाओं और तात्कालिक संभावनाओं से ही सीमित नहीं होती, बल्कि भविष्य को देख लेती है और उसे निकट लाती है, तो भारत की उपस्थिति मंद एवं भीरुतापूर्ण विकास और द्रुत एवं साहसपूर्ण विकास में जो महान् भेद है उसे प्रदर्शित कर सकती है। जो कार्य किया जा रहा है उसमें महान् विपत्ति आ सकती है और वह उसमें बाधा डाल सकती है या उसे नष्ट कर सकती है, फिर भी अंतिम परिणाम निश्चित है। क्योंकि एकीकरण प्रकृति की आवश्यकता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनिवार्य गति है। इसकी आवश्यकता राष्ट्रों के लिये भी स्पष्ट है; क्योंकि इसके बिना छोटे-छोटे राष्ट्रों की स्वाधीनता किसी भी क्षण खतरे में पड़ सकती है और बड़े तथा शक्तिशाली राष्ट्रों का भी जीवन असुरक्षित हो सकता है। इसलिये इस एकीकरण में ही सबका हित है और केवल मानवीय बुद्धिहीनता तथा मूर्खतापूर्ण स्वार्थपरता ही इसे रोक सकती है; परंतु ये भी प्रकृति की आवश्यकता और भगवान् की इच्छा के विरुद्ध हमेशा नहीं ठहर सकतीं। परंतु एक बाहरी आधार ही पर्याप्त नहीं है, अंतर्राष्ट्रीय भाव और दृष्टिकोण भी अवश्य विकसित होने चाहियें, अंतर्राष्ट्रीय पद्धति तथा संस्थाएं भी अवश्य प्रादुर्भूत होनी चाहियें, शायद इस प्रकार की प्रगतियां भी पैदा हों, जैसे कि दो या अनेक देशों का एकसंग नागरिक होना, संस्कृतियों का आपस में ऐच्छिक दान-प्रतिदान या उनका स्वेच्छापूर्वक घुलना-मिलना। राष्ट्रीयता तब अपने-आपको चरितार्थ कर चुकी होगी और अपनी युद्धप्रियता को छोड़ चुकी होगी, और तब वह ऐसी चीजों को आत्मसंरक्षण तथा अपनी दृष्टि की अखंडता से असंगत नहीं अनुभव करेगी। एकत्व की एक नयी भावना मनुष्य जाति पर आधिपत्य जमा लेगी।

चौथा स्वप्न, संसार को भारत का आध्यात्मिक दान, पहले से ही प्रारंभ हो चुका है। भारत की आध्यात्मिकता यूरोप और अमेरिका में नित्य बढ़ती हुई मात्रा में प्रवेश कर रही है। यह आंदोलन बढ़ेगा; वर्तमान काल की विपदाओं के बीच अधिकाधिक लोगों की आंखें आशा के साथ भारत की ओर मुड़ रही हैं और न केवल उसकी शिक्षाओं का अपितु उसकी आंतरात्मिक और आध्यात्मिक साधना का भी उत्तरोत्तर आश्रय लिया जा रहा है।

अंतिम स्वप्न था क्रम-विकास में अगला कदम जो मनुष्य को एक उच्चतर और विशालतर चेतना में उठा ले जायेगा और उन समस्याओं का हल करना प्रारंभ कर देगा जिन समस्याओं ने मनुष्य को तभी से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैरान और परेशान कर रखा है जब से उसने वैयक्तिक पूर्णता और पूर्ण समाज के विषय में सोचना-विचारना शुरू किया था। यह अभी तक एक व्यक्तिगत आशा, विचार और आदर्शमात्र है जिसने भारत और पश्चिम में, दोनों जगह दूरदर्शी विचारकों को वश में करना शुरू कर दिया है। इस मार्ग की कठिनाइयां प्रयास के किसी भी अन्य क्षेत्र की अपेक्षा बहुत अधिक प्रबल हैं, परंतु ये जीती जाने के लिये ही बनी थीं और यदि दिव्य परम इच्छा-शक्ति का अस्तित्व है तो वे दूर होंगी ही। यहां भी, यदि इस विकास को घटित होना है तो चूंकि यह आत्मा और आंतर चेतना की अभिवृद्धि द्वारा ही होगा, इसका प्रारंभ भारतवर्ष ही कर सकता है और यद्यपि इसका क्षेत्र सार्वभौम होगा, तथापि केंद्रीय आंदोलन भारत ही करेगा।

ये हैं वे भाव और भावनाएं जिनको मैं भारतीय स्वाधीनता की इस तिथि के साथ संबद्ध करता हूं। क्या ये आशाएं ठीक सिद्ध होंगी, या कहां तक सिद्ध होंगी, यह बात नये और स्वाधीन भारत पर निर्भर करती है।

—नीरदवरण

मैं इस तर्क को नहीं समझ पाता जो कहता है कि चूंकि एक चीज पांच सौ वर्षों से चली आ रही है अतः उसे युगों तक बनाये रखना चाहिये। न तो प्राचीनता और न अर्वाचीनता ही सत्य की कसौटी या उपयोगिता की कसौटी हो सकती हैं। सभी ऋषि भूतकाल के ही नहीं थे, अवतार अब भी आते हैं, अंतःप्रकाश अब भी जारी है।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माताजी के उत्तर

(एक फ्रेंच महिला के नाम जो १९३७ और १९४१ के बीच आश्रम में रही थीं। इस अंक में हम उनका पूरा पत्र-व्यवहार छाप रहे हैं।)

कोई चीज अपरिहार्य नहीं है। हर क्षण उच्चतर लोक से भौतिक लोक में हस्तक्षेप हो सकता है जो परिस्थितियों के मार्ग को बदल सकता है। लेकिन इस स्थिति-विशेष में तुम्हारी भागवत कृपा पर श्रद्धा तथा डॉक्टरों की राय पर आश्रित बहुत शक्तिशाली मानसिक रचना के बीच संघर्ष है।

इस डॉक्टरी सुझाव की शक्ति इस तथ्य में है कि यह अपने-आपको अवचेतना में पैठा देता है और वहां से शरीर पर क्रिया करता है, उसे सचेतन मन भी नहीं पकड़ सकता जबतक कि उसे गुप्तचर की जागरूकता के साथ अवचेतना को शुद्ध करने का अभ्यास न हो।

तो यह बात है—मैं तुम्हें यह वचन नहीं दे सकती कि कृपा पर तुम्हारी श्रद्धा तीव्र होगी, इतनी अटल होगी कि इन हानिकर डॉक्टरी संकेतों के प्रभाव को जीत ले। मुझे लगता है कि मुझे यह कहने का अधिकार नहीं है कि "यह कुछ भी नहीं है," जब कि तुम्हारी भौतिक चेतना में हर चीज "संकट" की पुकार लगा रही है!

विश्वास रखो कि हमारी सहायता और हमारे आशीर्वाद हमेशा तुम्हारे साथ हैं।

२४ मार्च १९३७

निश्चय ही हम तुम्हें जून तक यहां रखने से खुश होंगे।

तुम्हारा यह कहना बिलकुल ठीक है कि ये 'बंद दरवाजे' कल्पना का प्रभाव हैं। उनमें से निकल जाने की इच्छा में हमेशा उन्हें खोलने की शक्ति होती है, जैसे विजय की निश्चिति मार्ग को आलोकित करती है।

१२ अप्रैल १९३७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय ही जब तुम वापिस आने के लिये तैयार हो, जब तुम अपने बेटे के लिये जो करना चाहती हो वह कर लो तो बस हमें खबर कर देना और हम तुम्हारा स्वागत करने के लिये खुश होंगे।

आंतरिक निश्चलता और शांति और भगवान् की ओर तीव्र अभीप्सा, हम जो सहायता दे सकते हैं उसे पाने के लिये सर्वोत्तम तैयारी हैं। तुम हमसे उसे पाने के बारे में निश्चित रहो।

२९ अप्रैल १९३७

साधारणतः सहसा होनेवाले परिवर्तन न तो सर्वांगीण होते हैं न चिरस्थायी। वे प्राण में बिजली की कौंध होते हैं जो बहुधा धुंए में विलीन हो जाते हैं। धीरे-धीरे, स्थिर रूप से किया गया प्रयास और अविच्छिन्न प्रगति अधिक विश्वसनीय है।

अपनी आत्मा के शोध के लिये, नींद में क्या हुआ था उसे याद करना अनिवार्य नहीं है।

मैं खुश हूं कि तुम स्वस्थ अनुभव कर रही हो।

विश्वास रखो कि हमारी सहायता और संरक्षण हमेशा तुम्हारे साथ हैं।

१२ मई १९३७

अपने-आपको विशालता के भाव से अभिभूत न होने दो बल्कि उसमें खुशी से और शांति के साथ स्नान करो। अगर हम अपरिहार्य रूप से अपनी व्यक्तिगत चेतना की चारदीवारी में बंद होते तो यह सचमुच दुःखद और अभिभूत करनेवाला होता—लेकिन अनंत हमारे लिये खुला हुआ है, हमें बस उसमें डुबकी लगानी है।

२९ मई १९३७

श्रीअरविन्द ने तुम्हारा पत्र पढ़ लिया है और वे मेरे साथ इस बात से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहमत हैं कि इतनी आगे से योजना बनाना कठिन है क्योंकि परिस्थितियों के बारे में अनुमान करना बहुत कठिन है। फिर भी एक बात निश्चित है : श्रीअरविन्द ने तुम्हें शिष्या के रूप में स्वीकार कर लिया है—यह इस बात से स्पष्ट है कि उन्होंने तुम्हें एक नया नाम दिया है, लेकिन शिष्या होने का यह आवश्यक अर्थ नहीं है कि तुम आश्रम में निवास करो। वस्तुतः आश्रम में रहनेवालों की अपेक्षा बाहर रहनेवाले शिष्य अधिक हैं। आश्रम में रहने के लिये कई शर्तें जरूरी हैं जिनमें से एक यह है कि आदमी का स्वास्थ्य इतना अच्छा हो कि वह यहां के अनुशासन का पालन कर सके, जो विशेष भोजन, परिचर्या आदि की व्यवस्था नहीं करता; ये व्यवस्थाएं दर्शकों के लिये, कुछ समय के लिये की जा सकती हैं किंतु कई कारणों से इन्हें स्थायी करना संभव नहीं है। अतः जब तुम लौटने के लिये तैयार हो तो हमें तीन-चार महीने पहले सूचना दे देना ताकि हम कोई व्यावहारिक व्यवस्था कर सकें।

रही बात वाचन की तो मेरा ख्याल है कि तुम्हारे लिये ज्यादा अच्छा होगा कि तुम अभी के लिये इस तनाव से बची रहो। मेरा ख्याल है कि तुम अभी जो अनौपचारिक कक्षाएं लेती हो वे काफी हैं।

मैं यह जानकर प्रसन्न हूं कि तुम स्वस्थ हो गयी हो और आशा करती हूं कि तुम अधिकाधिक स्वस्थ होती जाओगी।

५ जुलाई १९३७

मुझे खेद है कि पिछले कुछ दिनों से तुम दुःख का अनुभव कर रही हो। ऐसा होना नहीं चाहिये था। प्रकाश को हमेशा अपने साथ नयी प्रगति का आनंद लाना चाहिये। मेरा ख्याल है कि अब सब कुछ ठीक हो जायेगा।

१० जुलाई १९३७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिंता न करो। तुमने जाने या अजाने कोई भूल नहीं की है। मैं भीतरी और बाहरी परिस्थितियों के समूह की बात कह रही थी, परिस्थितियों के ऐसे समूह की जो अनिवार्य रूप से पिछले समूह का परिणाम होता है और इसी तरह चलता रहता है। केवल योग-शक्ति, दिव्य चेतना की शक्ति ही परिणामों को इस शृंखला को तोड़ सकती है।

तुम्हें शांति-भरे हृदय और आशा-भरे मन के साथ जाना चाहिये। तुम्हें इस विश्वास के साथ जाना चाहिये कि हमारी सहायता और हमारी शक्ति तुम्हारे साथ जा रही हैं और हमारे आशीर्वाद हमेशा तुम्हारे साथ हैं और हमेशा रहेंगे।

१४ सितंबर १९३७

(यह शिष्या सितंबर १९३७ के अंत में फ्रांस चली गयीं और १९३८ के मार्च में फिर आश्रम आ गयीं और १९४१ तक रहीं।)

डरो मत; मैं आभासों के परे देख सकती हूं और नीरवता में या शब्दों के परे समझ सकती हूं।

मेरी भुजाएं हमेशा तुम्हें सहारा देने और मार्ग दिखाने के लिये तुम्हारे चारों ओर रहेंगी।

निश्चय ही तुम मेरी प्रिय बालिका हो, लेकिन मैं चाहती हूं कि वह प्रसन्न रहे, दुःखी नहीं; आलोकित रहे, अज्ञानी नहीं।

मेरे आशीर्वाद सदा सप्रेम तुम्हारे साथ रहते हैं।

१३ जून १९३८

चूंकि मैंने तुम्हें प्रणाम के समय नहीं देखा अतः मैं यह पूछने के लिये तुम्हें लिखने ही वाली थी कि कल के पत्र में तुमने जिस थकान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का उल्लेख किया था वही तो इसका कारण नहीं है। और अभी-अभी मुझे तुम्हारा आज सवेरे का पत्र मिला। कैसी बुरी बात है कि तुम्हें बुखार आ गया! लेकिन क्यों? कोई कारण तो नहीं दिखायी देता। मैं आशा करती हूं कि यह जल्दी ही समाप्त हो जायेगा।

यह कहने की जरूरत नहीं है कि हमारी सहायता, हमारी शक्ति, हमारा संरक्षण और हमारे आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ रहते हैं। तुम्हें अपने-आपको उनके अंदर शांत करनेवाले, स्वस्थ करनेवाले स्नान-कुंड की तरह निमज्जित करना चाहिये। मैं अपना स्नेह भी उनके साथ जोड़ती चलूं।

१७ जुलाई १९३८

"भौतिक में अभीप्सा"[१] का यह फूल हमारे आशीर्वाद और प्रेम के साथ।

डॉक्टर के शब्दों से विचलित न होओ! रोग कभी गंभीर नहीं होते जबतक कि हम उन्हें ऐसा मान न लें। इसके अतिरिक्त मैं बहुत जल्दी यह सुनने की आशा कर रही हूं कि तुम अच्छी हो गयी हो।

२४ जुलाई १९३८

यह लो छोटा-सा "नवजन्म"[२]।

तुम वस्तुतः बीमारी का इससे अच्छा क्या उपयोग कर सकती हो कि इसे एक अवसर मानो और अपने अंदर गहराई में जाओ और जागो, एक नयी, अधिक आलोकमय और अधिक सच्ची चेतना में जन्म लो।

हमारी सहायता और हमारे आशीर्वाद हमेशा सस्नेह तुम्हारे साथ हैं।

२८ जुलाई १९३८

[१] एक तरह का पलास।
[२] माताजी द्वारा मरुआ को दिया हुआ नाम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द का और मेरा यह ख्याल है कि तुम्हारे लिये प्रणाम के लिये आने से पहले एक सप्ताह प्रतीक्षा करना ज्यादा बुद्धिमत्तापूर्ण होगा। और सप्ताह में दो बार का ध्यान तो तभी संभव होगा जब तुम दुर्बलता का जरा भी अनुभव न करो; क्योंकि अभी लोग बहुत हैं और भौतिक वातावरण श्वास लेने के लिये भारी है।

इसलिये हम तुम्हें और कुछ समय धीरज धरने की सलाह देते हैं ताकि अपने भौतिक बल को लौट आने के लिये समय दे सको। इसके लिये हमारी सहायता और हमारा संरक्षण तुम्हारे साथ हैं।

बहुत प्रेम के साथ।

२६ अगस्त १९३८

... चिंता न करो; तुमने नीरवता में बहुत आगे वह बात कही थी जिसे तुमने आज शाम को "स्वीकार" किया है। और मैंने हमेशा यही एक उत्तर दिया है : चिंता न करो, यह जरूरी नहीं है कि सभी उपहार भौतिक हों और निश्चय ही आत्म-दान सबसे अच्छा उपहार है।

२९ सितंबर १९३८

ये सहज प्रतिवर्ती क्रियाएं अवचेतना को प्रकट करती हैं। अतः ऐसे सहज आवेशों को खोज लेने पर तुम धीरे-धीरे अवचेतना के अछूते वन के मार्ग को परिष्कृत कर सकती हो और उसमें प्रकाश ला सकती हो।

चिंता न करो और सबसे बढ़कर यह कि दुःखी न होओ! बारह तारीख को खुराक शायद कुछ ज्यादा तीव्र हो गयी थी और परिणाम-स्वरूप हजम करने में कुछ कठिनाई हुई। अगर तुम बस अचंचल रह सको, बहुत अचंचल तो सारी चीज बैठ जायेगी। तब प्रकाश हमेशा से ज्यादा प्रकाशमान और सुंदर प्रकट होगा।

भय न करो—किसी में वह शक्ति नहीं है जो तुम्हें मुझसे दूर ले जा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सके क्योंकि मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूं, तुम्हारे अंदर हूं।

सप्रेम।

१३ नवंबर १९३८

माताजी,

मैंने डॉक्टर के कहे अनुसार दवाई नहीं ली क्योंकि मैं आपको लिखनेवाली थी कि मैं आपसे पूछे बिना कुछ न करूंगी। क्या मैं पैरिस के डॉक्टर 'क' की राय जानने के लिये उन्हें पत्र लिखूं?

हां, ज्यादा अच्छा हो कि अपने पैरिस के डॉक्टर से सलाह किये बिना कुछ न करो।

क्या मैं होम्योपैथिक डॉक्टर से सलाह करूं? मैं उसे नहीं जानती।

नहीं, जरूरी नहीं है; जितने कम हो सकें उतने कम डॉक्टर, जितनी कम हो सके उतनी कम दवाइयां !!

'क' मुझे आग्रहपूर्ण सलाह दे रहा है कि मैं 'जेनास्प्रीन' लूं। मेरी इच्छा नहीं है। मैं शामक नहीं लिया करती। उसका कहना है कि यह शामक नहीं, रक्त-संकुलता को दूर करनेवाली चीज है। मैं इस बारे में कुछ नहीं समझती। मैंने उससे कह दिया है कि मैं आपसे पूछूंगी।

नहीं, नहीं, कोई दवाइयां नहीं! जितनी अधिक दवाइयां ली जायें उतना ही वे शरीर के स्वाभाविक प्रतिरोध को कम करती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तनाव को दूर करने के लिये दस मिनट की आंतरिक और बाह्य सच्ची अचंचलता दुनिया भर की सभी दवाइयों से अधिक प्रभावकारी होती है। नीरवता में ही सबसे अधिक प्रभावकारी सहायता मिलती है।

हमारे आशीर्वाद के साथ।

३० जनवरी १९३९

सच कहा जाये तो मेरा ख्याल है कि डॉक्टर की बात ठीक है। तुम्हारी शिकायत स्नायविक है। मेरा मतलब यह है कि यह आंगिक नहीं क्रियागत विकार है। यह तथ्य कि तुम्हारे सिर में दर्द है इस बात को झुठलाता नहीं, क्योंकि स्नायविक सिर-दर्द भी हो सकता है और उससे बहुत अधिक कष्ट होता है। बहरहाल, स्नायविक हो या न हो, यह बिलकुल स्पष्ट है कि अगर भगवान् के साथ तुम्हारा सतत संपर्क हो तो तुम पूरी तरह स्वस्थ हो जाओगी।

हमारे आशीर्वाद तुम्हारे साथ हैं।

अत्यधिक स्नेह के साथ।

९ फरवरी १९३९

सूची-वेध न लेना कितना अच्छा होगा! है न?

और बातों के बारे में चिंता न करो। भागवत कृपा हर चीज के, यहांतक कि दोषों के भी पीछे है और उसकी सहायता से ऐसी कोई चीज नहीं है जो प्रगति के लिये अवसर न बनायी जा सके।

हमारे आशीर्वाद हमेशा तुम्हारे साथ हैं।

२३ मार्च १९३९

तुम अपने-आपको व्यर्थ में कितनी यातना दे रही हो! मैं भली-भांति जानती थी कि तुम बैंकर के यहां भोजन के लिये जाया करती हो। मुझे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसमें तुम्हारी छोटी-मोटी संगीत-सभाओं या और ऐसी ही चीजों की तरह कोई गलती नहीं दिखायी दी। मैंने हमेशा यही सोचा है कि तुम जिससे चाहो मिल सकती हो और जहां चाहो जा सकती हो। मैंने इस बारे में तुम्हें एक बार सलाह दी है वह भी छोटी-सी सलाह, उससे बढ़कर कुछ नहीं। केवल एक बार बहुत ही यथार्थ मामले की ओर संकेत किया था।

मैं जल्दी यह चिट्ठी इस आशा से भेज रही हूं कि यह तुम्हारे लिये वह शांति और प्रशांति लेकर आयेगी जो मैं हमेशा तुम्हारे लिये चाहती हूं।

मेरे आशीर्वाद अविच्छिन्न रूप से तुम्हारे साथ हैं।

३ मई १९३९

मेरी प्यारी नन्हीं 'क',

अगर तुम चीजों को देखने की मेरी सच्ची दृष्टि चाहती हो तो मुझे तुमसे कहना होगा कि भागवत कृपा पर श्रद्धा और भरोसे की एक अच्छी मात्रा दुनिया भर की सभी गोलियों और सूची-वेधों से ज्यादा अच्छी है।

मेरे आशीर्वाद के साथ। मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूं।

७ मई १९३९

मेरी प्यारी बेचारी 'क'

मुझे सचमुच खेद है कि मैं तुम्हें निराश कर रही हूं, लेकिन तुम जिस मुलाकात की इच्छा कर रही हो वह निश्चय ही युद्ध की समाप्ति से पहले नहीं हो सकती।

और फिर आंतरिक विकास के लिये मैं शब्दों को जरूरी नहीं मानती। नीरवता में हमारी समस्त सहायता अपने सबसे अधिक सशक्त रूप में रहती है।

प्रेम और आशीर्वाद के साथ।

६ सितंबर १९३९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी नन्हीं 'क',

यह असंभव है कि तुम किसीके साथ बैठकर ध्यान करो और उसमें से निकलनेवाले स्पंदन तुम्हें प्रभावित न करें, ठीक उसी तरह जैसे तुम किसी कमरे की हवा में सांस लिये बिना प्रवेश नहीं कर सकते।

जब किसी का वातावरण हानिकर तथा प्रभाव बुरा होता है (मैंने तुम्हें इसकी चेतावनी दी थी) तो तुम्हें इस बात की बहुत सावधानी रखनी चाहिये कि उस वातावरण में ध्यान करके अपने-आपको ग्रहणशीलता की अवस्था में न रखो।

यह नैतिक दृष्टि से गलत नहीं है परंतु अज्ञान की क्रिया है। लेकिन यह कहने की जरूरत नहीं कि यह तुम्हें मेरी छोटी-सी 'क' होने से नहीं रोक सकता या मेरी भुजाओं को तुम्हें घेरने और तुम्हारी रक्षा करने से नहीं रोक सकता।

१९ सितंबर १९३९

तुम अपना मौन क्यों भंग करना चाहती हो ? नीरवता सभी सच्ची आध्यात्मिक उपलब्धियों का द्वार है।

और मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूं। नीरवता में मेरी शक्ति में से खींचो, यह तुम्हें क़भी धोखा न देगी।

हमारे आशीर्वाद। २३ दिसंबर १९३९

मेरी प्यारी नन्हीं 'क',

जब ईर्ष्या का भूत तुम्हारे कान में कुछ फुसफुसाता है तो तुम्हें बहुत सावधान रहना चाहिये कि उसकी बात पर कान न दो।

जब युद्ध शुरू हुआ तो मैंने तुमसे कहा था कि जबतक यह समाप्त न हो जाये मैं आश्रमवासियों से मुलाकात न करूंगी। मैंने जो कहा था वही कर रही हूं। सभी नियमित मुलाकातें बंद हैं। कभी-कदास, हमेशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं, मैं किसी दर्शक से उसके जाने से पहले मिलती हूं। इसके अतिरिक्त इतने महीनों में दो-तीन ही अपवाद हुए हैं। उनमें से एक मुलाकात तुम्हारे साथ, तुम्हारे मामले में हुई थी। अगर किसीने तुमसे इससे उल्टी बात कही है तो उसपर विश्वास क्यों करती हो ? तुम्हें तुरंत इन छायाओं को अपने से बहुत दूर भगा देना चाहिये और हमेशा अटल विश्वास की शांति में निवास करना चाहिये।

मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूं। अगर तुम ध्यान से सुनो तो तुम अपने प्रश्नों के लिये मेरे उत्तर सुनोगी। जब तुम्हारे अंदर सब कुछ नीरव और अचंचल हो जाता है तो तुम ठोस रूप से मेरी उपस्थिति का अनुभव कर सकोगी और उससे बढ़कर वास्तविक या उससे बढ़कर प्रभावकारी कोई सहायता नहीं होती।

हमेशा मेरे गहनतम प्रेम और हमारे आशीर्वाद के साथ।

४ मार्च १९४०

मेरी प्यारी नन्हीं 'क',

मैं बाईसवीं तारीख के लिये सहमत हूं—शायद शाम के साढ़े पांच बजे सीढ़ियों के ऊपर—लेकिन अत्यधिक अस्थिरता के इन दिनों में, इतने दिन पहले से व्यवस्था करना कठिन है। हमें दिन-प्रतिदिन जीना चाहिये। हमारी समस्त चेतना एकमात्र आलोकमय क्षितिज, भागवत उपलब्धि पर केंद्रित होनी चाहिये।

हमारे आशीर्वाद तुम्हारे साथ हैं, साथ में मेरा प्रेम भी।

५ जुलाई १९४०

मेरी प्यारी नन्हीं 'क',

शुष्कता सामान्यतः अपने बारे में बहुत अधिक चिंतित रहने का लक्षण है। (वह चाहे भौतिक हो या आध्यात्मिक) और परिणामस्वरूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेतना की संकीर्णता का जो पर्याप्त रूप से भागवत शक्तियों के साथ संपर्क में नहीं रहती।

उपचार : भगवान् के प्रति पूर्णतर आत्मदान।

मेरे आशीर्वाद और मेरे समस्त प्रेम के साथ।

८ दिसंबर १९४०

मेरी प्यारी नन्हीं 'क',

चिंता न करो, मेरा मतलब केवल यही था कि तुम अभीतक पूरी तरह सामाजिक बंधनों से मुक्त नहीं हो। लेकिन यह मुक्ति निश्चय ही आयेगी, जैसे-जैसे तुम्हारे अंदर भगवान् के प्रति अभीप्सा की ज्वाला अधिकाधिक तीव्रता के साथ प्रज्ज्वलित होगी।

मेरे आशीर्वाद और समस्त प्रेम के साथ।

१६ जनवरी १९४१

भगवान् के लिये प्रेम

चैत्य सत्ता की उपलब्धि, उसकी जाग्रति और उसे सामने लाना मुख्य रूप से इस पर निर्भर है कि तुम किस हद तक भगवान् के साथ भक्ति, प्रेम, निर्भरता, आत्मदान द्वारा, अलग करनेवाले और स्वाग्रही मानसिक, प्राणिक और भौतिक अहंकार को अस्वीकार करके भगवान् के साथ नाता जोड़ सकते हो।

*

भक्ति का स्वभाव है उसके प्रति आराधना, पूजा, आत्मदान जो तुमसे बड़ा है। प्रेम का स्वभाव है निकटता और ऐक्य के लिये भावना या खोज। आत्मदान दोनों का गुण है। योग में दोनों जरूरी हैं। हर एक को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना पूरा बल तब मिलता है जब उसे दूसरे का सहारा प्राप्त हो।

*

भक्ति कोई अनुभूति नहीं है। यह हृदय और अंतरात्मा की एक अवस्था है। यह एक ऐसी अवस्था है जो तब आती है जब चैत्य सत्ता जाग्रत और सुव्यक्त हो।

*

साधारण भक्त शार्दूल-हृदय नहीं है। सिंह-हृदय अपेक्षाकृत जल्दी अनुभूति पा लेते हैं परंतु साधारण भक्त को प्रायः बरसों तक अपने ही प्रेम और अपनी ललक पर निर्भर रहना पड़ता है—और वह ऐसा करता है।

*

मेरा कहना यह है कि ऐसे सैकड़ों भक्त हैं जिनमें प्रेम और खोज तो है परंतु ठोस अनुभूति नहीं है, उनमें केवल मानसिक अवधारणा या भगवान् पर भावनामय विश्वास का सहारा होता है। सारी बात यह है कि यह कहना असत्य है कि भगवान् के लिये प्रेम होने से पहले निर्णायक या ठोस अनुभूति का होना जरूरी है। यह तथ्यों के और आध्यात्मिक अनुभूति के साधारण तथ्यों के विपरीत है।

*

तुम्हारे वैष्णव विचार और भक्ति को पूरे हृदय से स्वीकारना विस्मय पैदा करता है जब उसके साथ इस बात पर आग्रह जुड़ा हो कि भगवान् को प्रेम तबतक नहीं दिया जा सकता जबतक कि भगवान् की अनुभूति न प्राप्त हो जाये। भक्ति के लिये भक्ति के आनंद से बढ़कर कौन-सी चीज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैष्णव मनोवृत्ति में अधिक प्रचलित है ? वैष्णव भक्ति पुकारती है, "मुझे भक्ति दो, भले और किसी भी चीज से मुझे वंचित कर दो, चाहे तुम्हारे दर्शन कर सकने में बहुत देर क्यों न लगे, चाहे तुम प्रकट होने में देर क्यों न लगाओ, मेरी भक्ति, तुम्हारे लिये मेरी खोज, मेरी पुकार, मेरा प्रेम, मेरी आराधना हमेशा तुम्हारे प्रति बनी रहे।" भक्त ने कैसे निरंतर गाया है, "मैं सारे जीवन तुम्हें खोजता रहा हूं फिर भी तुम नहीं मिले किंतु मैं फिर से खोजता हूं और खोजना, प्रेम करना और आराधना करना बंद नहीं कर सकता।" अगर सचमुच भगवान् के साक्षात्कार के बिना भगवान् से प्रेम करना असंभव होता तो यह कैसे होता ? वस्तुतः ऐसा लगता है कि तुम्हारा मन उल्टी गंगा बहा रहा है। पहले मनुष्य भगवान् को आग्रह के साथ या आवेश के साथ खोजता है और उन्हें पाता तो बाद में है। कोई जल्दी तो कोई देर में, अधिकतम लोग लंबी खोज के बाद पाते हैं। ऐसा नहीं होता कि तुम पहले भगवान् को पा लो और बाद में उन्हें खोजो। प्रायः एक झांकी भी बड़े उत्साह और भक्ति-भरी लंबी खोज के बाद मिलती है। पहले तुम्हारे अंदर भगवान् के लिये प्रेम होता है या कम-से-कम उनके लिये हृदय की कामना होती है और बाद में तुम भगवान् के प्रेम के बारे में अभिज्ञ होते हो, हृदय की कामना को उसके उत्तर, परम सुख और आनंद के उसके प्रत्युत्तर के बारे में अभिज्ञ होते हो। तुम भगवान् से यूं नहीं कहते, "शुरू से ही अपना प्रेम दिखलाओ, अपनी अनुभूति की मेरे ऊपर बौछार करो, मेरी मांग पूरी करो, तब मैं देखूंगा कि क्या मैं तुम्हारे साथ तबतक प्रेम कर सकता हूं जबतक तुम उसके अधिकारी बने रहो !!" निश्चय ही पहले जिज्ञासु को खोज करनी और प्रेम करना होगा, खोज को जारी रखना होगा, जिसे खोज रहा है उसके लिये भाव से भर उठना होगा—उसके बाद ही पर्दा एक ओर हटता है, प्रकाश दीखता है और वह चेहरा प्रकट होता है जो अंतरात्मा को मरुभूमि की लंबी अन्वेषण-यात्रा के बाद तृप्ति दे सकता है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सच्ची गति है शुद्ध अभीप्सा और समर्पण। आखिर, तुम्हें यह अधिकार नहीं है कि भगवान् को अपने-आपको प्रकट करने के लिये पुकारो। वे केवल चेतना की किसी आध्यात्मिक या चैत्य अवस्था के प्रत्युत्तर स्वरूप या उचित रूप से की गयी लंबी साधना के फलस्वरूप आ सकते हैं और अगर वे इससे पहले या बिना किसी प्रत्यक्ष कारण के आयें तो यह भागवत कृपा होती है, लेकिन तुम भागवत कृपा के लिये दावा नहीं कर सकते, उसे बाधित नहीं कर सकते। भागवत कृपा एक सहज वस्तु है जो भागवत चेतना से उसकी सत्ता के मुक्त प्रवाह के रूप में उमड़ती है। भक्त उसकी राह देखता है परंतु आवश्यकता हो तो वह अपने सारे जीवन, उसके लिये पूर्ण निर्भरता के साथ यह जानते हुए प्रतीक्षा कर सकता है कि वह आयेगी। वह अपने प्रेम और समर्पण में कभी इसलिये हेर-फेर नहीं करता कि वह तुरंत या जल्दी नहीं आ जाती। स्वयं तुमने भक्तों के जो गीत गाये हैं उनमें यही भाव है। मैंने कुछ समय पहले तुम्हारे एक रेकार्ड में ऐसा ही गान सुना था। वह बड़ा सुन्दर था और बड़ी अच्छी तरह गाया गया था—"हे प्रभु, मैं भले तुझे पा नहीं सका फिर भी मैं तेरी आराधना करता हूं।"

*

मानव प्रेम के विपरीत, भागवत प्रेम गभीर, विस्तृत और नीरव होता है। तुम्हें उसकी अभिज्ञता पाने और उसे प्रत्युत्तर देने के लिये स्थिर और विस्तृत होना चाहिये। उसे सारा उद्देश्य यही बनाना चाहिये कि वह समर्पित हो जाये ताकि वह एक पात्र और यंत्र बन सके—और वह यह बात भागवत प्रज्ञा और प्रेम के ऊपर छोड़ दे कि उसमें वह चीज भरी जाये जिसकी जरूरत है। उसे अपने मन में यह बात भी जमा लेनी चाहिये कि वह इस बात पर आग्रह न करे कि दिये हुए समय में उसे प्रगति और विकास करना तथा सिद्धि पा लेनी चाहिये—चाहे जितना समय लगे उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतीक्षा करने, अध्यवसाय करने के लिये तैयार रहना चाहिये और अपने सारे जीवन को एक अभीप्सा और एकमात्र वस्तु,—भगवान्—के लिये उद्घाटन बना लेना चाहिये। साधना का रहस्य है अपने-आपको देना, मांगना या प्राप्त करना नहीं। तुम जितना दोगे उतनी ही ग्रहण करने की सामर्थ्य बढ़ेगी। लेकिन उसके लिये समस्त अधीरता और विद्रोह को जाना चाहिये। न पाने, सहायता न मिलने, प्रेम न पाने, चले जाने, जीवन या आध्यात्मिक प्रयास त्यागने के सभी सुझावों को अस्वीकार करना चाहिये।

*

जब प्रेम भगवान् की ओर जाता है तब भी उसमें यह सामान्य मानव तत्त्व रहता है। उसमें प्रत्युत्तर के लिये पुकार होती है और अगर ऐसा लगता है कि प्रत्युत्तर नहीं मिल रहा है तो वह प्रेम डूब सकता है। इसमें स्वार्थ होता है। भगवान् के लिये इस रूप में मांग होती है कि मनुष्य जो कुछ मांगता है उसको देनेवाले भगवान् हैं। अगर मांगें पूरी न की जायें तो भगवान् से रूठने, श्रद्धा खो बैठने, उत्साह खो बैठने आदि की प्रतिक्रिया होती है, लेकिन भगवान् के लिये सच्चा प्रेम अपने आधारभूत स्वभाव में इस तरह का नहीं होता, वह चैत्य और आध्यात्मिक होता है। इसमें चैत्य तत्त्व है अंतरतम सत्ता की आत्मदान करने की आवश्यकता, प्रेम, आराधना, ऐक्य जिसे केवल भगवान् ही पूरी तरह संतुष्ट कर सकते हैं। आध्यात्मिक तत्त्व है सत्ता का अपनी उच्चतम और समग्र सत्ता और सत्ता और चेतना तथा आनंद के स्रोत—भगवान्—के साथ संपर्क, उनके साथ मिलने और एक हो जाने की आवश्यकता। ये दोनों एक ही चीज के दो पहलू हैं। मन, प्राण और शरीर इस प्रेम के सहारे और आधान हो सकते हैं लेकिन वे पूरी तरह 'वह' तभी बन सकते हैं जब उन्हें फिर से सत्ता के चैत्य और आध्यात्मिक तत्त्वों के साथ सामंजस्य में ढाला जाये और वे अहंकार के निम्नतर आग्रहों को फिर से न लायें।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक मुख्याध्यापक के नाम पत्र

अमरीका के सोलहवें राष्ट्रपति अब्रहम लिंकन दुनिया भर के सबसे बड़े राजनेताओं में गिने जाते हैं। उनका लड़का जिस विद्यालय में पढ़ता था उसके मुख्याध्यापक के नाम उन्होंने एक पत्र लिखा था। यह पत्र अपना ऐतिहासिक महत्त्व रखता है और सभी अध्यापकों और विद्यार्थियों के लिये समान रूप से उपयोगी है। वे कहते हैं, "मैं जानता हूं कि उसे यह सीखना होगा कि सभी लोग न्यायपरायण नहीं होते, सभी सच्चे नहीं होते, लेकिन उसे यह भी सिखाओ कि हर दुष्ट के मुकाबिले में एक शूरवीर भी होता है, हर स्वार्थी राजनीतिज्ञ के सामने एक समर्पित नेता भी होता है। उसे यह सिखाओ कि हर शत्रु की तुलना में एक मित्र भी होता है। यदि सिखा सको तो यह भी सिखाओ कि पाये हुए पांच डालरों की तुलना में कमाया हुआ एक डॉलर कहीं अधिक मूल्यवान् हैं, मैं जानता हूं यह कठिन है, उसे खोना भी सिखाओ और जीत का मजा लेना भी। अगर हो सके तो उसे ईर्ष्या से दूर रहना भी सिखाओ, उसे शांत हंसी का रहस्य भी सिखलाओ। उसे छोटी आयु में ही यह भी सिखाओ कि धौंस जमानेवालों को हटाना ज्यादा आसान होता है। अगर तुम सिखा सको तो उसे पुस्तकों का विस्मय भी सिखाओ, लेकिन साथ ही उसे आकाश की पत्तियों, धूप में मधुमक्खियों, हरियालीवाली पहाड़ियों पर फूलों के शाश्वत रहस्य पर सोच-विचार करने के लिये शांत क्षण भी दो।

"विद्यालय में उसे यह सिखाओ कि धोखा देने की अपेक्षा असफल होना कहीं अधिक माननीय है। उसे अपने विचारों पर विश्वास रखना सिखाओ, भले सभी कहते हों कि वे सब गलत हैं। उसे शरीफ लोगों के साथ शरीफ और कठोर लोगों के साथ कड़ा होना सिखाओ। मेरे बेटे को ऐसी शक्ति दो जो भीड़ का अनुकरण न करे, चलती गाड़ी के पीछे न लगे। उसे सभी लोगों की बात पर कान देना सिखाओ पर साथ ही यह भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिखाओ कि वह जो सुने, सत्य के कपड़े में से छानकर केवल शुभ को ही स्वीकार करे।

"अगर सिखा सको तो दुःख में हंसना सिखाओ, उसे यह सिखाओ कि आंसू बहाने में कोई शर्म की बात नहीं। उसे दोषदर्शियों पर हंसना और बहुत अधिक मधुरता से सावधान रहना सिखाओ। उसे यह सिखाओ कि अपने हृदय और अपनी आत्मा की कीमत न लगाये परंतु वह अपने शारीरिक बल और मस्तिष्क को सबसे ऊंची बोली बोलनेवाले को बेचे। उसे सिखाओ कि चिल्लाती हुई भीड़ की ओर से अपने कान बंद कर ले और अगर उसे यह ठीक न लगे तो खड़ा होकर सामना करे।

"उसके साथ कोमलता से व्यवहार करो पर बहुत लाड़ न दो, क्योंकि अग्नि-परीक्षा ही इस्पात बनाती है। उसे अधीर होने का साहस दो और साहसी होने का धैर्य दो। उसे अपने ऊपर उत्कृष्ट विश्वास रखना सिखाओ, तभी वह मानवजाति पर उत्कृष्ट विश्वास रख सकेगा।

"यह बहुत कड़ा आदेश है पर देखो तुम क्या कर सकते हो, मेरा बेटा बड़ा अच्छा मुन्ना है।"

जातक कथा

एक तेज बहनेवाली नदी के किनारे बहुत घना जंगल था। जंगल में एक बहुत बड़ा सुन्दर और बलवान् बंदर रहता था। नदी के बीचों-बीच एक टापू था जिस पर नाना प्रकार के रसीले मीठे-मीठे फलों के अनेक वृक्ष थे। बंदर हर रोज टापू पर जाकर मनचाहे फल खाता था और फिर सांझ के समय अपने घर लौट आता था। नदी के तट और टापू के बीच एक बहुत बड़ा पत्थर था। बंदर एक छलांग में घाट से पत्थर तक और दूसरी छलांग में पत्थर से टापू पर जा पहुंचता था।

एक दिन नदी में रहनेवाला मगरमच्छ अपनी मादा के साथ घूमने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकला। उसी समय बंदर भी खा-पीकर लौट रहा था। मगर की मादा के मुंह में उसे देखकर पानी भर आया। वह अपने पति से बोली, "आह! कैसा मोटा-ताजा सुन्दर-सा बंदर है, निश्चय ही इसका मांस बहुत स्वादिष्ट होगा। तुम मेरे लिये इसका हृदय ला दो।"

मगर ने कहा, "तेरे होश-हवास तो ठिकाने हैं? कहां मैं पानी का वासी कहां यह वन-विहारी! मेरा और इसका क्या मुकाबिला? वह मेरे साथ लड़ने के लिये पानी में आने से रहा और पानी के बाहर मेरे अंदर जरा भी बल नहीं रहता। फिर मेरी इसकी बराबरी कैसे हो सकती है? तुम हठ छोड़ो और थोड़ी बुद्धि से काम लो।"

मगर मादा न मानी। उसने बस गृह-युद्ध की घोषणा कर दी। अब वह खायेगी तो बस उसी बंदर का हृदय और वह न मिलेगा तो भूख-हड़ताल करके मर जायेगी। मगरमच्छ की मुसीबत आ गयी। 'भई गति सांप छछूंदर केरी।'

और उपाय न देखकर मगर ने निश्चय किया कि वह किसी तरह कौशल करके बंदर को पकड़ेगा। वह टापू और घाट के बीच पत्थर पर जाकर लेट गया। उसने सोचा, "मैं यहां मुर्दे की तरह लेटा रहूंगा। बंदर झुटपुटे के समय नाचता-कूदता आयेगा और बिना जाने मेरे मुंह का कौर बन जायेगा।" वह चुपचाप पड़ा रहा, न हिलता था, न डुलता था। बिलकुल बेजान पत्थर बना हुआ था।

आखिर सांझ हुई। बंदर घर की ओर लौटा। न जाने क्यों आज उसे कुछ अजीब-अजीब सा लग रहा था। वह टापू के किनारे सावधान होकर खड़ा हो गया और चिल्लाया, "ऐ पत्थर, तुझे हो क्या गया है? रोज तो तू मेरा स्वागत करता है, आज चुप क्यों है?

मगर ने सोचा, "शायद सचमुच यह पत्थर रोज बोला करता होगा, आज मेरे कारण चुप है। ऐसे तो काम बिगड़ जायेगा।" उसने झट उत्तर दिया, "आओ, बंदर भैया, आओ, तुम्हारा हार्दिक स्वागत है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके बोलते ही सारा रहस्य खुल गया और बंदर भाई ठहाका मारकर हंस पड़े और उछलते हुए दूसरी ओर से निकल गये।

प्रकृति की पकड़

अधिकतर मनुष्य, पशुओं की भांति, प्रकृति की शक्तियों के द्वारा चालित होते हैं; जो भी कामनाएं आती हैं वे उन्हें पूरा करते हैं, जो भी संवेदनाएं उठती हैं वे उन्हें खेलने देते हैं, जो भी भौतिक इच्छाएं उनमें होती हैं, वे उन्हें संतुष्ट करने की कोशिश करते हैं। तब हम कहते हैं कि मनुष्यों के क्रिया-कलाप तथा अनुभव उनकी प्रकृति के द्वारा नियंत्रित होते हैं, और अधिकतर प्राणिक या भौतिक प्रकृति द्वारा। शरीर प्रकृति का यंत्र है—वह अपनी प्रकृति की आज्ञा मानता है या वह कामना, आवेग इत्यादि प्राणिक शक्तियों की आज्ञा मानता है।

लेकिन मनुष्यों में मन भी है, जैसे-जैसे वह विकसित होता है, वह अपनी बुद्धि और संकल्प-शक्ति के द्वारा अपनी प्राणिक और भौतिक प्रकृति को नियंत्रण में करना सीखता है। यह नियंत्रण बहुत आंशिक होता है : क्योंकि बहुधा बुद्धि प्राणिक कामनाओं तथा शारीरिक अज्ञान के द्वारा विभ्रांत हो जाती है और वह उनके पक्ष में होकर अपने विचारों, तर्कों या युक्तियों के द्वारा उनकी भूलों तथा गलत क्रियाओं का समर्थन करने की चेष्टा करती है। चाहे बुद्धि स्वतंत्र हो तथा प्राण या शरीर से यह कहती हो, "इसे मत करो," फिर भी प्राण और शरीर उसके मना करने पर भी बहुधा स्वयं अपनी ही गतिविधि का अनुसरण करते हैं—मनुष्यों की मानसिक संकल्पशक्ति उन्हें बाध्य करने के लिये पर्याप्त शक्तिशाली नहीं होती।

जब लोग साधना करते हैं तो उनमें एक उच्चतर प्रकृति कार्य करती है, यह चैत्य तथा आध्यात्मिक प्रकृति होती है और उन्हें अपनी प्रकृति चैत्य सत्ता तथा उच्चतर आध्यात्मिक आत्मा या भगवान् के प्रभाव के अधीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखनी होती है। केवल प्राण और शरीर ही नहीं, बल्कि मन को भी भागवत सत्य जानना होता तथा दिव्य विधान का पालन करना होता है। लेकिन निम्न प्रकृति तथा अपने ऊपर उनके सतत शासन के कारण आरंभ में और बहुत समय तक वे अपनी प्रकृति को पुराने तरीकों का अनुसरण करने से रोकने में असमर्थ होते हैं—तब भी असमर्थ होते हैं जब अंदर से वे यह जान जाते हैं या उन्हें बता दिया जाता है कि क्या करना चाहिये या क्या नहीं करना चाहिये। केवल सतत साधना के द्वारा, उच्चतर आध्यात्मिक चेतना तथा आध्यात्मिक प्रकृति में प्रवेश करने पर ही इस कठिनाई को पार किया जा सकता है; लेकिन सबसे अधिक शक्तिशाली तथा उत्तम साधकों को भी इसे करने में लंबा समय लगता है।

—श्रीअरविन्द

सोसायटी समाचार

१५ अगस्त २००२ को श्रीअरविन्द की १३०वीं जयन्ती दर्शन-दिवस के रूप में मनायी गयी। हमेशा की तरह दर्शनार्थियों ने श्रीअरविन्द के कमरे के दर्शन किये और शाम को गण के सदस्यों ने क्रीड़ांगण में मार्च-पास्ट में हिस्सा लिया। दिवस की समाप्ति क्रीड़ांगण में सामूहिक ध्यान के साथ संपन्न हुई। इस अवसर पर जो संदेश बंटा उसपर श्रीअरविन्द का चित्र तथा माताजी के ये वचन छपे थे :

"यथार्थतः हम उस युग में नहीं हैं जब मनुष्यों को उनके अपने साधनों पर छोड़ दिया जाता है। भगवान् ने हमें प्रबुद्ध करने के लिये अपनी चरम चेतना को नीचे भेजा है।

"जो समर्थ हैं उन्हें इस सुअवसर से लाभ उठाना चाहिये।"

भारत और विदेश में सोसायटी की विभिन्न शाखाओं तथा केंद्रों ने भी इस अवसर पर कार्यक्रम आयोजित किये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी का वार्षिक अधिवेशन १२, १३ तथा १४ अगस्त को पाण्डिचेरी में हुआ। इसमें कई विषयों पर चर्चा हुई तथा दैनिक जीवन में सर्वांगीण योग की पद्धति को कार्यान्वित करने के बारे में भी कुछ सुझाव प्रस्तुत किये गये।

श्री गोपाल भट्टाचार्यजी ने मई-जून में लन्दन, जर्मनी तथा अमरीका का दौरा किया। लन्दन में वे "सर्वांगीण योग को कैसे आचरण में लाया जाये" पर बोले। जर्मनी में उनके भाषण का विषय था "सारा जीवन योग है।" अमरीका में उन्होंने "भारतीय आध्यात्मिकता, योग तथा ध्यान" पर भाषण दिया। उन्होंने अगले वर्ष माताजी की १२५वीं वर्षगांठ मनाने के बारे में भी कई सुझाव दिये।

वडोदरा (गुजरात) शाखा ने नया वेबसाइट शुरू किया है—www.auronivas.org. गुजरात में श्रीअरविन्द निवास में श्रीअरविन्द १९०१ से १९०६ तक रहे थे। यहां २४ नवम्बर १९७२ को उनके देहावशेष की स्थापना भी की गयी थी। तब से सोसायटी की इस शाखा में देश-विदेश से भक्तगण आते हैं। इसमें बगीचा, ध्यान कक्ष, कॉनफरेंस रूम, अतिथि-गृह इत्यादि बहुत-सी चीजें हैं। और साथ ही यहां आसन, नृत्य, संगीत, चित्रकारी, श्रीअरविन्द तथा श्रीमां की कृतियों का अध्ययन इत्यादि की अनेक कक्षाएं भी नियमित रूप से चलती हैं। इस शाखा का ई. मेल का पता है—sas@auronivas.org.

मुम्बई (महाराष्ट्र) सोसायटी की श्रीचरण शाखा २४ अक्तूबर को श्रीअरविन्द के पवित्र देहावशेष की स्थापना (१९६७) की जयन्ती मनायेगी। पांच बजे शाम को ध्यान होगा उसके बाद अन्य कार्यक्रम। स्थान का पता है—रेज़ीडेंसी यूनिट नं०-२ लोखण्डवाला कम्पलेक्स, अंधेरी (पश्चिम)।

अम्बाला (हरियाणा) शाखा ने पहली जून से संगीत, अंग्रेजी बोलने तथा बच्चों को चित्रकला सिखाने की कक्षाएं शुरू की हैं।

चेन्नई (तमिलनाडू) शाखा में श्री श्रद्धालु राणाडे २१ जुलाई को "प्रार्थना" पर बोले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

तुम जो भी करते हो, यहां तक कि तुम्हारे साधना के प्रयास में भी निस्सन्देह कामना का मिश्रण रहता है, और यही कठिनाई है। कामना 'बेचैनी-भरा' प्रयास लाती है और जब कठिनाई का अनुभव होता है तो निराशा और विद्रोह की प्रतिक्रिया और अन्य उलझनें डालनेवाले, विक्षोभ पैदा करनेवाले भाव पैदा होते हैं। अभीप्सा को कामना का रूप न होकर, आंतरिक आत्मा की एक अनुभूति, भगवान् की ओर मुड़ने और भगवान् को खोजने की शांत, निश्छल इच्छा होना चाहिये। निश्चय ही कामना के इस मिश्रण से पूरी तरह छुटकारा पाना आसान नहीं है—किसी के लिये भी आसान नहीं है। लेकिन अगर तुम्हारे अंदर इसके लिये संकल्प है तो सहारा देनेवाली शक्ति की सहायता से यह भी कार्यान्वित किया जा सकता है।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सम्पादकीय' :

'अपना हाथ जगन्नाथ'

इस समय भारत के बारे में संसार की यह राय बन रही है कि वह बेहद भ्रष्टाचार और राजनीतिक शतरंज के खेल में डूबा हुआ है। भ्रष्टाचार की बात से तो हर भारतीय परिचित होगा क्योंकि कहीं न कहीं वह स्वयं भुक्तभोगी हुआ होगा, किंतु हमारा राष्ट्र चमत्कारों से भरा पड़ा है।

आप विश्वास करें या न करें इन्हीं दिनों की एक घटना इतनी सुंदर है कि आपको सुनाने का लोभ मुझे उकसा रहा है। मुंबई जैसी महानगरी में एक ठेकेदार रहते हैं, उनका नाम मोहम्मद जमशेद खान है। एक दिन वे अपने बैंक की 'मनी टैलर' मशीन से कुछ रुपया निकालने गये। जब उन्होंने अपना कार्ड मशीन में डालकर बटन दबाया और उन्होंने रुपये गिने तो वे मानों आसमान से गिरे। सोचने लगे, "अरे, यह क्या? मैंने एक हजार दो सौ मांगे थे! मशीन बड़ी उदार है, छः हजार दे रही है!!" उन्होंने पास खड़े अपने मित्र फैज़ल मुखी से कहा, "मैंने एक हजार दो सौ रुपये मांगे थे लेकिन मशीन ने छः हजार दे दिये!!" मुखी मुस्कुराया, बोला, "तुम हो बुद्धू, गलत बटन दबाया होगा।" खान बोला, "नहीं, देखो, मैं फिर कार्ड डालता हूं।" इस बार उन्होंने एक हजार रुपये मांगे। मशीन ने बड़ी शान से बर्रर . . . किया और बाहर निकाले पांच हजार रुपये!! फिर भी निकासी-पत्र पर संख्या थी केवल एक हजार रुपयों की ही। दोनों मित्रों ने मशीन की निगरानी करनेवाले 'गार्ड' को बुलाया और कहा कि 'मनी टैलर' में कुछ गड़बड़ है। 'गार्ड' उनकी ओर अविश्वास से ताकता रहा तो उसके सामने खान ने पांच सौ रुपयों की मांग करके अपना कार्ड मशीन में डाला . . . लेकिन उन्हें मिले दो हजार पांच सौ रुपये!! इस परीक्षण से भौंचक्के खड़े गार्ड को उन्होंने समझाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वे अभी बैंक जाकर मैनेजर को समाचार दे देंगे कि 'मनी टैलर' मशीन में कुछ गड़बड़ है। उन्होंने चौकीदार को चेतावनी दी कि किसी को भी मशीन को छूने न दे। उन्होंने ऑटो बुलाया और तेजी से बैंक जा पहुंचे। सीधे मैनेजर के दफ्तर में गये और विस्तार से 'मनी टैलर' मशीन में गड़बड़ की बात कहकर उन्होंने मशीन द्वारा दी गयी अतिरिक्त राशि मैनेजर के सामने रख दी। इस अभूतपूर्व ईमानदारी से स्तब्ध मैनेजर दोनों मित्रों को देखते रहे, फिर भर्राये स्वर में बोले, "भइया, आपने हम लोगों को बचा दिया। आजकल मुफ्त का पैसा कौन छोड़ता है? मैंने सपने में भी सोचा न था कि ऐसी ईमानदारी कहीं भी होती होगी। आपको जितना धन्यवाद दूं कम है।"

तो भले भारत में भ्रष्टाचार है, कपट है, गुण्डागिरी है किंतु साथ ही सचाई के टिमटिमाते दीये भी हैं जो हमें आशा का संदेश देते हैं कि आज न हो, कल भारत उठेगा, अवश्य उठेगा।

*

अंग्रेज सरकार ने हमें अत्यंत पराश्रित बना दिया था और हमारी वह आदत अब तक चली आ रही है। हमारी जनता अब तक हर सामाजिक प्रश्न के हल के लिये सरकार माई-बाप की ओर ताकती रहती है। आशा की हल्की-हल्की किरण इस क्षेत्र में भी झलक रही है।

महानगर मुंबई की आबादी तो बड़ी है किंतु नागरिकों में ऐसे कम ही होंगे जो अपने विशाल नगर की स्वयं निःशुल्क सेवा करने के लिये आगे बढ़ते हों।

चेंबूर में श्री एस. गणेशन ऊंची नौकरी से निवृत्त होकर हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना पसंद न करते थे। उन्होंने देखा कि चेंबूर का सुंदर बगीचा काफी गंदा रहता है। चेंबूर की एक कमिटी थी, बस, वे उसके पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुंच गये और उनसे इजाजत लेकर सफाई का काम शुरू कर दिया और उनके साथ छः सफाई करनेवाले आ मिले। गणेशन बहुत प्रसन्न। सवेरे-सवेरे सूरज के उठते ही वे बगीचे में पहुंच जाते हैं, अपने छः कार्यकर्ताओं से गपशप करते-करते ग्यारह बजे बगीचा साफ-सुथरा बनाकर घर लौट जाते हैं। जब उनसे इस सफाई-अभियान का कारण पूछा तो वे बोले कि कॉलेज में प्रोफेसर और सब विद्यार्थी पास की बस्ती की सफाई करने जाया करते थे, तो वही काम वे अब भी करते हैं। उनके इस कार्य से प्रसन्न होकर महाराष्ट्र के एक सांसद ने उन्हें बाग को अधिक सुंदर बनाने के लिये छः लाख रुपये दिये हैं। हम आशा करें कि जैसे श्री गणेशन ने 'अपना हाथ जगन्नाथ' मानकर निःस्वार्थ भाव से अपने नगर की सेवा की है, वैसे हर भारतीय जहां भी निवास करता हो, न केवल 'अपना हाथ जगन्नाथ' मानकर सेवा करेगा बल्कि अपना पांव, हृदय और मस्तिष्क को भी जगन्नाथ को अर्पित कर कई तरह की सेवाएं अर्पित करेगा।

काश, ऐसा हो तो भारत संसार में जगमगा उठेगा !!

—अनुवेन

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा...... ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के ४० रु० और पुरोधा के ५० रु० शीघ्र भेजें। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायेगा, न ही अगला अंक वी० पी० पी० से जायेगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो ८०० रु० देकर अग्निशिखा के और १,००० रु० देकर पुरोधा के आजीवन सदस्य बन सकते हैं। आजीवन सदस्यता २० वर्ष के लिये मानी जायेगी।

संपर्क-सूत्र—पुरोधा एवं अग्निशिखा
श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५ ००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

नवम्बर

१. सद्भावनावाले सरल लोगों को, जो भागवत कृपा पर विश्वास करते हैं, चुपचाप अपने प्रकाश के मार्ग पर चलने दो।

२. जो आदमी अपनी चेतना के अनुसार अपना अच्छे-से-अच्छा करता है उसे बुरा-भला कहना असंभव है, क्योंकि वह अपनी चेतना के परे कैसे जा सकता है ? . . . यह ऐसी भूल है जो अधिकतर लोग करते हैं : वे दूसरे को अपनी चेतना से जांचते हैं, लेकिन दूसरे में उनकी चेतना नहीं होती। इसलिये वे निर्णय नहीं कर सकते—मैं, स्वभावतः, सद्भावनावाले लोगों की बात कर रही हूं।

३. भागवत चेतना को छोड़कर संसार में हर एक की एक सीमित चेतना है।

४. अगर व्यक्ति काफी लंबे समय तक सत्य चेतना में रह सके तो रूप-रंग, यानी, जिसे हम भौतिक 'तथ्य' कहते हैं, स्वयं वही गायब हो जाता है; केवल पीड़ा ही नहीं जाती . . .।

५. वास्तव में, भागवत चेतना काम में लगी है और जितना संभव है उतनी तेजी से हमें आगे बढ़ा रही है। अब इधर-उधर देर लगाने या ऊंघने का समय नहीं है।

६. जगत् में यह अस्तव्यस्तता हमें यह सिखाती है कि दिन-पर-दिन हमारा जीवन कैसा होना चाहिये, यानी, क्या हो सकता है, क्या होनेवाला है इन बातों में हम न फंसें, अपने-आपको प्रतिदिन उसीमें लगाये रहें जो हमें करना है।

७. लगभग एक-एक मिनट जीना, इस तरह होना (ऊपर की ओर संकेत) केवल उसी चीज की ओर ध्यान देना जो उस क्षण की जानी है और 'सर्व-चैतन्य' को निर्णय करने देना . . .।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. भयानक और हानिकर चीजों को बहुत महत्त्व देकर तुम उनकी शक्ति को बढ़ाते ही हो।

९. हर हालत में यही एकमात्र उचित बात है : जब तुम कोई चीज करना चाहते हो, जब तुम कोई चीज नहीं कर सकते, जब तुम गति करते हो, जब शरीर गति करने में अशक्त हो जाता है . . . हर हालत में, केवल यही—यही केवल : 'परम चेतना' के साथ सचेतन संपर्क में आओ, उसके साथ एक हो जाओ और . . . प्रतीक्षा करो।

१०. शरीर के साथ यह बहुत विलक्षण बात है कि वह एक बार कोई बात सीख ले तो उसे भूलता नहीं। कोषाणु एक बार इसे सीख लें, यह आत्म-निवेदन, भगवान् के प्रति समर्पण, इस आत्म-समर्पण की आवश्यकता को सीख लें तो उसे हमेशा के लिये सीख लेते हैं; वह चीज फिर नहीं डगमगाती।

११. हर जगह एक दिव्य चेतना है, एक दिव्य कृपा है जो सब कुछ करती है ताकि सब ठीक चल सके।

१२. निश्चय ही जब मनुष्य औरों में पूर्णता पाने के लिये प्रतीक्षा करना छोड़कर स्वभावतः अपने-आपको पूर्ण करने की ओर मुड़ेगा तो यह एक बड़ा कदम होगा . . .। यह उलटाव सभी सच्ची प्रगति का सच्चा आधार है।

१३. कभी दूसरों को या परिस्थितियों को दोष न दो, क्योंकि परिस्थितियां चाहे जैसी क्यों न हों, चाहे बुरी-से-बुरी दीखनेवाली परिस्थितियां हों, अगर तुम सच्ची वृत्ति रखो, अगर तुम्हारे अंदर सत्य चेतना हो तो तुम्हारी आंतरिक प्रगति के लिये उनका कोई महत्त्व न होगा, कोई महत्त्व न होगा।

१४. अमुक चीजों को (जिन्हें तुम स्वीकार नहीं करते और जो सत्ता में असंतुलन पैदा करती हैं), अपने से दूर फेंकने की कोशिश करने की जगह, यह करने की जगह उन्हें स्वीकार कर लो, अपने अंश के रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में स्वीकार कर लो और . . . (माताजी हाथ फैलाती हैं) उन्हें निवेदित कर दो।

१५. वे सब गतियां, सभी, जो तुम्हें नीचे की ओर घसीटती हैं उन सबका उच्चतर समझ के साथ संपर्क करवाना चाहिये।

१६. बाधाएं, विरोध, गलतफहमियां, व्यर्थ चिंताएं, हर चीज, हर चीज, हर एक चीज तुम्हें आगे बढ़ाने के लिये आती है; वह कभी एक बिंदु को, कभी दूसरे को, कभी किसी और को छूती है ताकि तुम जितनी तेजी से हो सके, उतनी तेजी से आगे बढ़ सको।

१७. जो लोग अपनी आत्मा में स्वतंत्र और अपनी जीवन-व्यवस्था में अभिजात ढंग से लयबद्ध नहीं हैं, वे सभ्य नहीं हैं।

१८. दवाई की रोग-मुक्ति की शक्ति रोगी के विश्वास से आती है। यदि मनुष्यों को भगवत्कृपा में पूर्ण विश्वास होता तो वे शायद बहुत-सी व्याधियों से बच जाते।

१९. . . . जो कुछ अपने-आपको चैत्य के अनुरूप रूपांतरित करने और उसका अभिन्न भाग बनने के योग्य न हो, वह गायब हो जाता है।

२०. व्यक्ति को सचेतन एकाग्रता के द्वारा एक ऐसी अवस्था बनाये रखनी चाहिये जो पुरानी प्रकृति के अनुसार स्वाभाविक नहीं है, लेकिन जो स्पष्ट रूप से नयी जीवन-पद्धति है। लेकिन उस तरीके से बीमारियों से बचा जा सकता है। लेकिन यह प्रायः एक भगीरथ प्रयास है।

२१. ऐसे लोग हैं जो मुझे बुलाते और मेरे बारे में सोचते हैं और यह बात मेरी चेतना के क्षेत्र में आ जाती है। कुछ समय के बाद मुझे बताया जाता है : "अमुक व्यक्ति आया है," या "अमुक व्यक्ति को कुछ हो गया है," और मैं कहती हूं : "मुझे मालूम है।" जिस समय घटना घटी थी उस समय मुझे कुछ नहीं बताया गया था, लेकिन मैं उसके बारे में सचेतन थी मानों वह मेरी सत्ता के एक अंग में हुई हो।

२२. हम 'प्रकाश' और 'सत्य' के संदेशवाहक होना चाहते हैं। सामंजस्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का भविष्य अपने-आपको प्रस्तुत कर रहा है ताकि संसार के सामने उसकी घोषणा की जाये।

२३. मैं विशेष रूप से लोगों की ग्रहणशीलता देखती हूं, वे जिस अवस्था में हैं उसे देखती हूं : जो लोग अभीप्सा के साथ आते हैं, जो कुतूहल के साथ आते हैं, जो . . . एक प्रकार से बाध्य होकर आते हैं, और फिर, जो प्रकाश के लिये प्यासे हैं—ऐसे अधिक नहीं होते, लेकिन ऐसे बच्चे कई हैं।

२४. मैं सदा ऐसे लोगों के विरुद्ध संघर्ष में लगी रहती हूं जो यहां आराम से रहने के लिये आये हैं ताकि "जो मरजी कर सकें' . . . तो . . . मैं उनसे कहती हूं : "संसार काफी बड़ा है, तुम बाहर जा सकते हो"—वहां न अंतरात्मा होती है, न अभीप्सा, कुछ भी नहीं।

२५. सच्ची आध्यात्मिकता बहुत सरल होती है।

२६. सामान्य सद्भावना और समस्त नैतिक और सामाजिक नियमों की जगह—ये सब ढह चुके हैं—तुम्हें ऊपर उठना चाहिये, भागवत इच्छा और भागवत 'सामंजस्य' होने चाहियें।

२७. इस जगत् में, जैसा कि वह है, भगवान् को पाना और उनके साथ चिपके रहना चाहिये—केवल उन्हीं के साथ, कोई और रास्ता नहीं है।

२८. निराशावाद शैतान का अस्त्र है और वह अपनी स्थिति को भांप लेता है . . . जैसे ही तुम निराशावाद की पूंछ देखो, समझ लो कि शैतान है।

२९. परम प्रभो, 'शाश्वत सत्य'
हम केवल 'तेरी' ही आज्ञा का पालन करें
और तेरे 'सत्य' के अनुसार जियें।

३०. उद्देश्यहीन जीवन सदा दुःखी जीवन होता है। सदा वही करो जिसे तुम सर्वोत्तम समझते हो, चाहे उसे करना सबसे कठिन क्यों न हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वानर की दृष्टि से

अरे सुनते हो झंडूशाह, यह आदमी भी क्या ऊत होता है। दो-चार वानरों से उसकी प्रशंसा सुनकर मेरा भी मन हो आया कि उसके देश की सैर कर आऊं। हम लोग मनुष्य तो हैं नहीं कि बात-बात में दूसरों से सलाह-मशविरा करें, योजनाएं बनायें, एक दूसरे का सिर फोड़ें और फिर टांय-टांय फिस।

बात मेरे मन में आयी और मैं चल पड़ा। हमारे वन से यही कोई दो रात की दूरी पर आदमियों का जंगल है जिसे वे शहर कहते हैं। उफ, क्या ऊट-पटांग चीज है, मैं तो कभी वहां रहना पसंद न करूं। अरे, सुन्दर-सुन्दर पेड़-पौधे काट-काट कर उनकी जगह लोहे और एक खास तरह की मिट्टी के, जिसे वे सीमेंट कहते हैं, पेड़ खड़े किये हैं जिनमें न शाखाएं हैं, न पत्ते और न फल-फूल। अरे, शहर क्या है एक बड़ी-सी दीमकों की बांबी समझ लो। हां, उसे बांबी कहना ही ठीक रहेगा। दीमकें वर्षा, धूप और आंधी-तूफान से बचने के लिये बांबी में चली जाती हैं उसी तरह आदमी भी इन चीजों के डर से अपनी बांबी में घुस जाता है।

लेकिन हां, दीमक बेचारी सीधी-सादी होती है, उसे अपने काम से काम, कभी किसी से लेना एक न देना दो। जब भूख लगती है तो जो लकड़ी सामने आ जाये उसे चबा जाती है, वैसे किसी का नाश करने नहीं जाती। लेकिन आदमी, अरे बाबा रे! उसकी तो बात ही अलग है। वह तो मजे के लिये नाश करता है, मैंने अपनी आंखों से देखा है, वह मनोरंजन के लिये पशु-पक्षियों का शिकार करता है और अपने मार्ग की असुविधाएं दूर करने के लिये जो भी मार्ग में आ जाये—पेड़-पौधे हों या पशु-पक्षी, इतना ही नहीं स्वयं उसके अपने सजातीय मानव ही क्यों न हों—सबको बड़ी निर्ममता के साथ खतम कर देता है और इसपर फूला नहीं समाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन आखिर आदमी है तो हमारा ही वंशज, झंडूशाह बोले, ये सब बातें उसमें कहां से आ गयीं ?

मैं इन सब बातों का भी अध्ययन करके आया हूं। गंडूशाह ने उत्तर दिया। आदमी के पूर्वजों ने अपने और हमारे समान पूर्वजों से कन्नी काटने की ठानी। हमारे पूर्वज अच्छे बच्चे थे। वे बाप पर पूत पिता पर घोड़ा, बहुत नहीं तो थोड़ा-थोड़ा के अनुसार लीक-लीक चलते रहे। उसके बाप-दादों ने अपना अलग मार्ग चुना और हम लोगों के रास्ते अलग-अलग हो गये। उसने अपनी बुद्धि को विकसित किया और उस दिशा में हमसे बहुत आगे निकल गया।

बुद्धि में वह हमसे आगे निकल गया लेकिन कई बातों में हमसे पछाड़ भी खा गया। अब देखो, वह इस सुंदर पूंछ से वंचित है जिसकी सहायता से हम कितने सारे काम कर लेते हैं। वह हमारी तरह उछल-कूद नहीं कर सकता। चाहे जितना बड़ा जंगल हो, हम आसानी से इधर-से-उधर जा सकते हैं, लेकिन आदमी तो घने जंगल के नाम से ही डरता है। वह उनके बारे में कविता लिख-पढ़ सकता है . . .।

"गंडूशाह यह कविता कौन-सी बलाय है ?" लली ने पूछा जो पास बैठी सब बातें सुन रही थी।

"तुम नहीं समझ सकतीं यह बात, लली। ज्यादा तो मैं भी नहीं जानता पर इस यात्रा में जो कविताएं सुनीं उनसे तो यही समझता हूं कि अगर तुम मुझसे नाराज हो जाओ और मैं तुम्हें मनाने की कोशिश करूं और कहूं, अरे मेरी लली, तुम तो चन्द्रमा के जैसी हो, तुम्हें देखकर मुझे आडू याद आते हैं, तुम हवा में तैरते सेमल के जैसी हल्की-फुल्की हो, तो यह हुई कविता। अच्छा ही है कि हम इससे बचे हुए हैं।"

हां, तो आदमी जंगल की तारीफ करते हुए कविता लिखता है और फिर जंगलों को काट-काट कर एक तरह की लुगदी बना डालता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उसे अजीब-अजीब आकार देता है। शायद आदमी का मुख्य काम है बनाना और बनाकर तोड़ देना।

उसकी पूंछ बिलाय गयी। उसने उछलना-कूदना छोड़ दिया। एक वाक्य में कहूं तो वह आलसी बन गया। लेकिन मजे की बात यह है कि हमारी सब विशेषताएं खो बैठने के बाद अब उसने फिर से इन गुणों के पीछे दौड़ लगानी शुरू कर दी है। अब वह फिर से दौड़ने, उछलने, भाले फेंकने के अभ्यास करता है और इन चीजों के लिये बड़ी-बड़ी प्रतियोगिताएं होती हैं, साम्मुख्य होते हैं। फिर भी, हरिण की दौड़, बंदर की उछल-कूद, अरे, यहांतक कि गिलहरी की फुरती से कोसों दूर है वह। इसीको उसने विकास का नाम दिया है।

मनुष्यों का कहना है, बंदर विकसित होकर मनुष्य बना है। यह भी एक ही रही। बंदर विकसित होकर मनुष्य बना और मनुष्य बंदर, चीता, हरिण बनने के स्वप्न ले रहा है!

लली ये बातें बड़े ध्यान से सुन रही थी। जब दोनों बंदर जरा चुप हुए तो वह बड़ी गंभीरता के साथ बोली, आप लोगों की बातें ठीक ही होंगी। आप दोनों बड़े बुद्धिमान हैं, आपने दुनिया देखी है। गंडूशाह ने तो वानर जगत् ही नहीं मानव जगत् भी छान मारा है! जानती हूं आपके सामने मेरा बोलना छोटे मुंह बड़ी बात है, लेकिन अभी कुछ ही दिन हुए मैं अपने जाति और कुलगुरु हनुमान बाबा के दर्शन करने गयी थी। वहीं कुछ मनुष्य भी आये हुए थे। वे भी उन्हें अपना इष्टदेव मानते हैं। पूरी बातचीत तो मैं न सुन पायी पर जो कुछ सुना उससे यह समझी कि मनुष्य जो कुछ कर रहा है वह उनकी प्रेरणा से ही कर रहा है। बाबा कह रहे थे, देखो मानव, तुमने थोड़ी-सी बुद्धि क्या पा ली है तुम अपने-आपको सारी सृष्टि में सर्वश्रेष्ठ मानने लग गये हो। यह गर्व तुम्हें कहीं का न छोड़ेगा। तुम्हारी पशु-पक्षी सुलभ विशेषताएं गुम होती जा रही हैं और तुम अपने मन में जाकर अटक गये हो। तुम मूक और चपल पशु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से बदल कर वाचाल और प्रमादी पशु बन गये हो। अगर तुम सचमुच ऊंचे उठना चाहते हो तो मेरी ओर देखो। मेरे एक-एक रोम में भागवत चेतना निवास करती है। मेरा शरीर भले वानर का हो पर मेरे अंदर सब जगह भगवान् का वास है। शायद तुमने वह कहानी सुनी हो कि जब सीता माता ने मुझे कुछ आभूषण प्रदान किये तो मैं उन्हें तोड़-तोड़ कर देखने लगा कि उनमें मेरे आराध्य की झलक है या नहीं। इस पर कुछ लोगों ने मुझे ताना दिया, तो क्या भगवान् तुम्हारे हृदय में भी विराजमान हैं ? मैंने चुपके से अपना वक्ष चीरकर दिखा दिया। वहां भगवान् अपने अंशों और अपनी शक्तिसहित विद्यमान थे।

तुम्हें भी ऐसा प्रयास करना चाहिये कि तुम्हारा शरीर सिंह-सी फुरती, हाथी के बल, मृगशावक की कोमलता आदि के साथ-साथ भागवत चेतना का आवास बन सके। भगवान् बहुत शीघ्र धरती पर प्रकट होनेवाले हैं। मैं उनके स्वागत की तैयारी करने के लिये आया हूं। मेरे साथ और भी बहुत-से देवी-देवता विभिन्न रूपों और आकारों में धरती पर उतरे हैं। हम सब तो साक्षी होंगे परंतु भगवान् की अभिव्यक्ति के लिये मनुष्य को ही यंत्र के रूप में चुना गया है। तुम्हें उसकी तैयारी करनी चाहिये।

मैं तुम्हारा इष्टदेव न होकर सच्चे इष्टदेव की ओर अंगुलि-निर्देश करनेवाला हूं। अब से तुम जो भी क्रिया करो इसी उद्देश्य को सामने रखकर करो कि तुम्हें उनका यंत्र बनना है। तुम्हारे सभी क्रिया-कलाप, समस्त व्यायाम इसी लक्ष्य को लेकर चलें। तुम्हारी सफलता सारी सृष्टि की सफलता होगी। एक बार भगवान् का पूरा अवतरण हो जाये तो फिर, सारी पृथ्वी पर कहीं कोई क्रूरता, कोई कुरूपता, कोई निर्दयता न रह पायेगी।

लली की बातें सुनकर झंडूशाह और गंडूशाह दोनों की आंखें फटी-की-फटी रह गयीं। यह जरा-सी बंदरिया कहीं गयी नहीं, कहीं आयी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं फिर भी, हमसे इतना ज्यादा जानती है। धन्य है! उन्हें उसके लिये मान भी हुआ और कुछ-कुछ ईर्ष्या भी जागी। लली जब एकचित्त होकर बोल रही थी तो झंडूशाह अपने बंदरपन को न रोक सका, उसने चुपके से उसकी पूंछ एक बेल के साथ बांध दी और अपने-आप दूर जा बैठा।

—रवीन्द्र

'पुरोधा' अक्तूबर १९८०

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

सावित्री

"श्रीअरविन्द के अन्तर्दर्शन का परम प्रकटीकरण सावित्री में है।"

—श्रीमां

मेरा काम है सावित्री महाकाव्य अंतिम रूप लेने से पहले जिन लंबी प्रक्रियाओं से गुजरा है उनका ब्योरेवार विवरण देना। चूंकि इस भव्य महाकाव्य ने संसार के कई लोगों को अपने अपार्थिव स्वर्गिक सौंदर्य से अभिभूत किया है इसलिये मैंने सोचा कि उन्हें उसके विकास, वृद्धि और अंतिम आविर्भाव के इतिहास में रुचि होगी—जो स्वर्णिम शिशु का जन्म था। हालांकि मैंने श्रीअरविन्द को महाकाव्य पर कई परिवर्तन करते हुए, पंक्तियां बदलते हुए देखा है और मुझे उनके लिपिक बनने का अद्वितीय सौभाग्य भी प्राप्त था फिर भी इतने लंबे अरसे के बाद उस विराट् ग्रंथ को फिर से स्मृति से खींच लाना कठिन है। क्योंकि कितने ही पाठान्तर, पुनः पाठान्तर, परिवर्धन और घटाव हुए कि उन्हें अब स्मृति में लाना कठिन है। मैं कोई विद्वान् पंडित नहीं हूं और पुराने अभिलेखों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोध-कार्य के लिये मेरी कोई अभिरुचि नहीं है। मैंने कभी न सोचा था कि किसी दिन मुझ जैसे गरीब मनुष्य को प्रभु ने क्या किया, कैसे किया, क्या नहीं किया, इन सब ब्योरों का लेखा-जोखा देना पड़ेगा। अगर मेरे सम्माननीय और अनेक विधाओं में प्रवीण मित्र अमल किरण जो अथक, अजेय शोधकर्ता और कवि भी थे, उनकी सहायता न मिलती और युवा सहायक साथ न रहता तो पाठकों को केवल एक हल्के रेखा-चित्र से संतुष्ट रहना पड़ता। क्षमा-प्रार्थना के बाद साहसिक कार्य का आरंभ !

दिनेन राय[१] का कहना है कि सावित्री लिखना श्रीअरविन्द ने बड़ौदा में शुरू कर दिया था। आरंभ में काव्य की योजना यूं थी कि उसके दो भाग होंगे, एक का शीर्षक होगा पृथ्वी, और दूसरे का पृथ्वी से परे। पहले भाग में चार ग्रंथ होनेवाले थे और दूसरे भाग में तीन ग्रंथ और उपसंहार होनेवाले थे।

बाद में तीन भाग हुए जिनके नाम दिये नहीं गये थे। प्रत्येक भाग में कई ग्रंथों की योजना हुई थी। पहले ग्रंथ का नाम था 'प्रेम', बाद के परिवर्तन में पहले ग्रंथ को शीर्षक दिया गया था 'अन्वेषण' और 'प्रेम' दूसरा ग्रंथ बन गया। आरंभ के आख्यानों में ग्रंथ की जगह सर्ग लिखा गया था। बाद के ग्रंथों में सर्गों का समावेश हो गया था। बड़ौदा के बाद श्रीअरविन्द ने सावित्री को फिर से पांडिचेरी में लिखना शुरू किया था। पहले मुखपृष्ठ पर शीर्षक था "एक कथा और एक अंतर्दर्शन"। बाद में मुखपृष्ठ पर शीर्षक था "एक दंतकथा और एक प्रतीक"। कई बार पंक्ति बदलते-बदलते अब सावित्री में जो पहली पंक्ति है वह संतोष-जनक लगी, "देवगण के उद्बोधन से पूर्व का वह मुहूर्त था"।

[१] दिनेन्द्र कुमार राय बंगाली साहित्यकार थे, उन्हें बड़ौदा में श्रीअरविन्द के साथ रहने के लिये बुलाया गया था ताकि बंगला में बातचीत करने में वे उनकी सहायता कर पायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९३१ में श्रीअरविन्द ने "सावित्री के विषय में पत्र" अमल को लिखे थे। उन्होंने लिखा था कि पूरी कविता का फिर से पुनरावलोकन तथा संशोधन किया गया था, केवल सबसे श्रेष्ठ पंक्तियों को ही बनाये रखा था।

१९३६ में श्रीअरविन्द लिखते हैं, "माताजी के आगमन से बहुत वर्ष पूर्व मैंने 'सावित्री' को एक वर्णनात्मक कविता के रूप में लिखा था। पहला भाग 'पृथ्वी' और दूसरा भाग था 'पृथ्वी से परे' . . . उसमें सावित्री कई जगतों में से, जैसे रात्रि के जगत्, सांध्य प्रकाश के जगत् और दिवस के जगतों से गुजरती है। सब आध्यात्मिक अर्थ में ही है। अंत में वह सच्चिदानंद के उच्चतम जगतों का आवाहन करती है। उस समय मुझे पता न था कि अतिमानसिक जगत् कैसा होगा इसलिये उसका उल्लेख उसमें न था।"

२० जुलाई १९४८ की एक चिट्ठी में श्रीअरविन्द अमल को लिखते हैं, "मैं इस समय शैतान और संसार में निरंतर चलते संघर्ष को लेकर बहुत व्यस्त हूं . . . सावित्री लेखन भी धीमा पड़ गया है . . ."

'सावित्री' के पहले सर्ग में अपने पिता अश्वपति की आज्ञा के अनुसार सावित्री अपने लिये योग्य सहचर की खोज में जाती है। वह सत्यवान से मिलती है। इसी बीच नारद धरती पर उतर आते हैं और अश्वपति से मिलने जाते, तब सावित्री भी योग्य साथी को खोजकर लौट आती है। उस समय का वन का वर्णन :

"एक विराट् वन में जहां
सुनती हुई रात्रि एकाकी
आवाजों को सुनती थी
और बृहद् निःस्तब्धता में
वह जीवों के निःश्वास और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निःशब्द पद-ध्वनि के प्रति सचेतन थी
जो उजाले का भरा-भरा
हृदय सुन न पाता था''

ग्रंथ दो में :

"यूं उस विराट् वन में
वह एकाकी बैठी मृत्यु-
देव का सामना कर रही थी।''

पहला ग्रंथ जिसका शीर्षक 'अन्वेषण' था उसका ऐसा आरंभ था :

"रात्रि की निःसीम स्वप्नहीन आत्मा, विशालता
के दीपहीन मंदिर में एकाकी
मौन के तट पर प्रतीक्षारत बैठी
अपने परिवर्तन की आशा में मूक थी।''
"रूपांतरण के देवगण का मुहूर्त था समीप।''

'अन्वेषण' नामक ग्रंथ को जब उन्होंने फिर से लिखा तो आरंभ ऐसा था—

"वह रूपांतरण के देवगण का मुहूर्त था।
रात्रि की विशाल असीम आत्मा, एकाकी
विशालता के अपने दीपहीन मंदिर में अकेली
बैठी नीरवता के तट पर
निश्चल प्रतीक्षा में . . .
अपने परिवर्तन की आशा में मूक''

इस तरह 'अन्वेषण' के कई परिवर्तन, परिवर्धन और संशोधन हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवंबर १९३८ में श्रीअरविन्द की दुर्घटना के समय तक वे कम-से-कम दस बार 'अन्वेषण' ग्रंथ पर संशोधन, परिवर्तन वगैरह कर चुके थे। अपनी अस्वस्थता के कारण 'सावित्री' को उन्होंने १९४० में फिर से हाथ में लिया। इस समय उनकी मुख्य चिंता थी "दिव्य जीवन" जो कि उनके दर्शन का निचोड़ है। १९४० में 'दिव्य जीवन' छप कर तैयार हो गया तब उन्होंने 'सावित्री' पर काम शुरू किया। सवेरे कुर्सी पर बैठ कर लिखा करते थे और कभी-कभी दोपहर को अपने बिस्तर पर बैठे-बैठे लिखते रहते।

मैं उनकी 'सावित्री' पढ़ने के लिये बहुत उत्सुक था। किन्तु हम सब उनके कमरे में निश्चित कार्य के लिये जाते थे। अगर मैं श्रीअरविन्द के व्यक्तिगत कार्य में दखल देता तो वह असभ्यता मानी जाती। मुझे फिर भी अवसर मिल गया। मुझसे कहा गया कि मैं उनकी आवश्यक पाण्डुलिपियां दराज से निकाल कर उनकी मेज पर रख दूं। धीरे-धीरे मैं उनका लिपिक बन गया। एक दिन उन्होंने मुझसे कहा कि उन्हें कापियां चाहियें। मैं तुरंत बाजार की ओर दौड़ा और माताजी से पूछे बिना दो-तीन कापियां खरीद लाया। श्रीअरविन्द ने मुस्कुराते हुए कापियां लीं और मैं प्रसन्न था कि वे अब इनमें 'सावित्री' को पंक्तिबद्ध करेंगे। एक कापी पर उन्होंने लिखा था, "सावित्री का अंतिम प्रारूप, सितंबर, १९४२।" 'दिव्य माता' के ग्रंथ की पाण्डुलिपि समाप्त हुई थी, उस पर लिखा गया था, १९४४, २४ अप्रैल। एक वर्ष तक श्रीअरविन्द सावित्री के तीन ग्रंथों की नकल करते रहे, सवेरे, दोपहर! जब यह काम समाप्त हुआ तब मुझे बुलाया गया था। मेरा नया काम था अंतिम नकल किये गये ग्रंथों को कापियों में से पढ़कर उनको सुनाना। अब फिर से पंक्तियों को बदलना, उनमें परिवर्धन करना मेरे हाथ से पाण्डुलिपि पर ही शुरू हो गया। मुझे कहते हुए खेद होता है कि मौलिक लिखावट के साफ सौंदर्य को मैंने बिगाड़ दिया था। अब मैं समझता हूं कि इस तरह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी सुंदर लिखावट को बिगाड़ना क्रूर अपवित्रीकरण था ! वह तो ऐसा ही था जैसे मंदिर की दीवार पर नक्काशी की गयी मूर्तियों का अंग भंग करना। उन कापियों में कहीं एक शब्द, कहीं पूरी पंक्तियां जोड़ी गयी थीं। श्रीअरविन्द ने 'सावित्री' को संपूर्ण सुंदर रूप देने के लिये कितना परिश्रम किया उसकी हम कल्पना नहीं कर पायेंगे।

अब बात थी इस बृहत् भूल-भुलैया-भरी कापियों को अंतिम रूप में कौन लिखे ? माताजी और श्रीअरविन्द में चर्चा हुई। माताजी ने मेरा नाम लिया और उन्होंने मुझे एक मोटी-सी कापी ला कर दे दी। माताजी को मुझे दो-तीन बार इस काम की याद दिलानी पड़ी तब जाकर मैंने काम शुरू किया। मैं फर्श पर बैठ कर श्रीअरविन्द की पाद-पीठिका को अपनी मेज बना कर लिखने बैठता। माताजी आते-जाते समय मेरी ओर देखकर मुस्कुरा देतीं। 'दिव्य जीवन' के प्रकाशन के बाद लोगों को पता लगा कि अब श्रीअरविन्द 'सावित्री' पर संशोधन कर रहे हैं, तो उसे जल्द-से-जल्द पढ़ने की उत्सुकता में लोग अधीर हो रहे थे। जब मैंने 'सावित्री' की नकल कर दी तो नलिनी को उसे टाइप करने की जिम्मेदारी दी गयी। इस तरह 'सावित्री' पर श्रीअरविन्द का संशोधन उनके जीवन के अंतिम महीने तक चलता रहा। कभी-कभी जब मेरे पढ़कर सुनने के बाद उन्हें समझ में न आता तो वे 'मैग्नीफाईंग ग्लास' लेकर पढ़ने की कोशिश करते किंतु कुछ देर देखकर कहते, "ना, पता नहीं लग रहा।" 'नियति' नामक ग्रंथ का संशोधन जब अंतिम बार हुआ तो उसमें उनके शरीर छोड़ने के भविष्यसूचक संकेत थे। शायद उन्होंने तबतक निर्णय ले लिया होगा।

एक दिन स्नान के बाद बैठे-बैठे श्रीअरविन्द कुछ बुदबुदा रहे थे। चम्पकलाल ने ताड़ लिया कि नयी पंक्तियों की बात सोच रहे हैं। उन्होंने श्रीअरविन्द से कहा कि नीरद इन पंक्तियों को लिख लें तो अच्छा होगा। मैं भी तैयार हो गया और मैं श्रुतलेख लिखने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अचानक हमारी दिनचर्या बदल गयी क्योंकि माताजी ने दोपहर को बाहर निकलना शुरू किया। अब सवेरा चिट्ठियां पढ़ने और उत्तर देने में निकल जाता था, हमें 'सावित्री' के लिये कम समय मिलता था। एक दिन श्रीअरविन्द बोल उठे, "मेरे मुख्य काम में विलंब हो रहा है।" उसके बाद 'सावित्री' के लिये समय बदला गया और सवेरे ग्यारह से लेकर डेढ़ बजे तक बिना रुके हम काम करते गये। श्रुतलेख देते समय उनका स्वर शांत, धीमा, मधुर और स्पष्ट होता। आवाज में कोई उतार, चढ़ाव या नाटकीयता का लक्षण न होता। काम पूरी रफ्तार से चलता रहा। १९५०, नवंबर दर्शन के दो सप्ताह पहले उन्होंने वह कार्य बंद कर दिया। शायद उन्होंने मानवजाति के करुण संगीत से हट जाने का निर्णय लिया होगा और उसके बदले वे 'सावित्री' का दिव्य संगीत हमारे लिये छोड़ गये। एक दिन उन्होंने डेढ़ बजे के बाद भी मेरे साथ काम करना जारी रखा—विरल घटना थी—उसी दिन मेरे मित्र ने अपने घर भोजन करने के लिये निमंत्रण दिया था! मैंने सोचा, शायद दो बजे तक मेरी छुट्टी हो जायेगी, किंतु ना, ऐसा लगा मानों उस दिन वे असाधारण रूप से अनुप्राणित थे! शायद मैं थोड़ा चंचल हो गया था तो उन्होंने पूछा, "क्या बात है?" मैंने जवाब नहीं दिया किंतु उन्होंने तुरंत काम बंद कर दिया। मुझे चम्पकलाल की चेतावनी की याद हो आयी कि जब तुम भगवान् की सेवा करना चाहो, तो तुम्हारे और कोई बंधन और संबंध नहीं होने चाहियें।

तो यह है विशाल महाकाव्य 'सावित्री' की रूपरेखा। हम देखते हैं कि कैसे इधर-उधर बिखरे बीजों से एक विशाल वटवृक्ष उठा हुआ है जो उठते-उठते परात्पर और अनंत वैश्व स्तर तक उठता जाता है। हम उसे पढ़कर आश्चर्यचकित रह जाते हैं। यह ऐश्वर्यपूर्ण अंतर्दर्शन नभ में झूमते हुए अनन्त की ओर बढ़ते संसार की लंबी यात्रा में शांतिप्रद छाया देता रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काव्य में श्रीअरविन्द ने किस तरह व्यापक दृष्टि अपना कर उसे सर्वालिंगन में बांध लिया है उसका एक नमूना यहां प्रस्तुत है। बृहत्तर जीवन के राज्यों और देवों का वर्णन :

"उस उच्च लोक में जहां अविद्या नहीं है
एक एक गति है लहर शांति और आनंद की,
विश्राम है प्रभु की गतिहीन सृजनात्मक शक्ति,
कर्म है अनन्त में कलकल ध्वनि
और जन्म है संकेत शाश्वतता का।
एक सूर्य रूपान्तरण का फिर भी चमकता रहेगा
और रात्रि अनावृत कर पायेगी अपनी क्रोड रहस्यमय प्रकाश की;
आत्म-विलोपन, आत्म-पीड़ित विरोधाभास
आत्म-ज्योतिर्मय रहस्य में सकता है बदल,
उलझन को एक हर्षपूर्ण चमत्कार में।
तब प्रभु होंगे दृष्टिगोचर यहां, यहीं धारण करेंगे एक रूप;
प्रकट होगा आत्मा का तादात्म्य;
जीवन उद्घाटित करेगा अपना अमर मुख।
किंतु इस समय सीमाहीन श्रम है उसकी नियति :
घटनाओं के पुनरावर्तक दशमलव में
जन्म, मृत्यु दीखते हैं उसके सिहरते बिंदु;
वही पुराना प्रश्न-चिह्न प्रत्येक समाप्त
पृष्ठ के हाशिये पर लगा रहा,
प्रत्येक ग्रंथ है उसके प्रयास का इतिहास
एक लंगड़ाती 'हामी' युगों से यात्रा करती जा रही है
साथ-साथ चलता है शाश्वत 'नकार'
समस्त दीखता है व्यर्थ, फिर भी है अंतहीन खेल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्त नित चक्कर काटता घूमता है चक्र,
जीवन का नहीं कोई परिणाम, मृत्यु न लाती मुक्ति।
अपनी ही बंदी बन सत्ता रहती है जीवित
और बचाए रखती है अपनी व्यर्थ अमरता,
विलोपन के लिये है इंकार, उसका था एकमात्र जो बचाव।
देवों की भूल-भ्रांति से बनी है सृष्टि।
या फिर उदासीन हो शाश्वत निरखता है काल को।"

मैं केवल आदर-मिश्रित अहोभाव से अवाक् रह जाता हूं और सराहना से फूला नहीं समाता। इस अनन्य कृति की रचना में श्रीअरविन्द के विराट् श्रम को देखकर मुझे कोणार्क के विशाल मन्दिर और 'नोत्रदाम' के महामंदिर की याद हो आती है जिन्हें मनुष्य खड़ा रहकर देखता रहता है और स्तब्ध होकर आनंद-सागर में खो जाता है; उस समय मनुष्य की आत्मा देश और काल के उस पार चली जाती है।

—नीरदवरण

नींद

यह ऐसा योग नहीं है जिसमें शारीरिक तपस्या केवल तपस्या के लिये की जानी चाहिये। नींद शरीर के लिये उसी तरह जरूरी है जैसे भोजन जरूरी है। पर्याप्त नींद लेना जरूरी है, लेकिन अत्यधिक नहीं। और कितनी नींद पर्याप्त है यह शरीर की आवश्यकता पर निर्भर है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात को जागते रहने की कोशिश करना ठीक तरीका नहीं है। आवश्यक नींद को दबाना शरीर को तामसिक तथा जाग्रत अवस्था में आवश्यक एकाग्रता के अयोग्य बना देता है। उचित उपाय है निद्रा को रूपांतरित करना, उसे दबाना नहीं और स्वयं नींद में अधिकाधिक सचेतन होना सीखना। अगर इतना हो जाये तो नींद चेतना की आंतरिक विधि बन जाती है जिसमें साधना उसी तरह जारी रह सकती है जैसे जागती अवस्था में और साथ ही तुम भौतिक से भिन्न, चेतना के अन्य क्षेत्रों में प्रवेश कर सकते हो और शिक्षाप्रद तथा उपयोगी अनुभवों के विशाल क्षेत्रों में प्रवेश करते हो।

*

साधना जाग्रत अवस्था की तरह स्वप्न और निद्रा की हालत में भी चलती रह सकती है।

ऐसा कोई कारण नहीं है कि साधना की तीव्रता अपर्याप्त निद्रा लाये।

*

अगर तुम काफी न सोओ तो शरीर और स्नायु-कोष कमजोर पड़ जाते हैं और शरीर तथा स्नायु-कोष साधना के आधार हैं।

*

नींद की कमी तुम्हारे स्नायु-संस्थान को दुर्बलता के प्रति खुला रखती है—पर्याप्त नींद न लेना एक बड़ी भूल है। कम-से-कम सात घंटे सोना जरूरी है। अगर तुम्हारा स्नायु-संस्थान काफी मजबूत हो तो तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे घटा कर छह घंटे कर सकते हो या विरल अवस्था में पांच। लेकिन आवश्यकता के बिना इसका प्रयास नहीं करना चाहिये।

*

कहते हैं कि साधारणतः सात-आठ घंटे सोना चाहिये, बड़ी आयु में यह कम हो सकता है। अगर तुम कम सोओ (उदाहरण के लिये पांच-छह घंटे) तो शरीर किसी तरह अपने-आपको अनुकूल बना लेता है। लेकिन नियंत्रण उठ जाने पर शरीर फिर से बाकी की कमी पूरी कर लेना चाहता है। इसी तरह जब तुम बहुत कम भोजन पर रहने का अभ्यास करो, उसके बाद तुम सामान्य अवस्था पर आओ तो तुम बहुत अधिक खब्बू बन जाते हो जबतक कि तुम पिछला हिसाब ठीक न कर लो। बहुधा ऐसा होता है।

*

नींद में आदमी प्रायः चेतना से गहरी चेतना में जाता है और इस लंबे क्रम में तबतक चलता रहता है जबतक कि वह चैत्य में न जा पहुंचे और वहां विश्राम करे या उच्च-से-उच्चतर चेतना में जा पहुंचे जहां वह नीरवता और शांति में रह सके। इस विश्राम में आदमी जो मिनट बिताता है वे वास्तव में ऐसी निद्रा के होते हैं जो पुनरुद्धार करती है। अगर वह न मिले तो केवल आधा विश्राम होता है, जब तुम इन दोनों में से किसी एक विश्राम-स्थिति में जाते हो तो तुम इस तरह के उच्चतर स्वप्न देखना शुरू करते हो।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लंबी, निरंतर निद्रा जरूरी है क्योंकि कुल मिलाकर दस मिनट ही होते हैं जिनमें आदमी सच्चा विश्राम पाता है—यह चेतना की एक तरह की सच्चिदानंद निष्क्रियता होती हैं और यही वास्तव में शरीर का पुनरुद्धार करती है। बाकी समय चेतना के विभिन्न स्तरों में घूमने और जाग्रत अवस्था में लौटने में बीतता है। दस मिनट के इस सच्चे विश्राम की बात डॉक्टरों ने भी देखी है, लेकिन निःसंदेह वे सच्चिदानंद के बारे में कुछ नहीं जानते।

*

जब व्यक्ति चेतना की अच्छी स्थिति में रहने के बाद रात के समय अवचेतना में डूब जाता है तब हम देखते हैं कि वह अच्छी स्थिति चली गयी और उसे फिर से पाने के लिये हमें परिश्रम करना पड़ता है। दूसरी ओर अगर नींद अधिक अच्छे प्रकार की हो तो व्यक्ति जागने के समय अच्छी हालत में हो सकता है। निस्संदेह, यदि व्यक्ति कर पाये तो नींद में सचेतन रहना ज्यादा अच्छा है।

*

तुम्हें सोने से पहले हमेशा एक विशेष संकल्प या अभीप्सा के साथ एकाग्रता के अभ्यास करने से आरंभ करना होगा। संकल्प या अभीप्सा को अवचेतना में पहुंचने में समय लग सकता है लेकिन अगर वह निष्कपट, बलशाली और स्थिर हो तो कुछ समय के बाद वह पहुंच कर रहती है जिससे स्वयं नींद में ही स्वतःचालित चेतना और संकल्प प्रतिष्ठित हो जाते हैं जो फिर आवश्यक कार्य करते हैं।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात के समय तुम्हें एकाग्रता की अवस्था से निद्रा में चले जाना चाहिये—तुम्हें लेटे हुए, बंद आंखों के साथ एकाग्र होने में समर्थ हो सकना चाहिये और एकाग्रता गहरी होते-होते नींद में बदल जानी चाहिये—अर्थात् नींद को बाह्य जाग्रत अवस्था के परे एकाग्रता के साथ अंदर जाने की क्रिया बनना होगा। अगर तुम्हें कुछ समय के लिये बैठना आवश्यक लगे तो तुम बैठ सकते हो, लेकिन बाद में लेट जाओ और एकाग्रता को तबतक बनाये रखो जबतक तुम नींद में न चले जाओ।

—श्रीअरविन्द

महत्त्वाकांक्षा

(१)

"महत्त्वाकांक्षा के सबसे सामान्य विचारों में से एक विचार है मानवसेवा का। इस प्रकार की सेवा या ऐसे कार्य के साथ सब तरह का लगाव व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा का चिह्न है।"

प्रश्न और उत्तर १९२९ (१४ अप्रैल)

आप यह क्यों कहती हैं कि यह महत्त्वाकांक्षा है ?

तुम मानवजाति की सेवा क्यों करना चाहते हो, तुम्हारा क्या विचार है ? इसके पीछे महत्त्वाकांक्षा है। यह मनुष्यों में बड़ा आदमी बनने के लिये है। यह समझना कठिन है ? . . . मैं देख सकती हूं !

भगवान् सब जगह हैं। अतः अगर व्यक्ति मानवजाति की सेवा करता है तो वह भगवान् की ही सेवा होती है। क्या ऐसा नहीं है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह अद्भुत बात है! इस मामले में यह कहना सबसे स्पष्ट होगा: "भगवान् मेरे अंदर हैं, मैं अपनी सेवा करता हूं तो मैं भगवान् की सेवा भी कर लेता हूं।" (हंसी) वास्तव में भगवान् हर जगह हैं। भगवान् तुम्हारे बिना अपना काम भली-भांति कर लेंगे।

मैं अच्छी तरह देख रही हूं कि बात तुम्हारी समझ में नहीं आयी। लेकिन अगर सचमुच तुम यह समझते हो कि भगवान् सब चीजों में हैं तो मानवजाति की सेवा करके तुम किस चीज में हस्तक्षेप करते हो? मानवजाति की सेवा करने के लिये तुम्हें भगवान् की अपेक्षा ज्यादा अच्छी तरह जानना चाहिये कि उसके लिये क्या करना चाहिये। क्या तुम भगवान् की अपेक्षा ज्यादा अच्छी तरह उसकी सेवा करना जानते हो?

भगवान् हर जगह हैं। हां, चीजें भागवत नहीं मालूम होतीं . . .। जहां तक मेरा सवाल है, मैं केवल एक ही समाधान देखती हूं: अगर तुम मानवजाति की सहायता करना चाहते हो तो एक ही काम करने लायक है। अपने-आपको, जितना संभव हो, पूरी तरह से भगवान् के अर्पण कर दो। यही समाधान है। क्योंकि इस तरह तुम जिस भौतिक सद्‌वस्तु के प्रतिनिधि हो वह कुछ अधिक भगवान् जैसी बन सकेगी।

हमसे कहा जाता है कि भगवान् सब चीजों में हैं, तब फिर चीजें बदलती क्यों नहीं? क्योंकि भगवान् को प्रत्युत्तर नहीं मिलता। हर चीज भगवान् को प्रत्युत्तर नहीं देती। यह देखने के लिये तुम्हें चेतना की गहराइयों को खोजना होगा। तुम मानवजाति की सेवा के लिये क्या करना चाहते हो? गरीबों को भोजन देना? —तुम लाखों को खिला सकते हो, पर यह समाधान न होगा, समस्या जैसी-की-वैसी बनी रहेगी। उनके रहने के लिये नयी और ज्यादा अच्छी व्यवस्था करोगे? —भगवान् उनमें हैं, फिर यह कैसे होता है कि परिस्थितियां नहीं बदलतीं? मानवजाति की हालत को भगवान् तुम्हारी अपेक्षा ज्यादा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छी तरह जानते होंगे। तुम क्या हो ? तुम बस जरा-सी चेतना और जरा-से भौतिक पदार्थ के प्रतिनिधि हो। बस, उसी को तुम "मैं" कहते हो। अगर तुम मानवजाति की, संसार या विश्व की सेवा करना चाहते हो तो करने लायक चीज यही है कि उस छोटे-से टुकड़े को पूरी तरह भगवान् के अर्पण कर दो। यह संसार दिव्य क्यों नहीं है ? . . . यह तो स्पष्ट ही है कि संसार सुव्यवस्थित नहीं है। इसका एक ही समाधान है। जो कुछ तुम्हारा है उसे दे दो। उसे पूरी तरह, समग्र रूप में भगवान् को दे दो, सिर्फ अपने हित में नहीं, मानवजाति के हित में, विश्व के हित में। इससे अच्छा कोई समाधान नहीं है। तुम मानवजाति की सहायता कैसे करना चाहते हो ? तुम्हें तो यह भी नहीं मालूम कि उसे क्या चाहिये। शायद यह तो तुम्हें और भी कम मालूम है कि तुम किस शक्ति की सेवा कर रहे हो ? वास्तव में अपने-आपको बदले बिना तुम किसी चीज को कैसे बदल सकते हो ?

बहरहाल, तुम इसके लिये काफी समर्थ नहीं हो। जबतक तुम्हारी चेतना दूसरे से ऊंची न हो तबतक तुम उसकी सहायता करने की आशा ही कैसे कर सकते हो ? यह बचकाना विचार है ! बच्चे कहा करते हैं : "मैं छात्रावास खोल रहा हूं, मैं एक शिशु-सदन खोलनेवाला हूं, गरीबों को शोरबा दूंगा, यह ज्ञान फैलाऊंगा, इस धर्म का प्रचार करूंगा . . .।" यह केवल इसलिये है कि तुम अपने-आपको दूसरों से अच्छी स्थिति में मानते हो, तुम सोचते हो कि तुम उनकी अपेक्षा ज्यादा अच्छी तरह जानते हो कि उन्हें क्या होना और क्या करना चाहिये। मानवजाति की सेवा बस यही है। तुम उसीको जारी रखना चाहते हो ? इसने चीजों में ज्यादा परिवर्तन नहीं किया। आदमी मानवजाति की सहायता के लिये हस्पताल या विद्यालय नहीं खोलता।

८ अप्रैल, १९५३ 'श्रीमातृवाणी' खण्ड ५, पृ० १०-१२

LIBRARY Gurukul Kangri Vishwavidyalaya HARDWAR

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'ऋषिवर बोले' :

कुछ सीख-भरी कहानियां (१)

ऋषिवर ने प्रवेश करते ही कहा, तुम सबको तो मालूम ही होगा कि आज मारिया का जन्मदिन है। हर रोज तुम लोग प्रश्न किया करते हो और मैं उत्तर देता हूं। आज हम लोग इस क्रम में थोड़ा-सा परिवर्तन करेंगे। तुम लोग वक्ता बनोगे और मैं श्रोता। आज के दिन तुम लोग कोई शिक्षाप्रद कहानी सुनाओ। शुरू मारिया से ही हो तो अच्छा है।

ऐसा लगता था कि मारिया को पहले ही इसकी हवा मिल गयी। उसने बिना किसी हिचक के शुरू किया, मैं एक ऐतिहासिक कहानी सुनाऊंगी। शायद तुम में से किसी ने सुन भी रखी हो लेकिन पावन चरित्र चाहे जितनी बार दोहराये जायें पावन ही रहते हैं।

हां तो, भारत के सुप्रसिद्ध रणबांकुरे महाराणा संग्राम सिंह स्वर्ग सिधार गये और वंश-परंपरा के अनुसार उनका पुत्र विक्रमादित्य गद्दी पर आया। लेकिन जरूरी नहीं है कि महापुरुष का पुत्र भी महापुरुष बने। वह कापुरुष भी हो सकता है। विक्रमादित्य भी कुछ ऐसा ही निकला। आंखों का अंधा नाम नयनसुख। प्रजा असंतुष्ट हो गयी और सरदारों ने मिलकर उसे गद्दी से उतार दिया।

सोच-विचार कर सरदारों ने कुमार उदय सिंह का राज्याभिषेक किया लेकिन वह अभी दूध पीते शिशु थे। उनकी ओर से दासीपुत्र बनवीर राजकाज संभालने लगा। लेकिन मुश्किल यह है कि धन-दौलत और शक्ति देखकर बड़े-बड़ों का ईमान डोल जाता है, फिर बेचारा बनवीर था ही किस खेत की मूली।

उसे राज्य का लोभ हो आया और एक दिन वह नंगी तलवार लेकर धड़ल्ले से राजभवन में जा घुसा। वहां विक्रमादित्य सो रहे थे। तलवार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के एक हाथ से उनका काम तमाम करके बनवीर उदय सिंह के कक्ष की ओर चला। राजभवन में दोने-पत्तल उठानेवाले नौकर ने यह दृश्य देखा और उसका हृदय कांप गया। वह वायु वेग से दौड़ा हुआ उदय सिंह की धाय पन्ना के पास जा पहुंचा।

पन्ना ने निमिषमात्र में अपना कर्तव्य निश्चित कर लिया। कलेजे पर पत्थर रखकर उसने उदय सिंह के कपड़े उतार लिये और उसे एक टोकरी में रखकर ऊपर पत्तलें डाल दीं और उस सेवक से बोली, चुपके-से दबे पैरों राजभवन के बाहर हो जाओ, किसी को शंका न होने पाये। दूर नदी के किनारे मेरे लिये प्रतीक्षा करना।

सेवक के बाहर जाते ही पन्ना ने अपने शिशु चंदन को उदय के कपड़े पहना कर उसके पलंग पर सुला दिया। उसी समय नर-पिशाच हाथ में तलवार लिये वहां आ पहुंचा। उसने आते ही पूछा, उदय कहां है ?

पत्थर की मूर्ति बनी हुई पन्ना ने अपने लाल की ओर इशारा कर दिया और बनवीर को उसके टुकड़े करते देर न लगी।

पन्ना की आंख से आंसू तक न निकला। वह नदी के किनारे से उदय को लेकर वन-बीहड़ों में जा छिपी।

एक दिन आया वन में से सिंह का उदय हुआ। और उसने बनवीर को उसके किये का मजा चखाया और राणा संग्रामसिंह के आसन को विभूषित किया।

यह भारत की एक सामान्य नारी की कहानी है जिसने उदयपुर के राणा वंश की रक्षा की। कर्तव्य पर अपने सर्वस्व को न्यौछावर करनेवाली और भी बहुत-सी नारियां हुई होंगी जिनकी बातें हमारे कानों तक नहीं पहुंची है।

हमेशा की तरह मारिया की बात खतम होते-न-होते कमल महाशय बोल उठे, ऋषिवर, मारिया नारी है, उसने नारियों में भूषण पन्ना की बात सुनायी, परंतु मैं साहित्य-सरोवर का प्राण हूं। कमल के बिना हिन्दी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य का सौंदर्य आधा रह जायेगा। लीजिये, मैं एक साहित्यिक की बात सुनाता हूं।

एक कवि थे। नाम था श्रीपति। सरस्वती की कृपा तो थी, लक्ष्मी रूठी हुई थी। कई बार उपवास तक करना पड़ जाता था। इनकी श्रीमती इस बात से काफी परेशान रहती थीं और बार-बार पति से आग्रह करती थीं कि कमाई का कोई उपाय करो। परंतु ब्राह्मण देवता अध्ययन-अध्यापन छोड़ कर कुछ और करने को तैयार न थे।

एक दिन पत्नी ने कहा, देव, आप कवि हैं और अकबर काव्य का रसिया। एक दिन जाकर कुछ काव्य सुना आइये। आप भी अपने मार्ग से च्युत न होंगे और हमारा भी काम बन जायेगा। श्रीपति को बात जंच गयी और जा पहुंचे अकबर के दरबार में।

अकबर ने इनके कुछ पद सुने और तुरंत इन्हें अपने दरबार में रख लिया। अब श्रीपति की पांचों घी में थीं। लेकिन हमेशा सुख से रहना संभव नहीं होता। अन्य दरबारी कवि इनसे जलने लगे। वे सब अकबर की प्रशंसा में गले की रगें फुला-फुला कर विविध छंदों में कविताएं सुनाया करते थे, इधर श्रीपति भगवान् राम को छोड़ और किसी का नाम न लेता था, फिर भी सबसे बाजी मार ले जाता था।

सबने मिलकर ठीक किया कि एक दिन 'करौ मिली आस अकब्बर की' समस्या दी जाये और सभी कवि समस्या-पूर्ति करें। निश्चित दिन आया। हर एक ने अपनी-अपनी रचना सुनायी और सब-के-सब श्रीपति की ओर ताकने लगे। देखें, इस बार कैसे बच निकलता है।

श्रीपति की बारी आयी। वह मुस्कुराये और अपनी रचना पढ़नी शुरू की। अंतिम दो पंक्तियां थीं—

सरनागत श्रीपति रामहि की, नहीं त्रास है काहुहि जब्बर की।
जिनको हरि में परतीति नहीं, सो करौ मिलि आस अकब्बर की॥

यानी, श्रीपति तो केवल भगवान् राम की शरण में आया है, उसे भला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसका डर। जिन्हें भगवान् पर श्रद्धा न हो वे ही मिलकर अकबर की आशा किया करें।

सारे कवि मुंह बाये रह गये। अकबर मनुष्यों का बड़ा अच्छा पारखी था, उसने तुरंत इनाम देकर कवि को सम्मानित किया।

अब मदन की बारी आयी। अपनी लम्बी-सी भूमिका बांधते हुए उसने कहा कि मदन नाम होते हुए भी उसे भगवान् भोले बाबा से प्रेम है और वह उन्हीं के साथ संबंध रखनेवाली एक कहानी सुनायेगा।

हां, तो दधीचि की कथा तो आप सब को मालूम ही है। दधीचि की हड्डियों के हथियार बनाकर देवों ने वृत्रासुर का वध करने में सफलता पा ली। लेकिन इस बात से दधीचि के पुत्र पिप्पलाद बहुत नाराज हो गये। उनके मन में देवों के लिये घृणा हो गयी और वे किसी-न-किसी तरह उनका हनन करने पर उतारू हो गये।

बहुत सोच-विचार कर पिप्पलाद ने घोर तपस्या की। एक दिन उनकी तपस्या फल लायी और स्वयं भगवान् शंकर उनके आगे प्रकट हो गये। भोले बाबा औघड़ दानी तो हैं ही। उन्होंने पिप्पलाद को मुंह मांगा वर देना स्वीकार कर लिया।

पिप्पलाद बोले, भगवन्, निर्लज्ज देवों ने छल कर मेरे पिता के प्राण हर लिये। मैं इसका प्रतिशोध चाहता हूं। आप तीसरा नेत्र खोलकर उन सबको भस्म कर दें। शंकर ने समझाया, यह उचित नहीं है। देवों के नाश से सारे विश्व का नाश हो जायेगा। पर पिप्पलाद को इसकी परवाह न थी। वह अपनी बात पर डटे रहे।

भगवान् बोले, वत्स, तुमने अभी मेरा रुद्र रूप देखा नहीं है। पहले अपने अंतर में उसका दर्शन कर लो, फिर तुम्हारी प्रार्थना पर विचार करूंगा। और पिप्पलाद ने आंखें बंद कर लीं। रुद्र भगवान् उनके सामने खड़े थे। देखते-ही-देखते उनका सारा शरीर जल उठा। व्याकुल होकर, रक्षा करो! रक्षा करो! कहते हुए उन्होंने आंखें खोल दीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब फिर से भगवान् शंकर का सौम्य रूप उनके सामने था। उन्होंने उलाहना देते हुए कहा, यह क्या, भगवन्, मैंने देवों को जलाने के लिये कहा था, आपने तो मुझे ही जलाना शुरू कर दिया। भगवान् बोले, तुम्हारा अपना शरीर समस्त ब्रह्माण्ड का छोटा-सा मानचित्र है। तुम जो औरों के लिये करना चाहो वह पहले अपने-आप से शुरू करना होगा।

तुम्हारे हाथों में इन्द्र का निवास है, जिह्वा में अग्नि का निवास है, सूर्य तुम्हारे चक्षुओं में रहते हैं उन सबको नष्ट करना चाहोगे तो पहले अपने-आपको नष्ट करना होगा। दधीचि जैसे परोपकारी के पुत्र को ऐसी बातें शोभा नहीं देतीं।

ऋषिवर बोले, आज कहानियां तो बड़ी अच्छी सुनायी तुम लोगों ने, लेकिन अब देर हो गयी है, आज के लिये यहीं समाप्त करें। बाकी कल सुनेंगे। और सभा विसर्जित हो गयी।

२ अप्रैल, १९७२ की वार्ता

मानवजाति ने शताब्दियों और सहस्राब्दियों तक इस क्षण की प्रतीक्षा की है। वह आ गया है। पर वह है कठिन।

मैं तुमसे यह नहीं कहती कि हम यहां धरती पर आराम करने और मौज करने के लिये हैं, अभी उसका समय नहीं है। हम यहां ... नयी सृष्टि का मार्ग तैयार करने के लिये हैं।

शरीर में कुछ कठिनाई है इसलिये, खेद है, मैं सक्रिय नहीं हो सकती। इसका कारण यह नहीं है कि मैं बूढ़ी हूं—मैं बूढ़ी नहीं हूं। मैं तुममें से अधिकतर लोगों से ज्यादा जवान हूं। अगर मैं यहां निष्क्रिय हूं तो इसका कारण यह है कि शरीर ने अपने-आपको निश्चित रूप से रूपांतर की तैयारी के लिये दे दिया है। लेकिन चेतना स्पष्ट है और हम यहां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम के लिये हैं—आराम और मौज पीछे आयेंगे। चलो, हम यहां अपना काम करें।

मैंने तुम्हें यही कहने के लिये बुलाया है। तुम जो ले सकते हो लो, जो कर सकते हो करो। मेरी सहायता तुम्हारे साथ रहेगी। सभी सच्चे प्रयासों को अधिक-से-अधिक सहायता दी जायेगी।

यह वीर बनने की घड़ी है।

वीरता वह नहीं है जो लोग कहते हैं। यह पूरी तरह एक होने में है—और भगवान् की सहायता हमेशा उनके साथ रहेगी जिन्होंने पूरी सचाई के साथ वीर होने का निश्चय कर लिया है। बस!

तुम इस समय यहां, यानी धरती पर इसलिये हो क्योंकि एक समय तुमने यह चुनाव किया था—अब तुम्हें उसकी याद नहीं है, पर मैं जानती हूं—इसी कारण तुम यहां हो। हां, तो तुम्हें इस कार्य की ऊंचाई तक उठना चाहिये, तुम्हें प्रयास करना चाहिये, तुम्हें सभी कमजोरियों और सीमाओं को जीतना चाहिये: और सबसे बढ़कर तुम्हें अपने अहंकार से कहना चाहिये : "तुम्हारा समय बीत गया।" हम एक ऐसी जाति चाहते हैं जिसमें अहंकार न हो, जिसमें अहंकार की जगह भागवत चेतना हो। हम यही चाहते हैं: वह भागवत चेतना जो जाति को विकसित होने और अतिमानस सत्ता को जन्म लेने देगी।

—श्रीमां

खुले रहो

माताजी के प्रति स्वयं को हमेशा खुला रखो, उन्हें हमेशा याद रखो तथा अन्य सभी प्रभावों को त्याग कर उनकी शक्ति को अपने अंदर कार्य करने दो—यही योग का नियम है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस योग का समस्त सिद्धांत है स्वयं को भागवत प्रभाव के प्रति खोलना। वह तुम्हारे ऊपर मौजूद है, अगर तुम उसके प्रति सचेतन हो जाओ तब तुम्हें उसका आह्वान कर उसे नीचे अपने अंदर उतारना होगा। वह मन और शरीर में शांति, प्रकाश, कार्य करनेवाली शक्ति, निराकार या साकार भागवत उपस्थिति, आनंद के रूप में उतरता है। इस चेतना को पाने से पहले तुम्हारे अंदर उद्‌घाटन के लिये श्रद्धा होनी चाहिये, तुम्हें उसके लिये अभीप्सा करनी चाहिये। अभीप्सा, पुकार, प्रार्थना सभी एक तथा समान चीज के रूप हैं और सभी प्रभावकारी होते हैं। जो तरीका तुम्हारे पास आये या जो तुम्हारे लिये सबसे अधिक आसान हो तुम उसे अपना सकते हो। दूसरा है एकाग्रता का तरीका; तुम अपनी चेतना को हृदय में एकाग्र करो (कुछ लोग सिर में या सिर के ऊपर करते हैं) और माताजी के बारे में हृदय में ध्यान करो और उन्हें वहां बुलाओ। तुम किसी एक का या अलग-अलग समय पर दोनों का अनुसरण कर सकते हो—जो मार्ग तुम्हारे पास स्वाभाविक रूप से आये या जिसको करने के लिये तुम तत्क्षण प्रेरित हुए हो। विशेष रूप से आरंभ में सबसे बड़ी आवश्यकता है मन को अचंचल बनाना, ध्यान के समय साधना से विजातीय सभी विचारों तथा गतियों को अस्वीकार करना। अचंचल मन में अनुभूति के लिये उत्तरोत्तर तैयारी होगी। लेकिन अगर सब कुछ तुरंत न हो जाये तो तुम्हें अधीर न हो उठना चाहिये; मन में पूर्ण अचंचलता लाने में समय लगता है, तुम्हें तबतक लगे रहना चाहिये जबतक चेतना तैयार न हो जाये।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सच्ची भेंट

जलाल एक बुद्धिमान् और प्रसिद्ध उपदेशक थे। एक दिन दो तुर्क कुछ भेंट लेकर उनके पास आये; वे उनसे उपदेश सुनने की इच्छा रखते थे। वे बहुत गरीब थे, इसलिये उनकी भेंट भी साधारण थी—एक मुट्ठी दाल। जलाल के कुछ शिष्यों ने उस भेंट की ओर अवज्ञा की दृष्टि से देखा, परंतु जलाल ने कहा : "पैगम्बर मोहम्मद को एक बार अपने किसी कार्य के लिये धन की आवश्यकता पड़ी। उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि जो कुछ वे दे सकते हों दे। कुछ ने अपनी संपत्ति का आधा भाग दिया और कुछ ने तिहाई। अबू बकर ने सारा धन उन्हें दे दिया। मोहम्मद को इस प्रकार बहुत-से अस्त्र-शस्त्र और पशु आदि मिल गये। अंत में एक गरीब स्त्री आयी; उसने तीन खजूरें और गेहूं की एक रोटी भेंट में दी। यही उसकी कुल पूंजी थी। यह देखकर बहुत-से लोग हंस पड़े। पर पैगम्बर ने उन्हें अपना एक स्वप्न सुनाया जिसमें उन्होंने कुछ स्वर्गदूतों को हाथ में एक तराजू लिये हुए देखा था; उन्होंने एक पलड़े में उन सबकी भेंटें रखीं और दूसरे में केवल उस गरीब स्त्री की तीन खजूरें और रोटी। तराजू स्थिर रहा क्योंकि यह पलड़ा भी उतना ही भारी निकला जितना पहला।" जलाल ने आगे समझाया :

"एक मामूली भेंट, यदि वह सच्चे हृदय से दी गयी है, तो वह भी उतना ही मूल्य रखती है जितनी कि कोई मूल्यवान भेंट।"

यह सुनकर दोनों तुर्क बड़े प्रसन्न हुए और फिर किसी को भी एक मुट्ठी दाल पर हंसने का साहस नहीं हुआ।

—'श्रीमातृवाणी' खण्ड २ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

नवम्बर तथा दिसम्बर के विशेष कार्यक्रम—

१७ नवम्बर १९७३ को माताजी ने अपना भौतिक शरीर त्यागा था। २० नवम्बर को उनका शरीर समाधिस्थ किया गया। इन दोनों अवसरों पर आश्रम में ध्यान इत्यादि के साथ विशेष कार्यक्रम हुआ।

२४ नवम्बर १९२६ को श्रीअरविन्द की तीव्र साधना के फलस्वरूप पार्थिव चेतना में उच्चतर चेतना का अवतरण हुआ, जिसे श्रीअरविन्द ने "अधिमन के देवत्व" का अवतरण कहा था। माताजी ने इस दिन को सिद्धि दिवस घोषित किया क्योंकि अतिमानसिक योग में यह अवतरण मील का पत्थर है। यह चार दर्शन-दिवसों में एक है। दर्शन-दिवस पर विशेष कार्यक्रम हुआ।

"दल में संगठित कार्य" नामक सेमिनार का आयोजन 'नारी आयोग' पाण्डिचेरी में २१, २२ तथा २३ नवम्बर को तीन दिनों के लिये बीच ऑफिस में करेगा। सेमिनार निःशुल्क है।

२६ नवम्बर से ४ दिसम्बर २००२ तक डॉ० नाडकर्णी का "गीता-प्रबंध" पर अध्ययन-शिविर पांडिचेरी के 'बीच-ऑफिस' में लगेगा। सभी का स्वागत है।

पहली तथा दूसरी दिसम्बर को श्रीअरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षाकेंद्र अपनी जयन्ती मनायेगा। इस अवसर पर दो कार्यक्रम होते हैं। पहली दिसम्बर को सांस्कृतिक कार्यक्रम तथा दूसरी को शारीरिक शिक्षण का कार्यक्रम।

५ दिसम्बर १९५० में श्रीअरविन्द ने शरीर त्यागा था। ९ दिसम्बर को उनका शरीर आश्रम के प्रांगण में समाधिस्थ किया गया था। इन दोनों दिवसों पर आश्रम में विशेष कार्यक्रम होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमां की वर्षगांठ की १२५वीं जयन्ती पर :
पथ पर श्रीअरविन्द का मार्ग-दर्शन

इस मिथ्या और निष्क्रिय प्रत्याशा को निकाल बाहर करो कि भागवत शक्ति तुम्हारे लिये समर्पण भी कर देगी। परम प्रभु तुमसे समर्पण की मांग करते हैं, उसे तुम पर थोपते नहीं; तुम प्रति क्षण तबतक मुक्त रहते हो जबतक कि अटल रूपान्तरण का समय नहीं आ जाता, और तब भगवान् को अस्वीकार करने, उन्हें त्यागने या आत्म-समर्पण में आगा-पीछा करने से तुम्हें उसके आध्यात्मिक परिणाम भुगतने पड़ेंगे। तुम्हें समर्पण स्वयं करना है और वह मुक्त समर्पण होना चाहिये; वह होना चाहिये जीवन्त सत्ता का समर्पण, किसी जड़ यन्त्र या यान्त्रिक उपकरण का नहीं।

केन्द्रों तथा शाखाओं के समाचार

नारेगल (कर्णाटक) 'रोटरी क्लब' तथा हुबली केन्द्र ने २७ जुलाई को श्री अरुण कुलकर्णी के भाषण का आयोजन किया। विषय था, श्रीअरविन्द का पूर्णयोग।

कालीकट (केरला) के स्थानीय समाचार-पत्र 'पुण्यभूमि' ने मलयाली भाषा में श्रीअरविन्द—एक परिचय नामक लघु-पुस्तिका जुलाई २००२ में प्रकाशित की।

गुलबर्गा (कर्णाटक) शाखा ने ४ अगस्त को श्रीअरविन्द के पवित्र देहावशेष की स्थापना की चौथी जयन्ती मनायी।

चेन्नई (तमिलनाडु) शाखा में श्री प्रदीप नारंग ४ अगस्त को "श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के योग में तिहरी गति" पर बोले।

तंजाउर (तमिलनाडु) केन्द्र ने ११ अगस्त को फूलों के आध्यात्मिक नामों के साथ एक पुष्प-प्रदर्शनी का आयोजन किया।

काकीनाडा (आन्ध्र-प्रदेश) केंद्र ने १४ तथा १५ अगस्त को अपनी रजत-जयन्ती मनायी।

चेन्नई (तमिलनाडु) में १५ अगस्त २००२ को अन्ना नगर में सोसायटी का एक नया केंद्र खुला। उद्घाटन किया, जे. जी. वी. विद्यालय के प्रधानाध्यापक श्री एस. मुत्तुकृष्णन ने।

बैंगलोर (कर्णाटक) में कर्णाटक के राज्यपाल श्री टी. एन. चतुर्वेदी २२ अगस्त को जे. पी. नगर का श्रीअरविन्द कॉम्प्लेक्स देखने आये। एक दिन पहले ही उन्होंने राज्यपाल की शपथ ग्रहण की थी। इस कॉम्प्लेक्स में अभी हाल ही में बनी अतिथिशाला बिलकुल तैयार है। इच्छुक व्यक्ति इस पते पर सीधा पत्र-व्यवहार कर सकते हैं—प्रबन्धक, श्रीअरविन्द कॉम्प्लेक्स श्रीअरविन्द मार्ग, जे. पी. नगर, फर्स्ट फ़ेज, बैंगलोर—५६००७८।

कई केन्द्रों तथा शाखाओं से श्रीअरविन्द के जन्मदिन, १५ अगस्त के अनुष्ठान-संबंधी कई समाचार आये हैं लेकिन खेद है, स्थानाभाव के कारण हम वे सब छाप नहीं पायेंगे।

तमिलनाडु में हिन्दी पढ़नेवाले, विशेषतः डाक-विभाग में हिन्दी जाननेवाले बहुत ही कम हैं। अतः आपसे अनुरोध है कि धनादेश अथवा पत्र भेजते समय आप अपना पता हमेशा अंग्रेजी में, स्पष्ट पढ़े जानेवाले बड़े अक्षरों में, पिनकोड के साथ लिखा करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

अपनी कठिनाई में से बाहर निकलने का एकमात्र मार्ग है अपनी चैत्य सत्ता को पाना और पूरी तरह से उसकी चेतना में रहना।

धरती पर जीवन, जैसा कि आजकल है, दुःख-कष्ट से भरा है और हर सम्वेदनशील हृदय इसके कारण दुःख से भरा है। भागवत चेतना के साथ सम्पर्क में आना और उनकी दया, उनके बल और उनके प्रकाश में रहना ही इस कठिनाई और दुःख-दर्द से बाहर निकलने का एकमात्र सच्चा प्रभावशाली उपाय है और चैत्य के साथ एकात्म होकर हम इस अवस्था को पा सकते हैं।

इस उद्देश्य के लिये मेरी सहायता और मेरे आशीर्वाद तुम्हारे साथ हैं।

६ अप्रैल १९६९ —श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सम्पादकीय' :

कृपा-दृष्टि

कई वर्षों से भारत के ऊपर मुसीबतों के पहाड़ गिरते जा रहे हैं। ऐसा लगता है मानों किसी अज्ञात कारण से गुजरात के ऊपर मुसीबतों की विशेष कृपा रही है।

पिछले वर्ष भूकंप ने कच्छ को तहस-नहस कर डाला, फिर गोधरा में कितने लोग जल कर मर गये उसका पता नहीं। उसके बाद की हत्याएं और आगजनी से गुजरात ने होश संभाला नहीं कि स्वामीनारायण संप्रदाय के अक्षर धाम मंदिर में आतंकवादियों ने घुस कर ऐसा आतंक फैलाया कि सारा राष्ट्र चौंक उठा। समझदार लोग अवश्य सोच रहे होंगे कि बार-बार होती हुई इन दुर्घटनाओं के पीछे कारण क्या हो सकता है ! कुछ लोग सतही तौर पर सोच कर कहेंगे कि सांप्रदायिकता उसका कारण है या फिर सरकार की नीति सच्ची राह पर नहीं चल रही इसलिये ऐसा होता है ! शायद इन बातों में सतही तथ्य भी होंगे लेकिन इन मुसीबतों के मुख्य कारण को हम पकड़ नहीं पाते।

शायद हम में से कोई गहराई में जाकर अपने-आप से यह नहीं पूछता कि आखिर मैं इस धरती पर क्यों आया हूं। क्या मेरे लिये कोई विशेष काम है ? कोई अपने चारों ओर देखकर यह नहीं सोचता कि समाज में, राष्ट्र में, परिवार में यह त्रुटि है, मैं उसे सुधार सकता हूं। सामान्य व्यक्ति को देखकर ऐसा लगता है कि वह किसी विशेष विचार या चिंता को लेकर नहीं, बस किसी तरह रोजी-रोटी के लिये खटता रहता है। गरीबों के लिये तो जीवन का यही अर्थ होता है, लेकिन पढ़े-लिखे, जिन्हें खाने के लाले नहीं पड़ते, वे भी बस, धन-संपत्ति, पद वगैरह के पीछे दौड़ते रहते हैं। वे अपने राष्ट्र, अपने शहर की चिंता कम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही करते हैं, तो जब सारे समाज से इस तरह का आदर्शवाद उठ गया हो तो फिर . . . ?

अभी-अभी भ्रष्टाचार की एक तालिका देखी। कितने गौरव की बात है कि उसमें संसार के सारे राष्ट्रों में भारत का नाम तीसरे स्थान पर था ! लोगों का चरित्र इतना पतित हो गया है कि लोभ या लालच में फंसकर येन केन प्रकारेण अपना उल्लू सीधा करने में नहीं हिचकिचाते। कोई तब यह नहीं सोचता कि मैं जो कर रहा हूं उचित है या अनुचित। अपनी इच्छा-पूर्ति के जाल में फंसकर भ्रष्टाचार करते हिचकिचाहट नहीं होती। लोगों ने इतनी प्रगति (?) कर ली है कि हत्या करनी पड़े तो वह भी दाल भात हो गयी है। मुझे महाभारत का एक प्रसंग याद आ रहा है। युधिष्ठिर और यक्ष के बीच प्रश्न-उत्तर होते हैं। उसमें कलियुग का वर्णन यूं है कि जब बाड़ उद्यान के फलों को खाने लगे तब जान लेना कि कलियुग आ गया है। बाड़ इसलिये बनायी जाती है कि उद्यान के फल-फूलों की चोरी न हो किंतु जब बाड़ ही फल-फूल चुराये, जैसे आजकल पुलिस या अफसर-वर्ग जनता की रक्षा करने की बजाय स्वयं उसको तंग करने लगते हैं तब जनता कहां जाये ?

जब सारे राष्ट्र का यह हाल है तो गुजरात भी उसी भ्रष्टाचार में फंसा हुआ है। जनता के ऐसे चारित्रिक पतन के समय मानव नेता उसे उबारने में असफल होता है। ऐसे समय उद्धार करने कौन आता है ? तब आती है रुद्ररूपिणी मां, महाकाली और गुजरात के लोग महाकाली का आह्वान हर वर्ष दिवाली के समय गरबा गाते हुए और नाचते हुए करते हैं, वे गाते हैं "मा पावा ते गढ़ थी उतर्या महाकाली रे" मतलब पावा गढ़ जो पर्वत पर खड़ा है वहां से महाकाली भक्तों के प्रेम से प्रसन्न हो कर उनके बीच आ जाती हैं। उनका प्रेम जितना उत्कट है उनका कोप उतना ही प्रचण्ड है। वे मानव मां की तरह अपने बच्चों की त्रुटियों को नजरअंदाज करना नहीं चाहतीं। बच्चे उत्पाती हों, गुमराह हों तो वे उन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सजा देने में संकोच नहीं करतीं क्योंकि वे अपनी संतानों को प्रगति-पथ पर तेजी से ले जाना चाहती हैं, उन्हें पूर्ण चरित बनाकर भगवान् के सामने ले जाना चाहती हैं। ऐसा उत्कट प्रेम है महाकाली का!

तो गुजरात के ऊपर जो मुसीबतों के पहाड़ गिर रहे हैं, वे उनकी कृपा-दृष्टि हैं।

श्रीअरविन्द कहते हैं कि दुर्भाग्य और मुसीबतों को हम गहराई से देखें तो पायेंगे कि वे हमारे मित्र हैं, सहायक हैं! हम सुखद परिस्थिति में प्रसन्न रहकर आगे बढ़ना भूल जाते हैं और कामनाओं, इच्छाओं के जाल में फंसे रहते हैं, आगे बढ़ना भूल जाते हैं।

हम सब जानते हैं कि मानव जीवन इच्छाओं की पूर्ति के लिये या मौज-शौक के लिये नहीं दिया गया है, फिर भी हम उनमें रचे-पचे रहते हैं तब उग्र प्रेममूर्ति महाकाली हमें चोट देकर जगा देती हैं। सचाई से देखा जाये तो आज भारत, गुजरात, सब भटक गये हैं। शराब-पान, भ्रष्टता, अनैतिकता का ऐसा मुक्त विहार और बेहयाई पहले न थी।

ऐसा क्यों हो रहा है? क्योंकि हम सुख और आराम के फूल चुनते रहे और हम इतने कमजोर हैं कि अपने-आपको उन्हें चुनने से रोक न पाये, उन सुख-फूलों का इनकार पूरी सचाई से न कर पाये।

उपाय एक ही है। अपने लिये ऐसा काम या आदर्श अपनाएं जिसके लिये हमें संघर्ष करना पड़े किंतु जिसे चरितार्थ करना दुष्कर न हो। सफलता, ख्याति से अपना संतुलन न गंवाएं। स्थिर, शांतचित्त होकर काम करते जायें। ऐसा कर पायेंगे तो महाकाली, जो हर वर्ष गुजरात की जनता के भक्तिपूर्ण नृत्य और गीतों से प्रसन्न होकर एक जमाने में जैसे आया करती थीं, पधारेंगी और उनके आशीर्वाद से भारत जागकर अपने एकमात्र हितैषी, अपने चिर प्रेमी परम प्रभु की ओर चलना शुरू करेगा।

जब भगवान् का साथ हो, तो फिर क्या डर, किसका भय!!

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

दिसम्बर

१. अगर चेतना के विकास को जीवन का मुख्य लक्ष्य मान लिया जाये, तो बहुत-सी कठिनाइयों का समाधान मिल जायेगा।
२. सच्ची बुद्धिमानी तो यह है कि जो कुछ करो खुशी से करो, और यह संभव तभी है जब तुम जो कुछ करो उसे प्रगति का साधन बना लो।
३. सबके लिये सबसे अच्छा उपाय है, भगवान् के प्रति आत्म-निवेदन और उनकी अनंत कृपा पर विश्वास।
४. तुम्हें एक चीज के बारे में बिलकुल सुनिश्चित रहना चाहिये। तुम्हारा भविष्य तुम्हारे अपने हाथों में है। तुम जो बनना चाहते हो वह अवश्य बनोगे। जितना ही ऊंचा तुम्हारा आदर्श होगा, जितनी ऊंची तुम्हारी अभीप्सा होगी उतनी ही ऊंची प्राप्ति हो सकेगी। लेकिन तुम्हें अपने निश्चय पर दृढ़ रहना होगा और जीवन में अपने सच्चे ध्येय को कभी नहीं भूलना होगा।
५. आध्यात्मिक दृष्टिकोण से अधीरता बचकानी चीज है। यह भगवान् पर विश्वास के अभाव का चिह्न है . . .।
६. मनुष्य अपने दुःख से, अपनी तुच्छता से, अपनी दुर्बलता से, अपने अज्ञान और अपनी सीमाओं से चिपका रहता है—इसी कारण वह बदल नहीं पाता।
७. जिस क्षण तुमने किसी चीज को स्वीकार करने का निश्चय कर लिया है तब से उसे भरसक अच्छी से अच्छी तरह करना चाहिये।
८. तुम हर चीज में चेतना और आत्म-प्रभुत्व में प्रगति करने का अवसर पा सकते हो और प्रगति के लिये यह प्रयास उस चीज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को—वह कुछ भी क्यों न हो—रुचिकर बना देता है।

९. मधुर मां, मैंने प्रायः सभी जगह देर से जाने की आदत डाल ली है।
उत्तर—कोई आदत नहीं है जिसे बदला न जा सके।

१०. अपने जीवन को अनुशासन में लाना आसान नहीं है, उनके लिये भी जो सबल, अपने साथ कठोर, साहसी और सहनशील हैं। लेकिन अपने सारे जीवन को अनुशासित करने की कोशिश करने से पहले कम-से-कम एक क्रिया को अनुशासित करने की कोशिश करनी चाहिये और उसमें सफलता पाने तक लगे रहना चाहिये।

११. हर चीज के पीछे भागवत कृपा को देख सकने के लिये तुम्हें भागवत ऐक्य की चेतना में निवास करना चाहिये।

१२. अगर तुम हमेशा अपने-आप से कहते रहो, "मैं शुद्ध हूं" तो इससे तुम अपने-आप शुद्ध नहीं बन जाओगे। तथ्यों का सामना तो करना ही पड़ेगा। तुम्हें देखना होगा कि तुम्हारे अंदर कौन-सी अशुद्धि है, फिर उच्चतर शक्ति का आह्वान करो और उससे प्रार्थना करो कि वह तुम्हें शुद्ध कर दे।

१३. जब तुम्हारे ऊपर कोई विपत्ति आये तो यह कहो—"सत्य मिथ्यात्व से अधिक शक्तिशाली होता है।
"एक ऐसी अमर शक्ति है जो संसार का संचालन करती है।
"उसके निर्णय सर्वदा विजयी होते हैं।
"उसके साथ युक्त हो जाओ और अपनी अंतिम विजय के विषय में तुम निस्संदिग्ध हो जाओगे।"

१४. संसार एक महान् परिवर्तन के लिये तैयारी कर रहा है। सहायता करोगे ?

१५. प्रभो ! सत्य के प्रति अपने प्रयास में हमें वास्तविक रूप से सच्चा और निष्कपट होना सिखा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६. विगत कल की सिद्धियां आगामी कल की उपलब्धियों की ओर छलांग लगाने के लिये लचकदार तख्ता हों।

१७. आओ, हम अपने-आपको धरती पर अभिव्यक्त होते हुए नये जीवन के लिये तैयार करें।

१८. सबसे अच्छे विद्यार्थी वे हैं जो जानना चाहते हैं, वे नहीं जो दिखाना चाहते हैं।

१९. भविष्य प्रत्याशा से भरा है। अपने-आपको उसके लिये तैयार करो। आशीर्वाद।

२०. लोगों को यह मालूम होना चाहिये और हमें यह खुलकर कहने में संकोच न करना चाहिये कि हमारे विद्यालय का उद्देश्य है उन लोगों का पता लगाना और उन्हें प्रोत्साहित करना जिनमें प्रगति की आवश्यकता इतनी सचेतन हो गयी है कि उनके जीवन को दिशा दे सके।

२१. काम शरीर के द्वारा की गयी प्रार्थना है।

२२. सच्ची चेतना अपने-आपको औरों से श्रेष्ठ मानने में अक्षम होती है। केवल तुच्छ चेतना ही अपनी श्रेष्ठता दिखाने की कोशिश करती है।

२३. भगवान् के साथ अपने संबंध और उनके लिये तुम जो करना चाहते हो उसे छोड़कर और किसी बात में रस न लो।

२४. शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य को जीवन में और समाज में सफलता के लिये तैयार करना नहीं है, बल्कि उसकी पूरणीयता को ऊपरी चरम गति तक बढ़ाना है।

२५. साधारण तौर पर शिक्षा, संस्कृति तथा इन्द्रियों की सुरुचिपूर्णता गंवारू सहजवृत्ति, कामना और आवेग की गतियों का मार्जन करने के साधन हैं। उन्हें मिटा देना उनका उपचार नहीं है; इसकी जगह उन्हें सुसंस्कृत बनाना, बौद्धिक और सुरुचिपूर्ण बनाना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनका प्रतिकार करने का यही सबसे अच्छा तरीका है। उन्हें चेतना की प्रगति और विकास की दृष्टि से अपना अधिक-से-अधिक विकास प्रदान करना मनुष्य की शिक्षा और संस्कृति का भाग है, ताकि मनुष्य सामंजस्य के भाव और प्रत्यक्ष दर्शन की यथार्थता पा ले।

२६. एक चीज के बारे में तुम निश्चित हो सकते हो—तुम्हारा भविष्य तुम्हारे ही हाथ में है। तुम वही आदमी बनोगे जो तुम बनना चाहते हो। तुम्हारा आदर्श और तुम्हारी अभीप्सा जितने ऊंचे होंगे, तुम्हारी सिद्धि भी उतनी ही ऊंची होगी। लेकिन तुम्हें दृढ़ निश्चय रखना चाहिये और अपने जीवन के सच्चे लक्ष्य को कभी न भूलना चाहिये।

२७. भगवान् चीजों को उस दृष्टि से नहीं देखते जिस दृष्टि से मनुष्य देखते हैं इसलिये उन्हें सजा या इनाम देने की जरूरत नहीं होती। सभी कर्म अपने-आपमें अपने फल और अपने परिणाम लिये रहते हैं।

अपने स्वभाव के अनुसार कर्म तुम्हें भगवान् के निकटतर लाता या उनसे दूर ले जाता है और यही परम निष्कर्ष होता है।

२८. कोशिश छोटी-सी चीज है लेकिन वह भविष्य के लिये प्रतिज्ञा हो सकती है।

२९. प्रभु, परम सत्य,
हम तुझे जानने और तेरी सेवा करने के लिये अभीप्सा करते हैं।
हमारी सहायता कर कि हम तेरे योग्य बालक बन सकें।
और इसके लिये तू हमें अपने सतत उपहारों के बारे में अवगत करा ताकि कृतज्ञता हमारे हृदयों को भर सके और हमारे जीवन पर राज कर सके।

३०. जिस वर्ष में कोई प्रगति नहीं की गयी, चेतना में कोई वृद्धि नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई, पूर्णता की ओर कोई अगला कदम नहीं उठाया गया वह वर्ष व्यर्थ में बिताया गया वर्ष होता है।

३१. अपने हृदय में ज्योति जगाओ और उसकी ओर अभीप्सा करो जो "अधिक सुन्दर, अधिक सत्य, अधिक उदात्त है, जो कुछ मैं जानता हूं उससे अधिक अच्छा है। मैं याचना करता हूं कि कल से मैं इन सब चीजों को जानना शुरू करूं, मैं जिन चीजों को नहीं कर सकता उन सबको करना शुरू करूं, और हर रोज कुछ अधिक।"

भय पर विजय

सहसा ठंडी-ठंडी तेज हवाओं का अप्रिय स्पर्श पा मैं कच्ची नींद में चौंक पड़ा। दो-तीन बार पलकें झपकायीं और इर्द-गिर्द दृष्टि फेरी। पहले-पहल, सुनहले स्वप्नों से भीगे मेरे तन्द्रिल नयन उस ठोस और काले अंधकार का सामना न कर सके। लेकिन कुछ देर तक उसे घूरने के बाद, एकाएक, खिड़की के बाहर, रत्नजटित स्वर्ग का एक टुकड़ा मेरे नयनों के आगे नाच उठा। ओह, कितनी रौनक, कितना लावण्य ! सभी तारे टिमटिमा रहे थे। लगता था काली, गहरी निशा को मण्डित करने के लिये ब्रह्मा ने विशेष महार्घ रत्न चुने थे और चुनकर उन्हें सुव्यवस्थित करके रख दिया था। ऐसा प्रतीत होता था मानों धरा पर प्राणियों का सर्जन करके उन्हें संतोष न हुआ था। क्योंकि उन रत्नों को लेकर उन्होंने एक और सृष्टि रच डाली थी। इधर, पूरब की ओर एक नन्हें-से भालू का आकार दिखायी दे रहा था तो उधर कुछ ही दूरी पर एक शिकारी तैनात था। जिधर दृष्टि जाती उधर तरह-तरह के आकार खड़े थे। जानवर से लेकर मनुष्य तक—सभी विराजमान थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हवा का एक और तेज झोंका आया तो मेरा विचार-प्रवाह कट गया, मैं कांप उठा। आसमान के सभी तारे और जोर से टिमटिमाने लगे। ऐसा लगता था मानों कोई दैत्य एक ही फूंक से सब तारों को बुझाने की कोशिश कर रहा था और वे बेचारे उसका विरोध करने के भरसक प्रयास में लगे थे।

लेकिन . . . यह क्या ? अगले ही क्षण एक-एक करके सारे नक्षत्र बुझने लगे। आहिस्ता-आहिस्ता अंधकार ने उनको हड़प लिया, वह उनके प्रकाशमय अस्तित्व को निगल गया। काले-काले विशालकाय मेघों ने दसों दिशाओं में डग बढ़ा दिये। पलक झपकाने की देर थी कि सर्वत्र अंधकार ही अंधकार छा गया। और उसके साथ-ही-साथ, रात की नीरवता को चूर-चूर करती एक भयंकर कड़कड़ाहट सुनायी दी और बिजली कौंधी। पल भर के लिये सब कुछ प्रकाशित हो गया लेकिन अगले ही क्षण फिर से अंधकार का साम्राज्य। और . . . मूसलाधार बारिश का भयावह शोर . . . सचमुच तूफान पूरे जोरों पर था। . . .

*

डर मनुष्य का सबसे भयंकर शत्रु है। वह सुन्दर को कुरूप बना देता है, मनुष्य को सत्यवादी बनने से रोकता है, वीरों में वीर को कायर बना डालता है। वह एक बलवान् विरोधी शक्ति है जो धरा को अपने वश में करने का दृढ़ प्रयास कर रही है। वह उस दिन की प्रतीक्षा में है जब वह सभी सकारात्मक चीजों को हड़प लेगी ताकि संपूर्ण धरा पर उसी का राज्य हो सके।

लेकिन सब चीजों को जन्म देनेवाले परमात्मा अपनी सृष्टि की रक्षा करते हैं। उनका विधान है संतुलन। एक ओर यदि हैं लोभ, मिथ्यात्व, ईर्ष्या, अंधकार और कुरूपता जैसी विरोधी शक्तियां जो घमंड में आकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने-आपको सृष्टि का प्रभु मान बैठी हैं, और भगवान् को मानने से साफ इनकार करती हैं; तो दूसरी ओर हैं, भगवान् की ओर जानेवाले मार्ग को प्रशस्त करनेवाले प्रेम, सत्य, प्रकाश, आनंद और सौंदर्य।

जब अंधकार दूर-दूर तक फैल जाता है और धरा को प्रकाश नहीं दिखायी देता तो वह भगवान् को पुकारती है और वे तुरंत उसकी रक्षा करने के लिये उसके वक्षस्थल में प्रकाश की एक चिनगारी बो देते हैं।

जब मिथ्यात्व डग बढ़ाने लगे तो भगवान् सत्य के शस्त्र से उसकी प्रगति को रोक देते हैं।

अगर हम आंखें खोलकर देखें तो साधारण जीवन से ऐसे सैकड़ों उदाहरण मिल जायेंगे जहां हम जान-बूझकर आंखों पर पट्टी बांधकर चलना पसंद करते हैं।

*

अपनी आंखों के आगे वह भयावह दृश्य देख मैं मानों वहीं जम गया। मेरे रोम-रोम में एक तीव्र स्पंदन दौड़ गया—भय का।

गरजते बादल का शोर, चुंधियानेवाली बिजली के कोड़े, चीखती हुई, पागलों की तरह दौड़ी जाती तेज हवाएं और ऊपर से मूसलाधार वर्षा !

मेरे दिल की धड़कन तीव्र होती जा रही थी, मन में एक-से-एक भयावह विचार चक्कर काट रहे थे, मेरा अंग-प्रत्यंग डर से सिहर रहा था।

क्या भगवान् ने धरती को भुला दिया था ? शायद इसीलिये वह किसी दैत्य के चंगुल में जा फंसी थी जो दया नाम की चीज से बिलकुल अपरिचित है, उसके पत्थर जैसे हृदय को तड़पती धरा को देखकर आनंद मिल रहा था। बादलों का गर्जन था उसका अट्टहास और बिजली की कौंध उसकी क्रूरता-भरी आंखों की चमक . . .

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्पनाओं से जरा छुट्टी मिली तो मैंने देखा, मैं अपने-आपको समझाने की कोशिश कर रहा था, "इसमें डरने की क्या बात है ? कायर कहीं के। बस, जरा-से तूफान से डर गये ? अगर तुम्हें अपने देश के लिये लड़ना पड़े तो क्या युद्धक्षेत्र से नौ दो ग्यारह हो जाओगे ? आखिर साहस नाम की कोई चीज भी तो होती है !"

लेकिन उपदेश की बूंदें चिकने घड़े पर गिर रही थीं। मैं अपने पलंग पर सिकुड़ा-सिमटा, मानव होते हुए भी भीगी बिल्ली बना बैठा था, मन में सोच रहा था कि अभय अमरता है और भय विनाश। मैं टूट रहा हूं।

मैंने आंखें मूंदकर उस दृश्य को ओझल करना चाहा। लेकिन बिजली की चमकती सर्पिल रेखा मेरे मुंदे नयनों के आगे भी नाचती रही। इस पर तुर्रा यह कि कल्पना फिर से लौट आयी और लगी नये-नये महल बनाने।

दूसरी ओर मैंने सोचा, "इस निराले भय का क्या कारण हो सकता है ? बिना विरोध किये मैं उसे क्यों अपने ऊपर अधिकार पा लेने देता हूं ? यह तो बहुत बुरी बात है। मेरी ओर से विरोध तो होना ही चाहिये। भय दबे पैरों घुस आता है और मैं चूं तक नहीं करता। इस तरह तो इसका परिवार बढ़ता ही जायेगा। हां, याद आ गयी, भय के कीटाणु, अंधेरे में ही पनप सकते हैं। श्रद्धा का प्रकाश आया नहीं कि सब समाप्त।"

यह सोचकर मैंने श्रद्धा की अग्नि में भय की आहुति दे डाली। मुझे ऐसा लगा मानों मेरे कंधों से कोई भारी बोझ हटा दिया गया है। मेरा मन शांत होने लगा। मेरी देह, भय के पंजों से मुक्त, आहिस्ता-आहिस्ता शिथिल होने लगी। मैंने अपनी नजर बाहर, आसमान की तरफ घुमायी। वर्षा अभीतक हो रही थी। बादल और जोर से गरज रहे थे, बिजली चमक रही थी, लेकिन मुझे डर न लग रहा था। मेरे ओठों पर एक मुस्कान लहरा उठी और मैंने सोचा, "क्या मैं इससे डरा करता था ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कितना सुन्दर है यह दृश्य ! ब्रह्मा सचमुच कलाकार हैं, यह कितना सजीव और मनोहर चित्र आंका है उन्होंने।" मैं धीरे-धीरे उठ खड़ा हुआ और खिड़की की ओर बढ़ने लगा . . .

*

आज भी, जब वर्षा होती है तो मैं घर पर नहीं टिक सकता। कभी-कदास बैठूं भी तो दम घुटने लगता है और मैं तुरंत बाहर निकल पड़ता हूं। अपने शरीर पर पानी का शीतल और सुखद स्पर्श पाकर मैं पुलकित हो उठता हूं, बिजली की नाचती, चमकती रेखा कितनी मनोहर प्रतीत होती है, बादलों का गर्जन मानों बधावे बजाता है।

—रवीन्द्र

'पुरोधा', मई १९९१ से

LIBRARY Gurukul Kangri Vishwavidyalaya HARDWAR

———

शक्ति की तीव्रता मात्र से यह नहीं कहा जा सकता कि वह बुरी शक्ति है, भागवत शक्ति बहुधा बहुत तीव्रता के साथ काम करती है। सब कुछ शक्ति के स्वभाव और उसकी क्रिया पर निर्भर होता है—वह क्या करती है, उसका प्रयोजन क्या मालूम होता है ? अगर वह तंत्र को शुद्ध करने और खोलने के लिये काम करती है या अपने साथ प्रकाश और शांति लाती है या विचार, भाव, भावनाओं और चरित्र को उच्चतर चेतना की ओर मोड़ती है तो वह उचित शक्ति है, परंतु अगर वह काली, धुंधली शक्ति हो जो सत्ता को राजसिक या अहंकार-भरे सुझावों से क्षुब्ध करे अथवा निम्न चेतना को उत्तेजित करे तो वह विरोधी शक्ति है।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

सावित्री

एक दिन मैं अपने अज्ञान में श्रीअरविन्द से पूछ बैठा कि जब वे स्वयं औरों को प्रेरणा देते हैं और सारे उच्च स्तर के लोक उनके संकेत पर चलते हैं तो फिर उन्हें लिखने के लिये इतनी मेहनत क्यों करनी पड़ती है ? जब अपनी नीरव चेतना द्वारा वे जिस स्तर पर चाहें जा सकते हैं, फिर तो वहां से शब्द, विचार और रूपक सारे के सारे प्रेरणारूपी ब्रह्मपुत्र से अविरत धारा से बहते चले आयेंगे। उन्होंने तनिक खीज किंतु शांति से उत्तर दिया, "उच्चतर क्षेत्र इतने अनुकूल नहीं होते। अगर इतना सरल होता तो मुझे अतिमानस को नीचे उतारने में और उसे भौतिक चेतना में स्थापित करने में इतनी कठिनाई क्यों होती ? तुम कैसे निश्चिंत, लापरवाह, सनकी, कल्पना के घोड़े दौड़ानेवाले, स्वैर विहारी, ज्ञानशून्य व्यक्ति हो कि मौन, चेतना, अधिमानसिक, अतिमानसिक वगैरह के विषय में ऐसे बोलते हो मानों बिजली का बटन दबाने की देर है और बस ! सब तैयार ! शायद एक दिन ऐसा होगा किंतु मुझे अपने जीवन-काल में उस बिजली के बारे में सब कुछ खोजना पड़ेगा। मुझे उसके नियम, उसके काम करने के कितने तरीके हैं, उसकी संभावनाएं कितनी हैं, खतरे वगैरह को जानना होगा। उसके चलने, चलाने के कितने ढंग है, उसे कितनी दूर तक ले जाने के लिये तार का जाल कितना बिछाना होगा और अनाड़ी के हाथों से उसे कैसे बचाना होगा; यह सब मुझे एक ही जीवन-काल में करना पड़ेगा। जब मैं यह सब कर रहा हूं तब मेरे धन्य शिष्य अपनी महत्त्वपूर्ण बुद्धि के सुखद या उदास प्रश्नों की गोलाबारी की बौछार पूरी गैरजिम्मेदारी से मेरे ऊपर करते रहते हैं और आशा करते हैं कि मैं उनके प्रश्नों के उत्तर विस्तार से दूं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतों से नहीं बल्कि पूर्ण विस्तार से! हे सर्वज्ञान-संपन्नता के प्रभु!"

बाद में सावित्री का काम धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। १९३९ से १९५० तक उन्होंने जिस स्तर पर लिखना चाहा था उसी स्तर पर वे लिख पाये। मुझे विश्वास है कि अगर उनके पास समय होता और अपने-आप लिख पाते तो वे सावित्री में अपने काव्य को संपूर्ण पूर्णता तक ले जाते। अब सावित्री का जो रूप है, वह श्रीअरविन्द की पुस्तक 'फ्यूचर पोएट्री' में वर्णित जो रूप है उसका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है। जैसे श्रीअरविन्द कई क्षेत्रों में नवयुग के पथ-प्रदर्शक थे वैसे काव्य के क्षेत्र में भी थे। वे हमारे लिये शब्दों की, रूपकों की, विचारों की, संकेतों की और सुझावों की अक्षय विरासत छोड़ गये हैं। उनकी रचनाएं पढ़कर हम यही कह सकते हैं—लो देखो, प्रभु-प्राचुर्य! इन कृतियों को पढ़कर मनुष्यों की पीढ़ी दर पीढ़ी इस निरंतर स्रोत से अपनी आत्मा का अमृत पान करती रहेगी। अंग्रेजी भाषा का आयुष्य इस पुस्तक के कारण हजार गुना बढ़ गया है। इस चमत्कार के लिये अंग्रेजी भाषी लोगों को इस भव्य महाकाव्य के लिये परम श्रेष्ठ कवि के प्रति कृतज्ञ होना चाहिये।

अमरीका में सायराकूस (Syracuse) विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ० पाइपर सावित्री के विषय में कहते हैं कि इस महाकाव्य ने नवयुग की ज्योति का शुभारंभ कर दिया है और अंग्रेजी भाषा में शायद यह सबसे विशिष्ट महाकाव्य है . . . ऐसा अत्यंत व्यापक, सुंदर और वैश्व चेतना का संपूर्ण काव्य कभी लिखा न गया होगा . . . काव्य आदिकालीन वैश्व शून्य से चलकर प्रतीकात्मक रूप से पृथ्वी के अंधकार और संघर्षों से उठता हुआ अतिमानसिक आध्यात्मिक अस्तित्व तक पहुंच कर मनुष्य की हर चिंता को आलोकित करता हुआ दिखाई देता है। सावित्री मनुष्य के मन को विस्तृत कर परम स्वयंभू तक ले जाने के लिये सबसे शक्तिशाली, कलात्मक रचना है जिसकी अद्वितीय अत्यंत विशालता, भव्यता और रूपकों का चमत्कार संसार में और कहीं न मिलेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माताजी की सावित्री पर चरम उक्ति एक युवक से बातचीत करते हुए यूं थी :

"उन्होंने सारे विश्व को एक पुस्तक में उतार लिया है। वह अद्भुत, भव्य और अद्वितीय पूर्णता से भरी हुई रचना है।

"जानते हो, सावित्री लिखने से पहले उन्होंने मुझसे कहा, 'एक नये साहस की प्रेरणा मुझे प्रेरित कर रही है; मैं पहले-पहल हिचकिचा रहा था लेकिन अब मैंने निश्चय कर लिया है' . . . फिर जिस दिन उन्होंने लिखना शुरू किया, उन्होंने मुझसे कहा, 'असीम विशालता के बीच मैं पतवारहीन नौका में अपने-आपको लिये जा रहा हूं।' और फिर एक बार लिखना आरंभ किया तो बिना रुके पृष्ठ पर पृष्ठ लिखते चले गये मानों कहीं ऊर्ध्व लोक में वह काव्य पूर्णरूप से तैयार हो और उनका काम उसे कलम से उतारने भर का था . . .।

"हम कह सकते हैं कि सावित्री महाकाव्य एक रहस्य को उद्घाटित करता है, एक ध्यान है, अनंत शाश्वत की खोज है . . .

अभी तक मनुष्य ने जितना ज्ञान प्राप्त किया है, उससे भी बढ़कर सावित्री का प्रत्येक पद उद्घाटित मंत्र है और मैं फिर से कह रही हूं, शब्दों को सोचकर ऐसे व्यवस्थित किया गया है कि काव्य के छंद का सुरीलापन तुम्हें स्वर के उस मूल स्रोत तक ले जाता है—और वह स्वर है ओम्।

"हां, उसमें सब कुछ है : रहस्यवाद, गुह्यवाद, दर्शन, विकास-क्रम का इतिहास, मानव का, देवों का, सृष्टि का, प्रकृति का इतिहास . . .

"उन्होंने इन अनुभूतियों का अनुभव किया है, उन्होंने उन सब बातों को जिनको सावित्री में लिखा है, अति वैश्व सत्यों को वास्तविक रूप से जी कर अनुभूत किया है। उन्होंने इन सबका वैसे ही अनुभव किया है जैसे कोई मनुष्य सुख-दुःख को भौतिक रूप से अनुभव करता है। वे निःश्चेतना के अंधकार में चले गये, प्रायः मृत्यु के नजदीक गये, नर्क की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीड़ा, व्यथा को उन्होंने झेला और कीचड़ में से, संसार की दुर्दशा में से उभर कर वे सर्वश्रेष्ठ पूर्णता में अनुप्राणित हो उठे और परम आनंद-उल्लास में उन्होंने प्रवेश किया। उन्होंने इन विभिन्न क्षेत्रों को पार किया, उनके परिणाम झेले और तुम कल्पना न कर पाओ ऐसे दुःख भौतिक रूप से भोगे। आज तक किसी ने भी उनके जितने कष्ट नहीं झेले। उन्होंने दुःख का अनुभव इसलिये स्वीकार किया था ताकि वे दुःख को परम प्रभु के साथ ऐक्य के आनंद में रूपांतरित कर पाएं . . .

"एक ही शरीर में आध्यात्मिक पथ, योग, तपस्या, साधना सब कुछ समाया हुआ है . . .

"जो सत्य श्रीअरविन्द धरती के ऊपर उतार लाये, वह अद्वितीय, अतुलनीय है, अपनी प्रचुरता में पूर्ण सत्य है।"

—नीरदवरण

सुनहरा नियम

आज मैं तुम्हें एक सुनहरे नियम के बारे में बतलाऊंगा। जब हम बच्चे थे तो हमें घरों में और विद्यालय में कुछ सुनहरे नियम सिखलाये गये थे। तुम इन नियमों का पालन करो तो अच्छे बन जाओगे, अच्छे लड़के बनोगे, अच्छी लड़कियां बनोगी और सभी तुमसे प्यार करेंगे, तुम्हारी सराहना करेंगे। ये सीधे-सादे मामूली-से नियम थे। तुम इनसे परिचित होगे और तुमने इनके लिये कोशिश भी की होगी। उदाहरण के लिये 'सच बोलो, झूठ न बोलो, मां-बाप का कहना मानो, अध्यापकों का आदर करो, किसी को तकलीफ न दो' इन नियमों को नींव बनाकर अपने चरित्र का निर्माण करो। अपने स्वभाव को ढालो, उदात्त, निष्कलंक जीवन की तैयारी करो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये नियम अच्छे हैं परंतु सच तो यह है कि ये तुम्हें बहुत दूर तक नहीं ले जाते। ये तुम्हें अंदर से नहीं छूते, ये एक कान से घुसते हैं और दूसरे से निकल जाते हैं। इनसे तुम्हारे हृदय पर असर नहीं पड़ता, तुम्हारी अंतरात्मा नहीं जागती, तुम कुछ दिनों तक दो-एक नियमों का पालन करते हो और बस, फिर भूल-भाल जाते हो।

अभी उस दिन मैंने तुमसे याज्ञवल्क्य के बारे में कहा था। उन्होंने एक नियम बतलाया था जो सुनहरे नियम के ज्यादा नजदीक था। उनका कहना था कि इन बाहरी नियमों का पालन करने की जगह उन्हें एक ओर छोड़ दो और अपने भीतर प्रवेश करो, अपनी आत्मा को पा लो। याज्ञवल्क्य ने कहा, "तुम अपने पड़ोसी से या अपने भाई से इसलिये नहीं प्यार करते कि वह तुम्हारा पड़ोसी या भाई है बल्कि इसलिये कि तुम उसके अंदर अपने-आपको पाते हो।" अपने-आपको, अपनी आत्मा को पा लो, यही स्वर्णिम नियम है। अपने अंदर आत्मा को देखो, अपने पड़ोसी में, अपने परिवेश में, सबमें आत्मा को ही देखो।

परंतु यहां तुम्हें इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि अपनी आत्मा और अपने अहं में घपला न कर दो। जब तुमसे कहा जाता है कि तुम अपनी आत्मा को खोजो तो इसका यह मतलब नहीं होता कि तुम दूसरे के अंदर अपने ही अहं को देखो, कि तुम उसे इस तरह पकड़ लो मानों वह तुम्हारी अपनी संपत्ति है। यह आत्मा अहं नहीं है, यह अहं के परे है, यह उस प्रकार का अपनापन नहीं है जिसका शेक्सपीयर ने राजा रिचर्ड में चित्रण किया है जहां सर्वस्व से वंचित किया गया राजा कहता है रिचर्ड रिचर्ड से प्रेम करता है, यानी मैं मैं हूं। यह कोई विभेद करनेवाला अहं नहीं है। सभी अहं घुल जाते हैं। मेरा मैं भी घुल जाता है और सब कुछ मिलकर एक व्यक्ति या एक आत्मा बन जाते हैं। यहां सब एक आत्मा है, एक अंतरात्मा है, बाहरी रूप में भले अलग-अलग हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां मैं तुम्हें माताजी की सुनायी हुई एक कहानी सुनाऊंगा। जब वे फ्रांस में थीं तो हर शाम को जिज्ञासुओं और अध्यात्म-शोध करनेवालों की एक बैठक हुआ करती थी जिसमें वे आध्यात्मिक विषयों पर बातचीत करते थे या ध्यान करते थे। उनमें एक ऐसी महिला भी आया करती थीं जिन्होंने सचमुच कुछ सिद्धियां प्राप्त की थीं और जो पथ पर औरों की सहायता करने के लिये तैयार रहती थीं। एक दिन बात आत्मा और पुनर्जन्म के बारे में चली और वे समझाने लगीं कि किस तरह शरीर की मृत्यु के बाद अन्तरात्मा अन्य लोकों में चली जाती है और जब समय आता है तो फिर से धरती पर नया शरीर धारण कर लेती है। श्रोताओं में से एक यह बातें सुनकर जरा चकरा गयी और उसने कुछ स्पष्टीकरण मांगा। उसने कहा, 'आप कहती हैं कि आत्मा नीचे उतर कर शरीर धारण करती है। धरती पर हर वर्ष मनुष्यों की संख्या बढ़ती ही जाती है। मेरा सवाल यह है कि जो नये लोग पैदा होते जा रहे हैं वे पहले कहां थे? क्यों वे सृष्टि के आदि से अभीतक प्रतीक्षा कर रहे थे? क्या समय गुजरने के साथ-ही-साथ वे भी प्रकट होते हैं? आधुनिक काल में हम एक सादृश्य सुझा सकते हैं, क्या ये तारों अथवा आकाश-गंगाओं की तरह हैं जो धीरे-धीरे हमारे दृष्टि-क्षेत्र में आते-जाते हैं? क्या ये उन तारों की भांति हैं जिनके प्रकाश को धरती तक पहुंचते-पहुंचते लाखों-करोड़ों वर्ष लग जाते हैं?' फिर उसने पूछा, 'क्या आत्माओं की गिनती की जा सकती है? क्या उनकी संख्या निश्चित है?' वक्ता ने बड़ी शांति से उत्तर दिया, 'हां, उन्हें गिना जा सकता है, उनकी संख्या निश्चित है।' प्रश्नकर्ता ने बड़ी आतुरता से पूछा, 'अच्छा, तो कितनी हैं आत्माएं?' वक्ता ने अपनी तर्जनी दिखाते हुए कहा, 'बस, एक ही।'

हां, तो यही सत्य है। ये बहुत-से शरीर, बहुत-से व्यक्ति जिन्हें तुम देखते हो ये सब तो आभास हैं, अंतरात्मा केवल एक है और हर एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वही है। अगर तुम इस सत्य को पा लो तो तुम हर एक के साथ समान रूप से प्रेम कर सकते हो, केवल प्रेम ही नहीं कर सकते, सबके साथ एक हो सकते हो क्योंकि तुम सर्व हो और सर्व तुम। वही वैश्व आत्मा, वही तुम्हारी अपनी आत्मा है, तुम्हें उसी को खोजना होगा, उसीको जानना होगा, वही बन जाना होगा। आदर्श रूप में यही सुनहरा नियम है।

लेकिन इसे कैसे पाया जाये ? कैसे चरितार्थ किया जाये ?

इस विषय में माताजी ने हमें एक सुनहरा नियम बतलाया है जो सचमुच सुनहरा और बहुत सीधा-सादा है। बहुत बार हम चकराते हैं कि क्या करें और क्या न करें और करें तो कैसे करें। माताजी अपने बालकों से कहती हैं, "ऐसा कोई काम न करो जिसे मेरे सामने करते हुए संकोच हो या शरम आये। ऐसी कोई बात न कहो जिसे मेरे सामने कहते हुए संकोच हो, ऐसी कोई बात सोचो भी मत जिसे मेरे सामने सोचते हुए अटपटा-सा लगे।" इस नियम का पालन करके देखो। तुम्हें पता लगेगा कि यह कितना आसान और बहुमूल्य है। श्रीअरविन्द ने कहा है, तुम सभी उससे परिचित होगे, "हमेशा ऐसे व्यवहार करो मानों माताजी तुम्हें देख रही हैं क्योंकि वास्तव में वे हमेशा उपस्थित होती हैं।" तुम्हें यह कल्पना करने की जरूरत नहीं कि वे उपस्थित हैं क्योंकि वे वास्तव में उपस्थित हैं चाहे तुम जानो या न जानो। तुम उन्हें अपने अंधेपन के कारण नहीं देख पाते परंतु वे हमेशा, निरीक्षण करती और राह दिखाती रहती हैं और रक्षा भी करती हैं। एक बार किसी बच्चे ने माताजी से पूछा, "आपको यह कैसे पता लगता है कि हम क्या करते, कहते, सोचते और अनुभव करते हैं ?" माताजी ने एक मधुर मुस्कान के साथ उत्तर दिया, "मेरे बालक, मैं जानती हूं क्योंकि तुम हमेशा मेरे अंक में होते हो। मैं यह तो जानती ही हूं कि मेरे अंदर क्या हो रहा है, है न ? इसलिये मैं जानती हूं कि तुम्हारे अंदर क्या हो रहा है। तुम मेरे बाहर नहीं हो, तुम मेरे ही अंश हो। मैं तुम हूं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगर तुम इस नियम का अनुसरण करो और सचाई के साथ आग्रह-पूर्वक करो तो तुम अपने अंदर चमत्कार होते हुए देखोगे, तुम माताजी के सुनहरे बालक बन जाओगे। तुम देखोगे कि तुम्हारे विचार, तुम्हारे भाव, तुम्हारे शब्द एक नया रंग ले रहे हैं, तुम्हारा शरीर भी अधिक स्वस्थ और अधिक सुन्दर बन रहा है। साधारणतः हमारा मस्तिष्क कीचड़ का बना होता है, हमारे विचार अपवित्र होते हैं, हमारे अंदर गलत विचार, अंधेरे विचार भरे रहते हैं, हमारी वाचा कीचड़ से भरी होती है। हम अशुद्ध और गलत चीजें बोलते रहते हैं, हमारा हृदय भी उसी कीचड़ का बना होता है, उसमें से गलत भाव, अशुद्ध भावनाएं पैदा होती हैं, हमारा प्राण भी कीचड़ का बना है और गंदे आवेश, गंदे आवेग छोड़ता रहता है। हमारा शरीर स्वयं कीचड़ है, रोग, दुर्बलता और अक्षमताओं का घर है। कहा जा सकता है कि हम इन सब गंदी और कुरूप चीजों से भरे हुए पात्र हैं। हमें इस पात्र में सुनहरा द्रव डालना होगा, पिघलता हुआ सोना डालना होगा जो सभी गंदगियों को भस्म कर देगा और पात्र को माताजी की पवित्र उपस्थिति से भर देगा।

श्रीअरविन्द ने अपनी एक कविता में इस प्रक्रिया का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। उसका भाव यह है—

मेरे मस्तिष्क में स्वर्ण-ज्योति उतर आयी और मन के अंधेरे कमरे सूर्य का स्पर्श पाकर प्रज्ञा के गुह्य जगत् को प्रकाशमान उत्तर देते हुए प्रशान्त ज्योति और ज्वाला बन गये।

तेरी स्वर्ण-ज्योति मेरे कण्ठ में उतरी और मेरी सारी वाणी दिव्य स्वर बन गयी, मेरा एकमात्र स्वर तेरा विजयगीत बन गया। मेरे शब्द अमर की सुधा से छके हुए हैं।

तेरी स्वर्ण-ज्योति मेरे हृदय में उतरी। उसने मेरे जीवन पर अपनी शाश्वतता से प्रहार किया और अब मेरा प्राण तेरा मन्दिर बन गया है, मेरे सभी भाव, आवेग तेरी ओर बढ़ रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरी स्वर्ण-ज्योति मेरे चरणों पर आयी। मेरी पृथ्वी तेरा लीला-स्थल और तेरा ही आसन बन गयी।

(श्री नलिनीकांत गुप्त की वार्ता पर आधारित)

महत्त्वाकांक्षा

(२)

. . . परोपकार ने सहायता तो की ही है, नहीं की क्या ? अगर सब विद्यालय बंद कर दिये जायें . . .।

मुझे नहीं लगता मानवजाति अब पहले से ज्यादा सुखी है, न कोई बहुत सुधार ही हुआ है। इस सबसे तुम्हें यह लगता है : "मैं भी कुछ हूं।" मैं इसी को महत्त्वाकांक्षा कहती हूं।

अगर यही लोग जो विद्यालयों के लिये पैसा देने को तैयार होते हैं, उनसे कहा जाये कि कोई भगवान् का काम है जिसे भगवान् ने अमुक तरीके से करने का निश्चय किया है, और यदि उन्हें विश्वास भी हो कि यह सचमुच भगवान् का कार्य है, तो भी वे कुछ देने से इंकार करते हैं, क्योंकि यह माना हुआ परोपकार का काम नहीं है—यह करके कुछ अच्छा करने का संतोष नहीं होता ! इसी को मैं महत्त्वाकांक्षा कहती हूं। मेरे सामने ऐसे उदाहरण आये हैं जिनमें लोगों ने अस्पताल खोलने के लिये लाखों रुपये दिये हैं क्योंकि इससे उन्हें संतोष हुआ कि उन्होंने कोई बड़ा, उदारतापूर्ण, उदात्त काम किया है। वे अपने-आपको महिमान्वित करते हैं। मैं इसे महत्त्वाकांक्षा कहती हूं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं एक विनोदप्रिय व्यक्ति को जानती थी जो कहा करता था : "भगवान् का राज्य बहुत जल्दी नहीं आयेगा क्योंकि तब इन बेचारे परोपकारियों के लिये क्या बच रहेगा ? अगर मानवजाति दुःख न भोगती रहे तो बेचारे परोपकारी लोग बेकार हो जायेंगे।" इसमें से निकलना मुश्किल है। फिर भी यह तथ्य है कि दुनिया इस स्थिति में से तब तक बाहर नहीं निकल सकती जब तक कि वह अपने-आपको भगवान् को न सौंप दे। सभी सद्गुण—तुम उनकी चाहे जितनी महिमा गाओ—तुम्हारे आत्मसंतोष को, यानी, अहं को बढ़ाते हैं। वे तुम्हें सचमुच भगवान् के बारे में सचेतन होने में सहायता नहीं देते। दुनिया के बुद्धिमान् और उदार लोगों को बदलना सबसे कठिन होता है। वे अपने जीवन से बहुत संतुष्ट होते हैं। एक गरीब आदमी, जिसने जीवन में सब प्रकार की बेवकूफियां की हैं, तुरंत दुःखी हो उठता है और कहता है : "मैं कुछ नहीं हूं, मैं कुछ नहीं कर सकता। मुझे तुम जो बनाना चाहो बना लो।" यह आदमी ज्यादा ठीक है और यह भगवान् के, उस आदमी की अपेक्षा बहुत ज्यादा नजदीक है जो बुद्धिमान् है तथा अपनी बुद्धिमत्ता और गर्व से भरा है। वह अपने-आपको वैसा ही देखता है जैसा कि वह है।

उदार और बुद्धिमान् व्यक्ति जिसने मानवजाति के लिये बहुत कुछ किया है अपने-आपसे इतना अधिक संतुष्ट होता है कि उसे बदलने का जरा भी ख्याल नहीं आता। प्रायः इसी तरह के लोग कहा करते हैं : "वास्तव में, यदि मैंने संसार रचा होता तो ऐसा न बनाता। मैं इससे बहुत ज्यादा अच्छा बनाता," और वे उस चीज को ठीक करने की कोशिश करते हैं जिसे भगवान् नें बुरी तरह बनाया है। उनके चित्र के अनुसार, यह सब मूर्खतापूर्ण और व्यर्थ है . . . इस वृत्ति के साथ तुम भगवान् के नहीं हो सकते। तुम्हारे और भगवान् के बीच हमेशा अपनी बौद्धिक श्रेष्ठता का सचेतन अहंकार रहेगा जो भगवान् का मूल्य आंकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और यह विश्वास करता है कि वह कभी भूल नहीं कर सकता क्योंकि उन्हें यह विश्वास होता है कि अगर उन्होंने जगत् बनाया होता तो वे ये सब मूर्खताएं न करते जो भगवान् कर बैठे हैं! और यह सब अभिमान, गर्व और आत्म-वंचना से आता है। जो लोग मानवजाति की सेवा करना चाहते हैं उनमें इसका बीज होता है।

वे मानवजाति को क्या देनेवाले हैं ? कुछ भी नहीं! यदि वे अपने रक्त की एक-एक बूंद, अपने दिमाग के सब विचार, अपनी जेब का सारा धन दे दें तो भी, वे एक व्यक्ति भी न बदल सकेंगे, और वह व्यक्ति क्या है ? शाश्वत काल में एक सेकेंड। वे मानते हैं कि वे शाश्वत की सेवा कर सकेंगे ? मनुष्य से ज्यादा ऊंची सत्ताएं यहां आयीं हैं, वे अपने साथ प्रकाश लायी हैं और उन्होंने अपनी जान दे दी है, लेकिन उससे भी चीजों में बहुत फर्क नहीं पड़ा। तो फिर एक छोटा-सा मनुष्य, एक क्षुद्र सूक्ष्म सत्ता, सच्ची सहायता कैसे कर सकती है ? यह घमंड है। युक्ति यह दी जाती है : "यदि हर एक भरसक अच्छे-से-अच्छा करे तो सब कुछ ठीक हो जायेगा।'' मुझे ऐसा नहीं लगता, और यह है भी असंभव। एक तरह से संसार में हर एक चीज अपना अच्छे-से-अच्छा करती है पर उस अच्छे-से-अच्छे का मूल्य कुछ नहीं होता। जब तक सब कुछ न बदले तब तक कुछ भी न बदलेगा। इस "अच्छे-से-अच्छे" को बदलना होगा। अज्ञान के स्थान पर ज्ञान, शक्ति और चेतना को जन्म लेना चाहिये अन्यथा हम हमेशा उसी मूर्खता के चारों ओर गोल-गोल घूमते रहेंगे।

तुम लाखों अस्पताल खोल सकते हो, इससे लोग रोगी होने से न बचेंगे। इसके विपरीत, उन्हें बीमार होने के लिये हर प्रकार की सुविधा मिलेगी, प्रोत्साहन मिलेगा। हम इस प्रकार के विचारों में डूबे हुए हैं। इससे तुम्हारे अंतःकरण को आराम मिलता है : "मैं संसार में आया हूं, मुझे औरों की मदद करनी चाहिये।'' तुम अपने-आपसे कहते हो : "मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कितना निःस्वार्थ हूं। मैं मानवजाति की सहायता करने जा रहा हूं।'' यह अहंकार के सिवा कुछ नहीं है।

वास्तव में सबसे पहली मानव सत्ता जिसके साथ तुम्हारा संबंध है, तुम स्वयं हो। तुम दुःख कम करना चाहते हो लेकिन जबतक तुम दुःख सहने की क्षमता को प्रसन्न रहने की निश्चितता में न बदल दो तबतक संसार कभी न बदलेगा। वह हमेशा वह-का-वही रहेगा। हम एक चक्र में घूमते रहेंगे। एक संस्कृति के बाद दूसरी संस्कृति आती है, एक विपदा के बाद दूसरी आती है, लेकिन चीज नहीं बदलती क्योंकि कोई चीज गुम है, कोई चीज वहां नहीं है। वह है चेतना। और बस।

कम-से-कम यह मेरी राय है, इसका जो भी मूल्य हो। अगर तुम अस्पताल, विद्यालय आदि बनाना चाहते हो तो बना सकते हो। यदि इससे तुम सुखी होते हो तो तुम्हारे लिये बहुत ही अच्छा। इसका बहुत महत्त्व नहीं है। जब मैंने 'मोसिअ वैंसाँ' की फिल्म देखी तो मुझे बहुत रस आया। उन्होंने पता लगा लिया कि वे दस गरीबों को खिलाते थे तो हजार आ खड़े होते थे। कोलबर्ट ने उनसे कहा : "ऐसा लगता है कि आप उनको—गरीबों को—खिला-पिलाकर बढ़ाते जाते हैं," और यह बात बिलकुल गलत नहीं है। फिर भी ! यदि तुम्हारी नियति यही है कि तुम विद्यालयों की स्थापना करो और शिक्षा दो, रोगियों की देखभाल करो और अस्पताल खोलो, तो यह अच्छा है। यही करो। लेकिन इसे बहुत गंभीरता से न लो। यह एक आडम्बरपूर्ण चीज है जिसे तुम स्वयं अपनी प्रसन्नता के लिये कर रहे हो। यूं कहो : "मैं यह काम इसलिये कर रहा हूं क्योंकि इससे मुझे प्रसन्नता होती है।" लेकिन योग की बात मत करो। यह तुम योग नहीं कर रहे। तुम समझते हो कि तुम कोई बड़ा काम कर रहे हो, बस इतना ही, और यह तुम्हारे निजी संतोष के लिये है।

८ अप्रैल, १९५३ —'श्रीमातृवाणी' खंड ५, पृ० १२-१५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ सीख-भरी कहानियां (२)

आज का कार्यक्रम तो पहले से ही निश्चित था। पिछली बैठक में कुछ लोगों ने कहानियां सुनायी थीं, आज बाकी लोगों की बारी थी। ऋषिवर की दृष्टि सब से पहले सविता पर पड़ी और उसने बोलना शुरू किया:

महापुरुषों में आदमी पहचानने की क्षमता होती है। हम में से हर एक के अंदर अच्छाई और बुराई के ढेर लगे रहते हैं या यूं कहें कि अच्छाई और बुराई की लहरें आती-जाती रहती हैं। अगर हम अच्छी लहरों को अपने अंदर आने दें और बुरी के लिये दरवाजा बंद कर दें तो हमारा जीवन बदल सकता है। सच्चे महापुरुष इसमें हमारी सहायता करते हैं।

मैं जो घटना सुना रही हूं यह उन्नीसवीं शताब्दी के तीसरे चरण की है। बंगाल में बहुत बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा था, लोग दाने-दाने को तरस रहे थे। बहुत से अच्छे घरों के सड़क पर भिखारी बने फिर रहे थे। ऐसे ही समय रास्ता चलते हुए ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के सामने एक आठ-दस वर्ष का लड़का हाथ फैला कर खड़ा हो गया : बाबू, एक पैसा दे दो, बहुत भूख लगी है। (उन दिनों एक पैसे में चीजें मिल जाती थीं।)

विद्यासागर बोले : अगर मैं दो पैसे दूं तो ?

लड़के ने कहा : एक पैसे के चने मैं खुद खाऊंगा और एक पैसे के मां को दे दूंगा। वह भी भूखी है।

विद्यासागर बोले : और अगर मैं चार पैसे दूं ?

तब मेरा दो दिन का काम चल जायेगा।

और अगर मैं दो आने दे दूं ?

लड़का निराश हो गया और वहां से चल पड़ा। विद्यासागर ने लपक कर उसे पकड़ लिया और बोले : मेरी बात का उत्तर नहीं दिया तुमने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोलो, क्या करोगे दो आने पाकर ?

लड़के को अपने कानों पर विश्वास न हो रहा था। उसने कहा : तंग न करो, बाबू। देना-लेना तो है नहीं, यूं ही गरीब को सता रहे हो।

विद्यासागर ने फिर आग्रह किया तो लड़का बोला, दो पैसे के चने लूंगा और बाकी के आम खरीद कर बेचूंगा। शायद इससे इतनी आय हो जाये कि मुझे किसी और के आगे हाथ न फैलाना पड़े।

विद्यासागर ने उसे एक रुपया पकड़ा दिया और लड़का कमान से निकले हुए तीर की तरह गायब हो गया।

बहुत दिन बीत गये। विद्यासागर किसी काम से फिर इस नगर में आये। वह सड़क पर चले जा रहे थे कि न जाने कहां से एक सुन्दर युवक ने उनके पांव पकड़ लिये। विद्यासागर उसे देखते रह गये, पर पहचान न पाये। उधर युवक कह रहा था : अपनी चरणरज से मेरी कुटिया को पवित्र कीजिये, इधर विद्यासागर सोच रहे थे, यह है कौन जो इतना आग्रह कर रहा है ?

आखिर युवक ने अपना परिचय दिया : मेरा जो कुछ है सब आपका दिया हुआ है। मैं वही लड़का हूं जिसे आपने कई वर्ष पहले एक रुपया देकर नया जीवन प्रदान किया था। उस एक रुपये के बल पर ही आज मैं भिखारी की जगह छोटा-मोटा दुकानदार हूं। आप मुझे भूल गये हैं पर मैं अपने जीवनदाता को कैसे भूल सकता हूं ! और विद्यासागर ने उसे अपनी बांहों में भर लिया।

धन्य हैं विद्यासागर जैसे उदार महापुरुष और धन्य है वह उद्यमी कृतज्ञ युवक।

अब वन्दना की बारी थी। उसने कहा : सविता ने दुर्भिक्ष की बात की है तो मैं भी दुर्भिक्ष की ही बात कहूंगी। फर्क बस इतना ही है कि इसकी बात सौ वर्ष पहले की है और मेरी ढाई हजार वर्ष पहले की। मेरी बात तब की है जब भगवान् बुद्ध इस धरती पर विचरण करते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत जोर का अकाल पड़ा। सभी जगह खाने के लाले पड़े हुए थे। बहुत से लोग रोते-धोते तथागत के पास जा पहुंचे। लोगों को विश्वास था कि वे कुछ-न-कुछ कर सकेंगे, और उन्होंने किया भी। प्रदेश के नगर सेठों, सामंतों और राजा की सम्मिलित सभा बुलायी गयी। तथागत ने सारी स्थिति समझाते हुए लोगों से सहायता मांगी।

सबसे पहले अन्न के सबसे बड़े व्यापारी उठ खड़े हुए और बोले: मैं अपना सारा अन्न आपके चरणों में समर्पित करता हूं, लेकिन खेद है उससे शायद इन सबका आठ दिन का भी काम न चले।

नगर सेठ की बारी थी। उन्होंने कहा : प्रभु, आज्ञा दें तो मैं भी अपना संपूर्ण कोष लुटा दूं पर उससे भी शायद अधिक-से-अधिक दस दिन का काम चल सके। इसी तरह सभी सामंतों ने और स्वयं राजा ने अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए सिर झुका लिया।

तथागत क्षणभर के लिये चिंतित हुए और फिर जिज्ञासा-भरे नेत्रों से इधर-उधर देखने लगे। सहसा कहीं पीछे से एक फटेहाल नारी की आवाज आयी : भगवान् आपका आशीर्वाद हो तो मैं सबके भोजन की व्यवस्था कर दूंगी।

सबकी आंखें उसकी ओर मुड़ गयीं। कोई आश्चर्य से भरा था, कोई घृणा से और कोई उसे मजाक मान रहा था। तथागत ने पूछा : तेरे पास है इतना अन्न ?

अबला कहानेवाली नारी ने उत्तर दिया : भगवन्, मेरे पास कुछ भी नहीं है और यही मेरा सबसे बड़ा बल है। इन सबने कुछ-न-कुछ देने का वचन दिया है। मैं अपना भिक्षापात्र लेकर हर एक के यहां जाऊंगी और हमारे पास इतना अन्न जुट जायेगा कि नयी फसल आने तक सबका काम चल जाये।

भगवान् की कृपा के भरोसे भिखारिन का भिक्षापात्र द्रौपदी का अक्षय पात्र बन गया और कोई भी भूखा न मरने पाया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस लड़की का नाम था सुप्रिया।

ऋषिवर के दल में आज एक नयी लड़की आ गयी थी। उसका नाम तो मधुमिता है पर कहाती 'विहग' है। तो औरों की बातें सुनते-सुनते उसे भी जोश चढ़ आया और ऋषिवर की अनुमति लेकर उसने कहना शुरू किया :

आप लोगों ने मनुष्यों के सेवा-भाव की, सहानुभूति की और निःस्वार्थ त्याग की बातें की हैं। ये बातें सराहनीय हैं परंतु पशु-पक्षी भी इन भावों से वंचित नहीं हैं। एक बहेलिया पक्षियों का शिकार करने निकला। अभी दो-चार को ही पकड़ पाया था कि जोर का तूफान आ गया और मेह की झड़ी लग गयी। विवश होकर बहेलिया एक पेड़ के नीचे जा बैठा।

पेड़ पर कबूतरों का एक जोड़ा रहता था। इस समय नर तो घोंसले में आ चुका था पर मादा का कहीं पता न था। बेचारा कबूतर कभी घोंसले के अंदर चला जाता, कभी बाहर निकल आता, कभी इधर से उधर फुदकने लगता। उसे चिन्ता ने बहुत जोर से पकड़ रखा था। मादा कहां होगी इस समय ? उसका क्या हाल होगा ? वह बीच-बीच में उसे आवाजें देने लगा।

बेचारे कबूतर को क्या पता था कि उसकी मादा उसी पेड़ के नीचे बहेलिये के जाल में फंसी पड़ी थी। उसने जो अपने नर की आवाज सुनी तो जाल में से चिल्लाई, अब मेरी आशा छोड़ दो। यह गरीब बहेलिया जाड़े के मारे मरा जा रहा है, इसकी जान बचाओ। कहीं से सूखे पत्ते इकट्ठे करके यहां आग सुलगा दो। कबूतर इधर गया, उधर गया, कुछ सूखी घास और कुछ पत्ते ले आया और उन्हें सुलगा दिया।

अब बहेलिये की जान में जान आयी। उसकी समझ में आ गया कि इस कबूतर ने ही उसकी जान बचाई है। उसने जाल खोलकर कबूतरी को मुक्त कर दिया। अब कबूतर-कबूतरी में बहस होने लगी। बहेलिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने हमारे ऊपर उपकार किया है, हमें उसके पेट का गढ़ा भरने के लिये कुछ करना चाहिये।

आखिर दोनों के दोनों जलती आग में कूद पड़े और बहेलिये से कहते गये : लो, हमें खाकर अपनी क्षुधा शान्त करो।

इसे कबूतरों के प्रेम की कहानी कह लो या उनके निःस्वार्थ त्याग की। इसके उदाहरण मनुष्यों में मुश्किल से ही मिलेंगे।

विहग की कहानी समाप्त होने न होते सभा-विसर्जन का समय हो गया। लोग विद्यासागर, सुप्रिया और कबूतर की बातें सोचते-सोचते उठ गये।

श्रद्धा, अभीप्सा, समर्पण

शायद ही कोई इतना बलवान् हो कि बिना सहायता के केवल अपनी ही अभीप्सा और संकल्प-शक्ति के बल पर निम्न प्रकृति की शक्तियों पर विजय पा सके; और जिन्हें कुछ विजय मिलती भी है वे भी पूर्ण प्रभुत्व नहीं, एक प्रकार का संयम ही पाते हैं। संकल्प और अभीप्सा की जरूरत होती है भागवत शक्ति को नीचे उतार लाने के लिये और निम्न शक्तियों के साथ व्यवहार में अपनी सत्ता को उस शक्ति की ओर रखने के लिये। आध्यात्मिक संकल्प और हृदयस्थित चैत्य की अभीप्सा ही विजय ला सकते हैं।

*

जब कोई चीज ऐसी हो जो मानव प्रकृति या व्यक्तिगत प्रकृति से उल्टी हो तो उसे मानसिक संकल्प के द्वारा करना हमेशा कठिन होता है। अपने उद्देश्य की ओर धीरज और अध्यवसाय के साथ लगा हुआ दृढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकल्प परिवर्तन ला सकता है, लेकिन सामान्यतः इसमें बहुत समय लगता है और प्रारंभ में सफलता केवल आंशिक और वह भी बहुत-सी असफलताओं के उतार-चढ़ाव के साथ आती है।

केवल विचारों के संयम द्वारा अपनी समस्त क्रियाओं को यंत्रवत् आराधना में नहीं बदला जा सकता; हृदय में प्रबल अभीप्सा होनी चाहिये जो उस एकमेव की उपस्थिति की अनुभूति या उपलब्धि को ले आयेगी जिसकी आराधना की जा रही है। भक्त केवल अपने ही प्रयासों पर निर्भर नहीं रहता, वह उस भगवान् की कृपा और शक्ति पर आश्रित रहता है जिसे वह पूजता है।

*

तुम प्रगति नहीं कर पाते क्योंकि तुम्हें अपने मन और संकल्प की क्रिया पर बहुत अधिक भरोसा रहा है। अगर तुम एक बार माताजी की शक्ति पर निर्भरता की आदत डाल सको—अपने प्रयास में उसे सहायता करने के लिये बुलाने भर की ही नहीं—तो यह बाधा कम हो जायेगी और अंत में गायब हो जायेगी।

*

सभी सच्ची अभीप्साओं का असर होता है; अगर तुम सच्चे हो तो तुम दिव्य जीवन में विकसित होगे।

पूरी तरह सच्चे होने का अर्थ है केवल दिव्य सत्य को चाहना, अपने-आपको दिव्य जननी के प्रति अधिकाधिक समर्पण करना, इस एकमात्र अभीप्सा के सिवा और सभी व्यक्तिगत मांगों और कामनाओं को त्यागना, जीवन की प्रत्येक क्रिया को भगवान् के प्रति निवेदित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

करना और अहं को बीच में लाये बिना उसे दिये गये काम के रूप में करना। यही दिव्य जीवन का आधार है।

तुम एक साथ, चटपट यह नहीं बन सकते, लेकिन अगर तुम सच्चे हृदय और निष्कपट संकल्प के साथ सारे समय दिव्य शक्ति की सहायता को पुकारो तो तुम इस चेतना में अधिकाधिक विकसित होओगे।

*

थोड़े-से समय में पूर्ण समर्पण संभव नहीं है। पूर्ण समर्पण का अर्थ है सत्ता के प्रत्येक भाग में अहंकार की ग्रंथि को काटना और उसे मुक्त और पूर्ण रूप से भगवान् के प्रति निवेदित करना। मानसिक, प्राणिक और भौतिक चेतना को (और इसके हर एक भाग को अपनी समस्त क्रियाओं के साथ) एक के बाद एक अलग-अलग समर्पण करना होगा, उन्हें अपना मार्ग छोड़कर भगवान् का मार्ग अपनाना होगा। लेकिन तुम यह कर सकते हो कि शुरू से ही एक केंद्रीय निश्चय और आत्म-निवेदन कर लो, और जो भी रास्ता खुला दिखलायी दे, पग-पग पर, हर आनेवाले अवसर का लाभ उठाते हुए आत्मदान को पूरा करो। एक दिशा में समर्पण दूसरी दिशा के समर्पण को ज्यादा आसान और ज्यादा अनिवार्य बनाता है; लेकिन वह अपने-आप दूसरी ग्रंथियों को न तो काटता है, न ढीला करता है, विशेष रूप से, वे गांठें जो वर्तमान व्यक्तित्व के साथ बहुत घनिष्ठता से बंधी हैं, और उसकी बहुत प्रिय रचनाएं, केंद्रीय संकल्प के स्थिर हो जाने और उसके निश्चय पर व्यवहार की पहली मुहरें लग जाने के बाद भी, बहुधा बहुत कठिनाइयां प्रस्तुत करती हैं।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम पूछते हो कि उस भूल को कैसे सुधारा जाये जो तुम समझते हो कि तुमने की है। अगर यह मान लिया जाये कि चीज वैसी ही है जैसी तुम कहते हो, तो मुझे लगता है कि उसके सुधार का तरीका बस यही है कि तुम अपने-आपको भागवत सत्य और भागवत प्रेम का पात्र बनाओ और उसकी ओर पहले कदम हैं पूर्ण आत्मोत्सर्ग और आत्मशुद्धि; अपने-आपको भगवान् के प्रति पूरी तरह खोलना, अपने अंदर जो कुछ चरितार्थता के मार्ग में बाधक हो सकता है उसका त्याग। आध्यात्मिक जीवन में भूल की कोई और क्षतिपूर्ति नहीं है, पूरी तरह प्रभावकारी कोई नहीं है। आरंभ में इस आंतरिक विकास और परिवर्तन के सिवा किसी और फल या परिणाम की मांग नहीं करनी चाहिये, अन्यथा, घोर निराशा के लिये मार्ग खुल जाता है। जब तुम मुक्त हो तभी औरों को मुक्त कर सकते हो। योग में आंतरिक विजय से ही बाह्य विजय आती है।

*

एकाएक व्यक्तिगत प्रयास पर जोर देने से बचना संभव नहीं है—और हमेशा वांछनीय भी नहीं होता; क्योंकि व्यक्तिगत प्रयास तामसिक जड़ता से अच्छा है।

उत्तरोत्तर व्यक्तिगत प्रयास को भागवत शक्ति की गति में बदलना होगा। अगर तुम्हें भागवत 'शक्ति' का भान होता है, तो उसे अधिकाधिक पुकारो ताकि वह तुम्हारे प्रयास को अधिकाधिक परिचालित करे, उसे अपना ले, उसे ऐसी चीज में बदल दे जो तुम्हारी नहीं, माताजी की है। एक प्रकार का स्थानांतरण होगा, व्यक्तिगत आधार में काम करनेवाली शक्तियां दिव्य 'शक्ति' के हाथ में चली जायेंगी—यह अचानक पूर्ण स्थानांतरण न होकर उत्तरोत्तर होगा।

लेकिन चैत्य अवस्था आवश्यक है : वह विवेक विकसित होना चाहिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो ठीक-ठीक देखता है कि भागवत शक्ति क्या है, व्यक्तिगत प्रयास का तत्त्व कौन-सा है और निचली वैश्व शक्तियों से मिश्रण के रूप में क्या ऊपर उठ आया है। जबतक स्थानांतरण पूरा न हो जाये—और इसमें हमेशा समय लगता है—तबतक हमेशा निजी प्रयास का योगदान, सत्य शक्तियों के लिये निरंतर स्वीकृति, निम्नतर मिश्रण के लिये सतत अस्वीकृति आवश्यक है।

अभी, व्यक्तिगत प्रयास छोड़ देना वांछनीय नहीं है, बल्कि भागवत शक्ति का अधिकाधिक आवाहन करो और उसीके द्वारा अपने निजी प्रयास का परिचालन और नियंत्रण करो।

*

साधना की प्रारंभिक अवस्थाओं में सब कुछ भगवान् पर छोड़ देना या अपने प्रयास की आवश्यकता के बिना उन्हीं से सब कुछ की आशा करना उचित नहीं है। यह तभी संभव है जब चैत्य पुरुष आगे हो और समस्त क्रिया पर प्रभाव डाल रहा हो (और तब भी सतर्कता और सतत स्वीकृति जरूरी है), या फिर बाद में, योग की अंतिम अवस्था में, जब साक्षात् या लगभग साक्षात् रूप में अतिमानसिक शक्ति चेतना को अपने हाथ में ले रही हो; लेकिन वह स्थिति अभी बहुत दूर है। अन्य परिस्थितियों में यह मनोवृत्ति गतिरोध और जड़ता की ओर ले जायेगी।

केवल सत्ता के अधिक यंत्रवत् भाग ही अपने-आपको सचमुच असहाय कह सकते हैं : विशेषतः, भौतिक (स्थूल शारीरिक) चेतना स्वभाव से जड़ है और मानसिक या प्राणिक शक्तियों से परिचालित होती है। लेकिन तुम्हारे अंदर हमेशा यह सामर्थ्य होती है कि मानसिक संकल्प या प्राणिक उत्साह को भगवान् की सेवा में लगा दो। तुम तात्कालिक परिणाम के बारे में निश्चित नहीं हो सकते, क्योंकि निम्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृति की बाधा या विरोधी शक्तियों का दबाव प्रायः कुछ समय तक, बहुत लंबे समय तक भी, आवश्यक परिवर्तन के विरुद्ध सफलता से कार्य कर सकता है। तुम्हें लगे रहना चाहिये, अपने संकल्प को हमेशा भगवान् की ओर लगाना चाहिये, जो चीज त्यागने योग्य है उसे त्यागना, अपने-आपको सत्य ज्योति और सत्य शक्ति की ओर खोलना, उसे शांत-स्थिरता से, लगातार, बिना थके, अवसाद या अधीरता के बिना बुलाते रहना चाहिये जबतक कि तुम्हें यह न अनुभव हो कि अब दिव्य शक्ति काम कर रही है और बाधाएं दूर होने लगी हैं।

तुम कहते हो कि तुम अपने अज्ञान और अंधकार के बारे में सचेतन हो। अगर यह केवल एक सामान्य चेतना है तो यह काफी नहीं है। लेकिन अगर तुम उसके बारे में ब्योरेवार, उसकी वास्तविक क्रियावली में सचेतन होओ, तो यह शुरू करने के लिये काफी है; तुम जिन गलत क्रियाओं के बारे में सचेतन हो उन्हें दृढ़ता के साथ अस्वीकार करो और अपने मन और प्राण को भागवत शक्ति की क्रिया के लिये शांत और स्वच्छ क्षेत्र बनाओ।

—श्रीअरविन्द

तमिलनाडु में हिन्दी पढ़नेवाले, विशेषतः डाक-विभाग में हिन्दी जाननेवाले बहुत ही कम हैं। अतः आपसे अनुरोध है कि धनादेश अथवा पत्र भेजते समय आप अपना पता हमेशा अंग्रेजी में, स्पष्ट पढ़े जानेवाले बड़े अक्षरों में, पिनकोड के साथ लिखा करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

ध्यान, भगवान् पर श्रद्धा, आंतरिक शान्ति इत्यादि विषयों पर बारह से सोलह पृष्ठों की छोटी-छोटी पुस्तिकाएं हिन्दी तथा अंग्रेजी में उपलब्ध हैं। प्रत्येक का दाम है १.५० रु०। डाक-व्यय अतिरिक्त। इच्छुक व्यक्ति सीधा श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी से संपर्क करें।

२१ फरवरी २००३—माताजी की १२५वीं वर्षगांठ पर आश्रम में सवेरे छह से साढ़े छह तक ध्यान होगा। सोसायटी के देश-विदेश के सभी केन्द्रों तथा शाखाओं में भी इस विशेष उपलक्ष्य पर उसी समय ध्यान रखने का सुझाव प्रस्तावित किया गया है। जो सदस्य तथा भक्त इतनी सवेरे केन्द्रों में न पहुंच पायें वे अपने-अपने घरों में निर्धारित समय पर ध्यान कर सकते हैं। श्रीमां तथा श्रीअरविन्द के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने तथा अपने-आपको उनके प्रति समर्पित करने के इस उत्तम अवसर से हम सबको लाभ उठाना चाहिये।

२९ सितम्बर से ४ अक्तूबर तक सोसायटी के बीच ऑफिस पांडिचेरी में शैक्षिक शिविर लगा। मुम्बई के सोफिआ पॉलिटेकनिक के ५५ विद्यार्थियों ने इसमें भाग लिया। शिक्षण के सच्चे अर्थ तथा उचित तरीके को सिखाने के लिये इन छात्रों का दिग्दर्शन किया सर्वश्री विजय, श्रद्धालु, रिचर्ड, दिलीप तथा श्रीमती अञ्जनाबेन ने।

पश्चिम बंगाल सोसायटी पंजीकरण-विभाग के कुछ संवैधानिक अनुबंधों को दृष्टि में रखते हुए श्रीअरविन्द सोसायटी के प्रशासनिक क्षेत्र में निम्नलिखित परिवर्तन किये गये हैं—

१—श्री प्रदीप नारंग—सभापति (Chairman)।

२—श्री विजय पोद्दार (पांडिचेरी)—सदस्य प्रबन्धक—(Member Executive–Admn. & Finance) प्रशासनिक तथा वित्तीय।

जनरल सेक्रेटरी तथा कोषाध्यक्ष के पद फिलहाल हटा दिये गये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केन्द्रों तथा शाखाओं से समाचार

नैवेली (तमिलनाडु) केन्द्र ने नैवेली लिग्नाइट कॉरपोरेशन द्वारा आयोजित पुस्तक मेले में पांडिचेरी के 'शब्द' के साथ भाग लिया। यह मेला २ से ११ अगस्त तक चला। तमिलनाडु के मुख्य न्यायाधीश तथा पांडिचेरी के राज्यपाल श्री के. आर. मलकानी ने भी इसमें भाग लिया।

रांची (झारखण्ड) के हेसल केन्द्र ने तीन तथा चार अगस्त को कार्यकर्ताओं का एक शिविर लगाया जिसमें कार्य की परियोजनाएं बनायी गयीं, कई निर्णय लिये गये।

कोयम्बटूर (तमिलनाडु) में सोसायटी की राज्य समिति ने १७ से १९ अगस्त तक युवा शिविर का आयोजन किया। शिविर का संचालन किया श्री कैवल्य स्मार्त ने, साथ में सहायता की श्री शिवकुमार तथा श्री तिरुवेंकटम् ने।

उज्जैन (मध्य प्रदेश) केन्द्र ने डॉ० श्यामसुन्दर निगम का भाषण मॉडल हायर स्कूल में १९ अगस्त को रखा। विषय था—श्रीअरविन्द के प्रकाश में अतिमानसिक अभिव्यक्ति।

वडोदरा (गुजरात) शाखा ने २० अगस्त को विश्व संस्कृत प्रतिष्ठानम् के साथ मिलकर संस्कृत दिवस मनाया।

देहरादून (उत्तरांचल) शाखा ने २५ अगस्त को देशभक्ति के गीतों की प्रतियोगिता रखी जिसमें कई विद्यालयों ने भाग लिया।

गुलबर्गा (कर्णाटक) शाखा ने २६ अगस्त को श्री कृष्ण ककलवर तथा श्री श्रीशैल के संस्कृत-विषयक भाषण रखे।

अमरावती (महाराष्ट्र) शाखा ने १५ से १७ अगस्त तक 'दिव्य जीवन' पर श्रीमती मण्डताई गांधी के भाषण हुए।

मुम्बई (महाराष्ट्र) में सोसायटी ने चार दिनों का सर्वांगीण शिक्षा-शिविर २९ से १ सितम्बर तक लगाया। श्री श्रद्धालु रानाडे, श्रीमती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंजना सरकार तथा श्रुति ने इसका संचालन किया।

मसूरी (उत्तरांचल) केन्द्र ने पहली बार सितम्बर को अपना वार्षिक कार्यक्रम किया जिसमें श्री विजय के. पोद्दार, श्री सुरेश त्यागी, श्री आलोक पाण्डेय इत्यादि ने भाग लिया।

विशाखापट्टनम् के आंध्र-विश्वविद्यालय ने श्रीअरविन्द-संबद्ध वार्षिक भाषणों की शृंखला में डॉ० प्रेमा नन्दकुमार का भाषण ७ सितम्बर को रखा। करीब ८०० लोगों ने इसमें भाग लिया।

डोम्बीवली (महाराष्ट्र) केन्द्र ने अपने नये परिसर में ८ सितम्बर से कार्य करना शुरू कर दिया। श्री ओम् गोयनका ने इसका उद्घाटन किया।

दिल्ली शाखा ने १२ सितम्बर को एस्कॉर्ट हार्ट इंस्टिचूट तथा रिसर्च सेण्टर के प्रमुख सर्जन डॉ० नरेश त्रेहन का भाषण रखा। विषय था—अपनी जीवन-शैली को व्यवस्थित करना।

सोसायटी के दो नये केन्द्र जुलाई तथा अगस्त के महीनों में खुले। एक सिकर (राजस्थान) में, दूसरा चेन्नई (तमिलनाडु) में।

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा . . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के ४० रु० और पुरोधा के ५० रु० शीघ्र भेजें। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायेगा, न ही अगला अंक वी० पी० पी० से जायेगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो ८०० रु० देकर अग्निशिखा के और १,००० रु० देकर पुरोधा के आजीवन सदस्य बन सकते हैं। आजीवन सदस्यता २० वर्ष के लिये मानी जायेगी।

संपर्क-सूत्र—पुरोधा एवं अग्निशिखा
श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

सन्देश

समस्त जगत् मिथ्यात्व में डूबा हुआ है, इसलिये जितने भी क्रिया-कलाप उठेंगे वे सब झूठे होंगे और यह स्थिति लम्बे समय तक चल सकती है, और यह लोगों को और देश को बहुत कष्ट पहुँचायेगी।

करने लायक काम बस, एक ही है : हृदय से भागवत 'हस्तक्षेप' के लिये प्रार्थना करो, क्योंकि एक वही चीज है जो हमारी रक्षा कर सकती है। और जो भी इसके प्रति सचेतन हो सकते हैं उन सबको यह दृढ़ निश्चय कर लेना चाहिये कि वे सत्य का ही पक्ष लेंगे और केवल 'सत्य' में ही काम करेंगे। इसमें **कोई समझौता नहीं होना चाहिये, यह एकदम अनिवार्य है**। यही एकमात्र तरीका है।

चाहे ऐसा प्रतीत हो कि चीजें हमारे लिये बिगड़ती जा रही हैं, और यह वर्तमान प्रबल मिथ्यात्व के कारण अवश्य होगा, फिर भी हमें 'सत्य' पर डटे रहने के निर्णय से डिगना न चाहिये।

यही एकमात्र तरीका है।

— श्रीमां

८ जुलाई १९७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा धर्म

श्रीअरविन्द ने महाभारत के कुरुक्षेत्र-युद्ध के विषय में कहीं कहा है कि वह युद्ध आवश्यक था क्योंकि सारा भारत पथ-भ्रष्ट हो गया था। जनता हमेशा अपने नेताओं का अनुसरण करती है और महाभारत के समय अधिकतर नृपति अपने धर्म से च्युत हो चुके थे। उस पतन से उठने का उपाय एकमात्र युद्ध था और इस युद्ध के कारण भारत कई शताब्दियों तक विदेशी सत्ता के आधिपत्य से बचा रहा।

भगवान् कृष्ण ने विश्वरूप धारण कर श्रीमद्भगवद्गीता में कहा था,

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रबुद्धः
लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।

"मैं कालपुरुष, काल-आत्मा हूं, लोकों का विध्वंसक हूं। राष्ट्रों का विनाश करने के लिए विशाल महिमा-मंडित रूप लेकर आकाश की सीमा पार कर उठ खड़ा हुआ हूं।"

महाभारत का लोमहर्षक, भयंकर और अद्वितीय युद्ध हुआ था। उसमें भगवान् कृष्ण के अतुलनीय, रोमांचक और भय तथा हर्षोत्पादक विश्वरूप का वर्णन पढ़ते समय हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। हम विश्वातीत ईश्वर के अनेक रूपों में सबसे विस्मयात्मक रूप देखते हैं उनका काल-रूप! ऐसा लगता है कि इस शताब्दि में भगवान् ने वही काल-रूप धारण किया है क्योंकि महाभारत के समय जैसा अधर्म था उससे कहीं अधिक अधर्म इस समय केवल भारत में ही नहीं सारे संसार में फैल गया है। जहां देखें हिंसा, घृणा और भ्रष्टाचार, झूठ और फरेब अपने पूर्ण रूप से उभर आये हैं। इस समय काल पुरुष अदृश्य, अशरीर किंतु स्पष्ट रूप से विद्यमान है वरना प्रत्येक वर्ष हम जैसा विनाश देखते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह संभव न होता, अमरीका जैसे 'सुपर पावर' के ऊंचे दो 'हाई राइज़' मीनार आतंकवादियों ने गिरा दिये, हजारों की जान-माल की हानि हुई, कई वर्षों से चुप बैठा ज्वालामुखी फूट पड़ा, भारत में बाढ़, भूकंप, जातिवाद का सुरसा मुख खोले हजारों को निगल गया, सूखे ने मनुष्य और प्राणियों की हत्या कर दी, राजनीति में "तू, तू, मैं, मैं" छोड़कर कोई भी अपने राष्ट्र की चिंता नहीं करता, हित की बात नहीं सोचता। यह अवस्था केवल भारत की नहीं है, सारे संसार में ऐसी ही गड़बड़ चल रही है। जब पृथ्वी की इतनी बुरी अवस्था हो, तब क्या भगवान् चुप बैठे देख सकते हैं? वे भले ही अदृश्य हैं किंतु उपस्थित हैं। अब भी उनका यह आश्वासन हमें ढांढ़स बंधाता है,

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युथानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

इसका अर्थ है "जब कभी धर्म का पतन होता है और अधर्म ऊपर उठता है तब मैं प्रकट होता हूं।" अब हमें यह समझना है कि धर्म क्या है। पाठ, पूजा, अर्चना और केवल आरती!! फिर भगवान् को भूल कर अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये कुछ भी करो। श्रीअरविन्द कहते हैं कि हर मनुष्य के लिये धर्म का अर्थ उसकी प्रकृति के अनुसार होगा। जैसे हम महाभारत में देखते हैं, युधिष्ठिर की प्रकृति ने सत्य वचन को अपना मूलमंत्र बना दिया और वे जीवन में बस एक ही बार अर्धसत्य बोले और वह भी कृष्ण के आदेश से जिन्हें वे अपना गुरु मानते थे। असल में अश्वत्थामा नामक हाथी मारा गया था, जब द्रोणाचार्य ने उनसे पूछा कि क्या अश्वत्थामा की मृत्यु हुई? युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, "हां, अश्वत्थामा की मृत्यु हो गयी।" और वे धीरे बोले 'नरो वा कुंजरो वा' मनुष्य या हाथी!" यह सुनते ही पुत्र प्रेम से विह्वल पिता ने युद्धक्षेत्र में अपने हथियार डाल दिये और तब अर्जुन के बाण से वे मारे गये। हम ऐसे कई उदाहरण देख सकते हैं किंतु आज करोड़ों में एक मिलता हो तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी बात होगी।

आधुनिक संसार की स्थिति तो हम जानते हैं, फिर उपाय क्या है? भगवान् कहते हैं कि उन्हें योग्य यंत्र प्राप्त हो तभी वे कार्य कर पायेंगे, क्योंकि इस समय उन्होंने अवतार धारण नहीं किया है। क्यों न हम अपने-अपने ढंग से धर्म को ढूंढ़ें और उसका पालन करें?

इस समय सबसे अच्छा उपाय होगा कि हम केवल भारत माता को अपना इष्ट देवता मानें। हम जो भी करें उस मां का चिंतन करें और अपने-आपसे पूछें, "मैं यह कार्य करने जा रहा हूं, इससे भारत माता की सेवा होगी या नहीं?" फिर भले हमें कितना ही नुकसान उठाना पड़े वह कार्य नहीं करना चाहिये जिससे हमारे राष्ट्र की हानि हो।

मुझे एक मित्र की बात याद आती है। किसी ने उनको एक बढ़िया कलम दिया। वे खुश हो गये, ध्यान से देखने पर उन्होंने पाया कि वह तो चीन का बना हुआ है। झट उन्होंने कलम लौटा दिया, कहा, "मैं भारत में बनी वस्तुओं को पसंद करता हूं।"

तो हम भी इस भीषण काल में भारत माता की सेवा को ही अपना धर्म मानें और जो कार्य करें उसे भारत के लाभ की कसौटी पर जांच कर देखें। राष्ट्र-सेवा ही हमारा धर्म हो। —अनुबेन

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा ... ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के ४० रु. और पुरोधा के ५० रु. शीघ्र भेजें। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायेगा, न ही अगला अंक वी. पी. पी. से जायेगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो ८०० रु. देकर अग्निशिखा के और १,००० रु. देकर पुरोधा के आजीवन सदस्य बन सकते हैं। आजीवन सदस्यता २० वर्ष के लिये मानी जायेगी।

संपर्क सूत्र—पुरोधा एवं अग्निशिखा
श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

जनवरी

१. तुम यहां अपनी अन्तरात्मा के साथ संपर्क साधने के लिये हो, और इसी कारण जीते हो, निरंतर अभीप्सा करो और अपने मन को नीरव करने की कोशिश करो। अभीप्सा हृदय से आनी चाहिये।

२. वही होना और अधिकाधिक वही बनना जो भगवान् हमें बनाना चाहते हैं। यही हमारी सबसे बड़ी तल्लीनता होनी चाहिये।

३. सुख जीवन का उद्देश्य नहीं है।
साधारण जीवन का लक्ष्य है अपना कर्तव्य पूरा करना, आध्यात्मिक जीवन का लक्ष्य है भगवान् को पाना।

४. सुखी होने के लिये मत जियो। भगवान् की सेवा करने के लिये जियो, इससे तुम्हें जो आनंद मिलेगा वह आशातीत होगा।

५. भगवान् सब जगह और सब चीजों में हैं। हम भगवान् को खोजने और उनकी अभिव्यक्ति के लिये 'उनके' साथ एक होने के लिये बनाये गये हैं।

६. भगवान् पर एकाग्रता ही सचमुच एकमात्र संगत चीज है। वही करना जो भगवान् हमसे करवाना चाहते हैं, यही एकमात्र संगत चीज है।

७. तुम जो भी करो भगवान् को सदा याद रखो।

८. प्रत्येक हृदय में 'भगवान् की उपस्थिति' भविष्य की और संभव पूर्णताओं की प्रतिज्ञा है।

९. चीजों की सतह के पीछे पूर्ण चेतना का सागर है जिसमें हम हमेशा डुबकी लगा सकते हैं।

१०. भगवान् ही समस्त जीवन का रस हैं। सभी क्रिया-कलाप का कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, हमारे विचारों के लक्ष्य हैं।

११. भगवान् में है जीवन, प्रकाश और आनंद। भगवान् के अंदर ही परम शांति है।

१२. भगवान् की विजय इतनी संपूर्ण होती है कि 'उनके' विरुद्ध उठने-वाली हर बाधा, हर दुर्भावना, हर घृणा एक विशालतर और पूर्णतर विजय की प्रतिज्ञा बन जाती है।

१३. भगवान् के चिंतन का वैभव कितना शांत, उदात्त और पवित्र होता है।

१४. अपन् ही ऊपर एकाग्रता का अर्थ है क्षय और मृत्यु। केवल भगवान् पर एकाग्रता ही जीवन, विकास और उपलब्धि लाती है।

१५. भगवान् को उग्रता द्वारा नहीं लिया जा सकता। केवल प्रेम और सामंजस्य द्वारा ही तुम भगवान् तक पहुंच सकते हो।

१६. भगवान् के लिये अनुरक्ति अपने-आपको भगवान् के चारों ओर लपेट देती है और उनसे पूरा सहारा पाती है ताकि उसे पूरा विश्वास हो कि वह 'उन्हें' कभी न छोड़ेगी।

१७. आत्म-नियंत्रण के बिना कोई जीवन सफल नहीं हो सकता।

१८. योग की पुरानी पद्धतियां मौन और एकांतवास की मांग करती हैं। आगामी कल का योग भगवान् को, कार्य और संसार के साथ संबंध में पाने में है।

१९. किसी यथार्थ लक्ष्य पर एकाग्रता विकास में सहायक होती है।

२०. प्रश्न : मधुर मां, व्यक्ति योग कैसे करता है?
उत्तर : पूरी तरह सच्चे बनो, कभी दूसरों को छलने की कोशिश मत करो। और कोशिश करो कि अपने-आपको कभी धोखा न दो।
आशीर्वाद।

२१. अपने-आप सच्चा बनने के लिये यह जरूरी नहीं है कि तुम औरों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सच्चा बनने का इंतजार करो।

२२. अपनी पवित्र और ऋजु अभीप्सा को उस चरम चेतना की ओर छलांग लगाने दो जो समस्त हर्ष और परम आनंद है।

२३. अभीप्सा **हमेशा** अच्छी है, अगर कोई मांग उसमें मिला दी जाये तो विश्वास रखो की वह कभी स्वीकृत न होगी।

२४. अभीप्सा की ज्वाला : एक ऐसी ज्वाला जो प्रकाश देती है पर कभी जलाती नहीं।

२५. अविचल श्रद्धा का होना अच्छा है—यह तुम्हारे पथ को ज्यादा आसान और छोटा बना देती है।

२६. हर क्षण, सारा अप्रत्याशित, अनपेक्षित, अज्ञात हमारे सामने रहता है—और हमारे साथ जो कुछ होता है वह अधिकतर हमारी श्रद्धा की पवित्रता और तीव्रता पर निर्भर है।

२७. बालक के विश्वास के साथ हमारा हृदय भगवान् से अनुनय-विनय करता है।

२८. श्रद्धा और विश्वास रखो और प्रसन्न रहो।

२९. तुम्हें भगवान् की विजय में पूरा-पूरा विश्वास होना चाहिये—और इस व्यापक विजय में उन सबकी व्यक्तिगत विजय भी आ जाती है जो निष्ठावान् और विश्वस्त रहेंगे।

३०. एक शक्ति है जिसपर कोई शासक अधिकार नहीं कर सकता। एक सुख है जिसे कोई पार्थिव सफलता नहीं ला सकती।

एक प्रकाश है जिसे कोई प्रज्ञा नहीं पा सकती। एक ज्ञान है जिसपर कोई दर्शन या कोई विज्ञान अधिकार नहीं कर सकता। एक आनंद है, कामनाओं की कोई भी तृप्ति उसका सुख नहीं पा सकती। प्रेम के लिये एक प्यास है जिसे कोई मानव संबंध नहीं बुझा सकता। एक शांति है जिसे कोई भी यहां पर, यहां तक कि मृत्यु में भी नहीं पा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह 'भागवत कृपा' से प्रवाहित होनेवाले शक्ति, सुख, प्रकाश, ज्ञान, आनन्द, प्रेम और शांति है।

३१. 'भागवत कृपा', 'तेरी' भलाई अनन्त है। हम तेरे आगे कृतज्ञता के साथ नमन करते हैं।

आह, यह कापी !

आज मेरी कापी समाप्त हो गयी। जी हां, जिस कापी ने हर आड़े वक्त मेरी सहायता की, जब-जब प्रेसवालों ने डराया कि आपका काम रुक रहा है तब-तब यही कापी आगे आयी, इसने लेख, कहानी, कविता, अनुवाद सभी प्रकार की चीजें आगे रख दीं और मुझसे कहा, "चिंता न करो, मैं तुम्हारी लाज रखने के लिये ही तो बैठी हूं।" जब कभी मेरे टंकन ने तंग किया, उसके जीतने की संभावना सामने आयी तब-तब मेरी कापी व्यासजी का रूप धारण करके टंकक-रूपी गणेश को नीचा रखने में सहायक हुई, उसने ऐसे आड़े-टेढ़े शब्दों में या यूं कहें, श्रोत्रिय अक्षरों-वाली चीजें आगे कर दीं कि टंकक महाशय की दिल की दिल में रह गयी और हमसे आगे न बढ़ पाये। जब कभी विद्यार्थियों ने कोई ऐसा प्रश्न पूछा जिसका जवाब मुझसे न बन पड़ता और इधर-उधर बगलें झांकनी पड़तीं तो इसी कापी ने हंस का रूप धारण करके अपने ब्रह्मा की लाज रखी।

लेकिन आज मेरी यह कापी समाप्त हो रही है। यह कापी, जिसने मुझे अपने असली रूप में देखा है। कहते हैं—धोबी का बस न चला गवैया के कान काटे। जब कभी मैं किसी से बहुत नाराज हुआ और अपना क्रोध दिखाना अपमानजनक लगा तो मैंने इसी कापी का आंचल पकड़ा। कभी कहानी, कभी व्यंग्य, कभी परिहास और कभी हिजो के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में गुस्सा उतारा और मन को शान्ति दी। जब मैं किसी कारण परेशान होता तो इसी कापी में परेशानी को भगाने के उपाय मिल जाते। और तो और, शारीरिक यंत्रणाओं को दूर करने के लिये भी इस कापी ने बहुत बार सफल प्रयास किया है। अब ऐसे अवसरों पर इसकी याद ही सहायता किया करेगी।

यह कापी साधारण न थी। कहते हैं वृन्द कवि को औरंगजेब ने एक हथिनी उपहार में दी थी जिसपर उन्होंने एक कविता लिख मारी। उन्होंने कुछ ऐसा लिखा कि अमीर तैमूर जब हिन्दुस्तान आये तो इसी पर सवारी किया करते थे, उनके स्मारक के रूप में बाबर ने इसे बड़े लाड़-प्यार से पाला। हुमायूं ने शेरशाह से हार कर भी इसे न छोड़ा। मुगल वंश की श्री के रूप में अकबर, जहांगीर और शाहजहां तक इसे बहुत मानते रहे और अब औरंगजेब ने इसे अत्यन्त मूल्यवान् वस्तु समझकर मुझ जैसे गरीब कवि को दान में दे दिया है।

मेरी इस कापी का इतिहास भी इससे बहुत भिन्न नहीं है। यह मुझे एक प्रिय मित्र से उपहार में मिली थी। उन्होंने बताया था कि यह कापी उनके बाल्यकाल में उनके एक अत्यन्त प्रिय व्यक्ति ने उन्हें कहीं जाते हुए भेंट में दी थी और इसका कारण यह था कि वह किसी खिलौने के लिए ठिनक रहे थे। उन्होंने देते हुए कहा—देखो, यह कापी जादू की कापी है। मेरे पिता जब छोटे हुआ करते थे तब उन्हें यह कापी सबसे अच्छी तरह ओनामासीधम सुनाने के लिये इनाम में मिली थी। मेरे पिताजी कहते थे कि उनके पिताजी ने कहा, अरे यह तो मेरे बचपन की कापी है। हम लोगों को ऐसी कापियां बड़ी मुश्किल से मिला करती थीं, हम इनमें लिख भी सकते थे और खेल-ही-खेल में इनसे नौकाएं बनाकर प्रांगण महासागर में तैरने और नौका चलाने का मजा भी ले लेते थे। तुम इसके रंग को पीला कहते हो पर यह बात सच्ची नहीं है। इस कापी का रंग कभी मेम साहबों के जैसा सफेद रहा होगा लेकिन हमारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथी कान उमेठने के बहुत शौकीन थे और उसी के डर से इस बेचारी का चेहरा जर्द हो गया है। मेरी बात पर विश्वास न हो तो इसके कान देख लो।

तो इस तरह यह कापी, यह कापी मेरे प्रप्रप्रप्रप्रप्रप्रप्रमित्र की निशानी है। भई यहां कोई संस्कृत का विद्वान् हो तो जरा कान उस तरफ कर लें। मैं संस्कृत नहीं जानता पर इतना तो जानता हूं कि पितामह के पिता प्रपितामह कहाते हैं, उसी आधार पर मित्र के मित्र प्रमित्र और उनके मित्र प्रप्रमित्र, इसी तरह रूप बना दिया है। हो सकता है व्याकरण की दृष्टि से गलत हो पर भाव व्यक्त करने में तो यह सवा सोलह आने, नहीं, नहीं, रुपये में एक सौ पांच पैसे ठीक है। मुझे विश्वास होता जा रहा है कि मैंने इस कापी में जो कुछ लिखा है वह गणित की भाषा में प्रवर्ग की प्रेरणा और सहायता से लिखा है। नयी कापियां तो बहुत मिल जायेंगी पर यह प्रेरणा कहां से पाऊंगा?

इस कापी का मैं और ज्यादा अच्छी तरह उपयोग कर सकता था। आखिर इतने बड़े-बड़े अक्षर लिखने की क्या जरूरत थी? बाजार में लेंस तो मिलते ही हैं, पढ़नेवाला और विशेष रूप से मेरा टंकक उनका उपयोग कर सकता था और तब मेरी गिनती और भी ज्यादा बड़े लेखकों में होती, मेरे लेखों में पाठ-भेद के बारे में शोध-ग्रंथ लिखे जाते और न जाने कितने लोगों को पी. एच. डी. डी. लिट. डी. लोट. आदि की आधि-व्याधि। अरे नहीं, नहीं, उपाधियां मिल जातीं। मैंने जहां कापी का पूरा सदुपयोग नहीं किया वहां इतने लोगों को डॉक्टर न होने दिया। लेकिन अब पछतावें होत क्या जब चिड़िया चुग गयी खेत।

नहीं, जिन ढूंढ़ा तिन पाइयां। एक विचार आ गया। इसपर अमल करके देखूंगा। दो पंक्तियों के बीच में काफी जगह छूटी हुई है। पहले सारे पन्ने काले किये थे, अब उन सफेद जगहों को लाल या हरा करूंगा। और तब और भी अधिक शोध-ग्रंथों की सामग्री तैयार हो जायेगी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं भी इतने सारे डॉक्टर की भ्रूणहत्या के पाप से बच जाऊंगा।

दाद दीजिये मेरी सूझ-बूझ की!

— रवीन्द्र

'पुरोधा' जून १९७६

शारीरिक ऊर्जा

एक बार माताजी ने कहा था कि शरीर एक गढ़ की तरह है। वह तुम्हें शत्रुओं के आक्रमणों से बचाता है। शारीरिक और नैतिक विघटन की शक्तियां चारों ओर खुले में घूमती रहती हैं और यह गढ़ उनसे रक्षा करता है। हमारे पुरखे कहा करते थे कि शरीर एक परकोटेवाला शहर है जिसकी सावधानी से हिफाजत करनी चाहिये। इसकी तुलना मन्दिर से भी की जाती है जिसे भगवान् के रहने के लिये मजबूत बनाया गया है, जिसे हमेशा झाड़-पोंछकर साफ रखना चाहिये। कुछ आध्यात्मिक मार्ग शरीर को भगवान् के समान मानकर उसकी पूजा किया करते थे।

हम कह सकते हैं कि ये सभी शरीर के विभिन्न आयाम या परिणाम हैं। हम इसे भिन्न प्रकार की भाषा में कह सकते हैं कि शरीर एक बैटरी, ऊर्जा का भण्डार है या यूं कहें कि ऊर्जा और चेतना अथवा शक्ति-चेतना का भण्डार है। आज यह मानी हुई बात है कि द्रव्य का कण घन ऊर्जा का रूप है। उसमें ऊर्जा इतनी ज्यादा घन हो गयी है कि मृत ठोस पदार्थ का संदेह होता है। लेकिन सचमुच उसकी शान्त अन्तःशक्ति में निर्माण और विनाश की अपार शक्ति भरी है।

द्रव्य में, द्रव्य की ऊर्जा को मुक्त करना विज्ञान और वैज्ञानिक का काम है। द्रव्य में चेतना और चिच्छक्ति लाना योग और योगी का काम है। तंत्रविद्या अधिकतर इसी रहस्य को जानने के प्रयास में लगी रहती है। उसने अपने ही तरीके खोजे और अपनी ही विधियों से काम लिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और काफी सफलता पायी।

तत्वतः शरीर घनीभूत चेतना का बना हुआ है। सवाल यह है कि इस चेतना को उस ठोस दशा में से कैसे मुक्त किया जाये। पहली जरूरत इस बात की है कि तुम सचेतन बनो। तुम्हारे शरीर में हर एक क्रिया सचेतन रूप से हो; जीना, हिलना-डुलना, कार्य करना, सभी सचेतन, लगभग ऐच्छिक रूप से हों, शरीर की कोई भी गति अनैच्छिक न रह जाये। हर शारीरिक भाव, भंगिमा, क्रिया अपने-आपमें सचेतन हो। यहां मन की बात नहीं हो रही। मन में तो स्मृति रहेगी, हर अंग कोई क्रिया करते समय उसे पूरे सचेतन रूप से, पूरे ज्ञान के साथ करे। शुरू में मानसिक बोध इसमें मिला जुला होगा, उसे पार कर जाना होगा।

चेतना के द्वारा ही सचेतन हुआ जा सकता है, चेतना चेतना से ही पैदा होती है। वह आत्मकेन्द्रीकरण के द्वारा ही अभिव्यक्त होती, विकसित होती और परिपक्व होती है। ऊर्जा ही अपने-आपको ऊर्जा देती है— 'तपस् तप्त्वा'। ऊर्जा गतिशील चेतना है। गति करते हुए वह अपने-आपको प्रकट करती और मूर्त रूप देती है। उदाहरण के लिये, जब वह अपनी क्रियाशीलता के बारे में सचेतन होती है तो उसकी वह जाग्रति उसी की हदतक सीमित नहीं रहती, वह उसके सभी कोषों में, उसके आस-पास के कोषों में भी आती है। यह प्रक्रिया सारे शरीर में फैल जाती है और शरीर का सारा ठोस द्रव्य चेतना और उसकी ज्वलंत ऊर्जा से भर जाता है।

शरीर के सचेतन होने के लिये एक बहुत बड़ी और अनिवार्य मौलिक आवश्यकता है। अपने प्रति सचेतन होने की सबसे बड़ी शर्त यह है कि शरीर पूरी तरह स्वतंत्र हो। उसे पूरी तरह औरों के चंगुल से छुटकारा मिले, वह पूर्ण स्वाधीनता का अनुभव कर सके। अभी तो वह पूरा-पूरा गुलाम है, उसे कभी पता ही नहीं लगता कि उसकी अपनी इच्छा क्या है। वह हमेशा मन या प्राण या दोनों की दासता में बंधा रहता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इन दो-दो के निर्मम राज्य में वह स्वतंत्र गति की क्षमता ही खो बैठा है। शरीर की वर्तमान गतिविधियां उसकी अपनी नहीं हैं, वे उसपर लादी गयी इच्छाओं की अभिव्यक्तियां हैं। यह जरूरी है कि शरीर की अपनी इच्छा-शक्ति हो और शरीर को उसका भान हो। इसके लिये यह जरूरी है कि वह परायी इच्छा की गुलामी से छुटकारा पाये। यह छुटकारा पाते ही वह अपने-आपको जानना शुरू करेगा, अपनी गतिविधियों के बारे में सीख सकेगा। वह धीरे-धीरे अपनी वर्तमान आदतों से छूट जायेगा जो अशुद्ध और विकृत गतिविधियों का परिणाम हैं। तब हमें पता चलेगा कि शरीर एक सुलझी हुई सत्ता है और उसे उन बहुत-सी चीजों की कोई जरूरत नहीं होती जिनके बारे में उसे सुझाव दिये गये हैं या जो उसपर मन और प्राण की परायी सत्ताओं द्वारा लाद दी गयी हैं। इस छुटकारे के साथ ही उसे अपने-आपका परिचय मिलेगा, वह अपने प्रति सचेतन हो सकेगा और यह चेतना उसके अपने सच्चे स्व की शुद्ध और नवीन शक्ति लेकर आयेगी। जैसे एक गुलाम देश में स्वाधीनता पाते ही आत्म-चेतना की शक्ति और आनंद का संचार होता है और वह अपनी नयी स्वाधीनता को बड़े आनंद के साथ अभिव्यक्त करता है, जैसे कोई मनुष्य गुलामी से छुटकारा पाकर स्वमान और आत्म-बल का अनुभव करता है उसी प्रकार भौतिक शरीर भी स्वाधीनता पाकर आनन्द-विभोर हो जाता है और अपनी शक्ति और ऊर्जा पाकर अपने निजी सत्य को अभिव्यक्त करता है। लंबी गुलामी के बाद जब स्वतंत्रता आती है तो पहले कुछ समय सनकभरा व्यवहार होता है लेकिन इसमें चिंता की कोई बात नहीं। केन्द्रीय इच्छा-शक्ति सब कुछ ठीक कर लेती है।

पशुओं की शारीरिक गतिविधि में ज्यादा सत्य और प्रामाणिकता होती है क्योंकि उनपर मन और प्राण की इच्छा का आरोप नहीं होता। वे मनुष्य की गतिविधियों की तरह विभिन्न मान्यताओं और सनकों के आधीन नहीं होतीं। वे ज्यादा स्वाधीन, प्रामाणिक और स्वाभाविक होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

हैं। उच्चतर सत्ता और चेतना के शरीर में भी ये विशेषताएं होंगी।

इस युग में मानव शरीर निश्चित रूप से इसी दिशा में गति कर रहा है, एक नये आत्म-विधान की ओर, स्वाधीनता, आनंद और ज्योति की ओर प्रगति कर रहा है। व्यक्तिगत प्रयास से ज्यादा भागवत कृपा कार्यरत है। यह भागवत मुहूर्त है जब, "जरा-सा प्रयास भी बड़े परिणाम लाता है और नियति को बदल देता है"।

— नालिनीकान्त गुप्त

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

परिचारक गण

हम छः श्रीअरविन्द के परिचारक थे—पुराणी, डॉ. बेचरलाल, डॉ. सत्येन्द्र, चंपकलाल, मूलशंकर और मैं। डॉ. मणिलाल बीच-बीच में आते-जाते रहते थे। वे वर्ष में दो या तीन बार आते, कुछ सप्ताह रहते, फिर बड़ौदा लौट जाते। डॉ. राव और डॉ. साबूर का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है क्योंकि उचित संदर्भ में उनके बारे में लिखा गया है। अपने प्रभु की सेवा करने का अवसर हम तीनों को अपनी डॉक्टरी क्षमता के बल पर मिला था। माताजी और श्रीअरविन्द की सेवा में चंपकलाल १९२३ में आते ही लग गये थे। जब उनके संबंध की बात आयेगी तब मैं पुराणी और सत्येन्द्र की बात करूंगा। हालांकि हमारे क्षेत्र अलग-अलग थे फिर भी दिव्य कृपा की डोर से बंधकर हम एक सामंजस्यपूर्ण गुलदस्ता से बने हुए थे। अब हमारे चार साथी बिदा ले चुके हैं। हमारे स्वामी के जीवनकाल में ही मूलशंकर बहुत करुण परिस्थिति में दिवंगत हुआ था। बाकी तीन बड़ी उमर में चल बसे। अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम जो पुराने इस समय यहां उपस्थित हैं, हर एक अपने-अपने कार्य में व्यस्त है, हर एक अपने अपने ढंग से दिव्य मां की सेवा कर रहा है। अब सामूहिक ऐक्य का वह केन्द्र नहीं रहा, फिर भी हर व्यक्ति अपनी साधना में व्यस्त है। फिर भी जब कभी हम मिलते हैं, जो कभी कदास ही होता है, तो उस सुदूर भूतकाल की स्मृतियां जाग उठती हैं और जब कभी हम आश्रम के किसी कार्यक्रम में भाषण इत्यादि सुनने जाते हैं या यूं ही मिल जाते हैं, तो हम एक-दूसरे की ओर देखकर मुस्कुरा देते हैं। उस समय ऐसा अनुभव होता है मानों हमारे प्रभु हमारे साथ हैं, मानों वे अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व के आकर्षण से अब भी हमें एक साथ रखे हुए हैं और हमारी रक्षा कर रहे हैं। चूंकि हम सामान्य मनुष्य थे इसलिये हम में से कई उनकी अच्छी-से-अच्छी सेवा नहीं कर पाये, क्योंकि कभी-कभी हमारे चरित्र का निकृष्ट पक्ष उभर आता था। रूपांतर से अछूते हमारे मानव शरीर में—सारे समय दिव्य सूर्य के भौतिक सामीप्य से—हम उष्णता अनुभव करते थे जो हमें जलाती थी और शुद्ध तथा पवित्र भी करती थी। फिर भी हर एक ने अपनी शक्ति के अनुसार सेवा अर्पित की और हर एक को शाही आशीर्वाद प्राप्त हुए।

श्रीअरविन्द का परिचय पुराणी के साथ बीसवीं सदी के पहले दशक से हुआ था और वर्षों तक पुराणी को उनके सामीप्य के बहुत से अवसर मिले थे। पुराणी के लिये तो वर्षों बाद पुराने संबंध को नये सिरे से शुरू करने की बात थी। उनकी तुलना में हम सब संबंध की दृष्टि में कच्चे थे और हम में से कइयों का प्रवेश का प्रमाण-पत्र हमारी डॉक्टरी डिग्री थी। फिर भी हमारा प्रभु के साथ व्यक्तिगत संबंध पत्र-व्यवहार द्वारा हो चुका था इसलिये वे हमारे सब के नाम से परिचित थे। मैं अपने बारे में थोड़े विस्तार से कहना चाहता हूं। पत्र-व्यवहार का हमारा संबंध इतना घनिष्ठ और विविध विषयों पर न होता तो मुझे लगता है कि श्रीअरविन्द के साथ इतना सहज और निःसंकोच व्यवहार में न कर पाता और न ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विविध कार्यों में उनके लिये उपयोगी भी हो पाता। हमारी उस घनिष्ठता से मैं हमेशा आश्चर्य-मुग्ध रहा और उस घनिष्ठता के रहस्य को जांचने में असफल रहा। मैंने कल्पना कर ली कि श्रीअरविन्द ने अपनी कालातीत दृष्ठि से देख लिया होगा कि एक दिन यह विनीत, दीन-हीन मनुष्य शायद भौतिक रूप से मेरी सेवा करेगा। उस संभावित दिवस के लिये श्रीअरविन्द ने मुझे तैयार किया, मेरे अंदर काव्य के लिये प्रेम जगाया ताकि मैं उनके महाकाव्य 'सावित्री' की प्रतिलिपि उनके श्रुतलेख सुनकर तैयार करने में सफल हो पाऊं। उन्होंने मुझे बौद्धिक प्रशिक्षण दिया ताकि उनके साहित्यिक कार्य में उपयोगी हो सकूं। उन्होंने मुझे अपनी चकरानेवाली लिखावट से परिचित करा दिया ताकि मैं उनकी पाण्डुलिपि पढ़कर उसका अर्थ समझ पाऊं। ये सब बातें मेरी कपोल-कल्पना होंगी किंतु अगर मैं किसी हदतक उनके बौद्धिक कार्य में मदद कर पाया हूं तो उसका श्रेय उनके प्रचुर पत्रों द्वारा मेरी शिक्षा, और मुझे जो साहित्यिक प्रशिक्षण दिया था उसको जाता है। सबसे बढ़कर उनके धैर्य और समझने की क्षमता ने ही मुझे उनके काम करने लायक बनाया। उन्होंने मेरे साथ इस तरह की जो लंबी तैयारी की थी उसके कारण उनके विस्मित करनेवाले और श्रद्धा जगानेवाले व्यक्तित्व के प्रति जो भय-मिश्रित अहोभाव उत्पन्न होता है वह मुझसे भाग चुका था। इस लंबी तैयारी के कारण उनके साथ मेरा खुला और उन्मुक्त व्यवहार सामान्य बन गया था, कभी-कभी मैं इस अबाध स्वाधीनता का दुरुपयोग तक करता था। तो इस तरह जीवन एक गीत की न्याई मधुर चल रहा था और वह परम प्रभु का रूपांतरित अन्तर्दर्शन बन जाता; किंतु हाय, आत्म-संपर्क की नवीनता के बाद हमारे चरित्र का अन्य पक्ष, अवचेतन उभर आया और श्रीअरविन्द के साथ जो भौतिक संपर्क था उस पर दबाव पड़ने लगा। तब जिस कार्य को एक बार हर्ष-भरा अर्घ्य माना जाता था, वह कर्तव्य बन गया। सेवा करने का जो अवसर मिला था उसे मैंने पुरस्कार-रूप में पर्याप्त न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माना। अब ठोस आध्यात्मिक स्पर्श की मुझे आशा रहती। जब वह न मिले तो छोटे-छोटे हर्ष और संतुष्टि की मांग मुझे तर्कसंगत पुरस्कार लगते थे। मेरी पुरानी बीमारियां लौट आयीं—शंका और अवसाद फिर से मुझपर हावी हो गये और उसके कारण मेरी सेवा में उन्होंने अपनी कड़ुवाहट उंडेल दी। मेरे इन स्पंदनों को प्रभु अच्छी तरह अनुभव करते थे हालांकि हम में से किसी ने भी मुंह न खोला था। कई बार एक दृष्टिपात से, हाथ के हल्के दबाव से, वे अपनी समझ और सहानुभूति अभिव्यक्त करते और कुछ समय के लिये मनस्ताप पीछे हट जाता। श्रीअरविन्द मेरी आंतरिक और बाह्य गतिविधियों को काफी अच्छी तरह जानते थे लेकिन मेरे दोषों के लिये उन्होंने कभी अप्रसन्नता या क्रोध नहीं दिखाया था, नामंजूरी के कठोर वचनतक न कहे। एक उदारता, करुणामयी क्षमा और दिव्य विचारशीलता ने मेरे जीवन की धारा को ऊपरी तौर से पथविहीन, एकाकी सफर पर अपनी परम विशालता की ओर जाने दिया।

मुझे पता नहीं कि मुझे अपने अन्य साथियों के विषय में बोलने का अधिकार है या नहीं किंतु चंपकलाल के विषय में हृदय-स्पर्शी शब्द बोलना आवश्यक है। क्योंकि उनकी सेवा की भावना ने मेरी आत्मा पर अमिट रेखा अंकित की है और उसने मुझे सिखाया है कि सच्ची सेवा क्या है। १९४९ में माताजी ने अपने बेटे आंद्रे को चंपकलाल का परिचय देते हुए जो कहा है उसे अंकित करना चाहता हूं। उन्होंने बड़े स्नेह से कहा, "वह तब छोटा था जब यहां आया था। मैंने उसे तरह-तरह के काम सिखाये। उसने श्रीअरविन्द की व्यक्तिगत सेवा का काम अपनी मर्जी से चुना है। वह श्रीअरविन्द की प्रायः हर आवश्यकता का ध्यान रखता है। वह ब्योरों के बारे में अति सावधान है। अपने भोजन के लिये उसका कोई निश्चित समय नहीं है; जब समय मिले भोजन कर लेता है। उसके सोने के विषय में भी ऐसा ही है। इसी कारण वह खेल-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूद में भाग नहीं ले पाता। अपना काम वह भक्ति और हर्ष से करता है। वह हमारी छोटी-छोटी चीजों को इकट्ठा करता है और उन्हें बड़ी सावधानी से रखता है—हमारे कपड़े, नाखून, बाल इत्यादि को सहेज कर रखता है।"

अपने चरित्र के गठन से चंपकलाल भक्त हैं। जैसा मैंने पहले कहा था, वे अपने अन्तर्जात अधिकार से हमारे बीच आये थे। वे परम्परागत भक्त नहीं थे बल्कि उन्होंने सेवा को अपनी आत्म-अभिव्यक्ति और आधारभूत सिद्धि के माध्यम के रूप में चुना। शायद सिद्धि शब्द भी उनके लिये उचित न होगा क्योंकि वे केवल आत्मदान को सब कुछ समझते थे। सेवा ही उनका भोजन था। अगर हम में से कोई उनके काम का अंश मात्र भी कर देता तो वे नाराज हो जाते और कहते, "तुम मुझे अपने भोजन से वंचित करते हो, काम मेरा भोजन है। मैं भोजन के बिना रह सकता हूं, काम के बिना नहीं।" यही चंपकलाल का पूरा चित्र है और इसी दृढ़ उत्साह से वे लंबे दशक तक हमारे साथ काम करते रहे और हमने मिलकर काम किया। माताजी को उनके ऊपर पूरा विश्वास था और हमारे साथ उनको भी श्रीअरविन्द की सेवा में रखने में वे निश्चिंत थीं। श्रीअरविन्द भी माताजी के विषय में सब आवश्यक जानकारी के लिये चंपकलाल पर भरोसा रखते थे। एक बार माताजी श्रीअरविन्द के कमरे में आ कर उनके सामने रोज की तरह सोफे पर बैठ गयीं। हम इस दृश्य को निहार रहे थे। श्रीअरविन्द ने माताजी की ओर दृष्टि घुमाकर चंपकलाल को कुछ संकेत किया। चंपकलाल तुरंत समझ गये और कूदकर माताजी की पीठ के पीछे कुछ तकिये लगा दिये। ऐसा था उनका सेवा का तरीका। मुझे पूरा विश्वास है कि कई जन्मों से चंपकलाल का माताजी और श्रीअरविन्द के साथ घनिष्ठ संबंध रहा होगा वरना आते ही उनके जैसे नवयुवक का चुनाव श्रीअरविन्द के व्यक्तिगत परिचारक के रूप में कैसे होता! पहली बार जब चंपकलाल श्रीअरविन्द से मिलने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आये तो हर्षाश्रु से आंसू बहाते हुए प्रायः एक घण्टे तक उनके चरणों पर साष्टांग प्रणाम की मुद्रा में लेटे रहे! जब वे जाने लगे तो श्रीअरविन्द ने उनके वयस्क साथी से कहा कि अगली बार वे चंपकलाल को अपने साथ लिवा लायें। चंपकलाल ने सबसे पहले श्रीअरविन्द को अपना दिव्य पिता माना था और वे उनसे बात करते समय पिता का संबोधन करते थे। और माताजी को दिव्य माता मानकर उन्होंने उन्हें मां कहना शुरू किया था। चंपकलाल ने जब अपने पिता के वस्त्र धोने की इच्छा प्रकट की तो श्रीअरविन्द ने उन्हें सावधान किया कि लोग उनका मजाक उड़ाएंगे लेकिन इससे चंपकलाल विचलित न हुए। कभी-कभी वे भोजन और नींद के बिना श्रीअरविन्द के सामने बैठे रहते थे इसलिये कि कहीं ऐसा न हो कि उन्हें किसी चीज की आवश्यकता हो या और किसी काम के लिये एक मिनट भी उन्हें प्रतीक्षा करनी पड़े। श्रीअरविन्द की सेवा करना एक तरह से काफी आसान था क्योंकि वे कभी हमसे कुछ मांगते या कहते न थे। अपनी मुख्य आवश्यकताएं पाने से वे संतुष्ट थे। अगर हमने कोई काम न किया तो कभी असंतुष्ट न होते। उनका यह व्यवहार ही हमें सतर्क रखता था। चंपकलाल हमेशा जागरूक रहते थे कि श्रीअरविन्द को और अधिक आराम और सुविधा कैसे दें। चंपकलाल अपने प्रेम और अनुभव के कारण श्रीअरविन्द के स्वभाव और प्रवृत्ति से परिचित थे और वे श्रीअरविन्द की आवश्यकता की नब्ज को पहचानते थे। अगर उन्हें लगता कि श्रीअरविन्द को गावतकिये की जरूरत है तो वे बनवा लेते; अगर उनके पादपीठ को थोड़ा ऊंचा या नीचा करने की आवश्यकता है तो वे उसे ठीक कर देते। चंपकलाल ने एक मेज घड़ी श्रीअरविन्द के पास रख दी क्योंकि उन्हें पता था कि श्रीअरविन्द बार-बार समय देखना चाहते थे। ऐसी छोटी बातें हमारी दृष्टि में आ न पातीं क्योंकि हमारी दृष्टि कुछ संवेदनहीन थी किंतु चंपकलाल की दृष्टि सतेज थी और वे निर्वैयक्तिक ब्रह्म का जीवन "सुखद और आरामदेह" बनाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कोशिश करते। जब श्रीअरविन्द पलंग की पट्टी पर बैठकर बहुत देर तक माताजी के आने की प्रतीक्षा करते तो कभी थक कर उनका शरीर पीछे की ओर झुकने लगता, वे फिर से सीधे होकर बैठ जाते, किंतु वे कभी हमारी सहायता न मांगते, यह अहंकारवश नहीं था। अगर हम सहायता करते तो वे हमें रोकते भी नहीं। श्रीअरविन्द का शरीर पीछे झुकने लगता तो हम केवल देखते रहते किंतु हमें सूझता नहीं कि क्या करना चाहिये, लेकिन चंपकलाल झट समझ लेते। वे तकियों का ढेर लगा देते और तकियों को गिरने से रोकने के लिये पीछे से खुद सहारा देते। विश्व-युद्ध के समय माताजी ने आदेश दिया था कि मितव्ययता आवश्यक है इसलिये श्रीअरविन्द के बिस्तर की चादरें जल्दी-जल्दी बदलने की जरूरत नहीं है, लेकिन अगर छोटा-सा दाग लग गया हो तो चंपकलाल उसे बिस्तर पर देख न पाते, वे कहते, "प्रभु के लिये हम अस्वच्छ वस्त्र का उपयोग कैसे करें?" जब वे बिस्तर बनाते तो वह दृश्य देखने लायक होता। मुझे पता नहीं निपुण से निपुण गृहिणी भी इतना अच्छा बिस्तर लगा पायेगी! जब बिस्तर बन जाता तो छोटी-सी सलवट भी न रहती, वह संगेमरमर-सा चिकना चमकता रहता। चंपकलाल जो भी करते उसे त्रुटिहीन, पूर्ण रूप से करने का ध्येय रखते थे। इस कारण उनके साथ जिनको काम करना पड़ता, वे मुसीबत में पड़ जाते। चंपकलाल का दावा था कि उन्होंने माताजी से यह कार्य-संपूर्णता सीखी है। कभी-कभी मुझ पर डांट पड़ती अगर वे मुझे साफ-सुथरा न देखते, "तुम डॉक्टर हो और फिर भी हाथ नहीं धोते?"

(क्रमशः)

— नीरदवरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्नोत्तर

(अभीप्सा; अपने-आपको दोष देना; मन को विचारों से मुक्त करना; मानसिक नीरवता)

व्यक्ति जानता है कि उसे अमुक काम नहीं करना चाहिये, और वह उसे करना चाहता भी नहीं, पर फिर भी उसे करता है। ऐसा क्यों होता है? इससे कैसे बचा जाये?

ऐसा इसलिये होता है कि व्यक्ति में चेतना के संकल्प और शक्ति का अभाव है। ये दोनों वस्तुएं उसे तभी प्राप्त हो सकती हैं जब उसकी अभीप्सा सच्ची हो।

२०. १०. १९६५

यद्यपि सत्ता का एक अंग तो अभीप्सा करता है और भगवान् को चाहता है, पर दूसरा भाग कितना तामसिक और स्थूल है। इसे कैसे जगाया जाये? कैसे झकझोरा जाये? बात यह नहीं है कि यह भाग भगवान् का विरोधी है, ऐसा प्रतीत होता है कि उनमें इसकी रुचि ही नहीं है (शायद, यह और भी अधिक खराब है)।

वस्तुतः यह बात पूर्ण तमस् की द्योतक है। श्रीअरविन्द ने लिखा है : "यदि तुम भगवान् से प्रेम नहीं कर सकते तो कम-से-कम उनसे झगड़ा करने की कोई युक्ति सोचो जिससे वे तुम्हारे शत्रु ही बन सकें!" (जिसका अर्थ है कि भगवान् अवश्य ही तुम्हें जीत लेंगे)। यह बात है तो हंसी की किंतु इसका अर्थ है कि तमस् की स्थिति सबसे अधिक बुरी होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभीप्सा ही एकमात्र इलाज है, एक ऐसी अभीप्सा जो स्पष्ट लौ की भांति निरंतर ऊपर उठती रहती है और सत्ता की सारी मलिनता को भस्म कर देती है।

४. ११. १९६५

हम देखते हैं कि कई व्यक्ति आश्रम छोड़ जाते हैं, वे या तो कोई नौकरी करना चाहते हैं या आगे पढ़ना चाहते हैं, और ये वे लोग हैं जो बचपन से यहीं रहे हैं। हमारे युवक जब दूसरों को यहां से जाते देखते हैं तो उनमें एक अनिश्चितता की भावना पैदा हो जाती है और वे सावधानी के साथ कहते हैं : "क्या पता कल मेरी बारी न आ जाये।" मेरे विचार में तो इस सबके पीछे कोई शक्ति कार्य कर रही है। क्या है वह?

इस अनिश्चितता का और लोगों के यहां से चले जाने का कारण उनकी निम्न प्रकृति है जो यौगिक शक्ति के प्रभाव का प्रतिरोध करती है और भागवत कार्य की गति को मन्द करने की कोशिश करती है, ऐसा वह किसी दुर्भावनावश नहीं, बल्कि इसलिये करती है कि लक्ष्य तक पहुंचने की जल्दी में कोई वस्तु भूल या छूट न जाये। पूर्ण समर्पण के लिये बहुत थोड़े ही लोग तैयार होते हैं। यहां के पढ़े कई बच्चों को भागवत कार्य के लिये तैयार होने से पहले जीवन के साथ संघर्ष करने की जरूरत होती है, इसीलिये वे यहां से चले जाते हैं ताकि वे सामान्य जीवन की परीक्षा में से गुजर सकें।

११. ११. १९६४

मेरी अपने-आपको दोष देने की आदत-सी बन गयी है, मैं सभी गलतफहमियों के लिये अपने को दोषी ठहराता हूं। और यह एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार की दुर्बलता है, गुण नहीं। मुझे लगता है कि मैं दोष अपने ऊपर इसलिये लेता हूं जिससे बात जल्दी-से-जल्दी खत्म हो जाये —यह एक प्रकार की पलायन-वृत्ति है।

मां, मैं सोचता हूं कि मुझमें हीनता की भावना भी बहुत अधिक प्रबल रूप में मौजूद है।

ये सब बातें कहां से आती हैं और इनसे कैसे मुक्त हुआ जाये?

यह सब तुम्हारे अहं भाव से आता है जो सदा अपने में ही व्यस्त रहता है और किसी और वस्तु के विषय में (उदाहरणार्थ, भगवान् के विषय में) सोचने तथा अपने-आपको भूल जाने की अपेक्षा अपने-आपको दोषी ठहराना और अपनी ही आलोचना करना ज्यादा पसंद करता है।

१८. ११. १९६४

मन को सभी प्रकार के विचारों से कैसे मुक्त किया जाये? जब ध्यान में ऐसा करने की कोशिश की जाती है तो यह विचार कि व्यक्ति को किसी वस्तु के बारे में नहीं सोचना है सदा ही उपस्थित रहता है।

ध्यान के समय व्यक्ति नीरव रहना नहीं सीखता, क्योंकि कोशिश करना अपने-आपमें ही नीरवता को भंग कर देना है।

व्यक्ति को हृदय में अपनी शक्तियों को केन्द्रित करना सीखना चाहिये —इसमें यदि सफलता प्राप्त हो जाये तो नीरवता सहज ही आ जाती है।

९. १२. १९६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मां, हमारा प्राण केवल इच्छाओं, अहंकारभरी भावनाओं आदि से ही बना है, या कोई अच्छी चीज भी है उसमें?

अगर हम सच्चे ढंग से उपयोग करना जानें तो उसमें ऊर्जा, बल, उत्साह, कलात्मक रुचि, निडरता, तीव्रता भी होते हैं।

जो प्राण भगवान् को समर्पण कर दिया जाये, जिसका रूप बदल जाये वह एक ऐसा निडर और शक्तिशाली यंत्र होता है जो सभी बाधाओं पर विजय पा सकता है। किंतु सबसे पहले इसे अनुशासन को मानना चाहिये और इसके लिये वह तभी राजी होगा जब भगवान् ही उसके स्वामी हों।

आशीर्वाद।

११. १२. १९६४

प्रायः ही लम्बे ध्यान के बाद (जब मैं ध्यान के लिये प्रयत्न करता हूं) मुझे बहुत थकावट हो जाती है और विश्राम करने की इच्छा होती है। ऐसा क्यों होता है और इसके प्रतिकार का क्या उपाय है?

यदि तुम इसके लिये प्रयत्न करते हो तो यह ध्यान नहीं होता और ऐसी अवस्था को लम्बा खींचने से कोई अधिक लाभ नहीं।

मानसिक नीरवता प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को अपने-आपको ढीला छोड़ना सीखना होगा। जिस प्रकार पानी पर लकड़ी का कुन्दा तैरता है उसी प्रकार उसे वैश्व शक्ति की लहरों पर उतराना होगा—बिना किसी गति के, और बिना तनाव के।

प्रयत्न कभी नीरव नहीं होता।

२३. १२. १९६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरुष का स्त्री के प्रति और स्त्री का पुरुष के प्रति जो आकर्षण है उसके पीछे कौन-सा शाश्वत सत्य है?

पुरुष और प्रकृति के बीच का संबंध।

इसके लिये तुम्हें वह सब पढ़ना चाहिये जो श्रीअरविन्द ने इस विषय पर लिखा है।

५. ११. १९६५

—श्रीमां

बच्चे को सिखाना चाहिये

आप कहती हैं कि मनुष्य को "यह दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि अंत में सत्य की विजय होगी।" परंतु यह दृढ़ विश्वास तो मनुष्य जो कुछ साधारण जीवन में सीखता है उससे बहुत भिन्न, और बहुधा उसके विपरीत प्रतीत होता है?

हां। साधारण तौर पर यह विश्वास किया जाता है कि प्रकृति में सभी वस्तुएं सर्वदा बुरे रूप में समाप्त होती हैं। प्रत्येक व्यक्ति उन लोगों की कहानी जानता है जो अपने जीवन में महान् सफलता का उपभोग करने के बाद शोचनीय अंत को प्राप्त हुए, उन लोगों की कहानी जानता है जिनमें असाधारण क्षमताएं थीं और जिन्होंने अंत में उन्हें खो दिया; उस राष्ट्र की कहानी जानता है जो दीर्घ काल तक एक अद्‌भुत सभ्यता का उदाहरण था—सभ्यता लुप्त हो जाती है और राष्ट्र एक ऐसी शोचनीय वस्तु में बदल जाता है कि कोई याद भी नहीं कर पाता कि वह पहले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या था। ऐसा लगता है कि पृथ्वी का इतिहास ऐसी जीतों की कहानी है जिनके बाद हारें आती हैं, ऐसी हारों की कहानी नहीं जिनके बाद जीतें आती हैं।

परंतु वास्तव में जब कभी वैश्व और दिव्य वस्तुओं का प्रश्न उठता है विराट् दर्शन-शक्ति तथा दिव्य ज्ञान-शक्ति की आवश्यकता होती है जिसमें यह जाना जा सके कि सत्य किस प्रकार अभिव्यक्त होता है। संसार में एक प्रकार की सामान्य निराशावादी दृष्टि है जो कहती है कि वस्तुएं अच्छे रूप में भले शुरू हों पर समाप्त बुरे रूप में ही होती हैं; वास्तव में दुर्बलता, धूर्तता, मिथ्याचार और दुष्टता ही वे चीजें हैं जो सर्वदा प्राधान्य प्राप्त करती प्रतीत होती हैं। यही कारण है कि जिन लोगों ने संसार को अपने निजी व्यक्तिगत आयाम के अंदर देखा है उन्होंने कहा है कि संसार बुरा है और जितनी जल्दी संभव हो हमें उसे समाप्त कर देना चाहिये और उससे बाहर निकल जाना चाहिये। गुरुओं ने यह शिक्षा तो दी है, परंतु उनकी शिक्षा केवल यही सिद्ध करती है कि उनकी दृष्टि अत्यंत संकीर्ण है तथा उनके मानवीय व्यक्तित्व के आयाम से सीमित है।

वास्तव में, प्रकृति की गतियां ज्वार-भाटे की तरह होती हैं : वे आगे बढ़ती हैं, फिर पीछे हटती हैं, आगे बढ़ती और पीछे हटती हैं; इसका अर्थ होता है, वैश्व जीवन में और पार्थिव जीवन में भी, उत्तरोत्तर प्रगति, यद्यपि ऊपर से देखने में यह प्रगति पीछे के हटाव से कट जाती है। परंतु ये पीछे के हटाव केवल बाहरी रूप हैं, ठीक जैसे आदमी आगे कूदने के लिये पीछे हटता है। तुम पीछे हटते हुए प्रतीत होते हो पर वह केवल और आगे जा सकने के लिये होता है।

परंतु तुम मुझसे कहोगे कि यह सब तो ठीक है, पर एक बच्चे को यह विश्वास कैसे दिलाया जाये कि सत्य की विजय होगी? कारण, जब वह इतिहास पढ़ेगा, जब वह प्रकृति का अवलोकन करेगा तो वह देखेगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वस्तुएं सर्वदा अच्छे रूप में समाप्त नहीं होतीं।[1]

बच्चों को जगत् में भागवत अभिव्यक्ति को देखना सिखाना चाहिये न कि उस पक्ष को जो बुरे तौर पर समाप्त होता है।

नहीं; यदि बच्चा यह समझे कि भगवान् जगत् से भिन्न हैं तो उसकी यह भावना कि प्रत्येक वस्तु बुरे रूप में समाप्त होती है, बिलकुल उचित होगी।

बच्चों को भागवत न्याय की भावना देनी चाहिये।

[1] सन् १९६३ में, जिस समय यह वार्तालाप प्रकाशित हुआ, श्रीमां ने आनुषंगिक रूप से निम्नांकित मंतव्य व्यक्त किया : "फिर भी, मूलत: जबतक मृत्यु विद्यमान है वस्तुएं सर्वदा बुरे ढंग से समाप्त होती रहेंगी। जब मृत्यु पर विजय प्राप्त हो जायेगी अर्थात जब नयी प्रगति करने के लिये 'निश्चेतना' में वापस जाने की कोई आवश्यकता नहीं रह जायेगी—केवल तभी यह संभव होगा कि वस्तुएं बुरी तरह समाप्त न हों।

"विकास की, कम-से-कम पार्थिव विकास की, सारी प्रक्रिया इसी प्रकार की है (मैं नहीं जानती कि अन्य ग्रहों में यह कैसे होती है!) परंपराओं का कहना है कि विश्व की सृष्टि होती है, फिर वह प्रलय में खिंच जाता है, फिर एक नया विश्व आता है और इसी प्रकार चलता रहता है। और उनके मतानुसार हमारा यह सातवां विश्व होना चाहिये, और सातवां होने के कारण यह वह विश्व है जो प्रलय में वापिस नहीं जायेगा बल्कि पीछे हटे बिना निरंतर प्रगति करता रहेगा। इसी कारण आज मानव सत्ता में स्थायित्व की ओर अविच्छिन्न प्रगति की यह आवश्यकता विद्यमान है। यह इसलिये है कि समय आ गया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परंतु उस विषय के बारे में हम कुछ भी नहीं जानते, क्योंकि अभी जगत् जैसा है उसमें यह न्याय अभिव्यक्त नहीं होता।

फिर भी, यदि कोई जरा-सी गहराई के साथ वस्तुओं का निरीक्षण करे तो वह देखता है कि प्रगति हो रही है, वस्तुएं अधिक अच्छी, और अच्छी-से-अच्छी होती जा रही हैं, यद्यपि ऊपर से देखने में उनमें कोई सुधार नहीं होता। और कुछ ऊंचाई पर बैठी हुई चेतना के लिये यह बिलकुल स्पष्ट होता है कि समस्त अशुभ—कम-से-कम हम जिसे अशुभ कहते हैं—समस्त मिथ्यात्व, जो कुछ 'सत्य' के विपरीत है वह सब, समस्त दु;ख-कष्ट, समस्त बाधा-विरोध एक प्रकार के असंतुलन का परिणाम है। मैं समझती हूं कि जो व्यक्ति इस उच्चतर स्तर से वस्तुओं को देखने का अभ्यासी है वह तुरत देखता है कि बात ऐसी ही है। परिणामतः विश्व किसी असंतुलन पर स्थापित नहीं हो सकता, क्योंकि यदि ऐसा होता तो वह बहुत समय पहले ही विलीन हो गया होता। हम अनुभव करते हैं कि विश्व के मूल में कोई परमोच्च 'संतुलन की स्थिति' अवश्य रही होगी, और संभवतः; जैसा कि हमने उस दिन कहा था, एक उत्तरोत्तर बढ़ते हुए संतुलन की अवस्था रही होगी, संतुलन की ऐसी अवस्था जो उस सबके ठीक विपरीत होगी जिसे हमें "अशुभ" कहना सिखाया गया है और जिसे हम यह नाम देने के अभ्यस्त हो गये हैं। कोई शुद्ध "अशुभ" नहीं है, बल्कि एक प्रकार का "अशुभ" है, कम या अधिक आंशिक असंतुलन है।

यह बात बहुत सरल ढंग से बच्चों को सिखायी जा सकती है। यह बात भौतिक वस्तुओं की सहायता से दिखायी जा सकती है कि कोई वस्तु संतुलित अवस्था में न होने पर गिर सकती है, जो वस्तुएं संतुलन की स्थिति में होती हैं केवल वे ही अपने स्थान और कालावधि को बनाये रख सकती हैं।

एक दूसरा भी गुण है जिसे बहुत छोटी उम्र से ही बच्चों में पैदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना चाहिये; वह है व्याकुलता को, नैतिक अशांति को अनुभव करने का अभ्यास जिसे वह उस समय अनुभव करता है जब वह कोई काम कर डालता है, इसलिये नहीं कि उससे उसे न करने के लिये कहा गया था, इसलिये नहीं कि वह दंड से डरता है, बल्कि सहज-स्वाभाविक भाव से अनुभव करता है। उदाहरणार्थ, एक बच्चा दुष्टतावश अपने एक साथी को चोट पहुंचाता है; अब, यदि वह अपनी सामान्य, स्वाभाविक स्थिति में है तो बेचैनी अनुभव करेगा, अपनी सत्ता की गहराई में दुःख अनुभव करेगा, क्योंकि उसने जो कुछ किया है वह उसके आंतरिक सत्य के विपरीत है।

कारण, समस्त शिक्षाओं के बावजूद, विचार-बुद्धि जिन सब चीजों को सोच-समझ सकती है उन सबके बावजूद, उसकी सत्ता की गहराई में कोई ऐसी चीज है जिसमें एक पूर्णता का, महानता का, सत्य का बोध है और इस सत्य का विरोध करनेवाली समस्त गतिविधियों के द्वारा उसका दुःखद रूप में खंडन किया गया है। यदि बच्चा अपनी परिस्थितियों के द्वारा, अपने चारों ओर के शोचनीय उदाहरणों के द्वारा नष्ट नहीं हुआ है, अर्थात् यदि वह अपनी सामान्य अवस्था में है तो वह अपनी सत्ता के सत्य के विपरीत कोई बात करने पर, सहज भाव से, किसी के कुछ कहे बिना, एक प्रकार की बेचैनी का अनुभव करेगा। और ठीक यही चीज है जिसपर आगे चलकर उसकी प्रगति का प्रयास आधारित होना चाहिये।

कारण, यदि तुम अपनी प्रगति का आधार बनाने के लिये किसी एक शिक्षा या किसी सिद्धांत को ढूंढ़ना चाहो तो तुम ऐसी कोई चीज कभी नहीं पाओगे—अथवा अधिक यथार्थ रूप में कहा जाये तो, तुम कोई और ही वस्तु पाओगे, क्योंकि वातावरण, युग, सभ्यता के अनुसार दी हुई शिक्षाएं एक-दूसरे से एकदम विपरीत होती हैं। जब एक आदमी कहता है : "यह अच्छा है", तो दूसरा उसी युक्तितर्क तथा उसी प्रभावशाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्ति के साथ कहता है : नहीं, यह बुरा है, परिणामतः, इस चीज के ऊपर निर्माण नहीं किया जा सकता। धर्म ने सर्वदा एक सिद्धांत स्थापित करने का प्रयास किया है। वह तुमसे कहेगा कि यदि तुम इस सिद्धांत का अनुसरण करो तो तुम सत्य में रहोगे और यदि न करो तो मिथ्यात्व में जा गिरोगे। परंतु ऐसी चीजें किसी परिणाम पर नहीं पहुंचातीं। उन्होंने केवल गड़बड़झाला ही उत्पन्न किया है।

बस एक ही सच्चा मार्गदर्शक है और वह है आंतरिक पथप्रदर्शक जो मानसिक चेतना के अंदर से नहीं गुजरता।

स्वभावतः ही, जब कोई बच्चा सर्वनाशी शिक्षा प्राप्त करता है तो वह अपने अंदर इस नन्हीं-सी सच्ची सत्ता को बुझा देने का अधिकाधिक प्रयास करता है, और कभी-कभी वह इतना सफल हो जाता है कि उसके साथ अपना समस्त संपर्क खो बैठता है और साथ-ही-साथ भले-बुरे को पहचानने की शक्ति भी खो देता है। यही कारण है कि मैं इस चीज पर अधिक जोर देती हूं और यह कहती हूं कि अत्यंत छोटी अवस्था से ही बच्चों को यह सिखाना चाहिये कि उनके अंदर, पृथ्वी के अंदर, विश्व के अंदर एक आंतर सत्य विद्यमान है, और इस सत्य की क्रिया के फलस्वरूप ही वे—यह पृथ्वी और यह विश्व—अपना जीवन धारण करते हैं; यदि वह सत्य न होता तो बच्चा कभी न जीवित रहता, थोड़े समय तक जो वह जीता है उतना भी न जी पाता, और प्रत्येक चीज जैसे ही अस्तित्व में आती वैसे ही विलीन हो जाती। और चूंकि यही विश्व का सच्चा आधार है, इसलिये स्वभावतः इसी की विजय होगी; और जो कुछ इसका विरोध करता है वह उतने दिन तक नहीं बना रह सकता जितने दिन यह बना रहता है, क्योंकि यह 'तत्' है, शाश्वत वस्तु है जो कि विश्व के मूल में विद्यमान है।

निस्संदेह, प्रश्न यह नहीं है कि बच्चे को दार्शनिक व्याख्याएं बतायी जाएं, पर उसे भली-भांति यह अनुभूति दी जा सकती है कि जो अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंदर की इस नन्हीं, बहुत नीरव वस्तु का अनुसरण करने से इस प्रकार के आंतरिक सुख-संतोष और कभी-कभी तीव्र हर्ष का अनुभव करती है, वही चीज उसे अपने विपरीत कोई कार्य करने से रोकेगी। इसी प्रकार के अनुभव पर शिक्षा आधारित हो सकती है। बच्चे के अंदर यह धारणा बैठा देनी चाहिये कि जबतक वह अपने अंदर यह सच्चा संतोष नहीं प्राप्त कर लेता जो एकमात्र स्थायी वस्तु है तबतक कोई चीज स्थायी नहीं हो सकती।

८ जनवरी १९५१

— 'श्रीमातृवाणी' खण्ड ४, पृ. २१-२५

कर्म

केवल जान लेने भर से क्या लाभ? मैं तुझे कहता हूं ज्ञान के अनुसार कर्म कर और वही बन जा। क्योंकि इसी के लिये भगवान् ने तुझे उस मानव शरीर में भेजा है।

*

यदि तेरा उद्देश्य महान् हो और साधन छोटे, तो भी कर्म कर, क्योंकि केवल कर्म के द्वारा ही ये तेरे लिये वर्धित और विकसित हो सकते हैं।

*

निश्चय ही काम के बड़े और छोटे होने का विचार आध्यात्मिक सत्य के लिये एकदम विजातीय है .... आध्यात्मिक दृष्टि से न कोई चीज बड़ी है न छोटी। ऐसे विचार पढ़े-लिखे उन लोगों के विचारों जैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं जो सोचते हैं कि कविता लिखना तो एक बड़ा काम है और जूते बनाना या खाना पकाना छोटा और नीचे दर्जे का। परंतु आत्मा की दृष्टि से सब समान है—महत्व केवल उस आंतरिक भावना का है जिसके द्वारा काम किया जाता है। किसी विशेष प्रकार के काम के बारे में भी यही बात है, उसमें छोटा-बड़ा कुछ नहीं।

*

जो लोग पूरी सच्चाई के साथ माताजी के लिये कार्य करते हैं वे स्वयं कार्य के द्वारा ही समुचित चेतना प्राप्त करने के लिये तैयार किये जाते हैं, भले ही वे ध्यान करने के लिये न बैठें अथवा योग का कोई विशेष अभ्यास न करें। तुम्हें यह बताने की आवश्यकंता नहीं कि ध्यान कैसे किया जाता है; अगर तुम अपने कर्म में और सारे समय सच्चे बने रहो और अपने-आपको माताजी के प्रति खोले रखो तो जो कुछ आवश्यक है वह अपने-आप ही आयेगा।

*

कर्म में चाहे जितनी भी कठिनाइयां क्यों न उठें, यदि मनुष्य उन्हें सच्ची वृत्ति से ले तो उनसे अपनी समता को गहरा बनाकर उतना ही अधिक लाभ उठा सकता है। तुम्हें इस विषय में सहायता ग्रहण करने के लिये अपने-आपको खुला भी रखना चाहिये, क्योंकि प्रकृति को बदलने के लिये माताजी से हमेशा सहायता आती रहेगी।

कर्म में सच्चा मनोभाव

तुम्हारे लिये यह बिलकुल संभव है कि तुम घर पर और अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम के बीच रहकर साधना करते रहो—बहुत-से लोग ऐसा करते हैं। आरंभ में यह आवश्यक है कि जितना अधिक-से-अधिक संभव हो उतना माताजी का स्मरण किया जाये, प्रत्येक दिन कुछ समय हृदय में उनका ध्यान किया जाये, अगर संभव हो तो भगवती माता के रूप में उनका चिंतन किया जाये, अपने अंदर उनको अनुभव करने की अभीप्सा की जाये, अपने कर्मों को उन्हें समर्पित किया जाये और यह प्रार्थना की जाये कि वे भीतर से तुम्हें पथ दिखायें और तुम्हें बल दें। यह आरंभिक अवस्था है जो बहुधा बहुत समय रहती है, पर यदि कोई सच्चाई और लगन के साथ इस अवस्था में से गुजरता है तो मनोवृत्ति कुछ-कुछ बदलना आरंभ कर देती है और साधक में एक नयी चेतना खुल जाती है जो अंतर में श्रीमां की उपस्थिति के बारे में, प्रकृति में और जीवन में होनेवाली उनकी क्रिया के बारे में अथवा सिद्धि का दरवाजा खोल देनेवाली किसी अन्य आध्यात्मिक अनुभूति के बारे में अधिकाधिक सचेतन होना आरंभ करती है।

*

सच्चे कार्यों को करने के लिये यदि तुम्हारे अंदर उपयुक्त चेतना की बहुत अधिक चाह और अभीप्सा है, तो वह तुम्हें इन अनेक तरीकों में से किसी एक से प्राप्त हो सकती है :

१. तुम अपनी क्रियाओं को इस प्रकार देखने की आदत डाल सकते हो या योग्यता पैदा कर सकते हो कि तुम कार्य की प्रेरणा को आते हुए और साथ ही उसके स्वरूप को भी देख सको।

२. एक ऐसी चेतना प्राप्त हो सकती है कि जब कभी काम के बारे में गलत विचार या प्रेरणा उठे या गलत संवेदन आये तो उसे बेचैनी हो।

३. हो सकता है कि जब तुम कोई गलत काम करने जा रहे हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो कोई चीज तुम्हारे अंदर तुम्हें चेता दे और रोक दे।

*

व्यक्ति को एक ही काम हमेशा उत्साह के साथ कर सकना चाहिये और साथ ही उसे तैयार रहना चाहिये कि क्षणभर की सूचना पर वह किसी दूसरे काम में लग सके या अपने कार्यक्षेत्र को बढ़ा सके।

*

तुमने जिन कठिनाइयों का जिक्र किया है, वे सब बहुत स्वाभाविक चीजें हैं जो अधिकतर लोगों में सामान्य रूप से पायी जाती हैं। स्मरण करना और सचेतन होना व्यक्ति के लिये उस समय अपेक्षाकृत सरल होता है जब वह शांत होकर ध्यान में बैठा हो पर काम की व्यस्तता में ऐसा करना कठिन है। कर्म में भी स्मृति और सचेतनता क्रमशः बढ़ा करती हैं। इसे एकाएक ही प्राप्त कर लेने की आशा तुम्हें नहीं करनी चाहिये। कोई भी इसे एकदम नहीं प्राप्त कर सकता, यह प्राप्त होती है दो तरीकों से : पहला, श्रीमां की स्मृति को बनाये रखने का और कर्म को, सारे समय जब भी कुछ किया जाये, उन्हें निवेदित करने का यदि व्यक्ति अभ्यास करता है (काम करते हुए सब समय नहीं बल्कि प्रारंभ करते समय या जब भी याद कर सके) तो धीरे-धीरे यह प्रकृति के लिये सहज और स्वाभाविक चीज बन जाती है। दूसरी, ध्यान के द्वारा एक आंतरिक चेतना का विकास शुरू हो जाता है और जो कुछ समय बाद, एकाएक या अचानक नहीं, स्वयमेव अधिकाधिक स्थायी होता जाता है। व्यक्ति इसे उस बाहरी चेतना से पृथक् अनुभव करता है जो कार्य करती है। प्रारंभ में यह पृथक् चेतना काम करते समय अनुभव नहीं होती पर ज्यों ही काम समाप्त हो जाता है व्यक्ति महसूस करता है कि यह सारे समय वहां उपस्थित थी, पीछे रहकर निरीक्षण कर रही थी। बाद में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम के बीच में भी यह महसूस होने लगता है मानों व्यक्ति के अपने ही दो भाग हों, एक पीछे रहकर निरीक्षण करता, सहारा देता, श्रीमां का स्मरण करता और उन्हें अर्पण करता रहता है और दूसरा काम करता रहता है। जब यह हो जाता है तब सच्ची चेतना से कर्म करना अधिकाधिक आसान होता जाता है।

— श्रीअरविन्द

सोसायटी समाचार

इस वर्ष श्रीमां के १२५वें जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में इस अंक के साथ **सोसायटी के सभी सदस्यों के पास** पृष्ठचिह्नवाला एक जेबी कैलेण्डर भेजा जा रहा है जिसमें श्रीमां के चार रंगीन चित्रों के साथ श्रीअरविन्द का एक सन्देश है। जो इसकी अतिरिक्त प्रतियां मंगाना चाहें वे पूरी जानकारी के साथ कृपया श्रीअरविन्द सोसायटी, बीच ऑफिस, पाण्डचेरी –६०५००२ से सीधा पत्र-व्यवहार करें।

१७ नवम्बर २००२ को श्रीमां की पुण्यतिथि के अवसर पर श्रीमां का कमरा सवेरे ४ बजे से शाम के छह बजे तक दर्शनार्थ खोला गया। सवेरे छह से साढ़े छह तक आश्रम में ध्यान हुआ। इस अवसर पर यह सन्देश बंटा :

ऐसा कोई नहीं है जिसके लिये भगवान् को चरितार्थ करना असम्भव हो। केवल, कईयों को इसमें कई, कई जन्म लग जायेंगे जब कि कुछ ऐसे भी हैं जो अपने इसी जीवन-काल में उसे चरितार्थ कर लेंगे। चुनाव तुम्हारे हाथ में है। लेकिन मुझे कहना पड़ेगा कि वर्तमान समय में परिस्थितियां विशेष अनुकूल हैं।

—श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाम को आश्रम के क्रीड़ांगण में ७.२५ को ध्यान हुआ। २० नवम्बर को भी आश्रम में सवेरे छह से साढ़े छह तक और शाम को क्रीड़ांगण में ७.२५ को ध्यान हुआ।

२४ नवम्बर २००२—सिद्धि-दिवस की जयन्ती पर श्रीअरविन्द का कमरा दर्शनार्थ सवेरे चार से शाम के छह बजे तक खोला गया। सवेरे छह से साढ़े छह तक आश्रम में ध्यान हुआ। इस अवसर पर सन्देश के रूप में 'सावित्री' का यह उद्धरण बंटा—

ईश्वर के पुत्र हमें, उनके सदृश बनना होगा :
उनके हैं मानव अंश, हमें भगवान् तक उठना होगा।
हमारा जीवन है एक विरोधाभास,
जिसकी कुञ्जी है भगवान् के पास।

—श्रीअरविन्द

शाम को क्रीड़ांगण में मार्च-पास्ट तथा वाद्य-वृन्द का कार्यक्रम हुआ। अन्त में हुआ ध्यान।

पांच दिसम्बर, श्रीअरविन्द के देह-त्याग की तिथि पर उनका कमरा सवेरे पांच बजे से दर्शन के लिये खुला। सवेरे छह से साढ़े छह तक आश्रम में ध्यान हुआ। उस अवसर पर यह सन्देश बंटा—

श्रीअरविन्द भावी के उस सौन्दर्य की बात धरा को बताने आये जिसे हमें यहां चरितार्थ करना है।

वे उस भव्यता की न केवल आशा बल्कि विश्वास देने आये जिसकी ओर जगत् गति कर रहा है। जगत् कोई आकस्मिक घटना नहीं है, यह एक अद्भुत चमत्कार है जो अपनी अभिव्यक्ति की ओर बढ़ रहा है।

—श्रीमां

शाम को क्रीड़ांगण में ध्यान हुआ। ९ दिसम्बर को भी सवेरे छह बजे आश्रम में और शाम को पौने आठ बजे क्रीड़ांगण में ध्यान हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१ फरवरी २००३ को श्रीमां का १२५वां जन्मोत्सव मनाया जायेगा। सवेरे छह से साढ़े छह तक आश्रम में ध्यान होगा। यह सुझाव प्रस्तावित किया गया है कि सोसायटी के सभी केन्द्र तथा सभी शाखाएं भी अपने-अपने स्थानों पर उसी समय ध्यान रखें। जो सदस्य तथा भक्तगण उस समय शाखाओं अथवा केन्द्रों में न पहुंच पायें वे उसी समय अपने-अपने घरों में ध्यान कर सकते हैं।

डॉ. मंगेश नाडकर्णी का सावित्री-अध्ययन-सत्र (अंग्रेजी में) २३ फरवरी से ५ मार्च २००३ तक सोसायटी के बीच ऑफिस में सवेरे ९ से पौने बारह तक होगा। सत्र निःशुल्क है।

केन्द्रों तथा शाखाओं के समाचार

उत्तरांचल में श्री एस. सी. त्यागी तथा नानक चंद लोहिया ने हलद्वानी, कोटाबाग, नौकुचिआताल तथा नैनीताल का दौरा सितम्बर में किया। वे भक्तों, सोसायटी के सदस्यों इत्यादि से भी मिले। नैनीताल में उनका एक भाषण भी हुआ।

"सर्वांगीण शिक्षा में कला" नामक योजना के अन्तर्गत दिल्ली शाखा बच्चों तथा अभिभावकों के लिये नियमित 'वर्कशॉप' का आयोजन करती है। इसका मुख्य उद्देश्य है बच्चों को स्वयं अपनी सच्ची क्षमताओं को खोजना सिखाना। जुलाई, अगस्त तथा सितम्बर २००२ के 'वर्कशॉप' का विषय था "साहस तथा भलाई", इसमें १०० से अधिक बच्चों ने भाग लिया।

देहरादून (उत्तरांचल) शाखा के नारी-आयोग ने २९ सितम्बर २००२ को "आध्यात्मिकता तथा स्वाध्याय" पर 'वर्कशॉप' रखा। मुख्य अतिथि थीं डॉ. नयनतारा सहगल।

भागलपुर (बिहार) भागलपुर विश्वविद्यालय के कुलपति ने ५ सितम्बर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'शिक्षक दिवस' के अवसर पर कार्यक्रम का सभापतित्व किया।

चेन्नई (तमिलनाडु) में ६ अक्तूबर २००२ को श्रीअरविन्द आश्रम के सदस्य प्रो. किट्टू रेड्डी ने "श्रीअरविन्द का योग—कुछ व्यावहारिक संकेत" पर भाषण दिया।

सुलतानपुर (उत्तर-प्रदेश) केन्द्र में २९ सितम्बर तथा ५ अक्तूबर २००२ को श्रीअश्विनभाई कापडिया ने 'सावित्री' तथा 'योग' विषयक भाषण दिये।

मेरठ (उत्तर-प्रदेश) श्रीमां की १२५वीं वर्षगांठ सम्बन्धी कार्यक्रमों में मेरठ के वैदिक विश्व दर्शन केन्द्र ने अविभक्त भारत नामक उत्सव का आयोजन अक्तूबर २००२ में किया। विश्व हिन्दू परिषद् के संयुक्त सेक्रेटरी इस अवसर पर संस्कृत की महानता पर भी बोले, साथ ही उन्होंने श्रीअरविन्द के अविभक्त भारत के स्वप्न को भी चरितार्थ करने के प्रयास पर जोर देने की, कुछ ठोस काम करने की अपील की।

वडोदरा (गुजरात) शाखा ने २२ अक्तूबर को सर्वांगीण शिक्षा पर वर्कशाप का आयोजन किया जिसमें विभिन्न विद्यालयों से करीब १०० प्रशिक्षकों ने हिस्सा लिया। श्रीमती रंजनाबेन वैद्य ने इसका सफल संचालन किया।

देहेगाम (गुजरात) में सोसायटी के बबलपुरा केन्द्र ने सार्वजनिक पुस्तकालय में श्रीअरविन्द अध्ययन केन्द्र खोला है। २ अक्तूबर को इसका उद्घाटन सुधा सुन्दरम् ने किया।

मुम्बई (महाराष्ट्र) में सोसायटी के श्री चरण केन्द्र ने अपना वार्षिकोत्सव २४ अक्तूबर को शाम के पांच बजे किया। १९६७ में इस दिन श्रीमां तथा श्रीअरविन्द के चित्रों की यहां स्थापना हुई थी। स्वयं श्रीमां ने चित्र चुने तथा अपने चित्र पर हस्ताक्षर किये।

सोसायटी के ये चार नये केन्द्र अगस्त से अक्तूबर २००२ के बीच खुले—राजस्थानम में सिकर, चेन्नई में अन्न् नगर, गुप्तकाशी में मस्ता तथा मध्य-प्रदेश में दमोह में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From :

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्वेत कमल दिव्य जननी का प्रतीक है
जिनकी चेतना शुद्ध, विमल और शक्ति-संपन्न है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

सन्देश

हम उन देव मुहूर्तों में से एक में हैं जब पुराने आधार डगमगा जाते हैं और बड़ी अव्यवस्था रहती है; लेकिन जो लोग आगे छलांग मारना चाहते हैं उनके लिये यह एक अद्‌भुत अवसर है, प्रगति की संभावना असाधारण है।

क्या तुम उन लोगों में से एक नहीं होओगे जो उसका लाभ उठाते हैं? ...

सबको मेरे आशीर्वाद

(१-४-१९७१)

— श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय :

शुभ अवसर

फरवरी में एक विशेष शुभ अवसर आता है और वह है माताजी का २१ फरवरी को जन्म-दिवस।

अब देखें इस युग में धरती पर जैसा हाहाकार मच रहा है, हर दिशा में अशुभ की जैसी विजय हो रही है, उसे देखते हुए स्वाभाविक है कि हम ऐसे व्यक्ति विशेष को याद करें जिनकी स्मृति हमें दिलासा दे, आश्वासन दे कि अन्धकार चिरजीवी नहीं है।

हम श्रीअरविन्द को अवतार-पुरुष जानते हैं, किन्तु इस युग की विभीषिका देखते हुए दूसरे अवतार की आवश्यकता थी। संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित श्री कपाली शास्त्री ने उस अवतार की स्तुति में लिखा है—

नरकुलशक्तिं नवयुगयुक्ताम्
अबलामतिकृतबन्धनमुक्ताम्।
आदधते गुरुमहसे लसते नम नम
नारीवरवेषभृते।।

सेयं जननी जयति मिराम्बा
जगदुज्जीवनरुचिनिकुरुम्बा
सोऽयं भगवानरविन्दगुरुर्जयति
सह श्रीमात्रा जयति।।

गुरु के समुज्ज्वल प्रकाश को नमन, उस प्रकाश को नमन जो उत्तम नारीवेश धारण किये हुए है, जो प्रकाश दुर्बलता तथा अज्ञान की बेड़ियां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से जकड़ी मानवजाति को मुक्त करता है और नये युग में ढलने के लिये उसे उपयुक्त बनाता है। नमन उस नारी-प्रकाश को।

मां मीरा की जय, जगत् की नवीकृत दीप्तियों के संरूप उन परम प्रभु, गुरु श्रीअरविन्द की जय जो सौम्या माता के साथ परम रूप से विराजते हैं।

तो कौन थी वह नारी जिसको शास्त्रीजी ने अवतार घोषित किया था? हम जानते हैं कि उनका जन्म भारत में नहीं, कहीं और हुआ था फिर भी वे कई भारतवासियों से अधिक भारतीय थीं। अब देखें उस अवतार के जीवन की एक झांकी—

फ्रांस में १२५ वर्ष पूर्व २१ फरवरी को अलफासा परिवार में एक प्यारी बच्ची ने जन्म लिया। माता का नाम मातिल्डा था किन्तु आश्चर्य की बात! इस नन्हीं का नाम रखा गया मीरा (मीर्रा)। यह नाम भारत की प्रसिद्ध कृष्ण-प्रेम-विह्वल मीरा के नाम से कितना सामंजस्य रखता है!!

पांच वर्ष के बच्चे उछल-कूद करते रहते हैं, शोर मचाते हैं। उन्हें एक क्षण के लिये चुपचाप बैठना पड़े तो कुलबुलाने लगते हैं किन्तु फ्रांस में जन्मी मीरा उस आयु में अपनी छोटी कुर्सी पर घण्टों बैठी रहती। कभी उसकी मां कहतीं, "घण्टों बैठे-बैठे क्या करती हो? ऐसा लग रहा है मानों संसार का सारा भार तेरे सिर पर हो!" छोटी मीरा गंभीरता से स्वीकृति में सिर हिला देती। वर्षों बाद जब वे पांडिचेरी में थीं तब उन्होंने इस घटना का उल्लेख करते हुए कहा था, "उस समय मैं अपने सिर के ऊपर एक प्रकाश-पुंज देखती थी और चुपचाप बैठकर उसे अपने अंदर बुलाती रहती थी।" तो फिर स्थिर बैठना आवश्यक था न! यह थी उस बालिका की विलक्षण अनुभूति!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब मीरा सात वर्ष की थी और विद्यालय जाती थी तो एक दिन उसने देखा कि लड़के और लड़कियों के बीच कुछ झड़प हो गयी है और लड़के लड़कियों को एक कमरे से बाहर निकलने से रोक रहे हैं। मीरा ने अपना छाता उठाया और गंभीर स्वर में आगे बढ़ती हुई बोली, "मुझे जाने दो," लड़के तुरंत पीछे हट गये और नन्हीं लड़की बड़े शान से बाहर निकल आयी। उसके पीछे-पीछे सब लड़कियां भी बाहर आ गयीं।

इस तरह पांच वर्ष की आयु से मीरा की जो ज्योति की खोज शुरू हुई थी, वह सारे जीवन चलती रही। फ्रांस में रहते हुए उसके हाथ में भगवद्गीता आ गयी। उसके लिये तो यह पुस्तक प्यासे के लिये मीठा, मधुर जल-सी थी। अब उसने अपने-आप ध्यान करना शुरू किया और ध्यान करते-करते वह इतनी गहराई में चली जाती थी कि वह गुह्य विद्या के द्वार तक पहुंच गयी। उसने सोचा होगा कि जब अनायास इस द्वार पर आ गयी हूं तो मुझे विधिवत् गुह्य-विद्या सीखनी चाहिये। फ्रांस का अपना आरामदेह घर-द्वार छोड़ कर वे अफ्रीका की असह्य गरमी में चली गयीं क्योंकि तेओं नामक प्रसिद्ध गुह्यविद्या के ज्ञाता तेमसेम नामक स्थान में अड्डा जमाये बैठे थे। यहां गरमी का राज्य था! कहां फ्रांस की शीतल, सुखद आबोहवा और कहां गरमी में मनुष्य को झुलसाता अफ्रीका!! किन्तु लगन की पक्की मीरा ऐसी छोटी बातों से पीछे हटनेवाली कहां थी! तेओं की पत्नी भी बहुत बड़ी गुह्यविद्या की ज्ञाता थीं। एक दिन मीरा तेओं की जायदाद की लम्बी-चौड़ी तराई में टहलने निकल गयीं। देर से लौटकर जब उन्होंने अपने कमरे का ताला खोलकर प्रवेश किया तो भीनी-भीनी सुगंध ने उन्हें चकित कर दिया। इधर-उधर देखते हुए उन्हें अपनी मेज पर एक सुन्दर माला दीखी। आश्चर्य-मुग्ध वे उसे देखती रहीं, सोचने लगीं कि मैंने यह माला गूंथी न थी और मैं दरवाजे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर ताला लगाकर गयी थी, फिर यह माला आयी कैसे!! उसका रहस्य ढूंढ़ते-ढूंढ़ते वे तेओं की पत्नी के पास गयीं। उन्होंने मुस्कुराकर कहा, "हां, मैं ही माला गूंथती हूं। मुझे सूक्ष्म रूप से बंद मकानों और दरवाजों को पार करने की विद्या प्राप्त है। मैं तुम्हें माला भेजती हूं क्योंकि मुझे पता है कि तुम 'वह' हो।"

तेओं से काफी ज्ञान प्राप्त करके मीरा फ्रांस लौट आयीं। अब उनके ध्यान में मार्गदर्शन देने के लिये एक मुख प्रायः रोज दिखायी देता था और मीरा सोचतीं कि श्रीकृष्ण उन्हें मार्गदर्शन देने आ रहे हैं क्योंकि भगवद्गीता पढ़कर वे श्रीकृष्ण से परिचित हो चुकी थीं।

मनुष्य कहीं भी हो, उसकी नियति उसे उसी स्थान पर ले जायेगी जो उसकी कर्मभूमि बनने के लिये निश्चित की गयी हो। हम देख सकते हैं कि मीरा फ्रांस से अफ्रीका गयीं। आजकल जिसे हम श्रीअरविन्द के प्रतीक के रूप में जानते हैं उसको अपने ध्यान में देखकर मीरा ने उसे कागज पर रेखांकित किया था और उस रेखाचित्र की पहेली सुलझाने-वाले व्यक्ति से मिलने भारत आयीं। पांडिचेरी में श्रीअरविन्द को देखते ही वे थोड़ी चौंक-सी गयीं, सोचने लगीं, "अरे, ये ही तो मेरे ध्यान में मार्गदर्शन देने आते थे जिन्हें मैं श्रीकृष्ण समझती थी।" इस तरह मीरा की खोज का यहां एक तरह से पूर्ण विराम हो गया और दूसरा सफर शुरू हो गया।

अब मीरा श्रीअरविन्द के साथ मनुष्यों के आंतरिक, मानसिक क्षेत्रों में प्रवेश करने लगीं। दोनों की अनुभूति प्रायः समान रेखा पर चलती थी। उन्होंने अनुभव किया कि मनुष्य को दुःख, संताप और कष्ट से मुक्त होना है तो उसे न केवल मन से परे उठना होगा बल्कि निश्चित स्तर पर, जहां गहन अंधेरा है, जहां मनुष्य के सारे बहिष्कृत विचार, भावना, दुर्भावनाएं, हिंसक क्रियाएं वगैरह कूड़ा-कर्कट की तरह फेंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गये हैं, वहां भगवत् ज्योति लानी होगी।

यह आंतरिक जगत् के लिये उतनी ही क्रांतिकारी खोज है जैसे सायंस में रॉकेट की खोज।

पांडिचेरी में दोनों की तपस्या के फल-स्वरूप आश्रम खड़ा हुआ जो उनकी प्रयोगशाला है। वहां आश्रमवासियों की प्रगति की परीक्षा उनके दैनिक जीवन के प्रति उनकी प्रतिक्रया और आंतरिक जीवन की अनुभूति से होती है। श्रीअरविन्द ने मीरा को दिव्य जगज्जननी (माता) के रूप में पहचाना और सारे आश्रमवासी उन्हें हमेशा माताजी कहते और मानते हैं। हर छोटी-बड़ी समस्या के लिये वे उनके पास जाते और संतुष्ट होकर लौटते।

माताजी सूक्ष्म और भौतिक रूप से अपने बच्चों की कितनी देख-भाल करती रहती हैं उसका एक उदाहरण यहां प्रस्तुत है—

आश्रम की एक साधिका कहीं एक ऐसी महिला से मिली जो कीलों के बिस्तर पर खड़ी होकर गाती हुई उनके समक्ष जो भी हो उसके विषय में बहुत कुछ कहती थीं। महिला साधिका को देखकर बड़ी प्रसन्न हुईं, फिर कील-बिस्तर पर खड़ी होकर गाती हुई कहने लगीं, "तुम चिर कुंवारी हो। दो दिव्य व्यक्ति सदा तुम्हारी रक्षा करते हैं। तुम भाग्यवान् हो।" सुनते ही साधिका की आंखों से आंसू लुढ़क पड़े।

देखें, माताजी कितने स्पष्ट और मधुर स्वर में अपने छोटे-बड़े बच्चों को समझाती थीं। किसी ने भागवत कृपा के कार्य के बारे में प्रश्न पूछा था। माताजी का उत्तर कितना उत्साहप्रद, आशा देनेवाला है— "... भागवत कृपा पर तुम्हारी श्रद्धा कितनी महान् क्यों न हो और दिव्य कृपा पर कितनी भी आस्था क्यों न हो, समस्त परिस्थितियों में दिव्य कृपा का हस्तक्षेप देखने की तुम्हारी क्षमता हर क्षण, जीवन के हर मोड़ पर अमित हो, फिर भी उस दिव्यता के कार्य की अद्‌भुत विशालता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को तुम समझ न पाओगे, न ही उसकी सूक्ष्मता, न उसके कार्य की यथार्थता को समझ पाओगे। तुम पकड़ न पाओगे कि किस हद तक भागवत कृपा हर चीज के पीछे कार्य करती है, हर बात के पीछे है, हर चीज की व्यवस्था करती है ताकि संसार की परिस्थितियों को देखते हुए दिव्य सिद्धि की ओर मनुष्य की प्रगति जितनी तेज, पूर्ण, सर्वांगीण और सामंजस्यपूर्ण हो, हो सके।

"जैसे ही तुम भागवत कृपा के साथ संपर्क स्थापित करोगे काल के किसी भी क्षण में, देश के किसी भी बिन्दु पर तुम भागवत कृपा के निरन्तर कार्य से, उसके सतत हस्तक्षेप से चौंधिया कर चकित हुए बिना रह न पाओगे।"

माताजी सच्चे अर्थ में सबकी मां हैं। उनके उत्साहवर्धक वचनों से न केवल आश्रमवासी बल्कि संसार में उनके जितने शिष्य हैं, उन सबमें शक्ति, उत्साह और संकल्प का संचार होता है।

हम संसार की वर्तमान स्थिति से भली-भांति परिचित हो चुके हैं। इस भयावह, भीषण कष्टकर परिस्थितियों में एक हिटलर नहीं, उसके अनेक छोटे-छोटे रूप दीखते हैं और वे संसार भर में फैल कर केवल अनिष्ट, मिथ्यात्व और भ्रष्टाचार को बढ़ाते हैं।

इस परिस्थिति को बदलने के लिये हमें पूरा प्रयास करना होगा।

माताजी के निम्नलिखित परामर्श को कंठस्थ करके हम पूरे मन से, हृदय से उसका अनुसरण करेंगे तो कोई कारण नहीं कि संसार सिद्धि की ओर क्यों न बढ़ पाये।

वे कहती हैं, "एक बार भागवत कृपा का कार्य देख लो, तो तुम यही सोचोगे कि तुम उस कृपा के योग्य नहीं हो, लेकिन तुम्हें उसे कभी भुलाना न चाहिये, न कभी भयभीत होना चाहिये, तुम्हारे अंदर न कोई संताप, न कोई पश्चात्ताप हो, न ही तुम्हें झिझक कर पीछे हटना चाहिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

... और सबसे बढ़कर, तुम्हें दुःखी न होना चाहिये। अगर हम भागवत कृपा के साथ एक हो जायें, उसका कार्य सर्वत्र देख पायें तो हम परमोल्लास का, सर्वशक्ति का, अनंत आनंद का जीवन जीना शुरू करेंगे।"

यह माताजी के जन्म-दिवस का १२५वां वर्ष है। इस अंक में हम जीवन के विभिन्न पहलुओं पर उनकी वाणी उद्धृत कर रहे हैं।

हम उनके उपरोक्त वचनों को जीवन में उतार कर उनके दिव्य कार्य में उन्हें अपना सर्वश्रेष्ठ उपहार दे पायेंगे। कार्य कठिन है किन्तु भारतीयों के लिये कोई कार्य असंभव नहीं है।

— अनुबेन

दैनन्दिनी

फरवरी

१. हमारे जीवन की एकमात्र आवश्यकता यही हो—भगवान् को पाना।
२. धरती पर हमारे जीवन का लक्ष्य है भगवान् के बारे में सचेतन होना।
३. जीवन का सच्चा लक्ष्य है अपने अंदर की गहराइयों में 'भगवान् की उपस्थिति' को पाना और 'उसके' प्रति समर्पण करना ताकि 'वह' जीवन का, सभी भावनाओं और शरीर की क्रियाओं का मार्गदर्शन करे।
४. हम सुखी होने के लिये धरती पर नहीं हैं क्योंकि पार्थिव जीवन की वर्तमान दशा में सुख असंभव है। हम धरती पर भगवान् को पाने और चरितार्थ करने के लिये हैं क्योंकि केवल 'दिव्य चेतना' ही सच्चा सुख दे सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. मनुष्य भगवान् को अभिव्यक्त करने के लिये बनाया गया था। इसलिये उसका कर्तव्य है कि भगवान् के बारे में सचेतन हो और अपने-आपको पूरी तरह 'उनकी इच्छा' के प्रति अर्पण कर दे। बाकी सब, चाहे कुछ भी क्यों न दीखता हो, मिथ्यात्व और अज्ञान है।

६. केवल भगवान् में ही हम वह सब पायेंगे जिसकी हमें जरूरत है।

७. ऐसा करो कि 'भागवत उपस्थिति' हमेशा तुम्हारे साथ हो।

८. हम केवल भगवान् में ही संपूर्ण शांति और पूर्ण संतोष पा सकते हैं।

९. एक ऐसी चेतना है जिसे कोई चीज भ्रष्ट, भद्दा या दूषित नहीं कर सकती। यही वह चीज है जिसे हम 'भागवत चेतना' कहते हैं।

१०. भगवान् के अंदर, भगवान् के द्वारा सब कुछ रूपांतरित और महिमान्वित होता है। भगवान् के अंदर सभी रहस्यों और शक्तियों की चाबी पायी जाती है।

११. हम भगवान् की ज्योति की प्रचुरता के लिये 'उन' का आवाहन करते हैं, 'वे' हमारे अंदर उन्हें अभिव्यक्त करने की शक्ति जगायें।

१२. भगवान् के शब्द आराम पहुंचाते और असीसते हैं, शांत करते और ज्योति प्रदान करते हैं और भगवान् के उदार हाथ उस परदे की एक तह को हटाते हैं जो अनंत ज्ञान को छिपाये हुए है।

१३. केवल भगवान् ही वह सहारा है जो कभी निराश नहीं करता।

१४. केवल भगवान् के बारे में ही सोचो और भगवान् तुम्हारे साथ होंगे।

१५. भगवान् वास्तव में वही हैं जो तुम अपनी गभीरतम अभीप्सा में उनसे आशा करते हो।

१६. चेतना, समता और प्रेम के विकास के साथ भगवान् की समीपता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमेशा बढ़ेगी।

१७. क्रिया अपने-आपमें नहीं बल्कि जिस भाव और चेतना से की जाती है वही उसे यौगिक क्रिया बनाते हैं।

१८. प्रश्न : भगवान् जो हम सबके अंदर और सभी चीजों में हैं, उन्हें पाने का अच्छे-से-अच्छा तरीका क्या है?

उत्तर : अभीप्सा।

नीरवता।

सौर चक्र के क्षेत्र में एकाग्रता।

जरूरत हो तो भगवान् से प्रार्थना।

मैं 'तुम्हारा' हूं। मैं 'तुम्हें' जानना चाहता हूं ताकि मैं जो कुछ भी करूं वह उसके सिवा कुछ न हो जो तुम मुझसे करवाना चाहते हो।

१९. किसी आध्यात्मिक उद्देश्य के लिये संकल्प-शक्ति द्वारा आरोपित नियंत्रण है तपस्या।

२०. तुम मनुष्य बनना तभी शुरू करते हो जब तुम उच्चतर और सत्यतर जीवन के लिये अभीप्सा करते हो और रूपांतर के नियंत्रण को स्वीकार करते हो। और इसके लिये तुम्हें अपनी निम्न प्रकृति और उसकी कामनाओं पर प्रभुत्व पाने से आरंभ करना चाहिये।

२१. मैं नहीं मानती कि गुफा की साधना आसान है—केवल, वहां कपट छिपा रहता है जब कि क्रिया-कलाप और जीवन में वह प्रकट हो जाता है। तुम गुफा में योगी से दीख सकते हो परंतु जीवन में छल-कपट ज्यादा कठिन है क्योंकि तुम्हें योगी की तरह व्यवहार **करना** पड़ता है।

२२. हम लक्ष्य पर जितने अधिक एकाग्र हों, वह उतना ही अधिक खिलता और यथार्थ होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३. हर एक से उसकी योग्यता और समझ के अनुसार बातें कही जाती हैं।

हो सकता है कि एक को दिया गया ज्ञान दूसरे के लिये उपयोगी या अच्छा न हो। यही कारण है कि गुरु की व्यक्तिगत शिक्षा औरों के आगे प्रकट नहीं करनी चाहिये।

२४. भागवत कार्य के लिये अपने उत्सर्ग में पूरी तरह **सच्चे** बनो। यह तुम्हारे बल और तुम्हारी सफलता को आश्वासन देगा।

२५. अगर तुम गंभीरता के साथ भगवान् से कहो, "मैं केवल तुझे ही चाहता हूं" तो भगवान् परिस्थितियों को इस तरह संजो देंगे कि तुम सच्चे बनने के लिये बाधित होगे।

२६. आध्यात्मिक उपलब्धि के लिये अटल सचाई और निष्कपटता ही सबसे अधिक निश्चित मार्ग है।

स्वांग मत करो, हो।

वचन मत दो, करो।

सपने मत देखो, चरितार्थ करो।

२७. भगवान् हमेशा उनके साथी होते हैं जो उत्साही और सच्चे हैं। जो सच्चे हैं, मैं उनकी सहायता कर सकती हूं और उन्हें आसानी से भगवान् के प्रति मोड़ सकती हूं। लेकिन जहां कपट हो वहां मैं बहुत कम ही कर सकती हूं।

२८. कोई भी आंतरिक द्वंद्व सचाई के अभाव का चिह्न है।

दीखने की अपेक्षा होना ज्यादा अच्छा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमां

भगवान् मानवता का रूप धारण करते हैं, बाहरी मानव स्वभाव को अपनाते हैं ताकि मनुष्यों के लिये रास्ता बना सकें, उन्हें राह दिखा सकें, लेकिन यह सब करते हुए वे भगवान् होना नहीं छोड़ते। एक अभिव्यक्ति रूप लेती है, बढ़ती हुई दिव्य चेतना का विकास होता है, मानव भगवान् में परिवर्तित नहीं होता। माताजी तो अपने बाल्यकाल से ही आंतरिक रूप से मनुष्यों से ऊपर थीं ...।

*

माताजी अतिमानस को नीचे उतार लाने के लिये आयी हैं, यह वह अवतरण है जो उनकी संपूर्ण अभिव्यक्ति को यहां संभव बनाता है।

२३.९.१९३५

*

हां, माताजी का शरीर धारण करना पार्थिव चेतना के लिये सुअवसर है ताकि पार्थिव चेतना अपने अंदर अतिमानस को ग्रहण कर सके और इसे संभव बनाने के लिये वह प्राथमिक आवश्यक रूपांतर से गुजर सके। बाद में अतिमानस आगे का रूपांतर साधित करेगा लेकिन समस्त पार्थिव चेतना अतिमानसभावापन्न नहीं हो जायेगी—पहले एक नयी जाति का प्रादुर्भाव होगा जो अतिमानस का प्रतिनिधित्व करेगी, उसी तरह जैसे मनुष्य मन का प्रतिनिधित्व करता है।

*

एक ही भागवत 'शक्ति' है जो समष्टि में और व्यष्टि में तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यष्टि और समष्टि के परे भी क्रिया करती है। माताजी इन सबका प्रतीक हैं, लेकिन वे यहां सशरीर इसलिये कार्य कर रही हैं ताकि जो चीज अब तक इस भौतिक जगत् में अभिव्यक्त नहीं हुई है उसे यहां उतार सकें जिससे यहां का जीवन रूपांतरित हो जाये—इसी कारण तुम्हें उन्हें उस भागवत शक्ति का रूप मानना चाहिये जो यहां रूपांतर के उस उद्देश्य को चरितार्थ करने के लिये कार्यरत है।

— श्रीअरविन्द

थोड़ी देर बाद का रास्ता

"थोड़ी देर बाद का रास्ता और आगामी कल की सड़क हमें सिर्फ कुछ भी नहीं के किले में ले जाते हैं।"

रास्ते के किनारे, रंग-बिरंगे फूल आंखों को हर्षित करते हैं। छोटे-छोटे पेड़ों पर लाल-लाल बेरियां गांठदार टहनियों पर चमक रही हैं और कहीं दूर, देदीप्यमान सूर्य अन्न की पकी हुई बालियों पर सोना चमका रहा है।

एक युवा पथिक झूमता-झामता, सवेरे की निर्मल हवा में आनंद से सांस लेता चला जा रहा है; वह प्रसन्न मालूम होता है, उसे भविष्य की कोई चिंता नहीं। वह जिस रास्ते पर चल रहा है वह एक चौराहे पर निकलता है जहां से कई रास्ते सभी दिशाओं में बंट जाते हैं।

युवक हर जगह, हर दिशा में, एक-दूसरे को काटते हुए पद-चिह्न देखता है। आकाश में सूर्य अधिकाधिक चमक रहा है; पेड़ों पर विहग गा रहे हैं; दिन के अत्यधिक मनोहर होने की पूरी संभावना है। बिना सोचे-विचारे पथिक सबसे नजदीक का रास्ता लेता है, बात व्यावहारिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगती है; क्षण-भर के लिये ख्याल आता है कि कोई और रास्ता भी तो चुना जा सकता था; लेकिन अगर यह रास्ता अंधी गली निकला तो लौटने के लिये काफी समय है; एक आवाज-सी सुनायी देती है जो उससे कहती है : "लौट चलो, लौट चलो, तुम ठीक रास्ते पर नहीं हो।" उसके चारों ओर जो कुछ है वह उसे बहुत अच्छा लगता है, मोहित कर रहा है। अब वह क्या करे? उसे नहीं मालूम। किसी निश्चय पर पहुंचे बिना वह आगे बढ़ता जाता है; उस क्षण के सुखों में वह खूब मजा ले रहा है। वह उस आवाज को उत्तर देता है : "बस जरा और, बस और थोड़ा-सा, फिर मैं इसके बारे में सोचूंगा। मेरे पास बहुत समय है।" उसके चारों ओर उगी जंगली घासें उसके कान में फुसफुसाती हैं : "थोड़ी देर बाद ... थोड़ी देर बाद ... हां, बाद में ... ।" जब सूर्य अपनी उष्मा-भरी किरणों से हवा को गरमाता है तो इस सुरभित वायु में सांस लेना कितना मधुर लगता है! हां, बाद में, थोड़ी देर बाद। और पथिक आगे बढ़ता चलता है; रास्ता चौड़ा होता जाता है। दूर से आवाजें सुनायी देती हैं : "तुम कहां जा रहे हो? बेचारे मूर्ख, तुम देख नहीं पाते कि तुम अपने विनाश की ओर जा रहे हो, तुम अभी इतने छोटे हो; आओ, आओ, हमारी ओर आओ, सुंदर, शुभ और सत्य की ओर आओ; नरम-नरम और आसानी के कारण गलत रास्ते पर न जाओ, वर्तमान को लेकर ही सो न जाओ; भविष्य के प्रति जागो।"—पथिक अरुचिकर आवाजों को उत्तर देता है : "बाद में, बाद में।" फूल उसे देखकर मुस्कुराते हैं और दोहराते हैं : "बाद में।" और रास्ता और भी चौड़ा होता जाता है। आकाश में सूर्य चोटी तक पहुंच चुका है; दिन प्रकाशमान है। रास्ता सड़क में बदल जाता है।

सड़क सफेद और धूल-भरी है; उसके किनारे भोज वृक्ष खड़े हैं; एक छोटी-सी नदी का कल-कल शब्द सुनायी दे रहा है; वह व्यर्थ में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारों ओर खोजता है पर उसे इस अनंत सड़क का कहीं अंत नहीं दिखायी देता।

युवक एक छिपी हुई बेचैनी-सी अनुभव करता है, चिल्लाता है : "मैं कहां हूं? मैं कहां जा रहा हूं? इसकी क्या परवाह! सोचा ही क्यों जाये? कुछ भी क्यों किया जाये? चलो, इस अंतहीन सड़क पर ही बेमतलब भटका जाये; चलो, चलते चलें। कल सोचेंगे।"

छोटे-छोटे पेड़ गायब हो गये; सड़क के किनारे बलूत लगे हैं; खाई आरंभ हो रही है जो दोनों ओर खोखला करती जाती है। पथिक को थकान नहीं लगी; वह मानों प्रलाप की अवस्था में आगे घसीटा जा रहा है।

खाई और गहरी होती जा रही है; बलूत के पेड़ों की जगह चीड़ ने ले ली; सूरज ने ढलना शुरू कर दिया। पथिक चारों ओर चकराया-सा देखता है; उसे खाई में लोटते हुए मानव आकार दिखाई देते हैं, कुछ चीड़ के पेड़ों से चिपके हैं तो कुछ सीधी चट्टान से और कुछ बाहर निकलती जड़ों से; उनमें से कुछ वापिस चढ आने के लिये भरसक कोशिश कर रहे हैं, लेकिन जैसे ही किनारे के पास आते हैं, वे मुंह फेर लेते हैं और मानों जानकर फिर जा गिरते हैं।

उदासी-भरी आवाजें पथिक से चिल्लाकर कहती हैं : "इस इलाके से भाग निकलो; चौराहे की ओर लौट जाओ; अभी समय है।" युवक सकुचाता है और फिर उत्तर देता है : "कल।" वह दोनों हाथों से अपना मुंह ढक लेता है ताकि खाई में लोटते शरीरों को न देख सके, वह सड़क पर दौड़ पड़ता है, उसमें आगे बढ़ते जाने का अदम्य आवेग है। अब उसे उद्देश्य जानने की परवाह नहीं है। माथे पर झुर्रियां और कपड़े अस्त-व्यस्त, वह निराशा-भरे साहस के साथ दौड़ा जा रहा है। आखिर, अपने-आपको उस मनहूस जगह से दूर मानकर वह आंखें खोलता है :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीड़ के पेड़ खतम हो चुके हैं। चारों ओर बस धूसर, बंजर, पथरीली जमीन हैं। सूरज क्षितिज के पीछे जा छिपा है और रात प्रकट हो रही है। सड़क एक अनंत रेगिस्तान में खो जाती है। पथिक निराश है, लंबी दौड़ के कारण थककर चूर हो गया है। वह वहीं रुकना चाहता है पर उसे चलना ही पड़ेगा। उसके चारों ओर खंडहर हैं; उसे दबी, घुटती हुई आवाजें सुनायी देती हैं; उसके पैर कंकालों में लड़खड़ाते हैं। दूर, उस ओर, कुहरा भयावने आकार ले रहा है; काले-काले ढेर कुछ खाके-से बना रहे हैं; कुछ विकृत, विशालकाय वस्तु धुंधला रूप ले रही है। पथिक इस लक्ष्य की ओर चलने की जगह उड़ना शुरू करता है। यह उसे अपने आगे ही प्रतीत होता है, परंतु फिर भी हमेशा उससे बच निकलता है। हिंसा-भरी, क्रूर चिल्लाहटें उसे आगे का रास्ता दिखाती हैं; वह इधर-उधर भूत-प्रेतों से भिड़ता जाता है।

आखिर उसे अपने आगे एक बहुत बड़ी इमारत दिखायी देती है, अंधेरी, सुनसान, विषाद-भरी—उन महलों में से एक जिनके बारे में लोग पीड़ा के साथ कहते हैं : "यह भुतहा महल है।" लेकिन युवक उस जगह के विषाद के बारे में नहीं सोचता। बड़ी, काली दीवारों, धूल-भरी जमीन और इन भयंकर, भीमकाय मीनारों का उसपर कोई असर नहीं होता। इन्हें देखकर उसके रोंगटे नहीं खड़े होते! वह सोचता है कि वह अपने लक्ष्य पर आ पहुंचा। वह सारी थकान, सारी उदासी और विषण्णता को भूल जाता है। महल की ओर बढ़ते हुए वह एक दीवार से छू जाता है और दीवार तुरंत ढह जाती है; उसके चारों ओर सब कुछ—मीनारें, परकोटे, प्राचीर, सब-के-सब धूल में डूब जाते हैं; जो धूल जमीन को ढके हुए थी उसपर परतें और बढ़ जाती हैं।

उल्लू, कौए और चिमगादड़ कर्कश आवाजें करते हुए बाहर निकल आते हैं और बेचारे पथिक के सिर के चारों ओर मंडराने लगते हैं। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मोहित-सा, हताश और थककर चूर, अपने स्थान से जकड़ गया है; अब जरा-सी गति करना भी असंभव है। अचानक, मानों इन बीभत्स, दिल दहलानेवाली चीजों की कमी पूरी करने के लिये उसे अपने आगे भयंकर भूत खड़े दिखायी देते हैं जिनके नाम हैं : बरबादी, निराशा, जीवन से घृणा। और इन खंडहरों के बीच उसे एक झांकी मिलती है आत्म-हत्या की जो अथाह खाई के ऊपर खड़ी है—रक्तहीन, उदास और खिन्न। ये सभी सांघातिक भूत उससे चारों ओर से चिमटे हैं और मुंह बाए खड़े जोखम की ओर ढकेलते हैं। अभागा आदमी इन दुर्धर्ष शक्तियों का सामना करना चाहता है। अब वह पीछे हटना चाहता है, बच निकलना चाहता है। जो अदृश्य भुजाएं उसे अपने में भरे हैं, जकड़े हुए हैं वह उनमें से निकल भागने की कोशिश करता है; लेकिन अब बहुत देर हो चुकी है। वह अब भी उस घातक खाई की ओर बढ़ रहा है। वह उससे आकर्षित, सम्मोहित है। वह पुकारता है, पर कोई आवाज उसे जवाब नहीं देती। वह भुतहा आकारों को पकड़ता है, लेकिन हर चीज उसके नीचे ढहती जाती है। निर्जीव आंखों से वह अपने चारों ओर के शून्य का अवलोकन करता है, वह पुकारता है, याचना करता है, लेकिन उत्तर में, उसके कानों में गूंज उठती है अशुभ, बीभत्स हंसी।

पथिक अब खाई के किनारे पर है। उसके सब प्रयास व्यर्थ हैं। एड़ी से चोटी का पूरा जोर लगाकर वह गिर पड़ता है ... अपने बिस्तर से।

एक युवा विद्यार्थी को अगले दिन के लिये एक लंबा निबंध तैयार करना था। सारे दिन के काम से वह कुछ थक गया था, उसने घर लौट कर अपने-आपसे कहा : "मैं बाद में काम कर लूंगा।" शीघ्र ही उसने सोचा कि अगर वह जरा जल्दी सो ले तो सवेरे जल्दी उठकर वह अपना काम पूरा कर लेगा। "चलो, सो जायें," उसने अपने-आपसे कहा। "मैं कल ज्यादा अच्छा काम कर सकूंगा, रात बहुत अच्छी सलाहकार होती है।" उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आशा न की थी कि उसकी बात इतनी सच्ची निकलेगी। उसकी नींद में उस दुःस्वप्न ने गड़बड़ कर डाली जिसका हम अभी वर्णन कर आये हैं। खाट से गिर कर वह चौंक पड़ा और अपने स्वप्न के बारे में सोचते हुए बोला : "सारी चीज कितनी सरल है : यह रास्ता था, 'थोड़ी देर बाद' का रास्ता, सड़क है आगामी 'कल' की सड़क और वह विशाल भवन था ... 'कुछ भी नहीं' का प्रासाद।" अपनी होशियारी पर फूला न समाया हुआ, युवक काम पर बैठ गया और अपने-आपसे दृढ़ प्रतिज्ञा की कि जो आज कर सकता है उसे कल पर कभी न टालेगा।

(१८९३) — श्रीमां

'श्रीमातृवाणी' खण्ड २, पृ. १-४

जापान की स्त्रियों से

...जापान में नारियों का सबसे महत्त्वपूर्ण काम है बच्चों का निर्माण। ... 'मातृत्व' ही स्त्री की सबसे प्रधान भूमिका है। लेकिन इस बात का अर्थ तभी समझ में आ सकता है जब हम मातृत्व शब्द का ठीक-ठीक अर्थ समझ लें। क्योंकि खरगोश की तरह सहज रूप में, बिना जाने-बूझे, मशीन की तरह बच्चे पैदा करते जाना निश्चय ही मातृत्व नहीं है। सच्चा मातृत्व सत्ता के सचेतन निर्माण से शुरू होता है। नये शरीर में बसने के लिये आनेवाली आत्मा के लिये सत्ता को तैयार करना मातृत्व है। इस तरह नारी का सच्चा क्षेत्र आध्यात्मिक है।

लेकिन इस बात को हम प्रायः भूल जाते हैं। केवल बच्चा पैदा करना और उसके लिये अवचेतन रूप से शरीर तैयार कर देना काफी नहीं है। सचमुच काम तब शुरू होता है जब विचार और संकल्प-शक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के द्वारा एक ऐसे चरित्र की कल्पना और निर्माण किया जाता है जो किसी आदर्श को मूर्त रूप देने में समर्थ हो। ...

ऐसे उदाहरण कम नहीं कि गर्भावस्था में कोई स्त्री किसी सुंदर चित्र या मूर्ति को बहुत देखा और सराहा करती थी और जब बालक उत्पन्न हुआ तो उसकी शकल उस चित्र या मूर्ति से बहुत मिलती-जुलती थी। स्वयं मैंने ऐसे बहुत-से उदाहरण देखे हैं। उनमें से दो छोटी लड़कियों का उदाहरण मुझे स्पष्ट रूप से याद है। दोनों जुड़वां बहनें थीं और पूर्ण रूप से सुंदर थीं; लेकिन आश्चर्य की बात यह थी कि वे अपने मां-बाप से जरा भी न मिलती थीं। उनकी शकलें अंग्रेज कलाकार रेनॉल्ड के प्रसिद्ध चित्र की याद दिलाती थीं। एक बार मैंने यह बात उनकी मां के सामने कह दी। उसने झट कहा, "है न, उस चित्र के जैसी शकलें! आपको यह जानने में दिलचस्पी होगी कि यह कैसे हुआ? जब ये लड़कियां गर्भ में थीं तो मेरे बिस्तर के ऊपर रेनॉल्ड के उस चित्र की एक बहुत सुंदर अनुकृति टंगी रहती थी। रात को सोने से पहले और सवेरे जागते ही मेरी नजर उसी चित्र पर पड़ती थी और मैं मन-ही-मन यह आशा किया करती थी कि मेरे बच्चों के चेहरे इस चित्र जैसे होंगे। आप देख सकती हैं कि मैं काफी सफल रही हूं।" सचमुच यह नारी अपनी सफलता पर गर्व कर सकती थी। उसका उदाहरण दूसरी स्त्रियों के लिये बहुत उपयोगी हो सकता है। ...

हम एकाग्रता और संकल्प-शक्ति के द्वारा, अपनी कल्पना के ऊंचे-से-ऊंचे आदर्श के अनुरूप जाति का निर्माण कर सकते हैं। इस प्रकार के प्रयास से मातृत्व सचमुच बहुमूल्य और पवित्र रूप ले लेता है। इस प्रकार नारीत्व साधारण पाशविकता और उसकी सहजवृत्तियों से ऊपर उठकर वास्तविक मानवता और उसकी शक्ति की ओर उठता है।

हम इस समय जगत् के इतिहास में एक असाधारण मोड़ पर जी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

रहे हैं। ... अगर हमें ऐसे अद्वितीय और अद्भुत काल में धरती पर जन्म लेने का अवसर मिला है तो क्या यह पर्याप्त है कि हम बैठे-बैठे होनेवाली घटनाओं को देखते रहें? ... इस काम में स्त्रियों की क्या भूमिका हो सकती है? ...

यह एक महान् निर्विवाद सत्य है कि महामानव नारी से जन्मेगा, लेकिन इस सत्य के आधार पर ही हमें फूल न उठना चाहिये। हमें स्पष्ट रूप से इसका अर्थ समझ लेना चाहिये और इससे आनेवाली जिम्मेदारियों को जान कर सच्चाई और उत्साह के साथ इस बड़े काम के लिये तैयार होना चाहिये ...

और यह बात करते ही हम उस बिंदु पर जा पहुंचते हैं जहां से चले थे। मेरा मतलब है सच्चे मातृत्व से। क्योंकि यह रूप, जिसका निर्माण धरती की वर्तमान परिस्थितियों को बदलने की क्षमता रखनेवाली आध्यात्मिक शक्ति को अभिव्यक्त करने के लिये किया जायेगा, उस नये रूप का निर्माण नारी नहीं करेगी तो कौन करेगा? ...

जो लोग नवयुग में मानवता के भावी की सबसे अधिक सहायता करेंगे वे वही होंगे जो आध्यात्मिक विकास को ही नियति और मानव जाति की सबसे बड़ी आवश्यकता के रूप में स्वीकार करेंगे। ...

इन व्यक्तियों में नारियों को ही सबसे पहले यह महान् परिवर्तन साधना होगा क्योंकि उनका विशेष कार्य है इस संसार में नयी जाति के पहले नमूने को जन्म देना। और यह कर सकने के लिये उसे न्यूनाधिक रूप से अपने विचारों में कल्पना करनी होगी कि इस आध्यात्मिक परिवर्तन का क्या परिणाम होगा। ...

— श्रीमां

'श्रीमातृवाणी' खण्ड २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच्चों को पालना

यह बात निश्चित है कि जन्म लेनेवाले बच्चे का स्वभाव बहुत कुछ उसे उत्पन्न करनेवाली माता पर, उसकी अभीप्सा और संकल्प पर निर्भर रहता है और जिस भौतिक वातावरण में वह निवास करती है उसका प्रभाव तो पड़ता ही है। मां को यह बात ध्यान में रखनी होगी कि उसके विचार सदा सुन्दर और शुद्ध हों, भाव उच्च और सूक्ष्म तथा चारों ओर का वातावरण यथासंभव सुसमंजस और अत्यंत सादगी से भरा हुआ हो। और अगर इसके साथ ही वह चेतन और निश्चित रूप से यह इच्छा भी रखे कि वह जिस ऊंचे-से-ऊंचे आदर्श को धारण कर सकती है उसी के अनुसार वह बच्चे को बनायेगी तो बच्चे को संसार में आने के लिये खूब उत्तम अवस्थाएं प्राप्त होंगी और उसके लिये अधिक-से-अधिक संभावनाएं खुल जायेंगी। यही नहीं, बल्कि ऐसी अवस्था में आगे आनेवाले कितने अधिक कठिन प्रयासों और निरर्थक जटिलताओं से बचा जा सकता है!

मैं माता-पिताओं को एक सलाह देना चाहती हूं, क्योंकि अधिकतर लोग विभिन्न कारणों से बच्चों की शिक्षा के विषय में बहुत कम सोचते हैं। जब वे संसार में एक बच्चे को जन्म दे देते हैं, जब वे उसके भोजन का प्रबन्ध तथा उसके स्वास्थ्य के लिये विभिन्न भौतिक आवश्यकताओं को पूरा कर देते हैं तब वे समझ लेते हैं कि उन्होंने अपना कर्तव्य पूरी तरह निभा दिया। और कुछ दिन बाद वे उसे विद्यालय में प्रविष्ट करा कर उसकी मानसिक शिक्षा का भार अध्यापक के हाथों में सौंप देते हैं।

कुछ माता-पिता ऐसे जरूर हैं जो अपने बच्चे को शिक्षा देने की चेष्टा करते हैं। पर इस विषय में अत्यंत तत्पर और सच्चे लोगों में भी बहुत थोड़े लोग यह जानते हैं कि बच्चे को शिक्षा देने की योग्यता प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने के लिये सबसे पहला कर्तव्य है अपने-आपको शिक्षा देना, अपने विषय में सचेतन होना और अपने ऊपर प्रभुत्व स्थापित करना, ताकि हम अपने बच्चे के सामने कोई बुरा उदाहरण न पेश करें। क्योंकि एकमात्र उदाहरण के द्वारा ही शिक्षा फलदायी बनती है। यदि हम अपने जीवंत उदाहरण के द्वारा अपनी सिखायी बातों का सत्य उसे न दिखा दें तो केवल अच्छी बातें कहने और बुद्धिमानी का परामर्श देने का, बच्चे पर बहुत थोड़ा प्रभाव पड़ता है। सच्चाई, ईमानदारी, स्पष्टवादिता, साहस, निष्काम-भाव, निःस्वार्थता, धैर्य, सहनशीलता, अध्यवसाय, शांति, स्थिरता, आत्म-संयम आदि सभी ऐसे गुण हैं जो सुंदर भाषणों की अपेक्षा अनंतगुना अधिक अच्छे रूप में अपने उदाहरण के द्वारा सिखाये जाते हैं। माता-पिताओ! एक ऊंचा आदर्श अपने सामने रखो और उसी आदर्श के अनुकूल सर्वदा कार्य करो। तुम देखोगे कि तुम्हारा बच्चा भी धीरे-धीरे उस आदर्श को अपने अंदर ला रहा है ...।

बहुत थोड़े लोगों को छोड़कर, प्रायः सभी माता-पिता इस बात का विचार नहीं करते कि उनके दोषों, आवेगों, दुर्बलताओं और आत्म-संयम के अभाव का उनके बच्चों पर कितना बुरा प्रभाव पड़ता है। अगर तुम चाहते हो कि तुम्हारा बच्चा तुम्हारा आदर करे तो अपने लिये आदर-भाव रखो और प्रत्येक मुहूर्त सम्मान के योग्य बनो। कभी स्वेच्छाचारी, अत्याचारी, असहिष्णु और क्रोधित मत होओ ...

एक भूल से तुम्हें और बचना होगा : जब तक कोई निश्चित उद्देश्य न हो और एकदम अनिवार्य न हो जाये तबतक कभी बच्चे को बुरा-भला मत कहो। बार-बार डांट-फटकार खाने से बच्चा उसके प्रति कुंद हो जाता है और फिर वह शब्दों और स्वर की कठोरता को बहुत अधिक महत्त्व नहीं देता। विशेषकर इस बात की सावधानी रखो कि ऐसे अपराध के लिये, जिसे तुम स्वयं करते हो, उसे कभी मत डांटो। बच्चों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की दृष्टि बड़ी पैनी और साफ होती है, वे बहुत जल्दी तुम्हारी दुर्बलताओं का पता लगा लेते हैं और उन्हें बिना किसी दयाभाव के नोट कर लेते हैं।

जब बच्चा कोई भूल कर बैठे तो अपनी ओर से ऐसा वातावरण उत्पन्न कर दो कि वह अपने-आप सरलता और सच्चाई के साथ उसे स्वीकार कर ले। और जब वह स्वीकार कर ले तब तुम दयालुता और प्रेम के साथ उसे समझा दो कि उसके कार्य में क्या भूल थी और उसे फिर दुबारा वैसा नहीं करना चाहिये, भय के द्वारा शिक्षा देना बड़ा खतरनाक तरीका है, यह सदा ही छल-कपट और असत्य को उत्पन्न करता है। स्पष्टदर्शी, सुदृढ़ पर साथ ही कोमल प्रेम और पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान विश्वास का बंधन पैदा करते हैं जो तुम्हारे बच्चे की शिक्षा को फलदायी बनाने के लिये अत्यंत आवश्यक होता है। और फिर, यह कभी न भूलो कि तुम्हें अपने कर्तव्य के शिखर पर स्थित रहने तथा उसे वास्तविक रूप में निभाने के लिये सदा और निरंतर ऊपर उठना होगा। बच्चे को जन्म देने के नाते ही तुम्हें उसके प्रति अपना कर्तव्य निभाना चाहिये।

— श्रीमां

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १२

भारत

भारत की आत्मा ही देश को एक कर सकती है।

बाहरी रूप में भारत के प्रदेश स्वभाव, प्रवृत्ति, संस्कृति और भाषा की दृष्टि से, एक-दूसरे से बहुत भिन्न हैं और कृत्रिम रूप से उन्हें एक करने का कोई भी प्रयत्न अनर्थकारी परिणाम ला सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन उसकी आत्मा एक है, आध्यात्मिक सत्य के प्रति, तीव्र सर्जन की तात्त्विक एकता और जीवन के दिव्य स्रोत के प्रति उसकी अभीप्सा तीव्र है। इस अभीप्सा के साथ एक होकर समस्त देश ऐसी एकता को फिर से स्थापित कर सकता है जिसका अस्तित्व उच्चतर मन के लिये कभी लुप्त नहीं हुआ।

*

समस्त सृष्टि में पृथ्वी का एक विशेष स्थान है क्योंकि दूसरे ग्रहों से भिन्न यह विकसनशील है और अपने केंद्र में एक चैत्य पुरुष को लिये हुए है। उसमें भारत विशेष रूप से भगवान् का चुना हुआ देश है।

*

सचमुच, सारे संसार में भारत ही एक ऐसा देश है जो अब भी इस बात के प्रति सचेत है कि भौतिक पदार्थ के अतिरिक्त कोई और चीज भी है। बाकी देश इसे भूल चुके हैं, चाहे यूरोप, अमरीका या दूसरा कोई देश, कोई भी क्यों न हो ...। इसी कारण भारत के पास अभीतक एक ऐसा संदेश है जिसकी उसे रक्षा करनी है, जिसे उसे जगत् को देना है। लेकिन इस समय भारत अव्यवस्था में छितरा हुआ छटपटा रहा है।

श्रीअरविन्द ने बताया है कि सत्य भौतिक जीवन से पलायन करने में नहीं है बल्कि उसके अंदर रहने में, उसे रूपांतरित करने में, उसे दिव्य बनाने में है ताकि भगवान् **यहां,** इस **भौतिक जगत्** में अभिव्यक्त हो सकें।

*

भारत का भविष्य एकदम स्पष्ट है। भारत जगत् का गुरु है। विश्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का भावी संगठन भारत पर निर्भर है। भारत एक जीवंत आत्मा है। भारत आध्यात्मिक ज्ञान को विश्व में मूर्तिमान् कर रहा है। भारत सरकार को इस क्षेत्र में भारत के महत्त्व को स्वीकार करना चाहिये और अपने कार्य को इसी के अनुसार सुयोजित करना चाहिये।

*

देश में एक ऐसा दल अवश्य होना चाहिये जो आध्यात्मिक ज्ञान के द्वारा भारत और विश्व की रक्षा करने की प्रबल और संहत संकल्पशक्ति का निर्माण करे। एकमात्र भारत ही विश्व में सत्य को ला सकता है। भागवत संकल्प और शक्ति को अभिव्यक्त करके एकमात्र भारत ही विश्व के सामने अपना संदेश प्रसारित कर सकता है, पर वह कार्य पश्चिम के जड़वाद का अनुकरण करने से नहीं होगा। भागवत इच्छा का अनुसरण करने पर भारत आध्यात्मिक पर्वत के शिखर पर जगमगा उठेगा, सत्य का मार्ग दिखायेगा और विश्व ऐक्य का संगठन करेगा।

*

वर्तमान संकटकाल में प्रत्येक भारतीय का आज क्या कर्तव्य है?

अपने तुच्छ अहंकारपूर्ण व्यक्तित्व के परे उठ जाओ और हम सब की भारत माता की सुयोग्य संतान बनो, अपने कर्तव्यों को ईमानदारी और सरलता से पूरा करो और भागवत कृपा पर अडिग विश्वास रख कर सर्वदा प्रसन्न और निश्चित बने रहो।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत, आधुनिक मानवजाति की सभी कठिनाइयों की प्रतीकात्मक मूर्ति बन गया है।

भारत उसके पुनरुत्थान का देश होगा—उच्चतर और सत्यतर जीवन के पुनरुत्थान का। भारत जगत् में अपना असली स्थान तभी लेगा जब वह पूर्ण रूप से भागवत जीवन का दूत बन जायेगा।

*

हे भारत, आध्यात्मिक ज्ञान और प्रकाश के देश! जगत् में अपने सच्चे कर्तव्य के प्रति सचेतन होओ और एकता तथा सामंजस्य का मार्ग दिखाओ।

— श्रीमां

योग

क्या आप योग के विषय में कुछ कहने की कृपा करेंगी?

तुम योग-साधना किसलिये करना चाहते हो? शक्ति प्राप्त करने के लिये? शांति और स्थिरता की प्राप्ति के लिये? मानवजाति की सेवा के लिये?

इनमें से कोई भी उद्देश्य यह दिखाने के लिये काफी नहीं है कि तुम इस योग-मार्ग के लिये हो।

तुम्हें जिस प्रश्न का उत्तर देना है वह यह है : क्या तुम भगवान् के लिये योग-साधना करना चाहते हो? क्या भगवान् ही तुम्हारे जीवन के परम सत्य हैं, यहांतक कि तुम उनके बिना रह ही नहीं सकते? क्या तुम यह अनुभव करते हो कि तुम्हारे जीवन का एकमात्र उद्देश्य भगवान् ही हैं और उनके बिना तुम्हारे जीवन का कोई अर्थ नहीं है? यदि ऐसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो तभी कहा जा सकता है कि तुम्हारे अंदर इस योग-मार्ग के लिये पुकार है।

सबसे पहली आवश्यक चीज है भगवान् के लिये अभीप्सा।

और दूसरी बात है इस अभीप्सा को सतत बनाये रखना, उसे सदा जीवंत, ज्वलंत और जाग्रत् रखना। और इसके लिये जिस बात की आवश्यकता है वह है एकाग्रता—भगवान् पर एकाग्रता जो उनके संकल्प और अभिप्राय के प्रति पूर्ण और निरपेक्ष आत्म-समर्पण के भाव से की गयी हो।

हृदय-केन्द्र में अपने-आपको एकाग्र करो। हृदय में प्रवेश करो, उसके अंदर जाओ, उसकी गहराई में उतरो और दूर तक, जितनी दूर तक तुम जा सको जाओ। अपनी चेतना के बाहर बिखरे हुए धागों को एकत्र कर लो, उन्हें समेट कर अन्दर डुबकी लगाओ और तह में जाकर बैठ जाओ।

वहां हृदय की गभीर शांति में एक अग्नि जल रही है। यही है तुम्हारे अन्तर में रहनेवाले भगवान् का दिव्य अंश—तुम्हारी सत्य सत्ता (हृत्पुरुष)। इसकी आवाज सुनो और इसके आदेश का पालन करो।

एकाग्रता के लिये दूसरे केन्द्र भी हैं, उदाहरणस्वरूप, एक केन्द्र मस्तिष्क के ऊपर है (सहस्रार), दूसरा भ्रू-मध्य में है (आज्ञा)। इनमें से हर एक का अपना प्रभाव है और हर एक किसी परिणाम पर पहुंचाता है। परंतु केंद्रीय पुरुष का स्थान हृदय है और हृदय से ही सब केंद्रीय प्रवृत्तियां निकलती हैं—यहीं से रूपान्तर के लिये समस्त गतिशीलता और वेग तथा आत्मदर्शन करने की शक्ति निकलती है।

जो अपने-आपको योग के लिये तैयार करना चाहता हो उसे क्या करना चाहिये?

सबसे पहले उसे सचेतन होना चाहिये। हम अपनी सत्ता के एक नगण्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से भाग में सचेतन हैं, इसके अधिकांश भाग में हम अचेतन हैं। यह अचेतना ही हमें अपनी प्रकृति के अपरिमार्जित भाग के साथ नीचे की ओर बांधे रहती है और उसके परिवर्तन या रूपांतर को रोकती है। अचेतना द्वारा ही अदिव्य शक्तियां हमारे अंदर घुस आती हैं और हमें अपना गुलाम बना लेती हैं। तुम्हें अपने बारे में सचेतन होना चाहिये, अपनी प्रकृति और प्रवृत्तियों के प्रति तुम्हें जाग्रत् होना चाहिये, तुम्हें यह जानना चाहिये कि तुम किसी चीज को क्यों और कैसे करते हो, कैसे सोचते या अनुभव करते हो। तुम्हें अपने प्रेरक भावों, आवेशों और अपनी गुप्त या प्रकट शक्तियों को, जिनकी प्रेरणा से तुम काम करते हो, समझना चाहिये। या यूं कहें कि तुम्हें अपनी सत्ता की मशीन के सभी कल-पुरजों को अलग-अलग करके जान लेना चाहिये। एक बार तुम सचेतन हो जाओ तो तुम खरे और खोटे की परख और छान-बीन कर सकोगे, तुम देख सकोगे कि कौन-सी शक्तियां तुम्हें नीचे की ओर खींचती हैं और कौन-सी ऊपर उठने में सहायता देती हैं। और जब तुम उचित को अनुचित से, सत्य को असत्य से, दिव्य को अदिव्य से अलग करके जान सको तो तुम्हें सख्ती से अपने इस ज्ञान के अनुसार चलना चाहिये, अर्थात्, दृढ़तापूर्वक एक को त्याग कर दूसरे को स्वीकार करना चाहिये। पग-पग पर ये द्वंद्व तुम्हारे सामने उपस्थित होंगे और पग-पग पर तुम्हें चुनाव करना होगा। तुम्हें धैर्य रखना होगा, लगन लगाये रखनी होगी और चौकन्ना रहना होगा—योगियों की भाषा में "निद्रारहित," जो कुछ भी दिव्य हो उसे स्वीकार करना और जो कुछ अदिव्य हो उसे किसी भी प्रकार का मौका देने से इंकार करना होगा।

क्या यह योग मनुष्यजाति के लिये है?

नहीं, यह भगवान् के लिये है। हमारी साधना का ध्येय मनुष्यजाति का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्याण नहीं है, हमारी साधना का हेतु है भगवान् की अभिव्यक्ति। हम भगवान् के संकल्प को कार्य में परिणत करने के लिये यहां हैं, बल्कि यह कहना अधिक सत्य होगा कि हम यहां इसलिये हैं कि भगवान् का संकल्प हमारे ऊपर कार्य कर सके, ताकि हम पुरुषोत्तम को उत्तरोत्तर मूर्तिमान् करने और पृथ्वी पर उनके राज्य की स्थापना करने के लिये उनके यंत्र बन सकें। मानवजाति का जो भाग इस भागवत पुकार का प्रत्युत्तर देगा केवल वही उनकी कृपा को प्राप्त करेगा।

...योग-साधना के दो मार्ग हैं, एक है तपस्या का और दूसरा है समर्पण का। तपस्या का मार्ग कठोर है, इस मार्ग में तुम सर्वथा अपने ऊपर ही निर्भर रहते हो, अपने निजी सामर्थ्य से ही आगे बढ़ते हो। तुम अपनी शक्ति के परिमाण में ही ऊंचे उठते हो और उसी के अनुसार फल पाते हो। इस मार्ग में नीचे गिरने का भय हमेशा लगा रहता है। और एक बार गिरे तो तुम गहरी खाई में जाकर चूर-चूर हो जाओगे और इसका इलाज शायद ही हो सके।

परंतु दूसरा मार्ग, समर्पण का मार्ग निरापद और निश्चित है। परंतु पश्चिमवालों को इसमें कठिनाई होती है। उन्हें यह शिक्षा मिली है कि वे उन सभी चीजों से डरें और बचें जो उनकी व्यक्तिगत स्वाधीनता पर हाथ बढ़ायें। वे व्यक्तित्व की भावना को अपनी माता के दूध के साथ-साथ पीते हैं। और समर्पण का अर्थ है इस सबका त्याग।

दूसरे शब्दों में, जैसा श्रीरामकृष्ण कहा करते थे, तुम बन्दर के बच्चे और बिल्ली के बच्चे, इन दो में से किसी एक के मार्ग का अनुसरण कर सकते हो। बन्दर के बच्चे को इधर-उधर ले जाये जाने के लिये अपनी मां की छाती से चिपक जाना पड़ता है, उसे अपनी मां को कसकर पकड़े रहना पड़ता है, और यदि कहीं उसकी मुट्ठी ढीली हो जाये तो वह गिर जाता है। दूसरी ओर, बिल्ली का बच्चा अपनी मां को नहीं पकड़ता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बल्कि मां ही उसे पकड़े रखती है, इसलिये उसे न कोई भय होता है न उसका कोई उत्तरदायित्व; उसे तो केवल इतना ही करना पड़ता है कि अपनी माता की पकड़ में आ जाये और "मां-मां" करता रहे।

इस समर्पण-मार्ग को यदि तुम पूर्ण रूप से और सच्चाई के साथ अपना लो तो कोई गंभीर कठिनाई या कोई भय नहीं रहता। प्रश्न केवल सच्चाई का है। यदि तुम सच्चे नहीं हो तो योग-साधना आरंभ मत करो। मानवी विषयों में धोखा-धड़ी चल सकती है और तुम उसमें कुछ हद तक सफल भी हो सकते हो किन्तु भगवान् के साथ व्यवहार करने में धोखे के लिये कोई स्थान नहीं है। हम भगवान् को धोखा नहीं दे सकते! तुम इस मार्ग पर तभी निरापद होकर यात्रा कर सकते हो जब तुम ऋजु, निष्कपट तथा पूरी तरह खुले हुए हो, जब तुम्हारा एकमात्र ध्येय भगवान् का साक्षात्कार करना, उन्हें पाना और उनके द्वारा परिचालित होना हो। ...

योग-मार्ग में क्या-क्या खतरे हैं? ...

योग खतरनाक अवश्य हो जाता है यदि वह अपने लिये या स्वार्थसिद्धि के लिये किया जाया। और इसके विपरीत, यदि तुम उसकी पवित्रता की भावना को लिये हुए और यह याद रखते हुए कि तुम्हारा लक्ष्य भगवान् को पाना है, योग करो तो फिर योग से किसी प्रकार का भय नहीं रहता, बल्कि वह साक्षात् क्षेम और सुरक्षा बन जाता है।

कठिनाइयां और खतरे तो तब उपस्थित होते हैं जब लोग भगवान् के लिये योग-साधना नहीं करते, बल्कि किसी शक्ति की प्राप्ति के लिये या योग की आड़ में किसी महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिये योग करते हैं। यदि तुम महत्त्वाकांक्षाओं से छुटकारा नहीं पा सकते तो इसका स्पर्श मत करो, यह आग है जो जला देती है ...।

('श्रीमातृवाणी' खण्ड ३ से)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिपूर्णताएं

श्रीमां अपने हाथ में सफेद चम्पा-पुष्प लिये
हैं और उसे दिखा रही हैं। उस फूल का नाम
उन्होंने "आंतरिक परिपूर्णता" दिया है।

किसको याद है?

(उसके दलों को गिनते हुए) एक, दो, तीन, चार, पांच आंतरिक परिपूर्णताएं हैं। ये पांच आंतरिक परिपूर्णताएं कौन-कौन-सी हैं?

श्रद्धा, सच्चाई, अभीप्सा, भक्ति, समर्पण।

...सभी परिपूर्णताओं में जो सर्वप्रथम है वह है सच्चाई। कारण, यदि सच्चाई न हो, तो मनुष्य आधा पग भी आगे नहीं बढ़ सकता। अतएव यह है पहली चीज और यह हमेशा यहां रहती है।

परंतु इसे एक दूसरे शब्द के द्वारा अनूदित करना संभव है, यदि कोई पसंद करे, और वह होगा "पारदर्शिता"। मैं इस शब्द की व्याख्या कर दूं :

कोई व्यक्ति मेरे सामने उपस्थित है और मैं उसकी ओर देखती हूं; मैं उसकी आंखों में देखती हूं। और यह व्यक्ति यदि सद्हृदय अथवा "पारदर्शक" होता है तो उसकी आंखों के द्वारा मैं उसके अन्दर पैठ जाती हूं और उसकी अंतरात्मा को देखती हूं—स्पष्ट रूप में। परंतु—ठीक यही अनुभव होता है—जब मैं किसी व्यक्ति की ओर निहारती हूं और थोड़ा-सा मेघ देखती हूं, तब मैं आगे बढ़ती हूं, मैं एक पर्दा देखती हूं, और फिर, कभी-कभी वहां एक दीवाल होती है और उसके बाद वहां कोई बिलकुल काली चीज होती है; और इन सबको पार करना होता है और छिद्र बनाने होते हैं जिनमें से होकर और आगे बढ़ा जाये; और उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाद भी मैं निस्संदिग्ध नहीं होती कि अंतिम क्षण में मेरे सम्मुख कोई कांसे का दरवाजा नहीं उपस्थित हो जायेगा जो इतना मोटा होगा कि मैं उसके पार कभी नहीं जा सकूंगी और न उसकी अंतरात्मा को देख सकूंगी, तब, ऐसे व्यक्ति के विषय में मैं तुरत कह सकती हूं कि वह सच्चा नहीं है। परंतु मैं लाक्षणिक रूप में यह भी कह सकती हूं कि वह पारदर्शक नहीं है। यही है पहली चीज।

उसके बाद एक दूसरी चीज है जो स्पष्ट ही उतनी ही अनिवार्य है यदि कोई प्रगति करना चाहे : वह है श्रद्धा का होना। अथवा दूसरा शब्द लें, जो प्रतीत तो होता है अधिक सीमित पर मेरे लिये अधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि (यह अनुभव का प्रश्न है) यदि तुम्हारी श्रद्धा भगवान् के प्रति पूर्ण विश्वास से निर्मित नहीं है तो तुम्हें यह धारणा हो सकती है कि तुम्हारे अंदर श्रद्धा है और फिर भी तुम भागवती शक्ति या भगवत्कृपा पर अपना पूरा विश्वास खो देने, अथवा भगवान् का जो विश्वास तुम पर है उसे खो देने के पथ पर हो सकते हो। ये तीन रास्ते की बाधाएं हैं :

जिन लोगों में भगवान् पर श्रद्धा होती है—जिसे वे अटूट श्रद्धा कहते हैं—और जो यह कहते हैं : "स्वयं भगवान् ही सब कुछ कर रहे हैं, वे सब कुछ कर सकते हैं; जो कुछ मुझमें, दूसरों में, सर्वत्र हो रहा है वह सब भगवान् का ही काम है और भगवान् के सिवा और किसी चीज का नहीं," वे यदि इस प्रकार के तर्क के साथ इसका अनुसरण करते हैं तो कुछ समय बाद वे भगवान् पर अत्यंत दहलानेवाले कुकर्मों का दोषारोपण करते हैं, उन बुराइयों के लिये 'उनपर' दोष लगाते हैं जो जगत् में होती हैं और 'उन्हें' एक वास्तविक, क्रूर और भयावह दानव बना देते हैं—यदि उनमें विश्वास नहीं होता।

अथवा यदि उनमें श्रद्धा होती है, तो वे अपने-आपसे कहते हैं : "सचमुच मुझे भगवान् पर श्रद्धा तो है, पर यह जगत्, मैं भली-भांति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देख सकता हूं कि यह कैसा है! सबसे पहले तो मैं इतना अधिक दुःख भोग रहा हूं, ठीक है न? मैं बहुत दुःखी हूं, अपने सभी पड़ोसियों से बहुत अधिक दुःखी हूं"—कारण, मनुष्य सर्वदा अपने सभी पड़ोसियों से कहीं अधिक दुःखी होता है—"मैं बहुत दुःखी हूं, और सचमुच, जीवन मेरे प्रति कठोर है। परंतु फिर भगवान् तो देवता हैं; वे सर्व-कृपालु, सर्व-उदार, सर्व-सामंजस्यमय हैं, तो यह कैसी बात है कि मैं इतना दीन-दुःखी हूं? वे अवश्य ही शक्तिहीन होंगे; अन्यथा इतना कृपालु होने पर वह मुझे इतना अधिक कैसे दुःख-कष्ट भोगने देते?"

यही है दूसरी बाधा।

और तीसरी है : ये ऐसे लोग होते हैं जिनमें, हम कह सकते हैं, एक प्रकार की विकुंचित और अतिरंजित विनयशीलता या विनम्रता होती है और जो अपने-आपसे कहते हैं : "निश्चय ही भगवान् ने मुझे बाहर फेंक दिया है, मैं किसी काम के लायक नहीं हूं, वे मेरे साथ कुछ नहीं कर सकते, मेरे लिये बस एकमात्र कार्य है, इस खेल को ही बंद कर देना, क्योंकि वे मुझे अपने योग्य नहीं समझते!"

अतएव, जबतक मनुष्य अपनी श्रद्धा के साथ भगवत्कृपा के प्रति समग्र और पूर्ण विश्वास को नहीं जोड़ देता, तबतक कठिनाइयां अवश्य रहेंगी। इस कारण दोनों ही चीजें आवश्यक हैं।

अब, हमने इस तालिका में "भक्ति" को रखा है। हां, भक्ति बहुत ठीक है, पर जबतक इसके साथ अन्य कई वस्तुएं नहीं होतीं यह भी कई भूलें कर सकती है। इसके सामने भी महान् कठिनाइयां उपस्थित हो सकती हैं।

एक व्यक्ति में भक्ति है और वह अपना अहं बनाये रखता है। और तब उसका अहं भक्ति के वश उससे सभी प्रकार के कार्य कराता है और ऐसी चीजें कराता है जो भयंकर रूप से अहंकारपूर्ण हैं। कहने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तात्पर्य, वह एकमात्र अपने विषय में ही सोचता है और न तो दूसरों के विषय में, न जगत् के विषय में, न इस विषय में सोचता है कि क्या किया जाना चाहिये—वह बस अपनी भक्ति की बात सोचता है। और वह बड़ा भारी अहंकारी बन जाता है। और इसलिये, जब उसे पता लगता है कि भगवान्, किसी विशेष कारणवश, उसकी भक्ति का उतने ही उत्साहपूर्वक उत्तर नहीं देते जितने उत्साह की वह उनसे आशा करता था तो वह निराश हो जाता है और उन्हीं तीन कठिनाइयों में फिर जा गिरता है जिनकी मैं अभी चर्चा कर रही थी : या तो भगवान् निर्दय हैं–हमने इसे पढ़ा है, ऐसी अनेक कहानियां हैं, उन उत्साहपूर्ण भक्तों की जो भगवान् को गालियां देते हैं क्योंकि वे अब उतने उदार और उनके समीप नहीं होते जितने पहले थे, वे पीछे हट गये हैं; "क्यों तूने मुझे त्याग दिया है? तूने मेरा पतन करा दिया है, ऐ राक्षस! ..." वे ऐसा कहने का साहस नहीं करते, पर ऐसा सोचते हैं—या फिर वे कहते हैं : "ओह! मैंने अवश्य ही कोई इतनी भारी भूल कर दी होगी जिसके कारण मुझे दूर फेंक दिया गया है," और वे निराशा के गर्त में जा गिरते हैं।

परंतु एक दूसरी क्रिया है जो निरंतर भक्ति के साथ बनी रहनी चाहिये ...। इस प्रकार की कृतज्ञता का भाव कि भगवान् का अस्तित्व है; चमत्कारपूर्ण कृतज्ञता की यह भावना जो इस तथ्य के कारण ही तुम्हें वास्तव में महान् हर्ष से भर देती है कि भगवान् हैं, विश्व में कोई वस्तु है जो भगवान् है, ठीक वह भयंकरता ही नहीं है जिसे हम देखते हैं, भगवान् हैं, भगवान् विद्यमान हैं। और जब-जब अत्यंत मामूली चीज भी तुम्हें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में, दिव्य सत्ता के इस उच्च 'सत्य' के संपर्क में ला देती है, तुम्हारा हृदय इतने तीव्र, इतने अलौकिक हर्ष से, एक ऐसी कृतज्ञता से भर जाता है जिसमें अन्य समस्त चीजों की अपेक्षा सबसे अधिक आनंदपूर्ण रस होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी कोई चीज नहीं जो तुम्हें कृतज्ञता से प्राप्त हर्ष के समान हर्ष प्रदान करे। हम एक पक्षी को गाते हुए सुनते हैं, एक सुन्दर-सा पुष्प देखते हैं, एक नन्हें-से बच्चे को निहारते हैं, उदारता के एक कार्य की ओर दृष्टिपात करते हैं, एक आकर्षक वाक्य पढ़ते हैं, अस्तोन्मुख रवि को देखते हैं, इसका कोई महत्त्व नहीं कि वह क्या चीज होती है, एकाएक यह चीज तुम्हें अभिभूत कर देती है, इस प्रकार का भावातिरेक—निस्संदेह इतना गभीर, इतना तीव्र—कि संसार भगवान् को अभिव्यक्त कर रहा है, कि जगत् के पीछे कोई वस्तु है जो भगवान् है।

अतएव मैं समझती हूं कि कृतज्ञता के बिना भक्ति एकदम अपूर्ण होती है, भक्ति के साथ-साथ कृतज्ञता अवश्य होनी चाहिये।

मुझे याद है कि एक बार हमने एक परिपूर्णता के रूप में साहस की चर्चा की थी; मुझे याद है कि इसे एक तालिका के अंदर लिखा भी गया था। परंतु वह एक ऐसा साहस है जिसमें एक सर्वोच्च साहसिक कार्य का शौक होता है। और सर्वोच्च साहसिकता का यह शौक है अभीप्सा —वह अभीप्सा जो तुम्हें पूर्णतः अपने अधिकार में कर लेती है और बिना कोई हिसाब लगाये, बिना कुछ बचाये और पीछे हट आने की किसी संभावना के बिना, तुम्हें भागवत खोज के महान् साहसिक कार्य में, दिव्य मिलन के महान् साहसिक कर्म में, और भागवत उपलब्धि के और भी महत्तर साहसिक कार्य में फेंक देती है; मनुष्य स्वयं अपने-आपको बिना पीछे ताके और एक क्षण भी यह पूछे बिना कि क्या होनेवाला है अपने-आपको इस साहसिक कार्य में झोंक देता है। क्योंकि कोई यदि पूछता है कि क्या होनेवाला है तो वह कभी प्रारंभ नहीं करता, वह सदा धरती से चिपका रहता है, वहां गड़ा रहता है, कोई वस्तु खो देने, अपनी समतोलता को खो देने के भय से त्रस्त रहता है।

यही कारण है कि मैं साहस की बात करती हूं—परंतु वास्तव में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह अभीप्सा की बात है। ये दोनों साथ-साथ रहते हैं। सच्ची अभीप्सा ऐसी चीज है जो साहस से भरी रहती है।

और अब आता है समर्पण, अंग्रेजी में शब्द है 'सरेण्डर' (Surrender), फ्रेंच भाषा में कोई शब्द नहीं, जो ठीक-ठीक वही अर्थ प्रदान करता हो। परंतु श्रीअरविन्द ने कहा है—मैं समझती हूं कि हमने इसे पढ़ा है—कि योग करने के लिये समर्पण सबसे पहली और चरम शर्त है। अतएव, उन्होंने जो कुछ कहा है उसका यदि हम अनुसरण करें तो यह ठीक कोई एक आवश्यक गुण नहीं है : यह तो योग आरंभ करने की सबसे पहली अनिवार्य स्थिति है। यदि किसी ने संपूर्ण रूप से समर्पण करने का निश्चय नहीं किया है तो प्रारंभ नहीं कर सकता।

परंतु इस समर्पण को सर्वांगपूर्ण बनाने के लिये ये सभी गुण आवश्यक हैं। और मैं एक और जोड़ रही हूं—क्योंकि अभीतक हमने केवल उनमें से चार की ही चर्चा की है—मैं सहिष्णुता को जोड़ रही हूं। कारण, यदि तुम हतोत्साह हुए बिना और प्रयास छोड़े बिना—क्योंकि वह अत्यंत कठिन है—कठिनाइयों का सामना करने में समर्थ नहीं हो; और यदि तुम असमर्थ ... हां, आघातों को ग्रहण करने और फिर भी प्रयास जारी रखने में, आघातों को जैसा कहा जाता है "पी जाने" में—अपने दोषों के फलस्वरूप जब आघात पाते हो, उन्हें पी जाने और निरुत्साह हुए बिना आगे बढ़ना जारी रखने में—असमर्थ होते हो, तो तुम बहुत दूर तक आगे नहीं जाते; प्रथम मोड़ पर ही, जहां तुच्छ अभ्यस्त जीवन आंख से ओझल हो जाता है, तुम निराशा में जा गिरते हो और प्रयास छोड़ देते हो।

इसका रूप...कैसे इसे कहा जाये? इसका अत्यंत स्थूल रूप है अध्यवसाय। जबतक तुम एक ही चीज को हजारों बार फिर से आरंभ करने का संकल्प न करो ...। जानते हो, लोग निराश होकर मेरे पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आते और कहते हैं : "मैंने तो समझा था कि यह हो चुका पर मुझे फिर से आरंभ करना होगा!" और यदि उनसे कहा जाता है : "परंतु यह तो कुछ नहीं, तुम्हें शायद फिर से सौ बार, दो सौ बार, हजार बार प्रारंभ करना होगा; तुम एक पग आगे बढ़ते हो और समझते हो कि सुरक्षित हो गये, परंतु सर्वदा कोई चीज बनी रहेगी जो उसी कठिनाई को थोड़े दिन बाद वापस ले आयेगी। तुम समझते हो कि तुमने समस्या हल कर ली, तुम्हें उसे फिर एक बार हल करना होगा; वह तुम्हारे सामने ऐसे उपस्थित होगी जो देखने में तो भिन्न होगी, पर होगी वही समस्या," और यदि तुमने निश्चय नहीं किया है कि : "यदि वह लाखों बार वापस आये तो मैं उसे लाखों बार हल करूंगा, पर इसे समाप्त करके ही छोड़ूंगा," तो हां, तुम योग नहीं कर सकोगे। यह एकदम अनिवार्य है।

लोगों को बहुत सुन्दर अनुभव होता है और वे कहते हैं : "आह! अब मुझे यह मिल गया!" ... और तब वह बैठ जाता है, कम हो जाता है, आवृत हो जाता है और अकस्मात् कोई अप्रत्याशित, एकदम सामान्य और देखने में बिलकुल अरुचिकर वस्तु तुम्हारे सामने आ उपस्थित होती है और तुम्हारा रास्ता बंद कर देती है। और तब तुम कहते हो : "आह! प्रगति करने से भला क्या लाभ यदि यह चीज पूरी-की-पूरी फिर से प्रारंभ हो रही है? मैं इसे क्यों करूं? मैंने प्रयास किया, सफलता पायी, एक विशेष बिंदु पर पहुंच गया, और अब ऐसा लग रहा है मानों मैंने कुछ नहीं किया था! यह सब सचमुच बेकार बात है।" क्योंकि तुममें सहिष्णुता नहीं है।

यदि किसी में सहिष्णुता है तो वह कहता है : "यह ठीक है। बहुत अच्छा, जितनी बार आवश्यक होगा उतनी बार मैं इसे फिर से आरंभ करूंगा; हजार बार, दस हजार बार, लाख बार यदि जरूरी हो तो मैं इसे फिर से आरंभ करूंगा—परंतु मैं अंततक जाऊंगा और किसी चीज में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह शक्ति नहीं होगी जो मुझे रास्ते में रोक दे।"

यह बहुत जरूरी चीज है। बहुत जरूरी।

अतएव, यहां मेरा प्रस्ताव है : हम समर्पण को रखते हैं सबसे पहले, सबसे ऊपर, अर्थात्, हम श्रीअरविन्द की कही हुई बात स्वीकार करते हैं कि पूर्णयोग की साधना करने के लिये व्यक्ति को सबसे पहले भगवान् के प्रति पूर्ण रूप से समर्पण करने का संकल्प करना चाहिये, दूसरा कोई पथ नहीं है, 'यही है एकमात्र पथ'। परंतु उसके बाद मनुष्य के अंदर ये पांच आंतरिक गुण, पांच आंतरिक परिपूर्णताएं अवश्य होनी चाहियें और हम कहते हैं कि ये परिपूर्णताएं हैं :

सच्चाई या पारदर्शकता

श्रद्धा या विश्वास (स्वभावतः भगवान् में विश्वास)

भक्ति या कृतज्ञता

साहस या अभीप्सा

सहिष्णुता या अध्यवसाय।

सहिष्णुता का एक रूप है 'एकनिष्ठता'। अपने संकल्प के प्रति वफादार, विश्वासपात्र बनना। तुमने एक संकल्प किया है, तुम अपने संकल्प के प्रति वफादार बने रहते हो। यही है सहिष्णुता।

बस, इतना ही।

यदि तुम डटे रहते हो तो फिर एक क्षण ऐसा आता है जब तुम विजय प्राप्त कर लेते हो।

विजय उसी की होती है जो सतत प्रयत्नशील होता है।

'श्रीमातृवाणी" खण्ड ८
पृ. ३९-४६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From :

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विगत कल की सिद्धियां आगामी कल की उपलब्धियों की ओर छलांग लगाने के लिये लचकदार तख्ता हों।

—श्रीमां

PRAKASH TRADERS

INDO BURMA PETROLEUM CO. LTD.

Ambala Road, SAHARANPUR - 247001 (U. P.)

Phone : 643553

BRANCH :

Kalashpur, Saharanpur

Phone : 513207

PROP : VIJAY SINGHAL

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R.N. 18135/70
Postal Regn. No. TN/PMG(CCR)/108/03–05 AND WPP No. 40.

A new world, based on Truth and refusing the old slavery to falsehood, wants to take birth.

In all countries there are people who know it, at least feel it.

To them we call:

"Will you collaborate?"

1972 THE MOTHER

WITH BEST COMPLIMENTS OF:

DEORAH SEVA NIDHI

(Charitable Trust Dedicated to Service)

25, Ballygunge Park
Rajanigandha 13E
Calcutta - 700 019

Posting Dates of Agnishikha
25th and 26th of every month
Please do not forget to write your Subscriber No.

If undelivered please return to —
Agnishikha
Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry – 605 002

एक प्रति : रु. ७.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

सन्देश

हम कभी अकेले नहीं होते। भगवान् हमेशा हमारे साथ होते हैं। यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम उनकी उपस्थिति के बारे में सचेतन हों।

आशीर्वाद।

१ जनवरी १९७३ — श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय :

२४ नवम्बर १९२६ की शाम

हमने माताजी और श्रीअरविन्द के प्रथम साक्षात्कार के समय देखा कि माताजी ने अपने ध्यान में आते कृष्ण को साक्षात् देखा। उस प्रथम साक्षात्कार के बाद माताजी श्रीअरविन्द के साथ साधना करने के लिये पांडिचेरी में ही बस गयीं। जिस तरह तेओं की पत्नी ने माताजी को "तुम 'वह' हो" कहा था, उसी तरह श्रीअरविन्द ने माताजी को पहचान लिया था। बचपन से प्रकाश को अपने अंदर बुलानेवाली मीरा और बरसों से तपस्यारत श्रीअरविन्द, दोनों ने एक साथ साधना शुरू की तो वह तीव्र साधना अभूतपूर्व परिणाम अवश्य लायी। एक दिन श्रीअरविन्द के साथ रहनेवाले चौबीस साथियों को २४ नवम्बर की शाम को बुलाया गया।

हम देखें उन भाग्यशाली व्यक्तियों को कैसी अनुभूति हुई जब उन्होंने उस अविस्मरणीय दृश्य को देखा। श्री पुराणी लिखते हैं, "श्रीअरविन्द जिस दरवाजे से बरामदे में आते थे, उसपर एक रेशमी कपड़ा लगा था जिसपर तीन चीनी 'ड्रैगन' कढ़े थे। वे एक दूसरे से जुड़े हुए थे। चीन में यह मान्यता है कि जब पृथ्वी, अंतरिक्ष और आकाश में विचरते विराट् 'ड्रैगन' एक दूसरे से मिलेंगे तब पृथ्वी पर सत्य प्रकट होगा।

"वातावरण में गभीर मौन छाया हुआ था। हर व्यक्ति अपने सिर पर दबाव अनुभव कर रहा था। वातावरण में विद्युत्-शक्ति फैली हुई थी। ऐसे वातावरण में दरवाजे के पीछे दस्तक सुनायी दी। उत्सुकता की बाढ़ उमड़ आयी। माताजी और श्रीअरविन्द दरवाजे पर दिखायी दिये। माताजी ने मूक संकेत किया कि श्रीअरविन्द आगे चलें। श्रीअरविन्द ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मौन से ही उन्हें आगे चलने की सूचना दी। गौरव से धीरे-धीरे माताजी ने कदम बढ़ाया। उनके पीछे गंभीर गति से श्रीअरविन्द भी आये। श्रीअरविन्द अपनी कुर्सी पर बैठ गये तब माताजी श्रीअरविन्द की दायीं ओर रखे छोटे स्टूल पर बैठ गयीं।

"पूर्ण नीरवता : स्पंदित सजीवता, दिव्यता से उभरती नीरवता ! पैंतालिस मिनट तक सब ध्यान में डूबे रहे। प्रत्येक व्यक्ति माताजी को प्रणाम करता, माताजी की आशीर्वाद की मुद्रा के साथ-साथ श्रीअरविन्द भी अपना हाथ उठाते रहते।

"ध्यान के समय सबको एक दिव्य झरने के उतरने की अनुभूति हुई। ध्यान के बाद सब लोग मानों दिव्य स्वप्न से जाग उठे। तब उस ध्यान और दृश्य की भव्य अनुभूति, उसकी काव्यात्मकता और सौंदर्य का हमें पता चला। यह संसार के एक कोने में हुई मामूली घटना न थी, यह तो पृथ्वी की चेतना में एक ऊर्ध्व चेतना का अवतरण था। इस मौन ध्यान में महान् आध्यात्मिक कार्य के बीज बोये गये थे।"

एक अन्य शिष्य रजनी पलित ध्यान के बाद लिखते हैं "श्रीअरविन्द भव्य, सर्वज्ञ, सम्राट् सदृश दीखते थे। सारे विश्व के शहनशाह, वनराज-सा मस्तक, विशाल चक्षु जो कहीं दूर से देख रहे हों, अनासक्त, बलवान्, सब के प्रति दया रखते हुए वे अंदर आये। संपूर्ण शरीर आनंद और प्रकाश से भरा हुआ था।

"माताजी मानों प्रेम, करुणा, निर्मलता, सौंदर्य, यौवन, कृपा की साक्षात् मूर्ति थीं। उनकी आंखें पार्थिव सृजन को करुणा से निहार रही थीं। वे विश्वजननी, ईश्वर की शक्ति जैसी दीख रही थीं।"

वह दिन, २४ नवम्बर १९२६, शुभ दिन था। उस दिन श्रीकृष्ण की चेतना भौतिक स्तर पर उतर आयी और श्रीअरविन्द का शरीर उसका आधार बन गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही वह सिद्धि है जो माताजी और श्रीअरविन्द की तपस्या से प्राप्त हुई थी।

पांच वर्ष की मीरा जिस ज्योति का अनुसरण करती रही उसका अवतरण इतने वर्षों के बाद हुआ। माताजी के शुभागमन के कारण सिद्धि-प्राप्ति शीघ्र संभव हो पायी थी।

— अनुवेन

भूल सुधार

अग्निशिखा जनवरी २००३ के सम्पादकीय में द्रोणाचार्य की मृत्यु का जो उल्लेख किया गया है उसमें लेखिका ने गलती से अर्जुन का नाम दे दिया है जब कि होना चाहिये था धृष्टद्युम्न का नाम।

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा ... ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के ४० रु. और पुरोधा के ५० रु. शीघ्र भेजें। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायेगा, न ही अगला अंक वी. पी. पी. से जायेगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो ८०० रु. देकर अग्निशिखा के और १,००० रु. देकर पुरोधा के आजीवन सदस्य बन सकते हैं। आजीवन सदस्यता २० वर्ष के लिये मानी जायेगी।

संपर्क सूत्र—पुरोधा एवं अग्निशिखा
श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

मार्च

१. वास्तव में शुद्ध और निःस्वार्थ प्रेम से अधिक सुखी बनानेवाली दूसरी कोई चीज नहीं है।

२. सच्चा दिव्य प्रेम सभी झगड़ों से ऊपर है। यह अपरिवर्तनीय आनंद और शांति में प्राप्त पूर्ण एकत्व का अनुभव है।

३. राधा भगवान् के प्रति प्रेमभरे आत्मनिवेदन का प्रतीक है।

४. प्रेम करने का अर्थ अधिकार करना नहीं, बल्कि अपने-आपको देना है।

५. अत्यधिक निंदा अत्यधिक प्रशंसा से अधिक अच्छी नहीं है। सच्ची विनम्रता तो इसमें है कि अपने बारे में विचार न किया जाये और भगवान् को ही हमारा सच्चा मूल्य आंकने दिया जाये।

६. यदि तुम अपना काम एक श्रद्धांजलि के रूप में करो, जिसे तुम पूरी सच्चाई के साथ भगवान् के चरणों में अर्पित करते हो, तो वह काम उतना ही लाभदायी बन जायेगा जितना कि ध्यान।

७. मनुष्य जो काम करता है उसपर नहीं, बल्कि उसके पीछे के मनोभाव पर सब कुछ निर्भर है।

यदि पूरी सच्चाई के साथ भगवान् की संकल्पशक्ति को अभिव्यक्त करने के लिये ही कर्म किया जाये तो ऐसा कोई भी कर्म नहीं जो अहंभाव से पूरी तरह अछूता न रह सके। परंतु जबतक यह अवस्था प्राप्त न हो तबतक कुछ कर्म ऐसे हैं जो भगवान् के साथ संपर्क बनाने में अधिक सहायक होते हैं।

८. यौगिक जीवन इस बात पर निर्भर नहीं कि मनुष्य क्या करता है, बल्कि इस बात पर निर्भर है कि वह कैसे करता है; मेरे कहने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का मतलब, कार्य का उतना मूल्य नहीं है जितना मनोभाव का, अथवा उस वृत्ति का जिससे मनुष्य कार्य करता है। लोग जिन्हें महान् कार्य कहते हैं उन्हें मिथ्या गर्व या अभिमान के साथ करने की अपेक्षा बर्तन धोते हुए या खाना परोसते हुए अपने-आपको पूरी तरह भगवान् को दे सकने पर तुम भगवान् के अधिक निकट पहुंच सकते हो।

९. बिना आत्म-संयम के भौतिक स्तर पर कुछ भी सिद्ध करना असंभव है। यदि तुम्हारा हृदय नियमित रूप से और निरंतर, धड़कन के कठोर संयम के अधीन होना न चाहे तो तुम पृथ्वी पर जी ही न सकोगे। जिन्होंने महान् सिद्धियां प्राप्त की हैं वे सदा महान् संयमी पुरुष थे।

१०. बिना अध्यवसाय के कुछ भी नहीं हो पाता।
किसी चीज को इसलिये नहीं छोड़ देना चाहिये कि वह कठिन है, बल्कि वह जितनी ही कठिन हो उतना ही अधिक उसमें सफलता पाने का संकल्प होना चाहिये।
समस्त चीजों में सबसे कठिन है भौतिक जगत् में भागवत चेतना को ले आना। तो क्या हमें इस कठिनाई के कारण इस कार्य को छोड़ देना चाहिये?

११. हमारा रास्ता बड़ा लम्बा है, और यह अत्यावश्यक है कि हम प्रत्येक पग पर यह पूछे बिना कि हम आगे बढ़ रहे हैं या नहीं, शांति के साथ आगे बढ़ते रहें।

१२. एकमात्र भगवान् ही रोग को दूर कर सकते हैं। हमें एकमात्र उन्हीं के अंदर सहायता और अवलंब खोजना चाहिये, एकमात्र उन्हीं पर हमारी सारी आशाएं लगी रहनी चाहियें।

१३. चिंतित मत होओ, केवल अपने अंदर और अच्छा करने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकल्प को सर्वदा बनाये रखो।

१४. भय नहीं करना चाहिये—भय बुरा सलाहकार है; वह एक चुम्बक की तरह कार्य करता है और जिससे हम भयभीत होते हैं उसे ही आकर्षित करता है। अटल निश्चय बनाये रखो, देर हो या सवेर, सब कुछ ठीक ही होगा।

१५. निराशावादी होने से इसके सिवा कभी और कोई फल नहीं होता कि मनुष्य ठीक उन्हीं चीजों को अपने ऊपर खींच लाता है जिनसे वह डरता है। इसके विपरीत, यह जरूरी है कि सब तरह के निराशाभरे विचारों को दूर भगाकर केवल उसी विषय में सोचने पर जोर दो जिसे तुम पसंद करते हो।

१६. दुःखी मत होओ। एक ही लड़ाई को कई-कई बार जीतने की सर्वदा आवश्यकता होती है, विशेषकर उस समय जब वह प्रतिकूल शक्तियों के विरुद्ध हो। इसलिये तुम्हें धैर्यरूपी शस्त्र से सज्जित होना चाहिये तथा अंतिम विजय में विश्वास बनाये रखना चाहिये।

१७. मौन रहने से कोई बुराई होने का खतरा नहीं रहता, जब कि बोलते समय दस में से नौ बार मूर्खतापूर्ण बात करना संभव है।

१८. स्वास्थ्य एक गभीर सामंजस्य की बाहरी अभिव्यक्ति है, हमें उसपर गर्व होना चाहिये और उससे घृणा नहीं करनी चाहिये।

१९. आशा या श्रद्धा को कभी नहीं खोना चाहिये—कोई रोग ऐसा नहीं जो असाध्य हो, भगवान् की शक्ति के लिये हम कोई सीमा नहीं बांध सकते।

२०. हर शुभ संकल्प को बढ़ावा देना चाहिये, क्योंकि ऐसी कोई प्रगति नहीं जो धैर्य और सहनशीलता से साधित न हो सके।

२१. मेरे लिये सुसंस्कृत रुचि का अर्थ है सरल और सच्चा होना।

२२. सभी छात्रों को यह सिखाना चाहिये कि वे जो कुछ करें अच्छी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरह करने के आनंद से करें, चाहे वह बौद्धिक काम हो या कलात्मक या शारीरिक, और विशेषकर यह सिखाना चाहिये कि काम कैसा भी क्यों न हो, यदि उसे यत्न और कुशलता से किया जाये तो उसकी अपनी गरिमा है।

२३. सच्ची मनोवृत्ति तो यह होनी चाहिये कि जीवन सतत अध्ययन का क्षेत्र है जहां सीखना यह सोचकर कभी बंद नहीं करना चाहिये कि हमें जो कुछ जानना चाहिये वह सब हम जानते हैं। हम सदा अधिक सीख सकते हैं और ज्यादा समझ सकते हैं।

२४. परम प्रभु, 'पूर्ण चैतन्य', केवल तू ही ठीक-ठीक जानता है कि हम क्या हैं, हम क्या कर सकते हैं, हमें क्या प्रगति करनी है जिससे हम तेरी सेवा के योग्य और समर्थ हो सकें जैसा कि हम चाहते हैं। हमें अपनी संभावनाओं के प्रति सजग-सचेतन बना, अपनी कठिनाइयों के प्रति भी ताकि हम निष्ठा के साथ तेरी सेवा करने के लिये उनपर विजय पा सकें।

२५. भगवान् का सच्चा सेवक बनने में ही परम आनंद है।

२६. सर्वोत्कृष्ट अनुशासन है भगवान् के प्रति पूर्ण समर्पण और भावना में या क्रिया-कलाप में कहीं भी किसी चीज का समावेश न हो। इस समर्पण से कुछ भी न बच पाये—यही चरम और कठोर अनुशासन है।

२७. सुख की खोज में जाना निश्चय ही अपने-आपको दुःखी करने का सबसे अच्छा उपाय है।

२८. प्रत्येक वस्तु चेतना और आत्म-संयम में विकास करने का अवसर हो सकती है। और विकास कर सकने का यह प्रयत्न तत्काल कार्य को, वह चाहे जो भी हो, रोचक बना देता है।

२९. अगर तुम सच्चे, ईमानदार और निष्कपट हो तो मेरी सहायता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूर तुम्हारे साथ रहेगी और एक दिन तुम उसके प्रति सचेतन हो जाओगे।

३०. चैत्य पुरुष मनुष्य में भगवान् का प्रतिनिधि है। ... भगवान् कोई दूसरी चीज या पहुंच के बाहर नहीं हैं। भगवान् तुम्हारे अंदर हैं परंतु तुम उनके बारे में सचेतन नहीं हो।

३१. तुम शीघ्र ही अपनी सब कठिनाइयों से बाहर निकल आओगे। उच्चतर चेतना की ओर बस एक ही अच्छी छलांग लगाओ, जहां सब समस्याओं का समाधान हो जाता है, और तुम अपनी कठिनाइयों से बाहर हो जाओगे।

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

चंपकलाल की इस सफाई के आग्रह के बारे में एक बात तो यह है कि माताजी ने स्वयं उन्हें सफाई तथा सलीके से काम करना सिखाया था, और फिर चम्पकलाल का परिवार रूढ़िवादी था, ऊपर से पुरोहित। पिता शास्त्रों की सभी परंपराओं का पालन करते आये थे। दूसरी ओर हम उनके साथी, आधुनिक थे, हमारे विचार नयी स्वतंत्रता के थे इसलिये कभी-कभी उनके और हमारे बीच संघर्ष और विरोध उठ खड़ा होता। चंपकलाल अपने चरित्र के एक पक्ष में बच्चे जैसे संवेदनशील और भावुक भी थे, इसलिये हम लोग उन्हें परेशान करना नहीं चाहते थे, हम उनकी भावनाओं को ठेस न लगे इसकी बहुत सावधानी बरतते रहते। वे मजाक या घुमा-फिरा कर कही हुई बात समझ न पाते। एक दिन चंपकलाल ने अपने चरित्र के इस पक्ष के बारे में श्रीअरविन्द ने माताजी से जो बात कही थी उसका वर्णन किया। बात यूं थी : घटना तब की थी जब वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम में रहने के विचार से आ चुके थे। उनके पिता ने श्रीअरविन्द को चिट्ठी लिखी थी कि चंपकलाल की शादी तय हो चुकी है, उन्हें केवल शादी की रस्म निभानी होगी। उसके बाद वे आश्रम लौट पायेंगे। श्रीअरविन्द ने गंभीर स्वर में कहा, "मेरे ख्याल से हमें चंपकलाल को भेजना पड़ेगा।" चंपकलाल यह सुनकर बड़े व्याकुल हो उठे। तब श्रीअरविन्द ने हंसकर कहा, "वह मजाक नहीं समझता।"

चंपकलाल जानते थे कि छोटे-छोटे काम प्रभु से कैसे करवाये जायें, जैसे पुस्तक पर आशीर्वाद लिखवाना या फोटोग्राफ पर उनके हस्ताक्षर करवाना। चंपकलाल विनती करते तो श्रीअरविन्द कभी उनकी विनती अस्वीकारते नहीं। माताजी भी अपने भक्त की ऐसी इच्छाएं हमेशा पूरी कर देतीं। वे अपने "सबसे अधिक निष्ठावान् बालक" की इच्छापूर्ति कर ही देतीं।

एक दिन चंपकलाल ने श्रीअरविन्द के पदचिह्न लेने की ठानी किंतु वे उन्हें किसी तरह परेशान या तंग किये बिना, उन्हें बताये बिना ही चिह्न लेना चाहते थे। हठात् उनके दिमाग में बिजली-सा विचार कौंधा। उन्होंने कागज और पेंसिल तैयार रखे। जैसे ही श्रीअरविन्द आकर कुरसी पर बैठे उन्होंने श्रीअरविन्द के चरण तले कागज सरका दिया, फिर पूछा, "मैं आपके चरणचिह्न अंकित कर लूं?" श्रीअरविन्द ने न केवल अनुमति दी बल्कि उस अंकित कागज पर बाद में "प्रेम और आशीर्वाद" भी लिख दिया। हमें यह न भूलना चाहिये कि चंपकलाल कलाकार थे। वे जब अपनी दृष्टि में श्रीअरविन्द की कोई सर्वांगसुंदर मूर्तिवत् मुद्रा देखते तो आनंद-विभोर हो उठते और हमें अपने आनंद में साथ देने के लिये बुलाते। वे कहते, "काश, कोई फोटोग्राफर इस अद्भुत मुद्रा का चित्र खींच पाता!" माताजी ने एक बार कहा था, "उसकी सहज प्रतिभा बहुत उच्च स्तर तक पहुंच चुकी है।" अपने जन्म-दिवस पर एक बार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंपकलाल ने एक कागज पर दो कमलों की चित्रकारी की थी जिसमें एक श्वेत था और दूसरा लाल। उन्होंने वह चित्र माताजी को अर्पित किया, वे देखकर बहुत प्रसन्न हुईं और उसे लेकर श्रीअरविन्द के पास गयीं। उसपर कुछ लिखने का अनुरोध किया। श्रीअरविन्द ने श्वेत कमल के नीचे लिखा, "अदिति, दिव्य माता।" और माताजी ने लाल कमल के नीचे लिखा, "अवतार"। लिखने के बाद माताजी ने चंपकलाल से कहा कि यह चित्र किसी को भी न दिखाये क्योंकि लोग समझ न पायेंगे कि उसका अर्थ क्या है।

चंपकलाल श्रीअरविन्द तथा श्रीमां--दोनों के स्मृति-चिह्न, जैसे उनके केश, नाखून और दांत के अभिभावक थे। मच्छर भगाने के लिये जो गुंजल जलाते थे उन्होंने उसकी राख तक संजोकर रख ली है। राख से जुड़ी एक मजेदार घटना हुई। हमारे साथ संध्या के वार्तालाप के समय माताजी एक दिन एक तार लेकर आयीं। उसमें श्रीअरविन्द से अनुरोध किया गया था कि वे अमुक व्यक्ति की शादी के अवसर पर 'राख' भेजने की कृपा करें। हम सब असमंजस में पड़ गये कि इस तार का अर्थ क्या है! पुराणी के दिमाग में अन्तर्भासिक बुद्धि जाग उठी, उन्होंने कहा, "शायद वह शब्द आशीष होगा जो अंग्रजी में 'एशेज़' में बदल गया।" श्रीअरविन्द ने कहा, "अच्छा! मैं समझा! मैं सोच रहा था कि राख मैं कैसे ले जाऊंगा, अपने सिर पर उठाकर! हां, मैं चंपकलाल की संजोयी हुई मच्छरमार गुंजल की राख उन्हें भेज सकता हूं। मैं सिगार पीना न छोड़ता तो उसकी राख भी भेज सकता।"

मैं बताना चाहता हूं कि एक दिन विशेष कृपा का पात्र मैं कैसे बना। जब श्रीअरविन्द मुंह धोते तब चंपकलाल और मैं उनकी सेवा में रहते थे। मैं गरारे करने का कटोरा लिये खड़ा था, उन्होंने कुछ देने का संकेत दिया तो मैंने अपना दूसरा हाथ आगे बढ़ाया और उन्होंने कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहे बिना, मेरी ओर देखे बिना, हाथ पर कुछ धर दिया। मैं रोमांचित हो उठा और रोशनी की ओर जाकर देखना चाहता था कि कहीं उनका दांत तो नहीं है! सच, उनका दांत ही था! किसी और काम में व्यस्त चंपकलाल को मैंने दांत दिखाया। देखकर उनकी आंखें अचरज से बड़ी-बड़ी हो उठीं। धीरे-धीरे उन्होंने मुझसे इस विशेष उपहार की बात निकलवा ली। मैंने वह उपहार सावधानी से रखने के लिये उन्हें दे दिया। बाद में कई बार मेरे विरल भाग्य की उन्होंने चर्चा की थी और स्वयं उससे वंचित रहने की चर्चा भी वे किया करते थे। सच कहा जाये तो ये चीजें चंपकलाल के क्षेत्र की मानी जाती थीं किंतु भगवान् कभी-कभी हमारे नियमों और अधिकारों की अवज्ञा करते हैं। ऐसी कई घटनाएं हमने बाद में भी देखीं किंतु ये घटनाएं आंतरिक दृष्टि की बातें थीं, इसलिये किसी बुद्धिसंगत प्रमाण को उस आंतरिक सत्य के सामने प्रस्तुत करना कोई मायने नहीं रखता। इसका प्रमाण तो वह व्यक्ति है जिसके साथ ऐसी घटना होती है। वही समझता है कि उसकी आंतरिक अभीप्सा ने भगवान् का प्रत्युत्तर पा लिया। मैं एक उदाहरण देना चाहता हूं। मैं आगे कह चुका हूं कि जब श्रीअरविन्द ने अपने पांव की दुर्घटना के बाद चलना शुरू किया तो बैसाखी की जगह वे पुराणी और चंपकलाल का सहारा लेकर चलते थे। कई महीनों के बाद वे केवल चंपकलाल का सहारा लेकर चलने लगे। चंपकलाल श्रीअरविन्द की बांयी ओर खड़े होते और दांयी ओर श्रीअरविन्द लाठी रखते थे। चंपकलाल अपनी सेवा से कभी चूकते न थे, न अवसर छोड़ते थे। अगर ऐसी गलती करते तो चंपकलाल न होते। मेरी तीव्र इच्छा हो रही थी कि चंपकलाल की तरह श्रीअरविन्द का हाथ अपने कंधे पर रखकर, उनके साथ मैं भी चल पाऊं, कम-से-कम एक बार तो चल ही पाऊं! मैं स्वभाव से संकोची हूं, मुझे यह भी लग रहा था कि मेरा हल्का-फुल्का शरीर उस दिव्य शरीर के भार को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठाने के लिये बहुत ज्यादा कमजोर है। अतः मैंने अपनी इच्छा को दबा दिया। एक दिन हुआ ऐसा कि श्रीअरविन्द के चलने का जो निश्चित समय था माताजी उससे बहुत पहले आ गयीं और चंपकलाल वहां न थे। केवल मैं ही उपस्थित था, अब क्या करें? मैंने उत्तेजित होकर आश्चर्य से माताजी को कहते सुना, "तुम उनको सहारा दे सकते हो!" धड़कते दिल से बहुत सावधान होकर मैं श्रीअरविन्द की बांयी ओर बिस्तर पर बैठ गया। उनकी कमर पर मैंने अपना दांया हाथ रखा, उन्होंने अपना बांया बाहु मेरे कंधे पर रखा और खड़े हो गये। हमने एक या दो ही चक्कर काटे होंगे कि चंपकलाल दौड़ते हुए आ पहुंचे। इस अप्रत्याशित दृश्य को देखकर चंपकलाल की भावनाएं कैसी रही होंगी उसकी मैं कल्पना कर सकता हूं। मैं तुरंत हट गया और चंपकलाल अपने स्थान पर आ गये। मुझे लगता है कि तब प्रभु को असीम राहत मिली होगी! किंतु मेरे लिये वह क्षणिक कोमल-मखमली स्पर्श अविस्मरणीय है। अगर मेरी ऐसी हालत हुई तो पता नहीं पुराणी और चंपकलाल का क्या हाल होता था जो कई महीनों तक प्रभु को सहारा देते रहे! किसी ने उस स्पर्श के बारे में ठीक ही कहा था कि हमें चंपकलाल के कंधों को सोने से मढ़ना चाहिये! हम सबको जैसे हम चाहते थे, वैसे प्रभु के साथ अपने-अपने अवसर अवश्य मिले। हमने अंतर मन में जिस किसी चीज की अभीप्सा की थी उसका प्रत्युत्तर अवश्य मिला। उस अद्‌भुत सत्य का साक्षी वही हो सकता है जिसे इस तरह की कृपा का अनुभव हुआ हो। जैसा भगवान् ने कहा है, "ये यथा मामं प्रपद्यन्ते" वैसी ही भक्त और भगवान् की दिव्य लीला होती है!

मैं और एक उदाहरण देना चाहता हूं जिसे पढ़कर बुद्धिमान् लोग मेरा मजाक उड़ायेंगे और मुझे धर्मत्यागी की उपाधि से विभूषित करेंगे! उसमें आश्चर्य क्या? मैं भी तो एक बार भौतिकवादी था न! मैंने एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार कहा था कि 'सावित्री' का श्रुतलेख देते समय श्रीअरविन्द अपने मुंह में एक पिपरमिन्ट रखते थे। चंपकलाल का काम था, जब वे चाहें तो उन्हें एक पिपरमिन्ट देना। चंपकलाल प्रतीक्षा करते रहते—निश्चित समय बीत जाने के बाद भी प्रतीक्षा करते रहते, कभी-कभी वे जल्दी ही भोजन करके दौड़ आते ताकि अवसर न चूक जायें। एक दिन मैंने सोचा, "मुझे कम-से-कम एक बार तो यह अवसर मिल जाये कि श्रीअरविन्द मुझसे कुछ मांगें।" किन्तु अगर मेरे मित्र को फुसफुसा कर भी बुलाया जाये, फिर वे कमरे के दूर कोने में क्यों न हों फिर भी सुनकर वे दौड़े हुए आते। मेरी मौन प्रार्थना को श्रीअरविन्द ने सचेतन रूप से या अचेतन रूप से सुनकर एक दिन प्रत्युत्तर दिया। चंपकलाल के आने के समय से पूर्व ही श्रीअरविन्द ने 'पेस्तिल' (पिपरमिन्ट) मांगी, मैंने भाव-विभोर होकर दे दी। निश्चित समय पर चंपकलाल आये और प्रतीक्षा करते रहे कि कब उन्हें बुलाया जायेगा। मैंने अपना चेहरा निर्दोष, सीधा, सरल बनाए रखा किन्तु बीच-बीच में नटखट, शरारती मुस्कान मुझे धोखा देती रही। अंत में बहुत खीजकर चंपकलाल ने मुझसे पूछा, "बात क्या है? वे 'पेस्तिल' क्यों नहीं मांग रहे?" मैं हंसी रोक न पाया। वे समझ गये, पूछने लगे, कब, किस समय 'पेस्तिल' मांगी थी, किसने दी इत्यादि। इन छोटी-छोटी घटनाओं में हम आपस में शरारतें करते रहते, कभी-कभी हमारे और प्रभु के बीच भी शरारतें होती रहतीं। अगर लोग मुझे अति-विश्वासी, भोला-भाला मान लें तो मैं विरोध न करूंगा। ऐसे लोग मेरा वर्णन पढ़कर भावुक भक्तों के भावोद्गार ही मानते होंगे। ये घटनाएं यही दर्शाती हैं कि मैं चंपकलाल को सच्चा भक्त क्यों मानता हूं और उनकी सेवा में सच्ची सेवा का सच्चा रूप क्यों देखता हूं। अपने अंतिम समय पर प्रभु ने चंपकलाल का बार-बार आलिंगन किया था, उसमें आश्चर्य की बात नहीं है। इस दृश्य को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखनेवाले हम सब परिचारक-गण सानंद आश्चर्यमुग्ध हो रहे थे।

कई आलोचक मेरे द्वारा खींचे हुए चंपकलाल के इस गुलाबी चित्र को देखकर उसे पूरी तरह कांटों से बचा हुआ चित्र मानते होंगे। हां, कांटे हैं उनमें भी, किस व्यक्ति में कांटे नहीं होते? १९३५ में चंपकलाल से मेरा परिचय न के बराबर था। मैंने श्रीअरविन्द को चिट्ठी लिखी, "चंपकलाल दवाखाने पर आये थे, उनके साथ तू-तू मैं-मैं का मेरा जोरदार विस्फोट हुआ। मुझे विश्वास है कि वे यह घटना माताजी को सुनाएंगे।" उनका उत्तर आया, "चंपकलाल साधारणतः ऐसी बातें माताजी को नहीं बताते; उनके लिये इस तरह के विस्फोट आम हैं और फिर जब गर्म लोहा लोहे से टकराये तब ग्रीष्म का मध्याह्न आ जाता है।" चंपकलाल स्वयं अपनी त्रुटियों को जानते थे और उनके लिये पछताते भी थे। वे कभी निराशा के कगार पर आ जाते तो कहते—भागवत कृपा के बिना मनुष्य के लिये अपना स्वभाव बदलना असंभव है। मेरे साथ आपे से बाहर होने के बाद वे अपने विस्फोट के लिये दुःखी हो उठते, हालांकि उनका क्रोध अकारण न होता, फिर भी वे कहते, "तुम बुरा न मानना, तुम मेरे स्वभाव से परिचित तो हो ही।" वे फिर से अपना वही मधुर रूप धारण कर लेते। उनकी प्रकृति में शिवजी के भोलेनाथ के रूप का पुट अवश्य था और वे कहते कि वे अपने पिछले जन्म में अवधूत होंगे। उन्होंने बार-बार माताजी से प्रार्थना की कि उनके स्वभाव की इस त्रुटि को वे दूर करें।

वे स्पष्टवादी और सीधे, सरल थे—माताजी स्वयं इस बात की गवाही देती हैं। वे किसी तरह का कपट सह न पाते थे। वे किसी तरह के मिथ्यात्व के साथ समझौता नहीं कर पाते थे। संसार के सामान्य तौर-तरीके से वे पराये थे। उनकी आभासी कठोरता और बदमिजाज स्वभाव उनके अटल, दृढ़ स्वभाव से उभरते हैं। यह रुजहान उनको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी-कभी व्यक्तियों को गलत समझने से बचा न पाता था। अगर हम उन्हें उनकी गलती बताते तो वे कभी अपनी गलती को ढकने की कोशिश नहीं करते। मैं मानता हूं कि जब चारों ओर उद्देश्यों और स्वार्थों का ऐसा मिश्रण हो तब ऐसे किसी व्यक्ति का होना आवश्यक है जो सच्चा, कठोर और इस्पात-सा सुदृढ़ हो। वे स्वर्ग के द्वारपाल का कार्य करते थे। श्रीअरविन्द की कविता, "कोई भी स्वर्ग न पायेगा जिसने नर्क न पार किया हो" इस पंक्ति की "पैरोडी" मैं ऐसे करता हूं, "कोई माताजी तक न पहुंच पायेगा जिसने चंपकलाल को न पार किया हो!"

स्वर्ग का मार्ग आसान हो इसलिये कम-से-कम स्वर्ग का आशीर्वाद आसानी से पाने के लिये चंपकलाल का हस्तक्षेप अनिवार्य है। कभी यदि माताजी किसी को जन्म-दिवस का कार्ड देने से किसी कारण से झिझकती हों, किसी का नाम या जन्मदिन के कार्ड पर "प्रेम और आशीर्वाद" न लिखें या किसी को उसके जन्मदिवस पर मिलने से इंकार करें तो चंपकलाल उनकी दिव्य करुणा से प्रार्थना करते और उनके निश्चय को रद्द करवा देते। कभी-कभी माताजी उनसे पूछतीं, "क्या लिखूं?" उनका उत्तर होता "क्यों माताजी, प्रेम और आशीर्वाद लिखिये ना!" वे कहते थे कि बचपन में उन्होंने बहुत दुःख पाये क्योंकि लोग उनके स्वभाव को समझ न पाते थे अतः अब वे भागवत उपहार को जब और जहां भी संभव हो बांटना चाहते हैं। बहुत लोग उनके प्रति कृतज्ञ हैं क्योंकि चंपकलाल के कारण उन्हें माताजी के आशीर्वाद प्राप्त हुए थे। बस एक ही शर्त होती थी कि वे स्पष्टवादी और ऋजु हों। कभी अगर उन्हें महसूस होता कि किसी अनजान और निरभिमानी व्यक्ति पर ध्यान दिया नहीं गया है, उसे अनदेखा कर दिया गया है तो वे अपनी लीक से हटकर उसकी सहायता अवश्य करते थे। संक्षेप में, श्रीअरविन्द के प्रयाण के बाद उनके जीवन का "मिशन" था माताजी की सेवा करना,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी देख-भाल करना और उनका प्रेम और उनकी करुणा, बिना भेद-भाव के सबको प्राप्त करवाना— फिर कोई अमीर हो या गरीब, योग्य हो या अयोग्य, युवा हो या वयोवृद्ध। मैं चंपकलाल का यह गुलाबी रेखाचित्र श्रीअरविन्द की उनके बारे में कही एक उक्ति से पूरा करूंगा, "सबकी अपनी-अपनी त्रुटियां होती हैं किंतु चंपकलाल में ऐसे गुण हैं जिनसे उनकी त्रुटियों की क्षतिपूर्ति हो जाती है।"

—नीरदवरण

काश, मैंने ...

"काश! मैंने अपने पिताजी की बात मान ली होती," मैंने दीर्घ निःश्वास के साथ कहा। बात यह है कि मैं विद्यार्थी-अवस्था में बहुत ज्यादा पढ़ाकू था। 'खेलोगे-कूदोगे होगे खराब' पर मुझे पूरा विश्वास था और पढ़-लिखकर नवाब बनना ही मुझे प्रिय था। परिणाम क्या हुआ? मैंने दिन को दिन न समझा, रात को रात न माना, सारे समय मैं भला और मेरी किताबें भलीं। परिणाम वही हुआ जो हो सकता था। कच्ची आयु में ही मेरी आंखें खराब हो गयीं और आंखों की कमजोरी भविष्य की ओर खुलते हुए हर मार्ग में बाधा बनकर खड़ी होने लगी। मैं हर बार यही सोचा करता, "काश! मैंने पिताजी का कहना माना होता और अपने शरीर की इस तरह उपेक्षा न की होती!

शास्त्रों में कितनी अच्छी-अच्छी बातें लिखी हैं! मैंने क्या नहीं पढ़ा? प्राचीन शास्त्र पढ़े, आधुनिक लेखकों की रचनाएं पढ़ीं, तिरुक्कुरल पढ़ा और भर्तृहरि-शतक भी कंठस्थ कर लिया। लेकिन इन सबका मेरे जीवन पर क्या असर पड़ा? आज भी जब मुझे ताव आते हैं तो घरवाले थर-थर कांपने लगते हैं, आज भी मैं अंधेरे में बाहर निकलते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डरता हूं। मैं अपने-आप जो मरजी करूं पर कोई और मेरे ऊपर चिल्लाये तो मेरा दिल धड़कने लगता है। काश! मैंने भर्तृहरि की शिक्षा को जीवन में उतारा होता। लेकिन अब क्या हो सकता है?

मैं घूमने जा रहा था। आज सवेरे से ही मन में बड़ा उत्साह था और न जाने क्यों मन अपने-आपमें न समा रहा था। अचानक मैंने देखा, तालाब के किनारे भीड़ लगी है। सवेरे-ही-सवेरे इतनी भीड़ देखकर मेरा माथा ठनका। उधर जाकर क्या देखता हूं, एक चौदह-पंद्रह वर्ष का लड़का तैरने के लिये उतरा था। तालाब में बहुत प्रकार की बेलें थीं, उनमें जा फंसा था और अब सहायता के लिये बुरी तरह चिल्ला रहा था। उसके स्वर-में-स्वर मिलाकर बहुत-से लोग किनारे पर खड़े-खड़े चिल्ला रहे थे। लेकिन हमारे इलाके में यह बात फैली हुई थी कि यह तालाब हर वर्ष एक बलि लिया करता है। तो तैरना जानते हुए भी अपनी बलि देने कौन उतरता? मैं बुढ़िया पुराण की बातों पर विश्वास नहीं करता पर ...काश! मैंने समय रहते तैरना सीख लिया होता। इस बच्चे को बचाकर कितना आनंद होता मुझे। पर ...

ऐसी घटनाएं हमारे जीवन में रोज ही घटा करती हैं। हम दिन में कितनी बार सुना करते हैं, "काश! हमने यह किया होता और यह न किया होता।" ये निराशा की बातें हैं जो हमारे जीवन को गिराने में बहुत सहायक होती हैं। इनसे पस्त हिम्मती आती है, अविश्वास आता है और जीवन के प्रति अरुचि पैदा होती है। परंतु आश्चर्य न कीजिये, मनुष्य को इस प्रकार का जीवन पसंद आता है, अपने जीवन के खोये हुए अवसरों की चर्चा हमें बहुत प्रिय होती है। हमें अपनी असफलताओं के लिये एक आकर्षण होता है। जैसा कि किसी कवि ने कहा है : "छीन न लेना पाप पोटली, मेरा जीवन सार, हर लोगे सरकार!"

आशावादी इससे उलटा होता है। वह असफलता को असफलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं मानता, मार्ग में आनेवाली बाधाएं उसके साहस को बढ़ाती हैं—"बढ़ता है और उनका रुकने से दरिया।" इस प्रकार की भी दो-एक घटनाएं सुनिये :

आज परीक्षा का परिणाम आया है। मैंने जैसा परिश्रम किया था उसके अनुसार मुझे पहला आना चाहिये था परंतु ऐसा न हो सका। दोष मेरा अपना है लेकिन कोई बात नहीं, अबसे मैं ज्यादा सावधान रहूंगा और अपने ऊपर जरूरत से ज्यादा भरोसा न करूंगा। शायद यह असफलता भी मुझे कुछ सिखाने के लिये ही आयी है।

आह, कैसी मुसीबत में फंस गया हूं! मैं इस पहाड़ी पर अकेला चला आया। मित्रों ने मना किया, पर मैं अपने जोश में था। पैरों में जूते न थे और पहाड़ी गोखरू से भरी थी। पांव जो बढ़ाया तो पूरा-का-पूरा गोखरू पर पड़ा। मैं तिलमिला उठा, पर हाय री नादानी! दूसरा पांव भी पट से गोखरू पर रख दिया। दोनों पैरों से खून बहने लगा। पैरों पर खड़ा रहना असंभव था। दर्द और खून के मारे बुरा हाल था। हाथ से सहायता लेनी चाही तो वह भी लहू-लहान हो गया। याद आया : "बिना विचारे जो करे, सो पाछे पछताए। काम बिगारे आपनो जग में होत हंसाय।" खैर, किसी तरह भगवान् को टेरा और वचन दिया, "अब से मैं ऐसी बेवकूफी न करूंगा, इस बार तो इस परिणाम को—मेरी बेहोशी में आकर हर ले जाओ अपने-आप।" खैर, किसी तरह जान बची। घर जाकर छिपाने की कोशिश में सफल हो गया। जीवन की अनेक कठिनाइयों में यह घटना मुझे सावधान किया करती है।

इस प्रकार की अनेक घटनाओं को याद करके इसी परिणाम पर पहुंचता हूं कि न तो सदा पीछे की ओर देखकर पछताना चाहिये और न झूठे गर्व में फूलना चाहिये। सबसे अच्छा सूत्र यही है कि जीवन में पग-पग पर भगवान् मुझे रास्ता दिखायें। जो बीत चुकी उसपर आंसू बहाने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या लाभ, जो होनहार है उसपर फूलने से क्या फायदा? बस, अगला कदम भगवान् दिखाते चलें और मैं उनके पीछे-पीछे चलता जाऊं। ('पुरोधा' जनवरी ७७ से)

—रवीन्द्र

भगवान् को सब कुछ करने दो

इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि व्यक्ति सच्चे दिल से इसमें से (जागतिक भ्रांति से) बाहर निकलना चाहता हो तो यह उतना कठिन नहीं है : तुम्हें कुछ नहीं करना पड़ता, केवल भगवान् को सब कुछ करने दो। और वे सब कुछ कर देते हैं। वे सब कुछ करते हैं। यह कितना अद्भुत है! कितना अद्भुत!

...वे तुम्हें बुद्धि को विश्राम करने के लिये बस एक ओर रखना सिखाते हैं : "लो, शांत रहो, अब और मत हिलो-डुलो, मुझे तंग मत करो, मुझे तुम्हारी आवश्यकता नहीं",—तब एक द्वार खुल जाता है—तुम्हें यह भी नहीं लगता कि तुम्हें उसे खोलना है, वह तो पूरा खुला पड़ा है ...।

तुम्हारे सामने एक तथाकथित समस्या है : "तुम्हें क्या कहना चाहिये, क्या करना चाहिये, कैसे क्रिया करनी चाहिये या ..."। कुछ करने को नहीं है, कुछ भी नहीं, तुम्हें केवल प्रभु से यह कहना है : "तुम देख ही रहे हो, बात ऐसी है", केवल इतना ही। और फिर तुम अत्यधिक शांत रहो। और तब बिलकुल सहज भाव से, उसके विषय में सोचे बिना, विचारे बिना और हिसाब लगाये बिना, बल्कि जरा भी कुछ किये बिना —तुम वही करते हो जो तुम्हें करना है, अर्थात् भगवान् स्वयं उसे करते हैं, तुम नहीं करते। वे करते हैं, वे परिस्थितियों को संजोते हैं, लोगों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवस्थित करते हैं, वे तुम्हारे मुख में अथवा तुम्हारी कलम में शब्द रख देते हैं—वे सब कुछ करते हैं, सब, सब, सब, तुम्हारे करने के लिये कुछ बाकी नहीं रहता, कुछ नहीं, बस, अपने-आपको आनंद में रहने दो।

मुझे यह अधिकाधिक विश्वास हो रहा है कि लोग सचमुच यह नहीं चाहते।

किंतु ...सफाई करने का कार्य?

तुम्हें यह करने की आवश्यकता नहीं, वे ही तुम्हारे लिये कर देते हैं।

किंतु ...पुरानी चेतना, पुराने विचार ...

हां, अभ्यासवश वे फिर से आने का प्रयत्न करते हैं—तुम्हें केवल यह कहना है : "प्रभु, आप देखें, आप देखें, आप देखें यह ऐसा है", बस इतना ही। "प्रभु आप देखें, आप इसे देखें, आप उसे देखें, आप इस मूर्ख को देखें।" बस बात समाप्त हो गयी, और वह भी तत्काल ही। और, मेरे बच्चे, यह अवस्था अपने-आप ही बदल जाती है, जरा भी प्रयास नहीं करना पड़ता। तुम्हें केवल सच्चा बनना होगा, दूसरे शब्दों में, सचाई से यह चाहना होगा कि सब कुछ ठीक हो। ...पर ऐसी वस्तु सदा होती है जो अपने-आप करना बहुत पसंद करती है, यही कठिनाई है, नहीं तो ...

...या फिर तुममें श्रद्धा नहीं होती, तुम सोचते हो कि भगवान् इसे नहीं कर सकेंगे, इसलिये खुद ही करना होगा, क्योंकि वे इसे नहीं जानते! (माताजी हंसती हैं) इस प्रकार की मूर्खता बहुत व्यापक है।

—श्रीमां

'श्रीमातृवाणी' खण्ड १०, पृ. १५७-५९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नर और नारी

... बहरहाल, यह तथ्य तो निर्विवाद ही है कि पुरुष अपने-आपको बड़ा समझता है तथा अपना प्रभुत्व जमाना चाहता है, उधर स्त्री अपने-आपको बड़ा उत्पीड़ित अनुभव करती है और फिर परोक्ष या अपरोक्ष रूप में विद्रोह करती है। और इन दोनों का यह झगड़ा युग-युग से चला आ रहा है; यह मूल में एक ही है, पर अनगिनत रूप-रंगों में प्रकट होता है।

यह तो मानी हुई बात है कि पुरुष सारा दोष स्त्री पर थोपता है और उसी प्रकार स्त्री सारा दोष पुरुष पर थोपती है। पर वास्तव में दोष समान रूप से दोनों का मानना चाहिये और दोनों में से किसी को भी अपने-आपको दूसरे से बड़ा मानने का गर्व नहीं करना चाहिये। बल्कि जबतक प्रधानता और हीनता का यह विचार दूर नहीं कर दिया जायेगा तबतक कोई भी वस्तु या कोई भी व्यक्ति इस भ्रांति को दूर नहीं कर सकेगा जो मानवजाति को दो विरोधी शिविरों में बांट देती है, और न तबतक समस्या का कोई समाधान ही हो पायेगा। ...

हां सचमुच दास, क्योंकि जबतक मनुष्य में इच्छाएं हैं, अभिरुचियां और आसक्तियां हैं, तबतक वह इन वस्तुओं का और उन व्यक्तियों का भी दास है जिन पर वह इन इच्छाओं की पूर्ति के लिये निर्भर रहता है।

अतएव, स्त्री पुरुष की दासी इसलिये है कि वह पुरुष और उसके बल के प्रति आकर्षण अनुभव करती है, उसके अंदर 'घर' बसाने की इच्छा होती है, वह घर से प्राप्त होनेवाली सुरक्षा को चाहती है और अंत में उसके अंदर मातृत्व के प्रति मोह भी होता है। इधर पुरुष भी स्त्री का दास है, अधिकार-भावना के कारण, शक्ति और प्रभुत्व की तृष्णा के कारण, काम-वासना की तृप्ति की इच्छा तथा विवाहित जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की छोटी-मोटी सुख-सुविधाओं के प्रति आसक्ति के कारण।

इसलिये कोई भी कानून स्त्री को तबतक बंधनमुक्त नहीं कर सकता जबतक वह स्वयं ही बंधनमुक्त न हो जाये। इसी प्रकार पुरुष भी अधिकार जमाने की आदतों के होते हुए तबतक दासता से मुक्त नहीं हो सकता जबतक वह अपने अंदर की सारी दासता से मुक्त न हो जाये।

यह गुप्त संघर्ष की अवस्था, जिसे प्राय: कोई स्वीकार नहीं करता, किन्तु जो अच्छे-से-अच्छे दृष्टांतों में भी सदा अवचेतन में उपस्थित रहती है, तबतक अनिवार्य प्रतीत होती है, जबतक मनुष्य पूर्ण चेतना के साथ तादात्म्य स्थापित करने के लिये, सर्वोच्च सत्ता के साथ एक होने के लिये, अपनी सामान्य चेतना से ऊपर नहीं उठ जाते। कारण, जब तुम इस उच्च चेतना को प्राप्त कर लेते हो तो देखते हो कि पुरुष और स्त्री का भेद केवल शारीरिक भेद रह जाता है। . . .

पुरुष और स्त्री दोनों ही अपने अच्छे क्षणों में लिंग-भेद भूल जाते हैं, किन्तु जरा-सी उत्तेजना पाते ही वह भेद फिर से आ जाता है; स्त्री अनुभव करने लगती है कि वह स्त्री है और पुरुष तो यह जानता ही है कि वह पुरुष है और झगड़ा फिर अनिश्चित अवधि के लिये, किसी-न-किसी रूप में, प्रत्यक्ष या परोक्ष स्तर पर चलने लगता है और प्रकट रूप में जितना कम स्वीकार किया जाता है उतना ही कटु होता है। कोई पूछ सकता है कि क्या यह झगड़ा तबतक ऐसा ही न चलता रहेगा जबतक वे पुरुष और स्त्री न रहकर ऐसी जीवंत आत्माएं नहीं बन जाते जो लिंग-रहित शरीरों में अपने एक ही अभिन्न स्रोत को अभिव्यक्त करती हों।...

— श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत की नियति में परम श्रद्धा

(२६ जनवरी १९६४ में 'इलस्ट्रेटेड वीक्ली ऑफ इंडिया' नामक पत्रिका में कुछ प्रश्न छापे गये थे, जिनका उत्तर माताजी दे रही हैं।)

अगर आपसे कहा जाये कि भारत के बारे में अपनी दृष्टि को एक वाक्य में प्रकट कीजिये तो आपका क्या उत्तर होगा?

संसार का गुरु बनना भारत की सच्ची नियति है।

इसी तरह अगर आपसे कहा जाये कि अपनी दृष्टि के अनुसार आज की वास्तविकता पर एक वाक्य में टिप्पणी कीजिये तो आप क्या कहेंगी?

वर्तमान वास्तविकता का एक बहुत बड़ा मिथ्यात्व है, जो शाश्वत सत्य को ढके हुए है।

आपके अनुसार अंतर्दर्शन और वास्तविकता के बीच तीन मुख्य बाधाएं कौन-सी हैं?

१. अज्ञान, २. भय, ३. मिथ्यात्व।

स्वाधीनता के बाद भारत ने सब मिलाकर जो प्रगति की है क्या आप उससे संतुष्ट हैं?

नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्तमान काल में हमारी सबसे बड़ी उपलब्धि क्या है? आप उसे इतना अधिक महत्त्व क्यों देती हैं?

सत्य के लिये प्यास जागना क्योंकि सत्य के बिना कोई वास्तविकता नहीं है।

इसी तरह क्या आप सबसे अधिक दुःखदायी असफलता बता सकती हैं? आप किस आधार पर उसे इतना दुःखदायी मानती हैं?

कपट, क्योंकि कपट विनाश की ओर ले जाता है।

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय जीवन में वर्तमान और भविष्य की दृष्टि से भारत को शिक्षा का लक्ष्य क्या बनाना चाहिये?

अपने बच्चों को मिथ्यात्व के त्याग और सत्य की अभिव्यक्ति के लिये तैयार करना।

इस ऊंचे आदर्श तक पहुंचने के लिये देश को कौन-से कदम उठाने चाहियें? इस दिशा में आरंभ कैसे किया जा सकता है?

जड़तत्त्व को आत्मा की अभिव्यक्ति के लिये तैयार करके।

भारत की सच्ची विशिष्टता क्या है और उसकी नियति क्या है?

जगत् को यह सिखाना कि जबतक जड़तत्त्व आत्मा की अभिव्यक्ति न बन जाये वह मिथ्या और निर्वीर्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माताजी भारत की वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति को किस दृष्टि से देखती हैं? वे मनुष्य में आत्मा के विकास के लिये क्या योगदान दे सकती हैं?

उसका एकमात्र उपयोग है, आत्मा की अभिव्यक्ति के लिये भौतिक आधार को अधिक मजबूत, अधिक पूर्ण और अधिक समर्थ बनाना।

देश राष्ट्रीय एकता के बारे में बहुत चिंतित है। इस विषय में माताजी की दृष्टि क्या है? भारत अपने प्रति और संसार के प्रति अपना कर्तव्य किस तरह पूरा करेगा?

समस्त राष्ट्रों की एकता संसार की अटल नियति है। लेकिन सभी राष्ट्रों की एकता संभव होने के लिये, पहले हर राष्ट्र को अपनी एकता सिद्ध करनी होगी।

भारत को भाषा का प्रश्न बहुत तंग करता है। इस मामले में हमारी ठीक वृत्ति क्या होनी चाहिये?

एकता को जीवित तथ्य होना चाहिये, ऊपर से लादा हुआ मनमाना नियम नहीं। जब भारत एक होगा तो सहज रूप से उसके पास ऐसी भाषा होगी जिसे सब समझ सकें।

शिक्षा सामान्य रूप से साक्षरता और सामाजिक प्रतिष्ठा बन गयी है। क्या यह दूषित प्रवृत्ति नहीं है? लेकिन शिक्षा को उसका आंतरिक मूल्य और उसका मूलभूत आनंद तत्त्व कैसे दिया जाये?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिपाटियों से बाहर निकलो और आत्मा के विकास के लिये आग्रह करो।

हमारी शिक्षा किन भ्रमों और भ्रांतियों से भरी है? हम उनसे कैसे बच सकते हैं?

क) सफलता, आजीविका और धन को दिया जानेवाला ऐकांतिक महत्त्व।
ख) आत्मा के साथ संपर्क और अपनी सत्ता के सत्य के विकास और उसकी अभिव्यक्ति को सबसे अधिक महत्त्व देने का आग्रह करो।

भारत की आत्मा को फिर से कैसे पाया जाये?

अपनी चैत्य सत्ता के प्रति सचेतन बनो। तुम्हारी चैत्य सत्ता में भारत की आत्मा के लिये अत्यधिक रस हो और वह उसके लिये सेवा-वृत्ति के साथ अभीप्सा करे। अगर तुम सच्चे हुए तो सफल होओगे।

— श्रीमां

मृत्यु का भय

शरीर और उसकी क्रियाओं के लिये आसक्ति के साथ-ही-साथ शरीरस्थ जीवन के लिये आसक्ति पर भी विजय पा ली जाती है। क्योंकि जब हम यह अनुभव करते हैं कि भौतिक सत्ता हमारा स्व नहीं है, केवल हमारा वेश या उपकरण है तो शरीर का मृत्यु के लिये प्रतिक्षेप, जो प्राणिक मनुष्य में इतनी प्रबल और उग्र वृत्ति है, उसे भी अनिवार्य रूप से कम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाना चाहिये और उसे फेंका जा सकता है। उसे फेंक देना और पूरी तरह फेंक देना जरूरी है। मृत्यु का भय और शारीरिक समाप्ति के प्रति अरुचि मनुष्य पर उसके पाशविक मूल द्वारा छोड़े गये दाग हैं। ये निशानियां पूरी तरह मिटनी चाहियें।

भगवान् का भय

भगवान् के भय का प्रयोजन मुख्य रूप से नैतिक क्षेत्र में तब महत्त्वपूर्ण होता है जब जीव इतने पर्याप्त रूप में विकसित न हो कि शुभ का अनुसरण स्वयं शुभ के लिये कर सके, जब उसे अपने ऊपर किसी अधिकारी की जरूरत हो जिसके क्रोध या कठोर भावुकताहीन न्याय से डरकर शुभ की ओर अपनी निष्ठा की नींव जमा सके। जब हम आध्यात्मिकता में बढ़ते हैं तो यह प्रयोजन मन में बची हुई अस्तव्यस्तता या किसी पुरानी दुराग्रही मानसिकता के रूप के सिवा और किसी तरह नहीं रह सकता ...। और ज्यादा विशाल रूप से कहें तो दिव्य प्रकृति में विकसित होना ही तो नैतिक सत्ता की परिपूर्ति है। इसका सबसे अच्छा तरीका यह है कि भगवान् को अपनी उच्चतर आत्मा, मार्ग दिखाने और ऊपर उठानेवाली इच्छा-शक्ति या स्वामी के रूप में अनुभव किया जाये जिसके लिये हमें प्रेम है और जिसकी हम सेवा कर सकते हैं। हमारा उद्देश्य होना चाहिये भगवान् का डर नहीं, उनसे प्रेम, उनकी सत्ता की मुक्ति और शाश्वत शुद्धि के लिये अभीप्सा।

निश्चय ही, स्वामी और सेवक के संबंध में भय आता है, पिता और बालक के संबंध में भी, लेकिन तभी जब यह मानव स्तर पर हो, जहां उनमें मुख्य रूप से नियंत्रण, अधीनता और दंड की बात आती है और प्रेम को अपने-आपको अधिकारी के मुखौटे के पीछे न्यूनाधिक रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से मिटा देना पड़ता है। स्वामी के रूप में भी भगवान् किसी को दंड नहीं देते, धमकाते नहीं, आज्ञाकारिता आरोपित नहीं करते। मानव अंतरात्मा को मुक्त रूप से भगवान् की ओर जाना और अपने-आपको उनकी अभिभूत करनेवाली शक्ति के प्रति अर्पित करना चाहिये ताकि वह इसे पकड़कर अपने दिव्य स्तरों की ओर उठा सके और उसे अनंत द्वारा सांत प्रकृति पर आधिपत्य का वह आनंद दे सके, और उच्चतम की सेवा का भी जिसके द्वारा अहंकार और निम्नतर प्रकृति से मुक्ति मिलती है। इस संबंध की चाबी है प्रेम और भारतीय योग में दास्यम् है दिव्य सखा की सुखद सेवा या दिव्य प्रेयसी की आवेशभरी सेवा। जगतों का स्वामी, जो गीता में अपने सेवक या भक्त से केवल यही मांगता है कि वह जीवन में उसके उपकरण से बढ़कर कुछ और न हो, वह यह दावा सखा, मार्गदर्शक, उच्चतर आत्मा के रूप में करता है और वह अपने-आपको, सब जगतों का स्वामी बतलाता है जो सभी जीवों का सखा है। "सर्वलोकमहेश्वरम् सुहृदं सर्वभूतानाम्।" वास्तव में ये दोनों संबंध एक साथ होने चाहियें और उनमें से कोई भी दूसरे के बिना पूरा नहीं हो सकता। इसी भांति स्रष्टा के रूप में भगवान् पितृत्व नहीं जो हमारी सत्ता को बनानेवाले के नाते आज्ञापालन की मांग करता है बल्कि प्रेम का पितृत्व हमें योग के आत्म-ऐक्य के अधिक निकट ले जाता है। प्रेम ही दोनों में असली चाबी है और पूर्ण प्रेम भय के प्रयोजन के प्रवेश के साथ असंगत है। मानव अंतरात्मा की भगवान् के साथ निकटता उद्देश्य है और भय हमेशा रास्ते का रोड़ा और दूरी होता है। यहांतक कि भगवान् की शक्ति के बारे में भययुक्त विस्मय और समादर भी दूरी और विभाजन के चिह्न हैं और वे प्रेम के ऐक्य की घनिष्ठता में गायब हो जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाप का भय

दिव्य गुरु अर्जुन से कहते हैं ...तुम अपने कर्मफल से डर रहे हो, तुम अन्य परिणाम चाहते हो और जीवन में अपने उचित पथ से डिग रहे हो क्योंकि वह तुम्हें उनकी ओर नहीं ले जाता। लेकिन कर्मों और उनके फल का यह विचार, फल की कामना का परिणाम, कामना की पूर्ति के उपायस्वरूप कर्म, अज्ञानी की दासता है जो नहीं जानता कि कर्म क्या है, न ही वह उनके सच्चे मूल, वास्तविक क्रिया या उच्च उपयोगिता को जानता है ...। तुम बहुत-सी चीजों से डरते हो, पाप से डरते हो, दुःख से डरते हो, नरक और दंड से डरते हो, भगवान् से डरते हो, इहलोक और परलोक से डरते हो, अपने-आपसे डरते हो। इस क्षण कौन-सी चीज है जिससे तुम नहीं डरते, तुम जो आर्य योद्धा, सारे संसार के मुख्य योद्धा हो? यह महान् भय है जो मानवजाति को घेरे हुए है, पाप का भय, इहलोक और परलोक में दुःख-कष्ट का भय, एक ऐसे जगत् का भय जिसकी सच्ची प्रकृति से वह अनभिज्ञ है, ऐसे भगवान् का भय जिसकी सच्ची सत्ता उसने नहीं देखी और जिसके वैश्व प्रयोजन को वह नहीं समझता। मेरा योग तुम्हें महान् भय से मुक्त कर देगा, इसका जरा-सा अंश भी महान् परित्राण लायेगा। एक बार इस पथ पर पग रखने के बाद तुम देखोगे कि कोई भी कदम हानि नहीं है, जरा-सी गति भी लाभकर होगी। तुम उसमें कोई बाधा न पाओगे जो तुम्हें अपनी प्रगति से विपथ कर दे—एक साहसपूर्ण और पूर्ण प्रतिज्ञा जिसे भयभीत और संकोचशील मन, जो अपने सभी मार्गों पर लड़खड़ाता हो, आसानी से निश्चित विश्वास नहीं दे सकता। उसका महान् और पूर्ण सत्य तबतक प्रकट नहीं होता जबतक कि इस संदेश के पहले शब्दों के साथ हम गीता के अंतिम शब्द भी मिलाकर न पढ़ें, "सभी धर्मों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्यागकर मेरी शरण में आ, मैं तुझे सब पापों से मुक्त कर दूंगा, चिंता न कर।"

लेकिन यह व्याख्या मनुष्य के प्रति भगवान् के इस गहरे हृदयस्पर्शी वचन से नहीं बल्कि पथ पर पहली आवश्यक किरणों से शुरू होती है जो अंतरात्मा की ओर नहीं, बुद्धि की ओर निर्दिष्ट है। पहले मनुष्य के प्रेमी और सखा नहीं, मार्गदर्शक और गुरु बोल रहे हैं जिन्हें उसके अंदर से उसकी सच्ची आत्मा के बारे में, जगत् की प्रकृति और स्वयं उसकी क्रिया के उत्स के बारे में अज्ञान को दूर करना है। चूंकि वह अज्ञान के साथ, गलत बुद्धि और इस कारण इन विषयों में गलत इच्छा से कर्म करता है अतः मनुष्य अपने कर्मों से बंधा है या बंधा हुआ मालूम होता है, अन्यथा कर्म मुक्त आत्मा के लिये दासता नहीं है। इस गलत बुद्धि के कारण उसमें आशा और भय, क्रोध और दुःख, अस्थायी आनंद होता है अन्यथा पूर्ण शांति और स्वाधीनता के साथ कर्म संभव है।

—श्रीअरविन्द

माताजी के कुछ उत्तर

स्नेहमयी मां,

मैंने एक बात देखी है जो हम सब पर लागू होती है, हम दो दिसंबर के कार्यक्रम में अधिक-से-अधिक खेलों में भाग लेते हैं। क्या अधिक अच्छा नहीं रहेगा कि हम बहुत-से खेलों में मामूली स्तर का प्रदर्शन करने की जगह एक या दो खेल चुनकर उनमें अच्छे-से-अच्छा प्रदर्शन करें?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्येक लड़का या लड़की अपनी प्रकृति के अनुसार ही कार्य करता है और यदि वह उस प्रकृति के नियम का साहस और सच्चाई के साथ पालन करता है तो वह सत्य के अनुसार चलता है। अतएव दूसरों के विषय में कोई मत बनाना या निर्णय लेना संभव नहीं है। व्यक्ति केवल अपने विषय में ही जान सकता है, और तब भी उसे अपने-आपको धोखा न देने के लिये बहुत अधिक सच्चाई के साथ कार्य करना होगा।

४.११.१९६१

मधुर मां,

१३३वें सूत्र में श्रीअरविन्द कहते हैं कि देवता केवल भगवान् के प्रेम और अधिक कृपापूर्ण उल्लास के सुखकर बोझ को ही उठा सकने में समर्थ थे?[१] तो क्या देवता कायर हैं? तब उनकी महानता और वैभव कहां रहे? हम निम्न कोटि की सत्ताओं की पूजा क्यों करें? तब तो दैत्यों को ही भगवान् के अधिक प्रेमपात्र पुत्र होना चाहिये?

श्रीअरविन्द ने जो यहां लिखा है वह अर्धसुप्त मनों को जगाने के लिये एक विरोधाभास है। किन्तु व्यक्ति को इन वाक्यों में निहित व्यंग्य को समझ सकना चाहिये और सबसे अधिक तो उनके इस आशय को, जिसे उन्होंने इन शब्दों में व्यक्त किया है। जो भी हो, देवता चाहे कायर हों या न हों, मुझे कोई आवश्यकता नहीं दीखती, कि हम उनकी उपासना

[१] दैत्य देवताओं से अधिक बलशाली होते हैं क्योंकि उन्होंने भगवान् के साथ यह समझौता कर लिया है कि वे उनके क्रोध और उनकी शत्रुता के बोझ को स्वीकार एवं सहन करेंगे; पर देवतागण केवल उनके प्रेम और कृपापूर्ण उल्लास के सुखकर बोझ को ही स्वीकार कर सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करें, चाहे वे छोटे हों या बड़े। हमारी भक्ति केवल परम प्रभु की ओर ही उठनी चाहिये, जो समस्त वस्तुओं और सत्ताओं में विद्यमान हैं।

६.११.१९६१

स्नेहमयी मां,

बहुत दिनों से देख रहा हूं कि मैं कुछ डरपोक-सा हूं। अभीतक मुझमें हीन-भावना है। मेरे ख्याल में मुझे इस बात का डर रहता है कि लोग मेरे अज्ञान को जान जायेंगे। मैं ऐसा क्यों हूं? और इससे मैं कैसे छुटकारा पाऊं?

इस सबके और इस प्रसिद्ध हीनता की भावना के जाल के पीछे व्यक्ति का "अहं-भाव" होता है और होता है वह झूठा अभिमान जो दूसरों के सामने अपना अच्छा रूप दिखाना चाहता है तथा उनसे प्रशंसा करवाना चाहता है। किंतु यदि तुम अपनी सारी गतिविधियों को भगवान् के आगे निवेदित कर दो तो तुम दूसरों की प्रशंसा की जरा भी परवाह नहीं करोगे।

१४-११-१९६१

मधुर मां,

आपने हमें बार-बार बताया है कि हमारे सब कार्य भगवान् के प्रति निवेदित होने चाहियें। इसका ठीक अर्थ क्या है और इसे कैसे किया जाये? उदाहरणार्थ, जब आदमी टेनिस या बॉस्केट-बाल खेले तो उसे कैसे निवेदित करे? इसके लिये स्वभावतया मानसिक रचनाएं काफी नहीं होतीं।

इसका अर्थ यह है कि तुम जो कुछ करो उसे किसी वैयक्तिक अहंभावयुक्त उद्देश्य, अर्थात्, सफलता, यश-प्राप्ति, भौतिक लाभ अथवा झूठे घमण्ड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये न करो, बल्कि सेवा और निवेदन के भाव से करो ताकि तुम भागवत इच्छा के प्रति अधिक सचेतन हो सको तथा अपने-आपको संपूर्णतः उन्हें सौंप सको; यह तबतक करते रहना चाहिये जबतक कि तुम इतनी उन्नति न कर लो कि तुम यह जान जाओ, बल्कि यह अनुभव करने लगो कि स्वयं भगवान् ही तुम्हारे अंदर कार्य कर रहे हैं, उन्हीं की शक्ति तुम्हें अनुप्राणित कर रही है, उन्हीं का संकल्प तुम्हें सहारा दे रहा है—यह अनुभूति तुम्हें केवल एक मानसिक ज्ञान के रूप में ही नहीं होनी चाहिये, बल्कि यह तुम्हारी चेतना की सच्ची अवस्था, एक सशक्त, सजीव अनुभूति होनी चाहिये।

इसे संभव बनाने के लिये सभी अहं-भावयुक्त हेतु तथा अहं-भाव की सभी प्रतिक्रियाओं को लुप्त हो जाना चाहिये।

२०-११-१९६१

मधुर मां,

मैं सबकी ओर से आपसे प्रार्थना करता हूं कि आज सायंकाल का २ दिसम्बर का हमारा प्रदर्शन सफल हो। आज हरएक यही सोच रहा है कि ऐसा नहीं होगा! ...यह सत्य है कि हमारा प्रदर्शन उच्च कोटि का नहीं है। मैं आशा करता हूं और आपसे प्रार्थना करता हूं कि आज सायंकाल का प्रदर्शन अधिक-से-अधिक अच्छा हो। स्नेहमयी मां, हमारे कार्यों को अपने हाथ में लो और हमारा पथ-प्रदर्शन करो। आपने हमसे कहा है कि आप वहां उपस्थित रहेंगी—काश, मेरी आंखें आपको देख पातीं!

जो कुछ मैंने २६ तारीख को देखा था वह संतोषजनक था (स्वभावतया कार्य सदा ही अधिक अच्छा हो सकता है), और मैंने २ दिसम्बर के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय में "बहुत-सी प्रशंसा" भी सुनी है। किन्तु तुम्हें उन व्यक्तियों की बातें नहीं सुननी चाहियें जो केवल आलोचना करना ही जानते हैं। बहुत बढ़ा-चढ़ा कर की गयी आलोचना विकास में सहायक नहीं होती।

२.१२.१९६१

भारत का मिशन

भारत की प्रकृति, उसका भगवन्निर्दिष्ट कार्य, उसका कर्तव्य, पृथ्वी की भवितव्यता में उसकी भूमि का भाग, वह विशिष्ट शक्ति जिसका वह प्रतिनिधि है—यह सब उसके विगत इतिहास में लिखा हुआ है और यही उसके वर्तमान कष्टों और अग्निपरीक्षाओं का गुप्त प्रयोजन है। हमें अपनी आत्मा के बाह्य रूपों का पुनर्गठन करना होगा; किंतु प्राचीन रूपों के पीछे विद्यमान आत्मा को ही हमें उन्मुक्त करना और उसकी सुरक्षा करते हुए उसे नये और ओजस्वी विचार, प्रतीक, सांस्कृतिक मूल्य, नये उपकरण एवं महत्तर रूप प्रदान करने होंगे। और जबतक हम इन सारभूत वस्तुओं को मान्यता देते रहेंगे और इनके मूल भाव के प्रति निष्ठावान् रहेंगे, तबतक अवस्थाओं के अनुकूल अत्यंत उग्र ढंग की मानसिक या भौतिक व्यवस्थाएं एवं अत्यंत चरम कोटि के सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिवर्तन करने से भी हमें कोई हानि नहीं होगी परंतु स्वयं इन परिवर्तनों को भी भारत की ही भावना एवं सांचे के अनुरूप ढालना होगा, किसी अन्य भावना एवं सांचे के अनुसार नहीं। हमें अमरीका या यूरोप की भावना एवं जापान या रूस के सांचे के अनुरूप नहीं होना है। हम जो कुछ हैं और जो कुछ बन सकते हैं, जो बनने का हमें यत्न करना चाहिये—इन दोनों के बीच की बड़ी भारी खाई को हमें देखना-समझना होगा। परंतु यह हमें किसी प्रकार के अनुत्साह के भाव के साथ या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने अस्तित्व से और अपनी आत्मा के सत्य से इंकार करने की वृत्ति को लेकर नहीं, बल्कि यह देखने के लिये करना होगा कि हमें अभी कितनी दूर तक प्रगति करनी है। क्योंकि, हमें इस प्रगति की सच्ची धाराओं को खोजना होगा और साथ ही अपने अंदर अभीप्सा और प्रेरणा, तेज और शक्ति प्राप्त करनी होगी जिससे हम उन धाराओं की परिकल्पना करके उन्हें कार्य-रूप में परिणत कर सकें।

—श्रीअरविन्द

गपशप करना तुम्हें नीचे गिराता है

एक ऐसी स्थिति है जिसमें एक मामूली बातचीत से, जो तुम्हें साधारण जीवन के स्तर पर बने रहने के लिये बाध्य करती है, तुम्हें सिरदर्द हो जाता है, तुम्हारा पेट खराब हो जाता है और यदि वह जारी रहे तो उससे ज्वर भी हो सकता है। अवश्य ही यहां मैं गपशप जैसी बातचीत की चर्चा कर रही हूं। मैं समझती हूं कि थोड़े-से अपवादों को छोड़कर सभी लोग इस आदत को प्रश्रय देते हैं और ऐसी चीजों के विषय में बातचीत करते हैं जिनके विषय में उन्हें मौन रहना चाहिये अथवा दूसरी चीजों के विषय में बातें करनी चाहियें। यह इतना स्वाभाविक हो जाता है कि उससे तुम्हें कोई दिक्कत नहीं होती। परंतु तुम यदि इस तरह करना जारी रखो तो तुम अपनी चेतना को ऊपर उठने से पूरी तरह रोकते हो; तुम अपने-आपको साधारण चेतना के साथ लोहे की जंजीर से बांध देते हो और अवचेतना में कार्य संपन्न नहीं होता या यहांतक कि आरंभ ही नहीं होता। जो लोग ऊपर उठना चाहते हैं उनकी पहले से ही पर्याप्त कठिनाइयां हैं, उन्हें बाहर से और बढ़ाने की आवश्यकता नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वभावत: ही, चेतना को उच्चतर स्तर पर बनाये रखने के प्रयास से आरंभ में थकावट होती है, ठीक जैसे कि वे व्यायाम होते हैं जिन्हें तुम अपनी मांसपेशियों को विकसित करने के लिये करते हो। परंतु उसके कारण तुम व्यायाम नहीं छोड़ देते! अतएव मानसिक तौर पर भी तुम्हें वही चीज करनी चाहिये। तुम्हें अपने मन को नीचे गिरने का अवकाश नहीं प्रदान करना चाहिये : गपशप करना तुम्हें नीचे गिराता है और, तुम यदि योग करना चाहते हो तो तुम्हें उससे अवश्य बचना चाहिये। बस, इतना ही।

—श्रीमां

सीख

क्या हममें से कोई कह सकता है कि उसे कभी लालसा नहीं हुई और फिर से कभी नहीं होगी? और फिर हम लालसा का अनुभव ही कैसे न करें जब सारा वातावरण ही उससे भरा हुआ है? हम अपने अंदर उठती हुई कामनाओं की भीड़ का अनुभव कैसे न करें जब हमारे पास आनेवाला हर एक स्पंदन कामनाओं से बना हुआ है?

और फिर भी, यदि हम चाहते हैं कि हमारे विचार लाभदायक और प्रभावशाली हों तो हमें अपने-आपको इस दासता से मुक्त करना होगा।

इस तथ्य को याद रखते हुए हम एक व्यावहारिक परिणाम निकाल सकते हैं : हम सभी के प्रति उदार हों, क्योंकि प्रलोभन बहुत मजबूत है और मानव अज्ञान वास्तव में बहुत बड़ा है।

लेकिन जैसे हमें औरों के साथ दयालु और उदार होना चाहिये, ठीक उसी तरह अपने साथ कठोर और निर्मम होना चाहिये, क्योंकि हम अंधकार में प्रकाश, रात में मशाल बनना चाहते हैं।

—'श्रीमातृवाणी', खण्ड २ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Statement about ownership and other particulars about Newspaper (Agnishikha) to be published in the first issue every year after the last day of february.

Form IV (see Rule 8)

1. Place of publication	Sri Aurobindo Ashram Pondicherry - 605 002
2. Periodicity of its publication	Monthly
3. Printer's Name	Amiyo Ranjan Ganguli
Nationality	Indian
Address	Sri Aurobindo Ashram Press Pondicherry - 605 002
4. Publisher's Name	Pradeep Narang
Nationality	Indian
Address	Sri Aurobindo Society Pondicherry - 605 002
5. Editor's Name	Anuben
Nationality	Indian
Address	Sri Aurobindo Ashram Pondicherry - 605 002
6. Names and Addresses of individuals who own the news-paper and partners or shareholders holding more than one per cent of the total capital	Sri Aurobindo Society Pondicherry - 605 002

I, Pradeep Narang *hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.*

March 2003

(sd) Pradeep Narang
Signature of Publisher

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

सन्देश

अपने निकटवर्ती देशों के साथ भारत का क्या संबंध होना चाहिये ?

कुछ निकटवर्ती देशों के साथ, जैसे पाकिस्तान, हमारा संबंध मनोमालिन्यपूर्ण है। वर्तमान समय में यह मनोमालिन्य बिलकुल अनावश्यक प्रतीत होता है, इसमें किसी की भलाई नहीं है, है केवल उन धनी देशों की जो अस्त्र-शस्त्र बेचते हैं और जो बदले में आपसी झगड़ों को शह देते हैं। यदि हम आपस में लड़ने और दूसरों को अनुग्रहीत करने के बदले भारत, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, लंका, बर्मा, नेपाल, भूटान, सिक्किम, तिब्बत जैसे सभी पड़ोसी देशों तथा युक्त होने की इच्छा रखनेवाले सभी अन्य देशों का एक फेडरेशन (संघ) बना लें तो हम बहुत अधिक सुखी होंगे।

— श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

अनोखी दुर्गा पूजा

२४ नवंबर १९२६ को जो अभूतपूर्व घटना घटी थी, वह एक ऐसा अद्‌भुत भगवद् आशीर्वाद था जो संसार को बदलने के लिये दिया गया था। २४ नवंबर के शुभ अवसर पर २४ व्यक्ति वहां उपस्थित थे किंतु तबतक आश्रम की स्थापना नहीं हुई थी। वे २४ व्यक्ति श्रीअरविन्द के प्रशंसक या अनुयायी थे जो उनके व्यक्तित्व से आकर्षित हो उनके पास रहने आये थे।

उन व्यक्तियों में थे उपेन्द्रनाथ बैनर्जी जिन्हें श्रीअरविन्द ने माताजी की चिकित्सा के लिये बुलाया था और बाद में, श्रीअरविन्द जिसे अपना घर कहते थे, उसके वे सदस्य बन गये। श्रीअरविन्द उन्हें 'मदर्स डॉक्टर' कहते थे। डॉ. उपेन्द्र के साथ उनकी बहन जया देवी या नानीबाला भी आयी थीं। नानीबाला का यह नाम परिवार ने लाड़ से दिया होगा। नानी-बाला दुबली-पतली, उज्ज्वल, गोरे वर्ण की अधेड़ उम्र में भी सुंदर महिला थीं।

नानीबाला ठेठ बंगाली महिला थीं। उनके लिये अन्य सब बंगाली त्यौहारों की तरह दुर्गा-पूजा को मनाना अति आवश्यक था। अब सुदूर पांडिचेरी में रहकर भी जब अक्तूबर (आश्विन) का महीना आया तो उनका मन छटपटाने लगा। श्रीअरविन्द लोगों से कभी-कभी मिलते थे, तो नानीबाला अपनी पूजा की समस्या लेकर पहुंच गयीं। उन्होंने कहा, "आश्विन का महीना आ गया है। मैं हर वर्ष दुर्गा-पूजा करती आयी हूं। सोच रही हूं अब कैसे करूं ? कलकत्ता चली जाऊं ?"

श्रीअरविन्द ने उत्तर दिया, "क्यों ? तुम अपनी पूजा यहां भी कर सकती हो न ?"

श्रीअरविन्द का विचार क्या था, हम नहीं जानते किंतु नानीबाला के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिमाग में प्रेरणा कौंध उठी, वे बोलीं, "हां प्रभु, मैं यहीं पूजा करूंगी।" उनका हृदय उल्लास से नाचने लगा। महाअष्टमी का पुनीत दिवस आया, नानीबाला पूजा-सामग्री लेकर श्रीअरविन्द के यहां पहुंच गयीं। दो कुर्सियों पर माताजी-श्रीअरविन्द विराजमान थे। भाव-विह्वल नानीबाला ने उनकी ठीक उसी तरह पूजा की जैसी वे अपने घर में दुर्गा की मूर्ति की विधिवत् पूजा करती थीं। अन्त में उन्होंने माताजी और श्रीअरविन्द के गले में माला अर्पित की। माताजी और श्रीअरविन्द कब उठकर चले गये उसका नानीबाला को पता ही न चला, क्योंकि तबतक वे किसी और लोक में तल्लीन हो गयी थीं।

दूसरे दिन जब नानीबाला श्रीअरविन्द से मिलने गयीं, तो उन्होंने पूछा, "तुम्हारी पूजा हो चुकी, क्या अब भी घर जाना पड़ेगा ?" नानी-बाला हर्षोच्छवास से बोलीं, "प्रभु, ऐसी पूजा की मैं कल्पना न कर पायी थी। साक्षात् शिव और दुर्गा मानव शरीर में मेरी पूजा स्वीकारने पधारे !!" धन्यता के अश्रु उनकी आंखों से झरने लगे।

अब आया नवंबर का महीना। संवेदनशील और आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख नानीबाला को वातावरण में वैसी अनुभूति हुई जैसी उन्हें दुर्गा-पूजा के समय हुआ करती थी। अपने साथियों से वे पूछने लगीं, "क्यों भाई, मुझे अकारण अति आनंद की अनुभूति हो रही है। साथ ही कैसी तो अद्‌भुत शांति छायी हुई है।"

उनके साथी बोले, "हां, सच है। हमें भी ऐसी अनुभूति हो रही है।"

जब वे श्रीअरविन्द से मिलीं तो कहने लगीं, "प्रभु ! कुछ दिनों से मेरा समग्र चित्त शांति और आनंद से भर गया है। सारी पांडिचेरी में मानों उत्सव का वातावरण फैला हुआ है। एक तरह की सुगंध सारे शहर में फैल रही है। ऐसा क्यों हो रहा है ?"

श्रीअरविन्द मुस्कुराये, उन्होंने पूछा, "तुम्हें ऐसी अनुभूति हो रही है ?" नानीबाला बोलीं, "केवल मुझे ही नहीं, सबको ऐसी अनुभूति हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही है। हम अंदर ही अंदर नाच रहे हैं। क्या हो रहा है?"

श्रीअरविन्द बोले, "प्रतीक्षा करो, अधिक आनंद की अनुभूति होगी।"

फिर २४ नवंबर, १९२६ का दिन आया।

नानीबाला कहती हैं, "उस दिन माताजी और श्रीअरविन्द, दोनों ने हमें आशीर्वाद दिये। श्रीअरविन्द के शरीर से प्रकाश फैल रहा था, उनके ऐश्वर्य का प्रभाव स्पष्ट दीख रहा था।" नानीबाला की अनुभूतियां दिखाती हैं कि वे आध्यात्मिक पथ पर काफी बढ़ चुकी थीं।

रजनी पालित २४ नवंबर, १९२६ के बारे में लिखते हैं, "वह दिन परम शुभ था। उस दिन कृष्ण, जो आनंदमय पुरुष हैं और जो विकास-क्रम का मुख्य आधार हैं, मानव शरीर में अवतरित हुए।

"श्रीअरविन्द और माताजी के जाने के बाद भी हम स्तब्ध बैठे रहे। जब उठे तब ऐसा लगा मानों स्वर्ग से लौट रहे हैं।"

हाराधन बक्शी लिखते हैं, "मुझे ध्यानावस्था में इस तरह का दर्शन हुआ कि कई साधक एक घेरे में खड़े हैं और वर्तुल में उपस्थित देवों को अर्घ्य अर्पित कर रहे हैं। मैं वर्तुल के केन्द्र में उपस्थित देवों को देख न पाया।"

इस तरह प्रत्येक व्यक्ति को २४ नवंबर के दिन अनुभूति हुई। श्रीअरविन्द का कहना था कि नयी चेतना को उतारने से पहले पार्थिव वातावरण में उसे स्वीकारने योग्य लोग तैयार करना आवश्यक था। उस कार्य के लिये वे एकान्तवास में चले गये। माताजी के आगमन से श्रीअरविन्द ने निश्चय किया कि २४ नवंबर की सिद्धि-दिवस के बाद आश्रम का आरंभ करने का समय आ गया है।

आज हम देख पाते हैं कि वह छोटा बिरवा आज विशाल वटवृक्ष बन गया है जहां जीवन के काफी पक्षों को विकसित किया गया है और उन्हें अधिक पूर्ण, सुंदर और स्वच्छ बनाने का प्रयास हो रहा है ताकि मानव के सब कार्य-कलाप दिव्यता से उद्भासित हो उठें।

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

अप्रैल

१. भूत को भविष्य की ओर उछलने का तख्ता होना चाहिये, प्रगति को रोकनेवाली जंजीर नहीं।
२. पुस्तकालय को एक बौद्धिक मंदिर होना चाहिये जहां आदमी प्रकाश और प्रगति पाने के लिये आता है।
३. बचपन भविष्य का प्रतीक और आनेवाली विजयों की आशा है।
४. समस्त असत्य को, चाहे वह कितना भी हल्का क्यों न हो, अस्वीकार करो।
५. सच्चा बल और सुरक्षा हृदय में स्थित भागवत सत्ता से आते हैं। अगर तुम इस सत्ता को हमेशा अपने अंदर रखना चाहो तो सावधानी के साथ वाणी, आचार और क्रिया से समस्त अशिष्टता और गंवारूपन को दूर रखो।
६. व्यक्ति आदमी बनना तभी शुरू करता है जब वह उच्चतर और सत्यतर जीवन के लिये अभीप्सा करना शुरू करता है और रूपांतर का अनुशासन स्वीकार करता है।
इसके लिये तुम्हें अपनी निम्नतर प्रकृति और कामनाओं को वश में करने से प्रारंभ करना चाहिये।
७. सीखने से प्रेम वह सबसे अधिक मूल्यवान उपहार है जो हम किसी बच्चे को दे सकते हैं, हमेशा और हर जगह सीखना।
८. चित्रकला प्रकृति की नकल करने के लिये नहीं है, बल्कि प्रकृति का सौन्दर्य देखकर अनुभव होनेवाले संस्कार, भाव, भावना को व्यक्त करने के लिये है।
९. हर जीवित सत्ता के लिये अपने-आपको जानना और अपने ऊपर काबू रखना सीख लेना एक अमूल्य संपदा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. अपने-आपको जानने का अर्थ है अपनी क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं का कारण जानना, अपने अंदर जो कुछ होता है उसका 'क्यों' और 'कैसे' जानना।

११. अपने-आप पर काबू पाने का अर्थ है जो निश्चय कर लिया है वही करना, उसके अतिरिक्त कुछ नहीं करना, आवेगों, कामनाओं या सनकों की न तो सुनना और न उनका अनुसरण करना।

१२. सत्य और परम 'एकता' अपने-आपको विविधता के द्वारा ही प्रकट करती है। मानसिक तर्क ही अभिन्नता की मांग करता है। व्यवहार में, हर एक को अपनी ही पद्धति – जिसे वह समझता और अनुभव करता है – खोजनी और काम में लानी होगी। केवल इसी तरह शिक्षा प्रभावकारी हो सकती है।

१३. सचाई और लचीलेपन के साथ तुम समस्या हल कर सकोगे।

१४. विद्यालय विद्यार्थियों को सोचने, अध्ययन करने, प्रगति करने और हो सके तो बुद्धिमान बनने की तैयारी करवाने के लिये है – यह सब केवल विद्यालय में ही नहीं, **सारे जीवन** चलता रहना चाहिये।

१५. शिष्य होने के लिये व्यक्ति को समर्पण करना होता है और इसका निर्णय संपूर्ण और सहज होना चाहिये। ऐसा निश्चय व्यक्तिगत रूप से, जब पुकार आये तभी लिया जा सकता है और यह थोपा नहीं जा सकता, यहांतक कि इसका सुझाव भी नहीं दिया जा सकता।

१६. आध्यात्मिक प्रगति और 'सत्य' की सेवा सामंजस्य पर आधारित होती है, विभाजन और समालोचना पर नहीं।

१७. प्रगति विस्तार में है, प्रतिरोध में नहीं। सभी दृष्टिबिन्दुओं को, हर एक को उसके सच्चे स्थान पर रख कर, साथ लाना चाहिये, किसी की अवहेलना करके किसी और पर जोर न देना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८. बोलते समय विश्वास पैदा करने के लिये, विचारों में नहीं, अनुभवों में सोचो।
१९. आनंद का मतलब कमजोरी, अव्यवस्था और अस्तव्यस्तता नहीं है, – बल्कि एक प्रकाशमय और सौम्य भद्रता है जो अच्छे को प्रोत्साहित करती और बुरे पर बहुत जोर नहीं देती।
२०. न्याय की अपेक्षा कृपा सत्य के ज्यादा नजदीक है।
२१. उदाहरण सबसे अधिक बलवान् प्रशिक्षक है।
२२. बहुत शांत रहो और बहुत धीरज रखो, कभी गुस्सा न करो; दूसरों का स्वामी बनने से पहले हमें स्वयं अपना स्वामी बनना चाहिये।
२३. तुम धरती पर आये हो अपने-आपको जानना सीखने के लिये।
२४. श्रीअरविन्द ने **सभी विषयों** पर जो कुछ कहा है उसका ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से तुम आसानी से इस संसार की सभी चीजों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकते हो।
२५. प्रश्न : माताजी, बुद्धिमान कैसे बना जाता है ?
उत्तर : श्रीअरविन्द की चीजें पढ़ो।
२६. श्रीअरविन्द ने बतलाया है कि सत्य सांसारिक जीवन से भागने में नहीं, उसके **अंदर** रहकर, **उसे रूपांतरित करने और उसे दिव्य बनाने** में है ताकि भगवान् यहां, भौतिक जगत् में अभिव्यक्त हो सकें।
२७. भौतिक स्तर पर भगवान् अपने-आपको सौन्दर्य में प्रकट करते हैं।
२८. सौन्दर्य तुम्हारा अविचल आदर्श हो।
अंतरात्मा का सौन्दर्य
भावों का सौन्दर्य
विचारों का सौन्दर्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिया का सौन्दर्य
कर्म का सौन्दर्य
ताकि तुम्हारे हाथों से कभी कोई ऐसी चीज न निकले जो शुद्ध और सामंजस्यपूर्ण सौन्दर्य की अभिव्यक्ति न हो।
और 'भागवत सहायता' हमेशा तुम्हारे साथ रहेगी।

२९. आध्यात्मिक सौन्दर्य में संक्रामक शक्ति होती है।

३०. सौन्दर्य प्रकृति का आनन्दमय समर्पण है।
सुरुचि कला की कुलीनता है।

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

परिचारक गण

मूलशंकर हमारे दल में सबसे छोटे थे। वे एस्क्युलाप उर्फ दयाशंकर के भाई थे जो कुछ समय के लिये दवाखाने में डॉक्टर थे। एस्क्युलाप की निवृत्ति के बाद मूलशंकर दवाखाने में सहायक के तौर पर काम करते थे। वे चिकित्सा में सहायक बनकर हमारे दल में आये थे। बहुत अच्छे कार्यकर्ता थे, कुछ समय के लिये श्रीअरविन्द की मालिश भी करते थे। आश्चर्य की बात यह है कि उन्हें मालिश करना आता न था किन्तु इधर-उधर से मालिश के कुछ गुर सीख लिये थे। उनकी उंगलियों में सहज हल्की फुर्ती थी। श्रीअरविन्द चलने से पहले माताजी की प्रतीक्षा करते हुए बैठे रहते थे तब मूलशंकर उनके पीछे बैठकर पीठ की मालिश करते थे। उनको देखकर ऐसा लगता था मानों कोई चतुर मालिश करनेवाला बैठा हो। उनके हाथ तेजी से और नरमी से चलते, ऊपर, नीचे, पीठ पर, पीठ के नीचे; कभी उंगलियों से हल्की-हल्की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थपकी देते या हथेलियों के किनारे को घुमाते रहते और अपने शरीर को घुमाते-डुलाते रहते। अंत में उंगलियों के पोरों के हल्के-हल्के स्पर्श से मालिश समाप्त करते। हमारा मन करता कि इस फुर्तीले शरीर और मुस्कुराते, चमकते चेहरे की फोटो खींच लें जो हमारे प्रभु के शरीर को छूने से प्रफुल्लित था। श्रीअरविन्द चुपचाप मूर्तिवत् बैठे रहते, कभी सिर नीचा किये रहते, कभी सामने देखते हुए मुस्कुराते रहते। अपने शरीर पर कई तरह के उड़ते, हल्के, दबाते स्पर्श से मानों वे बेखबर थे। उन दो आकृतियों को देखकर हम प्रसन्न होते; बिस्तर के छोर पर बैठे गुरु और तेजी से मालिश करता हुआ शिष्य ! बेचारे मूलशंकर को अपनी सेवा के अवसर से तब हाथ धोना पड़ता जब हठीला, असाध्य सिर-दर्द उनको पंगु बना देता। जब-जब वे बीमार पड़ते हम श्रीअरविन्द को सूचना देते, वे कहते "फिर से ?" या हम उनकी केवल आश्चर्य की भंगिमा देखते। फिर भी हमें विश्वास था कि वे मूलशंकर को आंतरिक सहायता देते थे।

इससे हृदय-विदारक घटना क्या हो सकती है कि आश्रम के नजदीक १९४७ में हुए दंगे में एक हत्यारे द्वारा मूलशंकर की जीवन-लीला समाप्त हो गयी ! जब श्रीअरविन्द को छुरी के घातक हमले के कारण मूलशंकर की मृत्यु की खबर दी गयी, तो वातावरण विषाद से भर गया। श्रीअरविन्द ने शांति से खबर सुनी और उनके मुख पर ऐसे गंभीर और विचारमग्न भाव दीखे जो हमने पहले कभी नहीं देखे थे। भगवान् के सेवक को छीनकर विरोधी शक्तियों ने खतरनाक विजय पायी थी। अंधकार और प्रकाश की शक्तियों के बीच ऐसा भयंकर संघर्ष गुह्य क्षेत्र में होता रहता है। कई दिनों तक हम विषाद में डूबे रहे, किसी ने भी बातचीत में उस घटना का उल्लेख नहीं किया।

ऐसे कोहरे की धुंध हमारे पुराने साथी डॉक्टर बेचरलाल के द्वारा ही मिट सकती थी, जो सच्चे भक्त थे। श्रीअरविन्द ने कहा था कि उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्ति सच्ची थी। कितनी बार उनकी आंखें आंसुओं से भर आती थीं जब वे अपने "भगवान् को तकलीफ पाते" देखते ! बड़ी आयु के अतिरिक्त उनका भावुक स्वभाव ऐसा था कि वे केवल हल्का काम ही कर पाते थे और हम उन्हें हल्के-फुल्के काम देते थे। वे भी उससे ज्यादा काम की मांग न करते क्योंकि वे अपने-आपको अच्छी तरह जानते थे। वे केवल यही चाहते थे कि अपने प्रभु के निकट रहें और उनकी उपस्थिति का आनंद ले सकें। ऐसा लगता है कि यही उनकी सारे जीवन की साध थी और वह पूर्ण भी हुई। हम उन्हें दादाजी कहते और पूरा सम्मान देते। श्रीअरविन्द की दुर्घटना के प्रारंभिक दिनों में कमरे के शांत वातावरण में हम हठात् सुबकियां सुनते जिन्हें रोकने का कोई व्यर्थ प्रयास करता था। मुड़कर देखने पर हम पाते अपने डॉक्टर को जो अपने "प्रिय प्रभु की दुःखद स्थिति" से द्रवित हो उठते थे। कभी-कभी वे आध्यात्मिक भक्ति के आंसू भी बहाते।

श्रीअरविन्द जब स्नान करके कमरे में आते तो थोड़ी देर आराम करने के लिये अपने दोनों हाथ सिर के पीछे बांध कर लेट जाते। बेचरलाल कभी उनके पीछे या एक ओर बैठकर शेषशायी-से लेटे अपने प्रभु को निहारते रहते। बेचरलाल कहते थे कि ऐसे समय श्रीअरविन्द भगवान् शिव से दीखते थे। तब उनकी तीव्र इच्छा होती कि उन्हें आलिंगन में भर लें। बिस्तर पर सारे अंग पूरी तरह पसारे श्रीअरविन्द अपने सुगठित शरीर पर उप-वस्त्र डाले बिना पूरे बिस्तर को भर देते थे। उनका वह पूर्ण विकसित मस्तिष्क और वह दमकता मुख... वे पार्थिव आडंबरों से अछूते थे, फिर भी संसार के स्वामी-से भव्य थे। यह दृश्य केवल बेचरलाल को ही नहीं, हम सबको मुग्ध कर देता था। बेचरलाल श्रीअरविन्द की उपस्थिति में शांति और परमानंद का अनुभव करते। किन्तु वे अपनी बड़ी उम्र और कमजोरी के कारण बहुत देर तक बैठ न पाते थे। डॉ. मणिलाल ने एक बार कहा था कि हम सबसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बढ़कर बेचरलाल को ही श्रीअरविन्द के सान्निध्य से फायदा हुआ है।

डॉ. बेचरलाल के तीव्र विरोधाभास में डॉ. मणिलाल हर दृष्टि से पक्के व्यवहार-कुशल व्यक्ति थे। चूंकि वे अपना अधिकतर समय बड़ौदा में बिताते थे इस कारण उनकी यहां की सेवाएं सीमित ही थीं। दोनों डॉक्टरों का आश्रम के साथ बहुत समय से संबंध बना रहा था। डॉ. बेचरलाल ने यहां आने से पहले डॉ. मणिलाल के नीचे बड़ौदा में काम किया था। मणिलाल की भक्ति भी सच्ची थी, लेकिन वह और तरह की भक्ति थी, वह कम भावुक और अधिक व्यवहारकुशल थी। श्रीअरविन्द के साथ उनका संबंध सहज और सरल था और हमारे साथ वे हमेशा मधुर और भद्र, मिलनसार थे। बड़े साथियों में जैसा उच्च अधिकारियों का बड़प्पन का व्यवहार होता है वैसा उनका नहीं था। हमारे विनोद, मजाक और हंसी-ठिठोली को बड़ी शालीनता से सह लेते थे। वे हमेशा पूछते रहते कि अतिमानस का अवतरण कब होगा। "वार्ताओं" में मैंने लिखा है कि उनमें शिशु-आत्मा है और वहां उनकी शिशु-आत्मा के कई प्रमाण हैं। मैं एक या दो उदाहरण दे रहा हूं। साधना के विषय में बातें करते हुए श्रीअरविन्द ने उनसे पूछा, "तुम सीधा-आसान मार्ग चाहते हो?"

मणिलाल : सीधे, सरल मार्ग से भी अच्छा मार्ग, हम छोटे बच्चों की तरह गोद में उठाये जाना चाहते हैं। सर, क्या यह संभव है ?

श्रीअरविन्द : क्यों नहीं ? लेकिन फिर तुम्हें सचमुच एक बच्चा होना चाहिये ! (मुस्कुराते हुए) ध्यान करते हो ?

मणिलाल : सर, बहुत कोशिश करता हूं... तब बहुत-सी अवांछनीय बातें परेशान करने आती हैं।

श्रीअरविन्द : कैसी बातें ?

मणिलाल : कुछ अनाप-शनाप बातें...।

श्रीअरविन्द : कोई ऐसी अनाप-शनाप बकवास जैसे तुम्हारे आश्रयदाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराजा की सेवा की या फिर मुसोलिनी का उत्तराधिकारी कौन बनेगा?

मणिलाल : नहीं सर, महाराजा के बारे में विचार कभी-कदास ही आते हैं...। और एक उदाहरण देता हूं। श्रीअरविन्द ने डॉक्टर से पूछा, "तुम्हें ध्यान करने के लिये प्रयास करना पड़ता है?"

मणिलाल : हमेशा नहीं। मैंने आपको बताया था कि कभी-कभी हठात् ध्यान हो जाता है... लेकिन क्या मैंने ठीक ही कहा था कि मैं विचारों को अस्वीकार कर पाता हूं?

श्रीअरविन्द : (मुस्कुराते हुए) मुझे क्या पता?... मैं तो केवल तुम्हारी बात सुनकर उस पर टीका कर रहा था।

मणिलाल : आप नहीं जानते? हम आपको सर्वज्ञ मानते हैं।

श्रीअरविन्द : तुम निश्चय ही यह आशा नहीं करते कि मैं यह जान लूं कि पांडिचेरी के मछुआरों ने कितनी मछलियां आज पकड़ी हैं?...

— नीरदवरण

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा ... ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के ४० रु. और पुरोधा के ५० रु. शीघ्र भेजें। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायेगा, न ही अगला अंक वी. पी. पी. से जायेगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो ८०० रु. देकर अग्निशिखा के और १,००० रु. देकर पुरोधा के आजीवन सदस्य बन सकते हैं। आजीवन सदस्यता २० वर्ष के लिये मानी जायेगी।

संपर्क सूत्र—पुरोधा एवं अग्निशिखा

श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आध्यात्मिक जीवन के लिये व्यावहारिक पथ-प्रदर्शन

आरम्भ कैसे किया जाये

... मनुष्य को चेतना दी गयी है ताकि वह प्रगति कर सके, जिस चीज को वह नहीं जानता उसे खोज निकाले, जो वह अभी तक नहीं है उसमें विकसित हो सके; और इस प्रकार कहा ज़ा सकता है कि निश्चल और स्थिर शांति की अवस्था से ऊंची एक अवस्था है : यह है एक ऐसी सर्वांगपूर्ण आस्था जो प्रगति के संकल्प को बनाये रखने और सब दुश्चिंताओं से — फल और परिणाम की चिंता से मुक्ति द्वारा — प्रगति के प्रयास को सुरक्षित रखने के लिये पर्याप्त हो। यही उन पद्धतियों से अगला चरण है जो "नीरवतावादी" कहलाती हैं, जो समस्त क्रिया-कलाप के त्याग पर तथा एक निश्चलता और आंतरिक शांति में डुबकी लगाने पर आधारित हैं, जिन्होंने सारे जीवन का परित्याग कर दिया क्योंकि एकदम अचानक उन्हें यह अनुभव हुआ कि शांति के बिना आंतरिक सिद्धि नहीं मिल सकती, और स्वभावतया मन में यही आया कि शांति तबतक नहीं मिल सकती जबतक मनुष्य बाह्य परिवेश में रहता है, उस चिंतातुर अवस्था में रहता है जिसमें समस्या तो खड़ी कर दी जाती है, पर समाधान नहीं किया जाता क्योंकि वैसा कर सकने के लिये उसके पास ज्ञान नहीं होता।

इससे अगला चरण है समस्या का सामना करना, लेकिन उस परम शक्ति में अखंड विश्वास की स्थिरता और निश्चयता के साथ, जो जानती है और तुमसे काम करा सकती है। और तब काम छोड़ देने के बजाय उच्चतर शांति में रहकर मनुष्य ऐसा कर्म कर सकता है जो सशक्त और सक्रिय होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही है वह चीज जिसे जीवन में भागवत हस्तक्षेप का नया पहलू, जीवन में दिव्य शक्तियों के हस्तक्षेप का नया रूप, आध्यात्मिक सिद्धि का नया पक्ष कहा जा सकता है।

*

शायद, तुम अचानक एक **अदमनीय** आवश्यकता अनुभव करो कि अब निश्चेतन और अज्ञान में नहीं जीना है, उस अवस्था में नहीं रहना है जिसमें कारण जाने बिना तुम काम करते हो, कारण समझे बिना अनुभव करते हो, विरोधी इच्छाएं रखते हो, किसी चीज के बारे में कुछ नहीं समझते, केवल आदत, दिनचर्या और प्रतिक्रियावश जीते हो, बस जीवन को सहज रूप में लेते हो। और एक दिन आता है जब तुम उससे संतुष्ट नहीं रहते।

तुम देखोगे कि यह हर एक के लिये अलग-अलग है। ज्यादातर यह जानने, समझने की आवश्यकता होती है; कुछ लोगों के लिये यह जो कुछ करना चाहिये और जैसे करना चाहिये उसे वैसा करने की आवश्यकता होती है; कुछ दूसरों के लिये यह एक धुंधली-सी अनुभूति होती है कि इस इतने अचेतन, व्यर्थ और निरर्थक जीवन के पीछे कुछ ऐसी चीज है जो जीने के **लायक** है, जिसे पाना है — एक सद्वस्तु है, इन मिथ्यात्वों और मायाजालों के परे एक सत्य है।

सहसा तुम महसूस करते हो कि जो कुछ तुम कर रहे हो, जो कुछ देख रहे हो उसका कोई अर्थ नहीं, उसके अस्तित्व का कोई हेतु नहीं, लेकिन कहीं **कुछ ऐसा** है जिसका अर्थ है, कि मूलतः हम यहां इस धरती पर किसी काम के लिये हैं, इस सबका, इन सब गतिविधियों का, सब उद्वेगों का, शक्ति और ऊर्जा के इस सारे अपव्यय का जरूर कोई प्रयोजन होना चाहिये, उद्देश्य होना चाहिये, और यह बेचैनी जो हम अपने अंदर अनुभव कर रहे हैं, यह असंतोष, यह आवश्यकता, किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीज के लिये **प्यास** जरूर हमें कहीं ले जायेगी।

और एक दिन तुम अपने-आपसे पूछते हो : "पर हमारा जन्म क्यों हुआ ?... हम मर क्यों जाते हैं ?... हम दुःख क्यों भोगते हैं ?... हम काम क्यों करते हैं ?..."

तब तुम एक छोटी-सी मशीन की तरह नहीं रह जाते, मुश्किल से अर्ध-चेतन। तुम सचमुच अनुभव करना, सचमुच काम करना, सचमुच जानना चाहते हो...।

और तब, यदि तुम प्रश्न करो तो तुम्हें उत्तर मिल जाता है। क्यों ?

क्योंकि, अब हम वैसा जीवन नहीं चाहते जैसा वह है, क्योंकि हम अब मिथ्या और अज्ञान को नहीं चाहते, क्योंकि हम पीड़ा और अचेतनता को और नहीं चाहते, क्योंकि हम अव्यवस्था एवं दुर्भावना को और नहीं चाहते, क्योंकि श्रीअरविन्द हमें यह बताने के लिये आये हैं : 'सत्य' को पाने के लिये धरती को छोड़ने की जरूरत नहीं, अपनी 'अंतरात्मा' को पाने के लिये जीवन का त्याग आवश्यक नहीं, भगवान् के साथ संबंध जोड़ने के लिये संसार का त्याग या सीमित मत रखना जरूरी नहीं है। भगवान् सब जगह हैं, हर वस्तु में हैं और यदि वे छिपे हुए हैं तो इसलिये कि हम उन्हें ढूंढ़ने का कष्ट नहीं उठाते।

मात्र एक सच्ची अभीप्सा द्वारा हम अपने अंदर का मुहरबंद द्वार खोल सकते हैं और पा सकते हैं... वह 'कोई' चीज जो जीवन की सारी सार्थकता को बदल देगी, हमारे सारे प्रश्नों का उत्तर दे देगी, हमारी सारी समस्याओं को हल कर देगी और हमें उस पूर्णता और 'सद्वस्तु' तक ले जायेगी जिसके लिये हम अनजाने अभीप्सा करते हैं, केवल वही हमें संतुष्ट कर सकती है और स्थायी उत्फुल्लता, संतुलन, बल और जीवन दे सकती है...।

आरंभ बिंदु : इच्छा करना, सचमुच चाहना, इसकी जरूरत महसूस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना। अगला चरण : **केवल** उसी के बारे में सोचना। एक दिन आयेगा, बहुत जल्दी आयेगा, जब तुम किसी और चीज के बारे में सोच ही न सकोगे।

यही एक चीज है जिसका कुछ मूल्य है। और इसके बाद...।

तुम अपनी अभीप्सा को शब्दबद्ध करते हो, अपने हृदय से सच्ची प्रार्थना का निर्झर फूटने देते हो, उस प्रार्थना का जो तुम्हारी आवश्यकता की सच्चाई को व्यक्त करती है। और तब... हां, तब, तुम देखोगे कि क्या होता है।

कुछ होगा। निश्चय ही कुछ होगा। हर एक के लिये इसका रूप भिन्न होगा।

मन में शांति कैसे स्थापित की जाये

हम मन में स्थिर शांति और नीरवता कैसे स्थापित कर सकते हैं?

सबसे पहले तुम्हें उसकी चाह होनी चाहिये।

और फिर, तुम्हें कोशिश करनी और लगे रहना चाहिये। कोशिश करते रहो। अभी मैंने जो बतलाया है, वह बड़ा अच्छा उपाय है : और उपाय भी हैं। शुरू के लिये, तुम चुपचाप बैठो, और तब, पचासों चीजों के बारे में सोचने की जगह तुम अपने-आपसे "शांति, शांति, शांति, शांति, शांति, स्थिरता, शांति!" कहना शुरू करो। तुम शांति और स्थिरता की कल्पना करो। अभीप्सा करो, यह मांगो कि वह आ जाये : "शांति, शांति, स्थिरता।" और जब कोई चीज आये, तुम्हें छुए और क्रिया करे तो अचंचलता के साथ कहो : "शांति, शांति, शांति।" विचारों की ओर मत देखो, विचारों की मत सुनो, समझे। जो भी चीज आये उसकी ओर तुम्हें ध्यान नहीं देना चाहिये। तुम जानते हो कि जब कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हें बहुत तंग करता है और तुम्हें उससे पिंड छुड़ाना हो तो तुम उसकी नहीं सुनते, सुनते हो क्या ? अच्छा ! तुम अपना मुंह फेर लेते हो (संकेत), और किसी और चीज के बारे में सोचने लगते हो। तो, तुम्हें वही करना चाहिये : जब विचार आयें तो उनकी तरफ मत देखो, उनकी मत सुनो, उनकी ओर जरा भी ध्यान न दो, ऐसे व्यवहार करो, मानों वे हैं ही नहीं, समझे ! और फिर, सारे समय इस तरह दोहराते रहो — कैसे कहूं ? — एक मूढ़ की तरह, जो सारे समय एक ही बात दोहराता रहता है। तुम भी उसी तरह करो; दोहराते जाओ : "शांति, शांति, शांति।" तुम कुछ मिनटों के लिये यह प्रयास करो और फिर, तुम्हें जो करना हो करो; और फिर, एक बार, फिर से शुरू करो; बैठ जाओ और प्रयास करो। सवेरे उठते समय यह करो, रात को सोते समय यह करो। तुम यह कर सकते हो... देखो, अगर तुम अपना भोजन भली-भांति हजम करना चाहो तो खाने से पहले कुछ मिनट यही करो। तुम कल्पना नहीं कर सकते कि इससे तुम्हारे पाचन को कितनी सहायता मिलेगी ! खाना शुरू करने से पहले थोड़ी देर के लिये चुपचाप बैठ जाओ और कहो : "शांति, शांति, शांति !" और **सब कुछ** स्थिर हो जाता है। ऐसा लगता है मानों सभी आवाजें दूर, दूर, दूर चली जा रही हैं (माताजी दोनों बांहें दोनों तरफ फैलाती हैं), और तब तुम्हें जारी रखना चाहिये; तब ऐसा समय आता है जब तुम्हें बैठने की जरूरत नहीं होती, तुम चाहे कुछ भी क्यों न कर रहे हो, तुम चाहे कुछ भी कह रहे हो, हमेशा "शांति, शांति, शांति," चलता रहता है। हर चीज ऐसे रहती है (माथे के आगे संकेत), वह अंदर नहीं आ सकती, ऐसे ही रहती है। और तब तुम हमेशा पूर्ण शांति में रहते हो... कुछ वर्षों के बाद।

लेकिन आरंभ में, यह बहुत ही छोटा आरंभ होता है, दो-तीन मिनट, यह बहुत सरल है। ज्यादा जटिल चीज के लिये तुम्हें प्रयास करना पड़ेगा, और जब तुम प्रयास करते हो तो अचंचल नहीं रह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते। अचंचल रहते हुए प्रयास करना कठिन है। बहुत सरल, बहुत सरल, इन चीजों में तुम्हें बहुत सरल होना चाहिये। यह ऐसा है मानों तुम अपने मित्र को बुलाना सीख रहे हो : बुलाने के संकेत से ही वह आ जाता है। हां, तो शांति और स्थिरता को अपना मित्र बना लो, और उन्हें बुलाओ : "आओ, शांति, शांति, शांति, शांति, आओ!"

*

मां, मुझे अधिक शांत बनाओ।

हर बार जब तुम्हें बेचैनी का अनुभव हो तो तुम्हें बाहर आवाज दिये बिना, साथ ही मेरे बारे में सोचते हुए, अपने अंदर बोलते हुए यह दोहराना चाहिये :

"शांति, शांति, हे मेरे हृदय!" तुम इसे लगातार कहो और परिणाम से तुम्हें खुशी होगी।

*

मानसिक हस्तक्षेप से मुक्ति पाने के लिये क्या करना चाहिये?

मन को नीरव रहना सीखना होगा — उसे रहना होगा स्थिर, जागरूक और नीरव। यदि तुम मन को सीधे ही मौन करने की चेष्टा करो तो यह बड़ा कठिन होता है, प्रायः असंभव होता है; क्योंकि मन का जो अत्यंत स्थूल अंश है वह कभी अपनी क्रिया बंद नहीं करता, वह बिना रुके रेकार्ड करनेवाली मशीन की तरह निरंतर चलता ही रहता है। जो कुछ वह अंकित करता है उसे दोहराता रहता है, जबतक उसे बंद करने का बटन नहीं होता तबतक वह चलता ही रहता है, और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनिश्चित काल तक चलता ही रहता है। दूसरी ओर, यदि तुम अपनी चेतना को किसी उच्चतर लोक में, सामान्य मन से ऊपर, ले जाओ तो इस तरह ज्योति की ओर उद्‌घाटित होने से मन स्थिर हो जाता है, अब वह हिलता-डुलता नहीं, और इस प्रकार जो मन की नीरवता प्राप्त होती है वह स्थायी बन सकती है। उस लोक में एक बार प्रवेश कर जाने के बाद, तुम कभी उससे एकदम बाहर नहीं आ सकते — बाह्य मन सदा ही स्थिर बना रहता है।

बस, सच्चा समाधान है उच्चतर प्रकाश के लिये अभीप्सा करना।

एकाग्रता को विकसित कैसे किया जाये

... जीवन में तुम कुछ भी करना चाहो, एक चीज नितांत अपरिहार्य है और **सबके** मूल में है, वह है ध्यान एकाग्र करने की क्षमता। यदि तुम एक बिंदु पर ध्यान और चेतना की किरणों को केन्द्रित करने में सफल हो जाते हो और इस एकाग्रता को दृढ़ संकल्प द्वारा बनाये रख सकते हो तो **ऐसी कोई चीज नहीं** जो इसका प्रतिरोध कर सके — चाहे कुछ भी क्यों न हो, नितांत जड़-भौतिक विकास से लेकर उच्चतम आध्यात्मिक विकास तक। पर इस अनुशासन का पालन निरंतर, या यूं कहें, निर्विकार रहते हुए करना चाहिये; यह नहीं कि हमेशा एक ही चीज पर एकाग्र रहना होगा — मेरा मतलब यह नहीं है, मेरा मतलब है एकाग्रता सीखने से।

*

... एकाग्रता एक ऐसी स्थिति है जिसमें तुम्हें हमेशा रहना चाहिये — बाहरी क्रिया-कलाप कुछ भी क्यों न हो। एकाग्रता से मेरा मतलब है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समस्त ऊर्जा, समस्त इच्छा, समस्त अभीप्सा केवल भगवान् और हमारी चेतना में उनके सर्वांगीण रूप से चरितार्थ होने की ओर मुड़ी रहे।

*

यह प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि समस्या को हल करने, कोई पाठ पढ़ने के लिये बहुत अधिक एकाग्रता और लवलीनता की — बौद्धिक लवलीनता और एकाग्रता की — आवश्यकता होती है। परंतु एकाग्रता केवल बौद्धिक वस्तु ही नहीं है, यह सत्ता की सभी क्रियाओं में, यहांतक कि शारीरिक क्रियाओं में भी, पायी जा सकती है। अपनी स्नायुओं पर तुम्हारा ऐसा संयम होना चाहिये कि तुम जो कुछ करते हो उसपर पूर्ण रूप से एकाग्र हो सको और, अपनी एकाग्रता की तीव्रता के द्वारा ही बाह्य स्पर्शों के प्रति तुरत प्रत्युत्तर प्राप्त कर लो। ऐसी एकाग्रता प्राप्त करने के लिये शक्तियों के ऊपर सचेतन प्रभुत्व प्राप्त करने की आवश्यकता होती है।

क्या तुम उन शक्तियों के प्रति सचेतन हो जिन्हें तुम ग्रहण करते और खर्च करते हो ?

मनुष्य जब कोई शक्ति खर्च कर देता है, विशेषकर जब वह उसे अत्यधिक नष्ट कर देता है तो वह उसके विषय में कम या अधिक सचेतन होता है ! यहां मुख्य प्रश्न है ग्रहण और व्यय के बीच के सतत विनिमय का ! समझ आने से पहले छोटे बच्चे बहुत सारी शक्ति ग्रहण करते हैं और उसे खुले दिल से, बिना सोचे-विचारे खर्च करते हैं और इस कारण बिना थके लगातार घंटों खेलते रहते हैं। परंतु धीरे-धीरे, जैसे-जैसे विचार विकसित होता है वैसे-वैसे, मनुष्य खर्च की हुई शक्ति को नापना-तौलना और उसका हिसाब लगाना आरंभ कर देता है — साधारणतया यह निरर्थक है, क्योंकि तुम्हें जबतक शक्ति ग्रहण करने की प्रक्रिया का ज्ञान नहीं हो जाता तबतक ग्रहण की हुई शक्ति को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने अंदर निष्क्रिय रखने की जगह मुक्त रूप से खर्च करते रहना ही अधिक अच्छा है।

सबसे पहले तुम्हें शक्तियों को ग्रहण करने के विषय में, अपनी सत्ता में उनके प्रवेश करने तथा खर्च हो जाने के विषय में सचेतन होना चाहिये। दूसरे, तुम्हारे अंदर एक प्रकार की उच्चतर सहजवृत्ति होनी चाहिये जो तुम्हें यह बता दे कि अत्यंत अनुकूल शक्तियां कहां से आती हैं; फिर तुम विचार के द्वारा, स्थिरता के द्वारा अथवा किसी दूसरी प्रक्रिया के द्वारा — बहुत-सी प्रक्रियाएं हैं — उन शक्तियों के साथ अपना संपर्क स्थापित करो। तुम्हें इस बात का ज्ञान होना चाहिये कि तुम किस शक्ति को चाहते हो, वह कहां से आती है और उसमें क्या है। उसके बाद ही ग्रहण की हुई शक्ति पर संयम प्राप्त होता है। नब्बे प्रतिशत लोग पर्याप्त शक्ति ग्रहण नहीं करते या बहुत अधिक ग्रहण करते हैं और जो कुछ ग्रहण करते हैं उसे हजम नहीं करते — ज्यों ही वे काफी मात्रा में ले चुकते हैं त्यों ही ही तुरत-फुरत अशांत-अचंचल बनकर, बातचीत करके, शोरगुल मचाकर या अन्य उपायों से उसे बाहर फेंक देते हैं। तुम्हें यह जानना चाहिये कि ग्रहण की हुई शक्ति को किस प्रकार अपने अंदर बनाये रखा जाता है और किसी दूसरी चीज पर नहीं, केवल अभीप्सित क्रिया पर उसे पूर्णतः एकाग्र किया जाता है। यदि तुम यह कर सको तो तुम्हें अपनी इच्छा का उपयोग करने की आवश्यकता नहीं होगी। तुम्हें बस आवश्यकता होगी गृहीत शक्तियों को एक साथ एकत्र करने तथा उन्हें सचेतन रूप में व्यवहृत करने की, जो कुछ तुम चाहते हो उसे संपन्न करने के लिये अधिक-से-अधिक तल्लीनता के साथ एकाग्र होने की।

फिर तुम जो करना **चाहते हो** — तुम्हारी सत्ता का उच्चतर भाग जो करना चाहता है — तुम्हें उसका सच्चा मूल्य आंकना आना चाहिये, क्योंकि मनुष्य जो कुछ करना **चाहता है** उसे करना कठिन नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाग्रता क्या है ?

इसका अर्थ है अपनी चेतना के बिखरे हुए सभी धागों को एक ही बिंदु पर, एक ही भाव या विचार पर वापस ले आना। जो लोग पूर्ण मनोयोग की स्थिति प्राप्त करने में समर्थ होते हैं वे जो कार्य हाथ में लेते हैं उसीमें सफल होते हैं; वे हमेशा तेज प्रगति करते हैं। और इस प्रकार की एकाग्रता ठीक मांसपेशी की भांति विकसित की जा सकती है; इसके लिये मनुष्य प्रशिक्षण के विभिन्न पथों, विभिन्न पद्धतियों का अनुसरण कर सकता है। उदाहरण के लिये, तुम जानते हो कि अत्यंत दयनीय दुर्बल व्यक्ति भी नियमित अभ्यास के द्वारा किसी भी अन्य व्यक्ति के समान बलशाली हो सकता है। मनुष्य का संकल्प ऐसा नहीं होना चाहिये जो मोमबत्ती की तरह झिलमिला कर बुझ जाये।

संकल्प-शक्ति को, एकाग्रता की शक्ति को अवश्य बढ़ाना चाहिये; बस, प्रश्न है पद्धति का, नियमित अभ्यास का। यदि तुम चाहो तो कर सकते हो।

परंतु संकल्प को कमजोर बनाने के लिये यह विचार नहीं उठना चाहिये कि 'भला इससे क्या लाभ ?' यह भावना कि मनुष्य एक विशिष्ट स्वभाव लेकर पैदा होता है और उस विषय में कुछ भी नहीं कर सकता, एक मूर्खतापूर्ण बात है।

*

एकाग्रता और संकल्प-शक्ति को कैसे बढ़ाया जाये ? कोई भी काम करने के लिये इनकी बहुत आवश्यकता होती है।

एक नियमित, अध्यवसायी, कठोर, अविचल अभ्यास के द्वारा — मेरा अभिप्राय है एकाग्रता और संकल्प-शक्ति के अभ्यास द्वारा।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब मैं तुम्हें कोई विचार देती हूं, तो वह केवल एकाग्र होने में सहायता देने के लिये होता है...। कुछ संप्रदाय तुम्हारे सामने कोई चीज रख देते हैं– एक फूल या पत्थर, कुछ इसी तरह की चीज, और फिर तुम सब उसके इर्द-गिर्द बैठकर उसपर एकाग्र होते हो और तुम्हारी आंखें इस तरह स्थिर हो जाती हैं (माताजी आंखें कुछ भैंगी करके दिखाती हैं) जबतक कि तुम वह विषय-वस्तु ही न बन जाओ। एकाग्रता का यह भी एक तरीका है। उस तरह लगातार, बिना हिले-डुले देखने से, अंत में, जिस वस्तु को तुम देखते हो उसमें प्रवेश पा जाते हो। लेकिन तुम्हें सब तरह की चीजों को देखना शुरू नहीं कर देना चाहिये : स्थिरता से उसी को देखो वह तुम्हें एक ऐसा रूप देती है जो... तुम्हें भैंगा कर देती है।

यह सब एकाग्रता सिखाने के लिये है। बस, इतना ही।

कभी-कभी इनमें से कोई वाक्य बहुत गहन सत्य को व्यक्त करता है। यह उन सौभाग्यशाली वाक्यों में से होता है जो बड़े भावपूर्ण होते हैं। अतः यह पीछे स्थित सत्य को पाने में तुम्हारी सहायता करता है।

*

तुम किसी चीज पर एकाग्र होते हो या जहांतक तुम्हारे लिये संभव हो अपने-आपको एकत्र करते हो और जब तुम अपनी एकाग्रता में एक प्रकार की पूर्णता प्राप्त कर लो और यदि इस पूर्णता को पर्याप्त दीर्घकाल तक बनाये रख सको तो एक दरवाजा खुल जाता है और तुम अपनी सामान्य चेतना की सीमा के परे चले जाते हो– तुम एक गभीरतर या उच्चतर ज्ञान में प्रवेश कर जाते हो अथवा अपने अंदर पैठ जाते हो। तब तुम एक प्रकार की चकाचौंध करनेवाली ज्योति का, एक आंतरिक चमत्कार का, एक प्रकार के आनंद, पूर्ण ज्ञान, पूर्ण निश्चल-नीरवता का अनुभव करते हो। निःसंदेह, ऐसी अनेक संभावनाएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं पर घटनाक्रम हमेशा एक जैसा ही होता है।

इस अनुभव को प्राप्त करना पूरी तरह इस बात पर निर्भर है कि अपनी एकाग्रता को उसकी पूर्णता के सर्वोच्च शिखर पर पर्याप्त लंबे काल तक बनाये रखने की तुम्हारे अंदर कितनी क्षमता है।

*

... वास्तव में एक बिंदु को लेने में बहुत सुविधा रहती है : व्यक्ति बिंदु को स्थिर दृष्टि से देखता रहता है, इतनी स्थिर दृष्टि से कि अमुक समय पर वह स्वयं बिंदु बन जाता है। तब वह बिंदु को देखनेवाला व्यक्ति नहीं रहता, वह स्वयं बिंदु होता है। और फिर, यदि पर्याप्त शक्ति और शांति के साथ, बिना किसी बाधा के तुम इसे जारी रखो, तो तुम सहसा अपने-आपको एक द्वार के आगे पा सकते हो जो खुल जाता है और तुम उस पार चले जाते हो। और तब तुम्हें अंतःप्रकाश मिलता है।

*

श्रीअरविन्द की सेवा में पूरी सचाई के साथ अपना मन अर्पण करने के लिये, क्या यह जरूरी नहीं है कि एकाग्रता की शक्ति को बहुत विकसित किया जाये ? क्या आप मुझे बतलायेंगी कि इस बहुमूल्य क्षमता को विकसित करने के लिये मुझे क्या करना चाहिये ?

एक समय निश्चित कर लो जब तुम हर रोज शांत-स्थिर हो सको।

श्रीअरविन्द की कोई एक पुस्तक ले लो। दो-एक वाक्य पढ़ो। तब गहरा अर्थ समझने के लिये नीरव और एकाग्र रहो। काफी गहराई में एकाग्र होने की कोशिश करो ताकि तुम मानसिक नीरवता पा सको, और फिर, जबतक कोई परिणाम न मिल जाये तबतक इसी तरह रोज करते रहो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वभावतः तुम्हें सो न जाना चाहिये।

*

(एक बालक) किसी गणित के प्रश्न के लिये, कभी तो उसका उत्तर बहुत जल्दी मिल जाता है, कभी बहुत अधिक समय लगता है।

हां, ठीक यही बात है : यह एकाग्रता की मात्रा पर निर्भर है। अगर तुम अपना अवलोकन करो तो यह बात अच्छी तरह देख सकोगे। जब उत्तर नहीं आता तो उसका कारण यह होता है कि दिमाग में एक प्रकार की अस्पष्टता होती है, कुछ मेघाच्छन्न-सा कहीं पर कुहरे जैसा, और तब तुम वहां ऐसे होते हो मानों सपने में हो। तुम उसे पाने के लिये आगे बढ़ते हो परंतु ऐसा लगता है मानों रूई के फाहों में आगे बढ़ रहे हो, तुम्हें वहां स्पष्ट दिखायी नहीं देता, इसलिये कुछ नहीं आता। तुम घंटों इसी अवस्था में रह सकते हो।

एकाग्रता ठीक इस बादल को हटाना है। तुम अपनी बुद्धि के सभी तत्त्वों को इकट्ठा करके एक बिंदु पर जमा देते हो और तब सक्रिय रूप से चीज को पाने की कोशिश भी नहीं करते। तुम सिर्फ इतना करते हो कि इस प्रकार एकाग्र हो सको कि केवल प्रश्न ही दिखायी दे — केवल सतह पर ही न दिखायी दे, बल्कि अपनी गहराई में दिखायी दे, जो उसमें छिपा है वह दिखायी दे। अगर तुम अपनी सभी मानसिक ऊर्जाओं को इकट्ठा कर सको, उन्हें एक निश्चित बिंदु पर लाकर समस्या के हल के लिये जमाये रख सको और वहीं बंधे रहो मानों तुम किसी दीवार में छेद करनेवाले हो तो अचानक हल आ जायेगा। और यही एक तरीका है। अगर तुम कोशिश करो, क्या यह रास्ता है, क्या वह है?... तो तुम्हें कुछ न मिलेगा या तुम्हें घंटों लग जायेंगे। तुम्हें अपनी मानसिक शक्तियों को एक बिंदु पर ला सकना चाहिये, इतनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्ति के साथ जो शब्दों को छेदकर उनके पीछे की चीज पर पहुंच सके। वही पाने लायक चीज है, उसपर झपट पड़ो।

अपने निश्चय को दृढ़ कैसे बनाया जाये

मधुर मां, हम अपने निश्चय को बहुत दृढ़ कैसे बना सकते हैं?

यह चाहने से कि वह बहुत दृढ़ हो! (हंसी)

नहीं, यह मजाक-सा लगता है... पर है एकदम सत्य। आदमी सचमुच चाहता नहीं। हमेशा ही, अगर तुम... यह सचाई का, निष्कपटता का अभाव है। अगर तुम सचाई से देखो, तो यही पाओगे कि तुमने निश्चय कर लिया है कि यह ऐसा होगा, और तब, नीचे ही एक चीज है जिसने यह निश्चय बिलकुल नहीं किया है और वह ऊपर उछल आने के लिये क्षण-भर की हिचकिचाहट की प्रतीक्षा कर रही है। अगर तुम सच्चे हो, अगर तुम निष्कपट हो और उस भाग को पकड़ लो जो छिपा हुआ है, प्रतीक्षा में है, जो अपने-आपको दिखाता नहीं, जो यह जानता है कि अनिश्चय का एक ऐसा क्षण होगा जब वह बाहर झपट सकेगा और तुमसे वही चीज करवा लेगा जिसे न करने का तुमने निश्चय किया है...

लेकिन अगर **सचमुच** तुम उसे चाहते हो, तो दुनिया की कोई चीज तुम्हें उस चीज को करने से नहीं रोक सकती जिसे तुम करना चाहते हो। यह इसलिये होता है कि तुम जानते नहीं कि संकल्प कैसे करना चाहिये। यह इसलिये होता है क्योंकि तुम अपनी इच्छा में **बंटे** हुए होते हो। अगर तुम अपनी इच्छा में बंटे हुए न हो तो मैं कहती हूं, दुनिया-भर में कोई चीज, कोई व्यक्ति तुमसे अपनी इच्छा नहीं बदलवा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन, तुम इच्छा या संकल्प करना ही नहीं जानते। तथ्य तो यह है कि तुम चाहते ही नहीं। ये छोटी-छोटी इच्छाएं हैं : "हां, तो ऐसा है...। अगर मैं ऐसा होता तो अच्छा रहता... हां, अगर ऐसा होता तो ज्यादा अच्छा रहता... हां, ऐसा होना ज्यादा अच्छा है...।" **यह** संकल्प करना नहीं है। और हमेशा इसके पीछे कहीं, दिमाग के किसी कोने में से कोई चीज झांकती और कहती है : "मैं क्यों ऐसा चाहूं भला ? आखिर, हम इसका उल्टा भी चाह सकते हैं।" और फिर, कोशिश करना...। इस तरह नहीं, बस, प्रतीक्षा करो...। तुम हमेशा इससे उल्टा करने के लिये हजारों बहाने निकाल सकते हो। और हां, बस जरा-सी हिचकिचाहट काफी है... फट्ट... चीज नीचे झपट पड़ती है, और लो खत्म। लेकिन अगर तुम **संकल्प करो**, अगर तुम सचमुच जानो कि यही चीज है, और सचमुच उसी को चाहो और अगर तुम **स्वयं** पूरी तरह से इस संकल्प पर एकाग्र हो, तो मैं कहती हूं, दुनिया की **कोई चीज** तुम्हें उसे करने से न रोक सकेगी, उसे करने से या उसे करने के लिये बाधित होने से। यह इसपर निर्भर है कि वह क्या है।

आदमी चाहता है। हां, आदमी चाहता है, इस तरह (संकेत)। आदमी चाहता है : "हां, हां, अगर ऐसा हो तो ज्यादा अच्छा होगा। हां, यह ज्यादा सुंदर होगा, ज्यादा शानदार होगा।"... लेकिन आखिर आदमी एक दुर्बल प्राणी है, है न ? और तब तुम हमेशा किसी और को दोष दे सकते हो : "हां, यह बाहर से आनेवाला प्रभाव है, यह सब तरह की परिस्थितियों के कारण है।"

सांस गुजर गयी है। तुम नहीं जानते... कोई चीज... एक क्षणभर की निश्चेतना... "ओह, मैं सचेतन नहीं था।" तुम सचेतन नहीं हो क्योंकि तुम स्वीकार नहीं करते...। और यह सब इसलिये कि तुम संकल्प करना नहीं जानते।

संकल्प करना सीखना बहुत जरूरी चीज है। और सचमुच संकल्प

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने के लिये तुम्हें अपनी सत्ता को एक बनाना होगा। वास्तव में, एक सत्ता होने के लिये, पहले तुम्हें अपने-आपको एक करना चाहिये। अगर तुम एकदम विरोधी प्रवृत्तियों के द्वारा विरोधी दिशाओं में खींचे जाओ, अगर तुम अपने जीवन का तीन-चौथाई भाग अपने बारे में सचेतन हुए बिना, जो तुम करते हो उसका कारण जाने बिना बिताओ तो क्या तुम एक वास्तविक सत्ता हो ? तब तुम्हारा अस्तित्व नहीं होता। तुम प्रभावों, गतिविधियों, शक्तियों, क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं की राशि होते हो, पर एक सत्ता नहीं होते। तुम सत्ता तब बनना शुरू करते हो जब तुम्हारे अंदर संकल्प होना शुरू हो। और संकल्प तबतक नहीं हो सकता जबतक कि तुम एक न हो।

और जब तुम्हारे अंदर संकल्प हो, तो तुम कह सकोगे, तुम भगवान् से कह सकोगे : "मैं वही चाहता हूं जो तुम चाहो।" उससे पहले नहीं। क्योंकि वही चाहने के लिये जो भगवान् चाहते हैं, तुम्हारे अंदर संकल्प होना चाहिये, अन्यथा तुम किसी चीज के लिये संकल्प नहीं कर सकते। तुम चाहोगे। तुम बहुत अधिक चाहोगे। तुम बहुत अधिक चाहोगे कि वही चाहो जो भगवान् चाहते हैं। तुम्हारे पास संकल्प नहीं है जिसे तुम उन्हें दे सको, उनकी सेवा में लगा सको। कुछ इस तरह की चीज, लिजलिजी-सी, जेलीफिश के जैसी... वहां...। शुभेच्छाओं का ढेर — और मैं ज्यादा अच्छे पक्ष की सोच रही हूं और दुर्भावनाओं को भुला रही हूं — सदिच्छाओं का अर्ध-चेतन, उतराता हुआ ढेर...

बस, इतना ही, मेरे बालको ! आज के लिये यह काफी है। लो बस, अच्छा।

बस, इसे अभ्यास में उतारो; मैंने जो कहा है, उसका जरा-सा अंश, पूरा नहीं, बस, जरा-सा।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकल्प : समर्थता की ओर मुड़ी हुई चेतना की शक्ति।

*

तुम्हारी प्रकृति में जो नहीं है उसे पाने के लिये, जिसे तुम अभीतक नहीं जानते उसे जानने के लिये, जिस काम को तुम अभीतक नहीं कर सकते उसे कर सकने के लिये तुम्हारे अंदर अटल संकल्प होना चाहिये।

तुम्हें व्यक्तिगत कामना के अभाव से आनेवाले प्रकाश और शांति में निरंतर प्रगति करनी चाहिये।

*

ज़रा-सा सच्चा-निष्कपट और नियमित अभ्यास, बहुत-से अल्पजीवी प्रणों से कहीं अधिक मूल्यवान् है।

अच्छी तरह किस भांति सोया जाये

अच्छी तरह सोने के लिये मनुष्य को यह सीखना चाहिये कि कैसे सोया जाता है।

यदि कोई शरीर से बहुत थका हुआ हो तो यह अधिक अच्छा है कि वह तुरत न सो जाये, अन्यथा वह निश्चेतना में जा गिरेगा। यदि कोई बहुत थका हो, उसे बिछौने पर हाथ-पैर फैलाकर लेट जाना चाहिये, अपने-आपको शिथिल कर देना चाहिये, सभी नसों को एक-के-बाद एक ढीला छोड़ देना चाहिये जबतक कि मनुष्य बिछौने पर पड़े हुए एक कपड़े की तरह न बन जाये, मानों उसमें न तो हड्डियां हों और न मांसपेशियां। जब मनुष्य यह कर चुके, यही चीज फिर मन में भी करनी चाहिये। शिथिल छोड़ दो, किसी विचार पर एकाग्र मत होओ या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई समस्या हल करने की कोशिश मत करो या दिन में प्राप्त धारणाओं, संवेदनों या भावावेगों की जुगाली मत करो। उस सबको चुपचाप अपने मन से झड़ जाने देना चाहिये : तुम अपने-आपको छोड़ देते हो, तुम सचमुच एक चिथड़े के जैसे बन जाते हो। जब तुम ऐसा करने में सफलता प्राप्त कर लेते हो, वहां हमेशा एक नन्हीं-सी लौ विद्यमान होती है, वहां — वह लौ कभी बुझती नहीं और तुम जब इस शिथिलीकरण को करने में सफल हो जाते हो तब इस लौ के विषय में सचेतन हो जाते हो। और एकदम अचानक यह नन्हीं लौ धीरे-धीरे दिव्य जीवन की, सत्य की, भगवान् की चेतना प्राप्त करने की, आंतर सत्ता के साथ एकत्व प्राप्त करने की अभीप्सा के साथ ऊपर उठती है, यह क्रमशः ऊपर की ओर उठती है, यह, इस प्रकार, बहुत धीरे-धीरे ऊपर, ऊपर-ही-ऊपर उठती जाती है। तब सब कुछ वहां एकत्र हो जाता है, और यदि उस क्षण तुम सो जाते हो तो तुम्हें यथासंभव सबसे अच्छी नींद आती है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूं कि यदि तुम इसे सावधानी के साथ करो तो तुम्हें निस्संदेह नींद आ जायेगी, और फिर तुम एक अंधी खाई में गिर पड़ने के बदले प्रकाश में सोओगे, और जब सवेरे उठोगे तो अपने को ताजा, तन्दुरुस्त, संतुष्ट, प्रसन्न तथा दिनभर के लिये स्फूर्ति से भरपूर अनुभव करोगे।

*

नींद का अर्थ निश्चेतना में जा गिरना न होना चाहिये जिससे शरीर ताजा होने की जगह, भारी हो जाये। संयत भोजन हो और सब प्रकार की अतियों से परहेज रहे तो सो सकने से पहले कई घंटे खराब करने की जरूरत नहीं पड़ती। फिर भी, नींद की मात्रा की अपेक्षा, उसके गुण का महत्त्व अधिक है। अगर नींद से सचमुच लाभदायक विश्राम पाना हो तो बिस्तर पर जाने से पहले, उदाहरण के लिये, दूध, सूप या फल के रस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का एक प्याला पी लेना लाभदायक होता है। हल्का भोजन शांतिपूर्ण नींद लाता है। हर हालत में, तुम्हें बहुत अधिक भोजन से बचना चाहिये। क्योंकि उससे नींद खराब और अशांत होती है और दुःस्वप्न आते हैं या नींद भारी, स्थूल और तामसिक हो जाती है, लेकिन सबसे जरूरी चीज है मन को निर्मल रखना, भावनाओं को अचंचल रखना, इच्छाओं की बुदबुदाहट और उसके साथ की चेष्टाओं को शांत करना सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। यदि कोई सोने से पहले बहुत बोल चुका हो, जोरों से बहस कर चुका हो, कोई बहुत मजेदार और उत्तेजक चीज पढ़ चुका हो तो ज्यादा अच्छा यह है कि सोने से पहले थोड़ा आराम कर लिया जाये ताकि मन के क्रिया-कलाप शांत हो जाएं और जब केवल शरीर सो रहा हो तब मस्तिष्क असंयत गतिविधियों में न फंसा रहे। दूसरी ओर, अगर तुम्हें ध्यान का अभ्यास है तो ज्यादा अच्छा होगा कि तुम कुछ क्षणों के लिये किसी उच्च और विश्रामदायक विचार पर उच्चतर और महानतर चेतना के लिये अभीप्सा करते हुए, अपने मन को एकाग्र करो। इससे तुम्हारी नींद को बहुत लाभ होगा और तुम बड़ी हदतक, नींद में निश्चेतना में जा गिरने के भय से सुरक्षित रहोगे।

*

तुम्हें पीठ पर सीधे लेट जाना चाहिये और अपनी सभी मांसपेशियों और सभी स्नायुओं को ढीला छोड़ देना चाहिये — यह सीखना आसान है — एकदम ऐसा होना चाहिये जिसे मैं बिस्तर पर पड़े लत्ते जैसा होना कहती हूं, और कुछ भी नहीं रहता। और अगर तुम मन के साथ भी यही कर सको, तो तुम उन सभी मूर्खताभरे सपनों से पिंड छुड़ा सकते हो जो तुम्हें जागने पर, बिस्तर पर जाते समय की अपेक्षा ज्यादा थका देते हैं। मस्तिष्क की कोषीय गतिविधि ही बिना नियंत्रण के निरंतर चलती रहती है और यह तुम्हें बहुत थका देती है। अतः एक पूर्ण शिथिलता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक तरह की पूर्ण निश्चलता जिसमें कोई तनाव न हो, जिसमें सब कुछ थम जाये, होनी चाहिये। लेकिन यह तो आरंभ मात्र है।

बाद में, तुम अधिकाधिक पूर्ण आत्मदान करो, सभी चीजों का, ऊपर से लेकर नीचे तक, बाहर से लेकर अन्दर तक सबका। और अपने अहं के सारे प्रतिरोध का अधिकाधिक पूर्ण रूप से उन्मूलन करो। और बाद में तुम अपना मन्त्र जपना शुरू करो — तुम्हारा अपना मन्त्र, अगर तुम्हारे पास कोई हो तो, या कोई भी शब्द जिसमें तुम्हारे लिये शक्ति हो, ऐसा शब्द जो प्रार्थना की तरह, सहज रूप में हृदय से प्रकट हो, ऐसा शब्द जो तुम्हारी अभीप्सा को समाहित करे। उसे निश्चित बार दोहराने के बाद, अगर तुम अभ्यस्त हो तो समाधि में चले जाओ। और उस समाधि से होकर नींद में प्रवेश करो। समाधि उतनी देर रहती है जितनी देर रहनी चाहिये और फिर सहज, नैसर्गिक रूप से तुम नींद में चले जाते हो...।

उन लोगों के लिये भी जो कभी समाधि में नहीं गये, सोने से पहले कोई मन्त्र या शब्द जपना या प्रार्थना करना अच्छा है। लेकिन शब्दों में जीवन होना चाहिये; मेरा मतलब बौद्धिक अर्थ से नहीं है, उस तरह की किसी चीज से नहीं, बल्कि स्पंदन से है। और उसका शरीर पर असाधारण प्रभाव होता है : उसमें स्पंदन आरंभ हो जाता है, वह स्पंदित, स्पंदित, स्पंदित होता है... और फिर शांति से तुम अपने-आपको छोड़ दो, मानों तुम सोना चाहते हो। शरीर अधिकाधिक स्पंदित होता है। अधिकाधिक, अधिकाधिक स्पंदित होता है और तुम दूर चले जाते हो। तमस् का यही उपचार है...।

*

तुम्हें दो चीजें निकाल बाहर करनी चाहियें : निश्चेतना की जड़ता को जो तुम्हारे ऊपर अवचेतना की सभी चीजों के साथ और ऊपर उठती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई निश्चेतना के साथ मिलकर आक्रमण करती है और तुम्हारे अंदर प्रवेश पा लेती है और दूसरी चीज है प्राणिक और मानसिक अति-क्रियाशीलता जिसमें तुम शब्दशः भयंकर युद्ध लड़ते हुए अपना समय गुजारते हो। लोग उस अवस्था में से आहत होकर निकलते हैं, मानों उन्हें घूंसे लगे हों। और उन्होंने सचमुच घूंसे खाये भी "मानों" नहीं ! और मैं इससे बाहर निकलने का एक ही रास्ता जानती हूं — नींद की प्रकृति को बदलना।

*

... ऐसे अनेक व्यक्ति हैं जिनको दिन से अधिक रात थका देती है, और इसका कारण उनकी पकड़ में नहीं आता। उन्हें इन कारणों को समझना चाहिये, तभी उनकी इच्छा-शक्ति उन कारणों पर कार्य करना आरंभ कर सकेगी और उनका प्रभाव दूर कर सकेगी, दूसरे शब्दों में, उन चेष्टाओं को रोकेगी जो ऐसी स्थितियों में प्रायः सदा ही व्यर्थ और हानिकारक भी होती हैं।

*

आदर्श है पूर्ण विश्राम में प्रवेश करना, अर्थात्, शरीर में निश्चलता, प्राण में पूर्ण शांति, मन में पूर्ण नीरवता का होना — और सभी क्रियाओं से निकलकर चेतना का सच्चिदानंद में जाना। अगर तुम यह कर सको, तो जागते समय तुम एक असामान्य शक्ति, एक संपूर्ण आनंद के भाव के साथ उठोगे। लेकिन ऐसा करना बहुत अधिक आसान नहीं है। इसे किया जा सकता है; यह आदर्श अवस्था होती है।

*

सोने से पहले, जब तुम सोने के लिये लेटो, तो भौतिक रूप से अपने-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको शिथिल करना शुरू करो (मैं इसे कहती हूं बिस्तर पर लत्ता बन जाना)।

फिर अपनी भरसक सचाई के साथ, अपने-आपको, पूर्ण शिथिलता में भगवान् के हाथों में समर्पित कर दो, और... बस इतना ही।

जबतक तुम सफल न हो कोशिश करते रहो और फिर तुम देखोगे।

आशीर्वाद।

सोसायटी समाचार

२१ फरवरी २००३ श्रीमां की १२५वीं वर्षगांठ थी। आश्रम का वातावरण भक्ति और कृतज्ञता से परिपूर्ण था। श्रीमां तथा श्रीअरविन्द के कमरे दर्शनार्थ सवेरे से खोल दिये गये और देर रात तक दर्शनार्थियों ने दर्शन किया। शाम को आश्रम के क्रीडांगण में मार्च-पास्ट तथा आश्रम के वाद्य-वृन्द का लघु कार्यक्रम हुआ। कार्यक्रम का समापन सामूहिक ध्यान के साथ हुआ। इस विशेष अवसर पर जो फोल्डर बंटा उसमें श्रीमां के चित्र के साथ ये दो सन्देश भी थे —

मैं तुम्हें आशार्वाद देती हूं, जैसा कि मैं अपने सभी बच्चों को देती हूं — चाहे वे दुनिया के किसी कोने में हो और तुमसे कहती हूं, "अपने-आपको तैयार करो, मेरी सहायता हमेशा तुम्हारे साथ होगी।"

— श्रीमां

तुम्हें बस यही करना है कि अपने-आपको श्रीमां के हाथों में सौंप दो और सेवा, भक्ति तथा अभीप्सा द्वारा स्वयं को उनके प्रति खोलो; तब मां अपने प्रकाश और अपनी शक्ति द्वारा तुम्हारे अंदर काम करेंगी ताकि साधना सम्पन्न हो सके।

— श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत के राष्ट्रपति डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम श्रीमां के १२५वें जन्मदिवस के शुभ अवसर पर आश्रम आये थे। उन्होंने श्रीमां तथा श्रीअरविन्द के कमरों के दर्शन किये, विद्यार्थियों के साथ बातचीत की। सवेरे उन्होंने पांडिचेरी में अभिषेकपक्कम् स्थान पर नवनिर्मित 'अरविन्द आई हॉस्पिटल' का उद्‌घाटन किया।

दर्शन के अवसर पर १७ से २२ फरवरी तक कई कार्यक्रम तथा प्रदर्शनियों का आयोजन किया गया। इन सभी कार्यक्रमों के केन्द्र में श्रीमां की इस वाणी का पुट समाया हुआ था – "कृतज्ञता के जितना आनंद कोई और चीज तुम्हें नहीं दे सकती। तुम एक पक्षी को चहचहाते सुनते हो, सुन्दर पुष्प को निहारते हो, छोटे बच्चे को देखते हो, कृतज्ञता के किसी कार्य को देखते हो, कोई सुन्दर वाक्य पढ़ते हो, अस्तोन्मुख सूरज को देखते हो – वह चाहे कुछ भी क्यों न हो – अचानक इस तरह की चीज, इस तरह की भावुकता जो इतनी गहरी, इतनी तीव्र होती है– तुम्हें अभिभूत कर देती है कि जगत् भगवान् को अभिव्यक्त कर रहा है, कि जगत् के परे कुछ ऐसा है जो भगवान् है।"

सोसायटी के 'बीच ऑफिस' में क्षेत्रीय गुजरात समर्पण कमिटी ने श्रीमां की १२५वीं वर्षगांठ के शुभोपलक्ष्य पर १८ फरवरी को विशेष कार्यक्रम किया। साथ ही तीन आश्रमवासियों की शताब्दी-वर्ष के उपलक्ष्य में भी कार्यक्रम हुआ। पहले नीरदवरण श्रीमां के विषय में बोले। उन्होंने कहा कि प्रकृति अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिये बहुत-से यंत्र पा लेती है, लेकिन सबसे अधिक भव्य अभिव्यक्ति तो तब होती है जब मानवता को उठाने के लिये भागवत सत्ता स्वयं मानव चोगा धारण करने के लिये तैयार हो जाती है। और उन्होंने यह भी जोड़ा, सचमुच प्रभु के साथ हमारी मां का तादात्म्य इतना पूर्ण था कि उन्होंने यह घोषणा की "सृष्टि के प्रारम्भ से जब कहीं और जहां कहीं चेतना की एक किरण को अभिव्यक्त करने की संभावना थी, वहां मैं उपस्थित थी।" डॉ.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाडकर्णी चम्पकलाल जी पर बोले (२.२.१९०३-९.५.१९९२) और डॉ. डी. जाडेजा द्युमान् भाई (१९.६.१९०३-१९.८.१९९२) पर। कार्यक्रम के अंत में श्री मनोज दास गुप्त ने नीरदवरण (जन्म १७.११.१९०३) के अनेकविध व्यक्तित्व के बारे में बोलते हुए कहा कि श्रीअरविन्द के साथ नीरद दा के सतरंगी संबंध की व्याख्या हम श्रीअरविन्द के इस सूत्र के शब्दों से कर सकते हैं –

जगद्गुरु भगवान् का शिष्य बनना, जगत्पिता भगवान् का पुत्र होना, जगन्माता भगवान् का स्नेह पाना, दिव्य सुहृद् का हाथ पकड़े रहना, अपने दिव्य सहचर तथा बाल-सखा के साथ हंसना-खेलना, स्वामी भगवान् की आनन्दपूर्वक सेवा करना, अपने दिव्य प्रेमी से उल्लास के साथ प्रेम करना – मानव शरीर में जीवन के ये सात प्रकार के आनंद हैं। क्या तू इन सबको एक ही सर्वोत्तम सतरंगी संबंध के अंदर युक्त कर सकता है ? तब तुझे किसी स्वर्ग की आवश्यकता न रहेगी और तू अद्वैतवादी की मुक्ति का भी अतिक्रमण कर जायेगा।

सोसायटी के बीच ऑफिस में ६ से १० जनवरी २००३ तक शिक्षा के बारे में शिविर लगा जिसमें मुम्बई के २८ अध्यापक-अध्यापिकाओं ने भाग लिया। शिविर का संचालन किया श्रीविजय, श्रद्धालु, दिलीपभाई, रिचर्ड तथा श्रीमती अंजना बेन ने।

वडोदरा के श्रीअरविन्द निवास में ४ तथा ५ फरवरी २००३ को गुजरात प्रांत के सभी केन्द्रों तथा शाखाओं की ३१वीं वार्षिक सभा का आयोजन हुआ। कई केन्द्रों के व्यक्तियों ने इसमें भाग लिया। इसमें यह निश्चय किया गया कि गुजरात के विभिन्न स्थानों पर सर्वांगीण शिक्षा तथा युवकों को उठाने के लिये बड़े पैमाने पर काम किया जाये। ३ सदस्यों के दल ने श्रीअरविन्द की कुछ किताबों का गुजराती में अनुवाद करने का भी बीड़ा उठाया। ज्योतिबेन थानकी, अश्विन भाई कापड़िया, शरदभाई जोशी तथा कीर्तिभाई ठक्कर के भाषण भी हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पश्चिम बंगाल के सोसायटी के केन्द्रों और शाखाओं की सभा ८ तथा ९ जनवरी २००३ को सिलीगुड़ी में हुई। श्री गोपाल भट्टाचार्य ने इसका संचालन किया। वे टाटानगर (जमशेदपुर) भी गये, वहां ११ तथा १८ जनवरी को उनके भाषण हुए।

रायचूर (कर्णाटक) शाखा ने ३१ दिसम्बर २००२ को शैक्षिक शिक्षण का वीडियो दिखलाया जिसकी शूटिंग उन्होंने आश्रम में की थी। पहली जनवरी २००३ को 'शारदा केबल' पर भी उसे प्रसारित किया गया।

हैदराबाद शाखा ने भी श्रीमां की १२५वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में कई भाषणों का आयोजन किया। इसमें भाषणकर्ता थे — डॉ. प्रेमा नन्द कुमार, डॉ. सच्चिदानन्द महन्ती, डॉ. आनन्द रेड्डी, प्रो. सुप्रिय भट्टाचार्य, श्रद्धावान् तथा जॉर्ज वैन ब्रेखेम।

नडियाद शाखा ने दो शिक्षा-शिविरों का आयोजन किया, एक था— २३ नवम्बर २००२ को जिसका संचालन किया वडोदरा की रंजनाबेन वैद्य ने जिसमें ५१ शिक्षकों ने भाग लिया और दूसरा था ६ जनवरी २००३ जिसे संचालित किया ज्योतिबेन थानकी ने। इसमें भाग लिया ६० शिक्षकों ने।

नैरोबी (केन्या) में २५ दिसम्बर को श्रीअरविन्द पर एक सेमिनार का आयोजन किया जिसके अन्तर्गत छह भाषण हुए — श्रीअरविन्द का जीवन, श्रीअरविन्द का कार्य, श्रीअरविन्द शिक्षा पर, श्रीअरविन्द भारतीय सभ्यता पर, श्रीअरविन्द का सर्वांगीण योग तथा सावित्री पाठ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द डिवाइन लाइफ एजुकेशन सेन्टर, झुंझुनू
श्रीअरविन्द दिव्य जीवन शिक्षा-केन्द्र, झुंझुनू (राजस्थान)

श्रीअरविन्द सोसायटी द्वारा स्थापित इस संस्था का मूल उद्देश्य श्रीअरविन्द व श्रीमां के मनुष्य जाति के लिये दिव्य जीवन के स्वप्न को साकार करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये यह केन्द्र ऐसे श्रद्धालुओं के समूह के निर्माण की अभीप्सा रखता है जिनके जीवन का केवल यही उद्देश्य हो।

यह केन्द्र पूर्ण रूप से आवासीय है जिसमें छात्र-छात्राओं की शिक्षा, आवास व भोजन पूर्णतः निःशुल्क है। शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी है। शैक्षणिक सत्र हर वर्ष १५ अगस्त से प्रारंभ होता है तथा केवल ६ से १२ वर्ष तक की आयु के बच्चों को ही प्रवेश दिया जाता है।

यह केन्द्र पूर्ण शिक्षा प्रदान करने तथा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिये समस्त साधन प्रदान करने की अभीप्सा रखता है। जो अभिभावक अपने बच्चों के लिये सरकारी प्रमाण-पत्र, डिग्री व डिप्लोमा की आकांक्षा नहीं रखते अपितु उनकी सत्ता के केन्द्रीय सत्य के अनुरूप उनके पूर्ण व सर्वांगीण विकास की अभीप्सा रखते हैं और अपने बच्चों को इस शिक्षण-संस्था में प्रवेश दिलाने के इच्छुक हैं, वे पूरी सूचना के लिये निम्नलिखित पते पर संपर्क करें।

जो आध्यात्मिक पिपासु इस केन्द्र के कार्य में सहयोगी होना चाहते हैं तथा अपना जीवन इस कार्य में लगाकर साधनामय जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, वे लोग अधिक जानकारी के लिये संपर्क करें :

श्रीअरविन्द डिवाइन लाइफ एजुकेशन सेन्टर
मीरा अम्बिका भवन, खेतान मोहल्ला
पो॰- झुंझुनूं – ३३३००१ (राजस्थान)
टेलीफोन – (०१५९२) ७२३५६१५
e-mail: srimaa@vsnl.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

सन्देश

साधना-पथ पर चलने के लिये तुम्हारे अंदर निर्भीक वीरता होनी चाहिये, तुम्हें कभी इस हीन, तुच्छ, दुर्बल और कुत्सित वृत्ति अर्थात् भय के कारण पीछे नहीं हटना चाहिये।

दुर्दमनीय साहस, पूर्ण सचाई, सर्वांगपूर्ण आत्मदान – इस हद तक कि तुम कभी हिसाब या मोल-तोल न करो, तुम इसलिये न दो कि तुम पाओगे, तुम इस उद्देश्य से आत्मोत्सर्ग न करो कि तुम सुरक्षित रहोगे, तुम ऐसी श्रद्धा न रखो जिसे प्रमाण की आवश्यकता हो, इस पथ पर अग्रसर होने के लिये यह सब अनिवार्य है, बस यही तुम्हें सब विपत्तियों से बचने के लिये आश्रय प्रदान कर सकता है।

– श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'संपादकीय' :

अर्घ्य

हम देख चुके हैं कि कपालि शास्त्री जैसे प्रकाण्ड पण्डित ने माताजी के सच्चे रूप को देखकर उन्हें भगवान् का नारी-अवतार मानकर प्रणाम किया था। यह कैसी क्रांतिकारी घोषणा थी! संसार ने स्त्री को अवतार-रूप में अभी तक स्वीकारा न था। वह संत हो सकती है, वीरांगना, पुरुष-अवतार के साथ अर्धांगिनी के रूप में विष्णु की अर्धांगिनी लक्ष्मी हो सकती है किन्तु स्वतंत्र रूप से उसे अवतार कपालि शास्त्री ने ही स्वीकारा था। वे माताजी का अभिवादन ऐसी मधुर वाणी में करते हैं,

नरकुलशक्तिं नवयुग-युक्ताम्
अबलामतिकृतबन्धन-मुक्ताम्।

जो प्रकाश दुर्बलता तथा अज्ञान की बेड़ियों से जकड़ी मानवजाति को मुक्त करता है, नये युग में उसे ढालने के लिये उपयुक्त बनाता है, उस नारी-प्रकाश को नमन।

इस वर्ष उस 'नारी-प्रकाश-अवतार' माताजी का १२५वां जन्म-वर्ष सारा भारत भक्ति और श्रद्धा से मना रहा है।

हम जानते हैं भगवान् मनुष्य-शरीर तब धारण करते हैं जब संसार में संघर्ष, अनैतिकता और अंधकार की शक्तियां मानवजाति पर ऐसी हावी हो जाती हैं कि मनुष्य मतिभ्रमित होकर गुमराह हो जाता है। उसका विवेक सुप्त रहता है। ऐसे समय मनुष्य को अपनी दिव्य संभावना की ओर जगाने के लिये भगवान् मानव शरीर में आते हैं।

जब मानव समाज अर्ध-पाशविक, तामसिक और राजसिक प्रकृति के अधीन था, जब उसका अपने ऊपर नियंत्रण कम था तब सात्त्विक प्रकृति को जगाने और मनुष्य के सामने आदर्श रखने के लिये श्रीराम का अवतार आया। उन्होंने समाज के सामने आदर्श पुत्र का, आदर्श भाई का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और आदर्श पति का रूप अपने जीवन में जीकर दिखाया। जब सिंहासन पर आसीन थे तब आदर्श राजा का रूप दिखाने के लिये अपने व्यक्तिगत सुख को तिलांजलि देकर सीता का परित्याग किया।

प्रत्येक अवतार ने पृथ्वी पर आकर मानवजाति को प्रगति का अगला कदम दिखलाया।

पिछली दो शताब्दियों में हमने मानवजाति को फिर से कई चक्रव्यूहों में फंसा हुआ पाया। इन दो शताब्दियों में हमने दो विश्व-युद्ध देखे जिनके जैसे युद्ध इतिहास में कहीं मिलते नहीं। वे जैसे अकल्पनीय, लोमहर्षक युद्ध थे वैसे ही विध्वंसक भी थे। ऐसे समय श्रीअरविन्द और माताजी ने मनुष्यों को असह्य यातना, यंत्रणाओं से और मिथ्या जीवन-प्रणाली से बचाने के लिये अवतार लिया। उन्होंने मानवजाति को न केवल हिटलर के आसुरिक साम्राज्य से बचाया बल्कि उच्चतर जीवन की तथा नये आदर्श की झांकी भी दी।

जिस आदर्श को वे चरितार्थ करना चाहते थे उसे जीवन में लाने के लिये कई लोग उनके पास आकर रहने लगे। इस तरह श्रीअरविन्द आश्रम की स्थापना हुई। माताजी और श्रीअरविन्द आश्रम के साधकों की हर छोटी-बड़ी समस्या में सहायता देते थे। उदाहरण के लिये जन्म-दिवस!

आजकल हर परिवार अपनी क्षमता के अनुसार जन्मदिन मनाता है। अमीर बड़ी पार्टी देते हैं जिसमें खूब शोर होता है, गाना, नाचना और तरह-तरह के पकवान परोसे जाते हैं। बहुत उपहारों से लदकर जन्म-दिवस मनानेवाला प्रसन्न हो उठता है। साधारणतः प्रायः सब अपना जन्मदिन इसी तरह मनाते हैं। शायद उन्हें पता नहीं है कि वे कितना दुर्लभ अवसर गंवा रहे हैं।

माताजी तथा श्रीअरविन्द का कहना है कि जीवन के हर पक्ष को भगवान् को साथ रखकर अपनाना चाहिये। इस आदर्श के अनुसार आश्रम में विद्यालय भी है जहां शिक्षा के कई नये तरीके अपनाये जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखें, माताजी जन्म-दिवस के विषय में क्या कहती हैं। वे एक किशोर को जन्म-दिवस का महत्त्व समझाती हैं। माताजी – "मेरे बालक, तुझे पता है जन्म-दिवस का अर्थ क्या है ? उस दिन सबको उस व्यक्ति के प्रति अपनी शुभ कामना व्यक्त करनी चाहिये।

"सचमुच, वह व्यक्ति के जीवन का अति विशिष्ट दिन होता है। सारे वर्ष में वही ऐसा खास दिवस है जव परमात्मा व्यक्ति के हृदय में प्रवेश करते हैं। उस दिन हमारा शाश्वत के साथ सीधा संपर्क हो पाता है। व्यक्ति थोड़ा प्रयास करे तो कई जन्मों का काम विजली की तेजी से उस एक दिन में हो पाता है। प्रभु उस दिन हमें ऊंचे-से-ऊंचे स्तर पर उठा कर हमारा उस स्तर के साथ तादात्म्य स्थापित करते हैं। किसी भी व्यक्ति के लिये भगवान् मानों अपना दरवाजा खुला रखते हैं। वह प्रभु का हमारे लिये उपहार होता है। उस दिन हमारे लिये जो प्राप्त करना कठिन हो वह भी आसान हो जाता है क्योंकि वह दिन परम कृपा का दिन होता है।"

फिर उस किशोर ने पूछा – "हमें अपना जन्म-दिवस किस तरह मनाना चाहिये ?"

माताजी ने कहा – "तुम्हें अपने जीवन का लक्ष्य समझने का प्रयास करना चाहिये।"

इसका अर्थ है कि तुम्हें यह जानने की कोशिश करनी चाहिये कि भगवान् ने तुम्हें धरती पर कौन-सा काम करने के लिये भेजा है।

परम करुणामयी माताजी ने मानवजाति के लिये प्रेमवश जन्म लिया था और उन्होंने अविस्मरणीय कार्य किये। उनकी कृपा के प्रति हम अपनी कृतज्ञता किस तरह व्यक्त करें ?

उनके १२५वें जन्म-वर्ष पर क्यों न हम अपनी किसी कमजोरी को जीतकर उसका अर्घ्य अर्पित कर उन्हें प्रसन्न करें ?

– अनुवेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

मई

१. एकमात्र प्रत्युत्तर जो कभी निराश नहीं करता भगवान् का प्रत्युत्तर है।
एकमात्र प्रेम जो कभी निराश नहीं करता भगवान् का प्रेम है। एकमात्र भगवान् से प्रेम करो और भगवान् हमेशा तुम्हारे साथ रहेंगे।

२. आदर्श वृत्ति है केवल भगवान् का ही होना, केवल भगवान् के लिये ही कार्य करना और सबसे बढ़कर, केवल भगवान् से ही बल, शांति और संतोष की आशा करना। भगवान् परम दयालु हैं और वह सब देते हैं जिसकी हमें लक्ष्य तक जितनी जल्दी हो सके पहुंचने के लिये जरूरत हो।

३. हमारे समस्त विचार, हमारी सभी संवेदनाएं, समस्त कार्य, सभी आशाएं 'भगवान्' की ओर मुड़ी और 'उन्हीं' पर केंद्रित हों। 'वे' हमारी एकमात्र सहायता, हमारी एकमात्र सुरक्षा हैं।

४. भगवान् के लिये स्नेह : एक मधुर, विश्वासपूर्ण कोमलता जो अपने-आपको अविरत रूप से भगवान् के अर्पण करती है।

५, अपने-आपको भगवान् के प्रति अर्पित करना, भगवान् को ग्रहण करना और वही बनना, भगवान् को संचारित करना और फैलाना, ये तीन युगपत् होनेवाली गतियां हैं जिनसे भगवान् के साथ हमारा पूर्ण संबंध बनता है।

६. मनुष्य के विधान के अनुसार अपराधी को दण्ड मिलना चाहिये। लेकिन एक विधान है जो मानव-विधान की अपेक्षा अधिक अनिवार्य है। वह है 'भागवत' विधान, अनुकम्पा और दया का विधान। इसी विधान के कारण संसार बना हुआ है और 'सत्य' तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रेम' की ओर प्रगति कर सकता है।

७. भगवान् के प्रति अपने समर्पण में सच्चे और संपूर्ण बनो तो तुम्हारा जीवन सामंजस्यपूर्ण और सुंदर बन जायेगा।

८. अपने आध्यात्मिक लक्ष्य तक पहुंचने के लिये सच्चे बनो, यानी उसे ही अपने जीवन का एकमात्र उद्देश्य बनाओ।

९. महत्त्वपूर्ण बात है अधिक-से-अधिक सच्चा होना, हमेशा अधिक सच्चा होना जिससे तुम अपने-आपको अपनी अभीप्सा की पूर्णता में कभी धोखा न दो।
यह सचाई निश्चित रूप से 'भागवत कृपा' लाती है।
आशीर्वाद।

१०. अभीप्सा करते चलो तो आवश्यक प्रगति आकर रहेगी।

११. हमें हर रोज सभी भूलों, सभी अंधकारों, सभी अज्ञानों पर विजय पाने की अभीप्सा करनी चाहिये।

१२. 'भागवत कृपा' सबके लिये समान रूप से है, लेकिन हर एक उसे अपनी सचाई के अनुसार पाता है। वह बाहरी परिस्थितियों पर नहीं, सच्ची अभीप्सा और उद्घाटन पर निर्भर होती है।

१३. हमेशा अपने समर्पण में एकाग्र रहो और अपनी अभीप्सा में सच्चे-निष्कपट रहो तो तुम हमेशा भगवान् की सहायता और उनके पथ-प्रदर्शन की उपस्थिति का अनुभव करोगे।

१४. 'भागवत कृपा' हमेशा तुम्हारे साथ है। नीरव मन से अपने हृदय में एकाग्र होओ और निश्चय ही तुम उस पथ-प्रदर्शन और सहायता को पा लोगे जिसके लिये तुम अभीप्सा करते हो।

१५. मुक्ति तीव्र श्रद्धा में है।
अन्तिम विश्लेषण में, 'परम प्रभु' ही सब कुछ करते हैं।
हमें निष्ठावान् यंत्र होना चाहिये।

१६. यात्रा चाहे जितनी लंबी हो और यात्री चाहे जितना महान्, अंत में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरत होती है 'भागवत कृपा' पर ऐकांतिक सतत निर्भरता की।

१७. लोग यह मानते हैं कि 'भागवत कृपा' का अर्थ तुम्हारे सारे जीवन के लिये चीजों को सरल बना देता है। यह सच नहीं है। 'भागवत कृपा' तुम्हारी अभीप्सा को चरितार्थ करने के लिये कार्य करती है और सबसे तत्पर और शीघ्र चरितार्थता के लिये हर एक चीज व्यवस्थित की जाती है।

१८. भक्ति : विनयशील और सुरभित, यह बदले में कुछ चाहे बिना अपने-आपको देती है।

१९. जीवन को भगवान् के प्रति अर्पित पुष्प की भांति खिलना चाहिये।

२०. भगवान् को किया गया एकमात्र अर्पण ही मनुष्य को सचमुच समृद्ध बनाता है।

२१. निवेदन है निष्पत्ति, जब 'प्रकाश' तुम्हारी सत्ता के सभी भागों को आलोकित कर देता है, केंद्रीय इच्छा जब अनुभवों, विचारों, संवेदनाओं, क्रियाओं पर कार्य करती हुई उन्हें हमेशा भगवान् की ओर मोड़ती है और जब तुम अंधकार से प्रकाश की ओर या मिथ्यात्व से सत्य की ओर या दुःख से सुख की ओर नहीं बल्कि प्रकाश से अधिक प्रकाश, सत्य से अधिक ऊंचे सत्य और सुख से बढ़ते हुए सुख की ओर गति करते हो।

२२. सच्चा और निष्कपट आत्मदान ही मनुष्य को सभी कठिनाइयों और खतरों से बचाता है।

२३. समस्त जीवन भगवान् की ओर अभिमुख, भगवान् के अर्पित, भगवान् की सेवा में हो, ताकि थोड़ा-थोड़ा करके भगवान् की अभिव्यक्ति बन जाये।

२४. अगर तुम सचमुच उचित रीति और समग्र रूप से भगवान् को समर्पित हो तो तुम हर क्षण वही होगे जो तुम्हें होना चाहिये, वही करोगे जो तुम्हें करना चाहिये, और वही जानोगे जो तुम्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानना चाहिये।

लेकिन उसके लिये तुम्हें अहंकार की सभी सीमाओं को पार करना होगा।

२५. हमारी निरंतर प्रार्थना है कि हम भगवान् की इच्छा को समझ सकें और उसके अनुसार जी सकें।

२६. भगवान् हमेशा ही विजयी होते हैं लेकिन अपने ही तरीके से, मानव तरीके से नहीं, अपनी ही इच्छा से, मानव इच्छा से नहीं। प्रभु हमेशा उपस्थित हैं; केवल हम इस बात को अनुभव नहीं करते।

२७. अगर तुम 'आनंद' में रहना चाहते हो तो तुम्हें अपनी इच्छा को 'भगवान्' पर लादने की कोशिश नहीं करनी चाहिये, बल्कि इसके विपरीत, तुम्हें समान शांति के साथ 'उनकी' ओर से जो कुछ आये उसे स्वीकार करने के लिये तैयार रहना चाहिये; क्योंकि हमारी प्रगति के लिये क्या अच्छा है इसे वे हमसे ज्यादा अच्छी तरह जानते हैं।

२८. 'भागवत प्रेम' और ज्ञान को हमेशा हमारे विचारों और क्रियाओं पर शासन करना चाहिये।

२९. सिर्फ वही जो प्रेम करता है, प्रेम को पहचान सकता है। जो अपने-आपको सच्चे निष्कपट प्रेम के साथ देने में असमर्थ हों, वे कभी कहीं भी प्रेम को न पहचान पायेंगे और प्रेम जितना ही दिव्य होगा, यानी जितना निःस्वार्थ होगा वे उसे उतना ही कम पहचान सकेंगे।

३०. 'प्रेम' की ऐसी प्यास होती है जिसे कोई भी मानवीय संबंध नहीं बुझा सकता। केवल 'भागवत प्रेम' ही उसे संतुष्ट कर सकता है।

३१. आत्मदान के बिना प्रेम होता ही नहीं; लेकिन मानव-प्रेम में आत्म-दान बहुत विरल है, वह स्वार्थों और मांगों से भरा रहता है।

— 'श्रीमातृवाणी' खण्ड १४ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

परिचारक गण

डॉक्टर सत्येन्द्र एक नम्र, अच्छे स्वभाव के व्यक्ति थे। जो काम दिया गया हो, उसे शांति से, स्थिर गति से करते रहते। कुछ समय के लिये वे श्रीअरविन्द के कमरे की खिड़कियों और फर्नीचर की सफाई करते थे। सेवा के लिये तत्पर रहते किन्तु आगे बढ़ने के लिये न उत्सुक थे और अति उत्साही भी न थे। उन्होंने हमारे साथ घनिष्ठ और सुखद संबंध बनाये रखा था। कभी कहते कि वे एकांत-प्रिय हैं और भक्ति द्वारा व्यक्तिगत अनुभूति प्राप्त करने के लिये ज्यादा उत्सुक हैं। वे कहते कि कर्मयोग उनके स्वभाव के अनुकूल नहीं पड़ता। उनका झुकाव कैसा भी हो, हमने देखा कि वे अपना काम कर्मयोगी की तरह उन प्रभु की सेवा सच्ची भक्ति से करते थे जिन्हें वे हमेशा 'सर' कह कर संबोधित करते थे। श्रीअरविन्द के साथ बात करते समय उनके स्वभाव के विनोदी पक्ष, दर्शन में रुचि, राजनीति में और रहस्यवाद में उनकी सूक्ष्म दृष्टि प्रकट होती थी। सत्येन्द्र की सर्वांगीण योग और अतिमानस के बारे में निरन्तर शिकायत के बावजूद ऐसा लगता था कि श्रीअरविन्द को उनका संग, उनकी शान्त भक्ति अच्छी लगती थी। प्रभु लेटे रहते तब उनके नाखून संवारते समय सत्येन्द्र वही पुरानी कहानी दोहराते रहते कि व्यक्तिगत स्पर्श आवश्यक है, कि उनके भूतपूर्व गुरु के साथ उनका कितना घनिष्ठ संबंध था। श्रीअरविन्द उनके पूर्व गुरु-विरह के एकालाप को शान्ति से सुनते रहते। गीत में दोहराती टेक की तरह उनका एक ही कथन बार-बार था कि गुरु की ओर से प्रेम की अभिव्यक्ति होनी ही चाहिये। उत्तर में श्रीअरविन्द कहते कि व्यक्ति की चेतना का गुरु की चेतना के साथ ऐक्य पाना — वह है बीज और उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐक्य का उत्तम पुष्प है प्रेम। मानव और दिव्य प्रकृति के चतुर द्रष्टा श्रीअरविन्द ने सुसंगत टीका कर दी कि इस योग में केवल दो व्यक्ति संपूर्ण समर्पण कर पाये हैं; वे हैं माताजी और श्रीअरविन्द। माताजी ने श्रीअरविन्द को और श्रीअरविन्द ने माताजी को समर्पण किया है। उदाहरण के रूप में उन्होंने यह घटना सुनायी — एक दिन श्रीअरविन्द बिस्तर पर लेटे थे, और छत का पंखा जोरों से चल रहा था। सत्येन्द्र को महसूस हुआ कि श्रीअरविन्द को कुछ परेशानी हो रही थी, तो वे गुरु के पास गये, पूछा, "सर, आप कुछ चाहते हैं ?" श्रीअरविन्द बोले, "ओह, कुछ नहीं, न... यहां नीरद है ?" सत्येन्द्र ने कहा, "नहीं हैं। सर, मैं कुछ कर दूं ?" श्रीअरविन्द का उत्तर आया, "मैं सोच रहा था कि क्या पंखे की गति धीमी हो सकती है ?" फिर श्रीअरविन्द ने पूछा, "कर सकते हो ?" श्रीअरविन्द मुझे बुलाना चाहते थे क्योंकि पंखे की देख-भाल का काम माताजी ने मुझे सौंपा था। इसलिये श्रीअरविन्द माताजी के नियम को तोड़ना न चाहते थे। पंखे की गति को धीमा करने के पीछे भी यही नियम था। एक बार श्रीअरविन्द के कमरे में माताजी ने प्रवेश किया तो देखा कि पंखा पूरी रफ्तार से चल रहा है। यह देख वे बोलीं, "ओह, कैसा तूफान हो रहा है !" एक और उदाहरण भी है। हम लोग मेज का पंखा श्रीअरविन्द के ज्यादा पास लाना चाहते थे, उन्होंने कहा, "ना, माताजी ने उसे यहीं रखा है।" इस तरह हमने छोटी-छोटी नगण्य-सी दीखनेवाली बातों में भी नम्रता और आज्ञापालन सीखा, केवल बड़ी बातों में ही नहीं।

माताजी ने अभी कुछ दिन पहले (सन् ५० के बाद) सत्येन्द्र को उनके जन्म-दिवस पर कहा था कि माताजी से उनके साक्षात्कार से पहले श्रीअरविन्द उनके पास सूक्ष्म रूप से आये थे और उन्होंने माताजी से कहा कि सत्येन्द्र ने उनके शरीर की देख-भाल अच्छी तरह की थी। श्रीअरविन्द की यह कितनी हृदयस्पर्शी स्वीकृति थी ! गुरु ने अपना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर छोड़ने के बाद भी शिष्य के सदय कार्य, सहायता के लिये उसे याद रखा ! कितनी दिव्य, भव्य उदारता ! हम यह भी जानते हैं कि जिस किसी ने उनकी दुर्घटना के बाद उनके छोटे-वड़े काम किये थे; उन सब पर किसी न किसी तरह, चाहे भौतिक या आध्यात्मिक रूप से, उन्होंने अपना विशेष अनुग्रह किया था।

हमारे दल के सदस्य पुराणी, जिनका उल्लेख मैं अन्त में कर रहा हूं, श्रीअरविन्द के पुराने साथी थे। उनका श्रीअरविन्द के साथ का संवंध बड़ौदा के समय से था। मैं उनके विषय में अधिक कहना नहीं चाहता क्योंकि उनकी लिखी हुई पुस्तकों की प्रत्येक पंक्ति प्रभु के प्रति उनके गभीर प्रेम और श्रद्धा को स्पष्ट दिखाती है। अपने प्रभु के लिये वे कुछ भी करने को तत्पर थे। वे हमारे दल में अपनी ज़िन्दादिली और जोश से प्रसन्नता लाते थे। प्रभु की सेवा के लिये उन्होंने जिस समय का चुनाव किया था वह था रात के दो बजे से लेकर सवेरे छह बजे तक का समय ! उनके इस चुनाव से हमें बहुत राहत मिल गयी। वे मानों रात के अंधेरे में उभर आते और कहते, "लो, मैं यहां हूं।" रात्रि का सारा समय उनका अपना था। वे सारी रात जगे रहते, जब कि पास लेटे हुए लोग खर्राटें भरते रहते। बीच-बीच में हम मानों स्वप्न में श्रीअरविन्द को मृदु, मधुर आवाज में कुछ मांगते हुए सुनते और पुराणी सैनिक की भांति नपे कदम बढ़ाते हुए अपने जनरल की आज्ञा सुनकर उनके पास जाते। श्रीअरविन्द की परिचित आवाज सुनकर अगर हम जग जाते तो हमेशा उस व्यक्ति की छाया देख पाते। वे थे पुराणी। तव उस व्यक्ति की आकृति दिन के उस सक्रिय युवा की न होती जिससे हम परिचित थे, वल्कि एक धीर गंभीर व्यक्ति का चेहरा होता जो केवल काम ही जानता हो और कुछ भी नहीं। जिस समय श्रीअरविन्द उनकी निःसन्देह निर्विवाद संपत्ति हों उस समय और किसी का दखलअंदाज करना उनके लिये असह्य होता। मैं अब समझ पाया कि उन्होंने ऐसा समय क्यों चुना था,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताकि वे पूरी तरह एकाग्र, एकचित्त होकर काम कर पायें और प्रभु के साथ एकदम अकेले उनका सान्निध्य पा सकें। आधी रात अपनी शगुनात्मक गहराई से सबको प्रभावित करती है। श्रीअरविन्द की दुर्घटना के प्रारंभिक दिनों में पुराणी की सेवा का विशेष महत्त्व था उनके शारीरिक बल का, जिसके बिना श्रीअरविन्द को इधर-उधर उठा कर ले जाना मुश्किल हो जाता। हमने देखा कि श्रीअरविन्द को चलाते समय वे उनकी दायीं ओर सुदृढ़ बैसाखी-से बने रहते। उसके बाद एक विशाल हाथ के पंखे को वे जिस तरह झलते थे, वह भी उनकी विशेषता थी।

उनकी आश्चर्यजनक ऊर्जा-शक्ति छोटी-बड़ी चीजों की परवाह न करती। वे अनजाने में दरवाजे से टकरा जाते या बेचारी माचिस को लात मार देते। टकराहट सुनकर श्रीअरविन्द पूछते, "क्या हुआ ?" हम हंसकर मजे से कहते, "पुराणी आये।" और वे मुस्कुरा देते। वे पुराणी के स्वभाव से अच्छी तरह परिचित थे। एक बार उनसे श्रीअरविन्द के अंगूठे को चोट लग गयी। श्रीअरविन्द ने टीका की, "तुम हमेशा चीजें गिरा देते हो या उनसे टकराते हो !" हम लोग आपस में पुराणी के बारे में जो हंसी-मजाक करते थे श्रीअरविन्द ने वह सब एक बार माताजी को भी सुनाया था।

लेकिन रात को उसी पुराणी को अपने चारों ओर बड़े ग्रंथ लेकर फर्श पर बैठे देखो ! उस समय उनका चेहरा कितना धीर-गंभीर होता! अपने काम में मग्न एक संस्कृत पंडित ! श्रीअरविन्द अपने बिस्तर पर बैठे, मसनद से पीठ टिकाये, पुराणी को वैदिक शब्दों की धातु और उनके अनेक व्युत्पन्न अर्थों को ढूंढ़ने को कहते रहते। पुराणी शब्दकोशों में या सायण के भाष्यों में ढूंढ़ने लगते, फिर उन्हें पढ़कर सुनाते और लिख लेते। गुरु किसी मंत्र की व्याख्या धीमी आवाज में करते, कभी पुराणी की ओर देखते या कभी ज्यादा जांच करने के लिये कहते। बीच-बीच में श्रीअरविन्द गावतकिये पर बायीं कुहनी टिकाते, कभी वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिसक जाये तो फिर से उसे खींच कर अपने स्थान पर लाते। बीच में उन्हें किसी चीज की आवश्यकता होती, तो पीछे देखते कि कोई पास है या नहीं और फिर से श्रुतलेख शुरू करते। गंभीर और आज्ञाकारी शिष्य गुरु की आज्ञा का पालन करता।

एक 'वार्तालाप' के समय श्रीअरविन्द ने सायण के विषय में कहा, "अपनी बहुत-सी भूलों के बावजूद सायण बहुत उपयोगी है हालांकि वह ज्ञान प्राप्त करने के लिये अज्ञान की ओर जाता-सा दीखता है।" मैंने टीका की, "अपने चमकते गंजे सिर, श्वेत बालों के गुच्छे, तीखी नाक की नोंक पर टिकी ऐनक और पास मोटे-मोटे ग्रंथ लेकर बैठे पुराणी बहुत कुछ सायण के जैसे लगते हैं।" श्रीअरविन्द ने उत्तर दिया, "ओहो! क्या सायण अपनी भूल सुधारने के लिये आया है?"

कभी-कभी पुराणी हर कोने से बटोरी हुई खबरें लेकर, खासकर शहर की खबरों से बुलबुलाते हुए अखबार के संवाददाता-से आते। उनके आते ही श्रीअरविन्द उनकी ओर ताकते हुए पूछते, "कोई खबर है?" फिर बातों का सिलसिला शुरू हो जाता। कभी पुराणी को आने में देर होती तो श्रीअरविन्द पूछते, "पुराणी कहां है?"

कभी अपने गांभीर्य को भूल कर पुराणी नन्हें बच्चे बन जाते और हमारे साथ किसी ऐसी योजना को बनाने में शामिल हो जाते जिससे हम श्रीअरविन्द को अपने साथ बातचीत करने के लिये तैयार कर पायें। शायद श्रीअरविन्द भी हमारी ओर से ऐसी किसी मांग की प्रतीक्षा करते रहते। उदाहरण के लिये पुराणी कथा का सूत्रपात इस तरह करते, "नीरद कहते हैं कि उनका मन सुस्त और बेवकूफ बनता जा रहा है!" कभी पुराणी आधुनिक चित्रकला, आधुनिक काव्य, दर्शन, राजनीति, इतिहास या सायन्स पर गंभीर चर्चा शुरू कर देते। ऐसा कोई विषय न था जिस पर वे कुछ चर्चा न कर पाते — वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी और दिलचस्प पुरुष थे। एक दिन शाम को गुरु और शिष्य के बीच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक घंटे से भी ज्यादा लम्बी बातचीत होती रही। विषय था कोर्ट में चले एक कानूनी केस का (शायद बापट केस) जो श्रीअरविन्द के बड़ौदा-निवास के समय चला था। यह केस शायद प्रसिद्ध होगा क्योंकि पुराणी को याद था और उसे लेकर श्रीअरविन्द और वे काफी देर तक चर्चा करते रहे। श्रीअरविन्द पलंग पर एक करवट लेटे थे और पुराणी फर्श पर सामने एक सोफे से पीठ टिकाये बैठे थे। वातावरण एकदम घरेलू बातचीत का-सा था, मानों पिता और पुत्र के बीच बात हो रही हो। जिस किसी ने दर्शन के समय ही प्रभु को देखा हो, वह श्रीअरविन्द के इस रूप की कल्पना नहीं कर पायेगा। वे ऐसे प्रभु थे जिन्होंने मानों अपने ऐश्वर्य के उपवस्त्र और निर्वैयक्तिकता को ताक पर रख दिया हो। उनकी चर्चा सुनने के लिये मैं थोड़ी देर खड़ा रहा, लेकिन मुझे वह इतनी नीरस लगी कि मैं सोचने लगा कि वे इस चर्चा को अनन्त काल तक कैसे खींचते रहेंगे! प्रभु के साथ हमारी बातचात में भी पुराणी की सर्वतोमुखी प्रतिभा ही उसे समृद्ध कर देती थी। अगर किसी तरह हम उनको नाराज कर देते तो शेर का पुराना मिजाज गुर्राना और गरजना शुरू कर देता! जहां श्रीअरविन्द की रुचि की बात हो, वे अपने-आपको पूरा निःशेष कर देते। गुरु का नाम उनके लिये मन्त्र की तरह जादुई था। श्रीअरविन्द के इंग्लैण्ड-निवास के बारे में कई बहुमूल्य दस्तावेज़ लाने में पुराणी ने जो कड़ी मेहनत की उसके लिये श्रीअरविन्द के प्रेमीगण हमेशा पुराणी के प्रति कृतज्ञ रहेंगे। इतना ही नहीं, उन्होंने श्रीअरविन्द की प्रतिभा से अंग्रेज बुद्धिवादी समाज को भी परिचित कराया।

— नीरदवरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी समझ को विस्तृत कैसे किया जाये

एक प्रार्थना

हे प्रभो, तेरे प्रति मेरी अभीप्सा ने एक सामंजस्यपूर्ण, पूरी तरह खिले हुए और सुगंध से भरे सुंदर गुलाब का रूप ले लिया है। मैं समर्पण की मुद्रा में दोनों बांहें फैलाकर उसे तेरी ओर बढ़ा रही हूं और मैं तुझसे याचना करती हूं : अगर मेरी समझ सीमित है तो उसे विस्तृत कर; अगर मेरा ध्यान धुंधला है तो उसे आलोकित कर; अगर मेरा हृदय उत्साह से खाली है तो उसे प्रज्वलित कर; अगर मेरा प्रेम तुच्छ है तो उसे तीव्र बना; अगर मेरी भावनाएं अज्ञान-भरी और अहंकारपूर्ण हैं तो उन्हें सत्य के अंदर पूरी चेतना प्रदान कर और जो "मैं" तुझसे यह सब मांग रही हूं वह हे प्रभो, एक छोटा-सा व्यक्तित्व नहीं है जो हजारों में खोया हुआ है, सारी पृथ्वी उत्साह-भरी गति में तेरे प्रति अभीप्सा कर रही है।

मेरे ध्यान की पूर्ण नीरवता में सब कुछ अनंतता में विस्तृत हो जाता है और उस नीरवता की पूर्ण शांति में तू अपने प्रकाश की देदीप्यमान महिमा में प्रकट होता है।

— श्रीमां

अन्य आयाम से समझना

जानते हो, जबतक तुम विश्व के सृजन के बारे में अपनी नैतिक और मानसिक धारणाएं बनाना चाहोगे, तबतक तुम उसके बारे में कुछ भी न समझ पाओगे, कभी नहीं। क्योंकि सब ओर से और सब तरह से वह शुभ और अशुभ की, तथा ऐसी चीजों की धारणाओं से परे जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। हमारी जितनी भी मानसिक, नैतिक धारणाएं हैं वे विश्व की व्याख्या नहीं कर सकतीं। और हमारे उस भाग के लिये, जो वस्तुतः पूर्ण अज्ञान में रहता है, केवल यह कहा जा सकता है : "चीजें ऐसी हैं क्योंकि वे ऐसी हैं," उनकी व्याख्या नहीं की जा सकती, क्योंकि जो भी व्याख्याएं दी जाती हैं वे अज्ञान की होती हैं और वे किसी भी चीज की व्याख्या नहीं कर सकतीं।

मन एक चीज की व्याख्या दूसरी चीज से करता है, इस दूसरी चीज की, जिसकी व्याख्या की जरूरत होती है, उसकी व्याख्या किसी और चीज से की जाती है, और उस तीसरी चीज को, जिसकी व्याख्या की जरूरत होती है, उसे किसी और से समझाया जाता है, और अगर तुम इस तरह जारी रखो तो तुम सारे विश्व का चक्कर लगाकर, किसी भी चीज की जरा भी व्याख्या किये बिना, फिर से आरंभ-बिंदु पर आ पहुंचोगे। (हंसी) इसलिये तुम्हें एक छेद करना होगा, हवा में उठकर चीजों को एक और ढंग से देखना होगा। इस तरह तुम समझना शुरू कर सकते हो।

यह कैसे किया जाये ?

यह कैसे किया जाये ? (हंसी)

अभीप्सा बाण की तरह है, यूं (संकेत)। तो तुम अभीप्सा करते हो, बहुत गंभीरतापूर्वक समझना चाहते हो, जानना चाहते हो, सत्य में प्रवेश करना चाहते हो। हां ? और फिर उस अभीप्सा के साथ तुम यह करो (संकेत)। तुम्हारी अभीप्सा उठती है, उठती है, उठती है, सीधी ऊपर उठती है, बहुत प्रबल, और फिर वह जोर से टकराती है और एक प्रकार के... कैसे कहा जाये ?... ढक्कन से जो लगा हुआ है, लोहे जैसा सख्त और बहुत अधिक मोटा और वह आर-पार नहीं हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाती। और तब तुम कहते हो : "लो, अभीप्सा करने का फायदा क्या ? उससे कुछ भी तो नहीं आता। मेरा किसी सख्त चीज से सामना होता है और मैं उसके पार नहीं जा सकता !" लेकिन तुम पानी की उस बूंद के बारे में जानते हो जो चट्टान पर गिरती है, अंत में वह दरार बना कर रहती है : वह चट्टान को ऊपर से नीचे तक काट देती है। तुम्हारी अभीप्सा पानी की एक बूंद है जो, गिरने की जगह, उठती है। तो, चढ़ने के बल पर, वह चोट करती है, चोट करती है, चोट करती है, और एक दिन छेद बना लेती है, चढ़ने के बल पर; और जब वह छेद बना लेती है तो वह अचानक इस ढक्कन में से उछल पड़ती है, और ज्योति की अनंतता में प्रवेश करती है, और तुम कहते हो : "ओ हो, अब मैं समझा।"

बात ऐसी है।

तो तुम्हें बहुत आग्रही होना चाहिये, बहुत हठीला होना चाहिये और तुम्हारे अंदर ऐसी अभीप्सा होनी चाहिये जो सीधी ऊपर उठे, यानी, जो सब तरह की चीजें ढूंढ़ती, इधर-उधर घूमती न फिरे।

केवल यही : समझ सकना, समझ सकना, समझ सकना, जानना सीखना, होना सीखना।

जब तुम एकदम चोटी पर पहुंच जाते हो, तो समझने के लिये कुछ नहीं बच रहता, जानने के लिये कुछ नहीं होता, तुम **होते हो** और जब तुम **होते हो** तो समझते और जानते हो।

माताजी, जब हम समझते हैं, तो हमारे अंदर वह कौन-सी चीज है जो समझती है ?

समान ही समान को जानता है। तो चूंकि तुम किसी चीज को अपने अंदर लिये होते हो, इसीलिये तुम उसे खोज पाते हो। चूंकि तुम भली-भांति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझते हो कि मेरी कहानी एक रूपक है, समझते हो न, कि यह सारा एक रूपक है; यह किसी चीज के साथ भली-भांति मेल खाता है, लेकिन फिर भी यह है रूपक ही, क्योंकि तुम इसे अंदर और ऊपर, दोनों जगह पा सकते हो, समझे। यह केवल इसलिये कि विभिन्न भौतिक स्तरों और भौतिक आयामों के बारे में हमारी भौतिक धारणाएं हैं; क्योंकि जब हम समझते हैं, तो आयामों के और ही क्रम में समझते हैं, बिलकुल अलग। अब यह दूसरा आयाम-क्रम देश के साथ मेल नहीं खाता।

लेकिन तुम किसी चीज को तबतक नहीं समझ सकते, और वह नहीं हो सकते जबतक कि वह तुम्हारे अंदर न हो या तुम उसके अंदर न हो – यह एक ही बात है, है न? फिर भी, तुम्हें ज्यादा आसानी से समझाने के लिये मैं कह सकती हूं कि चूंकि यह तुम्हारे अंदर है, चूंकि यह कहीं पर, तुम्हारी चेतना का एक भाग है इसलिये तुम इसे समझ सकते हो, नहीं तो तुम्हें कभी उसका भान तक न होता। अगर तुम भगवान् को अपने अंदर न लिये होते, अपनी सत्ता के सार-तत्त्व में न लिये होते, तो तुम्हें कभी भगवान् का भान न होता; यह एक असंभव साहसिक कार्य होता। और फिर अगर तुम समस्या को उलट दो, जिस क्षण तुम यह कल्पना करते हो और किसी-न-किसी तरह अनुभव करते हो, या प्रारंभ में, इतना मान भी लेते हो कि भगवान् तुम्हारे अंदर हैं और साथ ही तुम भगवान् के अंदर हो, उसी क्षण उपलब्धि का दरवाजा खुल जाता है, जरा-सा, बहुत नहीं – बस, थोड़ा-सा। उसके बाद यदि अभीप्सा आती है, जानने और होने की तीव्र आवश्यकता अनुभव होती है, तो वह तीव्र आवश्यकता खुले भाग को चौड़ा कर देती है, यहांतक कि तुम उसमें रेंगकर जा सकते हो। जब तुम उसमें घुस जाओ, तो तुम्हें पता लगता है कि तुम क्या हो। और श्रीअरविन्द ठीक यही कहते हैं, कि आदमी भूल गया है, कि सत्, चित्,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

आनन्द के अलगाव के कारण विस्मृति आती है, तुम क्या हो उसकी विस्मृति; आदमी मान लेता है कि वह कोई है, है न, कोई भी, लड़का, लड़की, पुरुष, स्त्री, कुत्ता, घोड़ा, कोई भी चीज, पत्थर, समुद्र, सूर्य, कुछ भी; यह सोचने की जगह कि मैं भगवान् हूं, वह अपने-आपको यह सब मान लेता है — क्योंकि, वस्तुतः अगर हम अपने-आपको एकमेव भगवान् ही मानते रहते, तो विश्व बिलकुल भी न होता।

मैं उससे (एक बालक की ओर संकेत करके) यही कहना चाहती थी, कि अलगाव का यह तथ्य विश्व के होने के लिये अनिवार्य मालूम होता है, अन्यथा वह हमेशा वैसा ही बना रहता जैसा था। लेकिन अगर हम इस मोड़ में से गुजर चुकने के बाद, फिर से एकता स्थापित करें, विभिन्नता, विभाजन से लाभ उठाने के बाद, फिर से एकता स्थापित करें, तो, यह उच्चतर गुण की एकता की प्राप्ति होगी, वह एक ऐसी एकता होगी जो अपने-आपको जानती होगी, यह उस एकता की जगह होगी जो अपने-आपको नहीं जान सकती क्योंकि वहां ऐसी कोई और चीज ही नहीं जो दूसरी को जान सके। जब 'एकता' निरपेक्ष हो, तो 'एकमेव' को जान ही कौन सकता है ? वह क्या है यह समझने के लिये हमारे पास कम-से-कम कोई ऐसा बिंब या आभास तो होना ही चाहिये जो वह नहीं है। मेरा ख्याल है कि विश्व का रहस्य यही है। शायद भगवान् अपने-आपको वास्तव में जानना चाहते थे, इसलिये उन्होंने अपने-आपको प्रक्षिप्त किया और फिर अपने-आपको देखा, और अब वे अपने पूर्ण ज्ञान के साथ अपने-आप होने की संभावना का आनंद लेना चाहते हैं। यह बहुत ज्यादा मजेदार हो जाता है।

— श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभु की उपस्थिति

यह बात मैंने प्राय: ही अपने-आपसे पूछी है; जब व्यक्ति भगवान् से कोई प्रार्थना करता है और उन्हें समझाना चाहता है कि कोई वस्तु ठीक नहीं है, तब मुझे सदा ऐसा प्रतीत होता है कि उसे बलपूर्वक अपने-आपको एकाग्र करना चाहिये, और यह कि अन्ततः वह किसी दूर की वस्तु का आवाहन कर रहा है। क्या यह ठीक है? या यह वस्तुतः ...

यह हम पर निर्भर है!

अब मैं उन्हें सर्वत्र, सब समय, सब समय अनुभव करती हूं... उनका भौतिक संपर्क तक — यह सूक्ष्म-भौतिक होता है, पर है भौतिक — वस्तुओं में, वायु में, लोगों में... इस प्रकार, (माताजी अपने हाथों से अपने मुख को छूती हैं)। और फिर दूर जाने की आवश्यकता नहीं, मुझे केवल इतना ही करना होता है (माताजी अपने हाथों को थोड़ा अंदर की ओर मोड़ती हैं), एकाग्रता का एक सेकण्ड और भगवान् मौजूद होते हैं! मौजूद होते हैं, वे सर्वत्र हैं! वे दूर केवल तभी होते हैं जब हम उन्हें दूर समझते हैं।

स्वभावतया जब हम वैश्व चेतना के सभी प्रदेशों, सभी स्तरों के विषय में सोचना शुरू करते हैं और यह समझने लगते हैं कि वे वहां, दूर, बड़ी दूर, परले सिरे पर हैं तो वे सचमुच दूर, दूर, बहुत दूर हो जाते हैं! (माताजी हंसती हैं)। किंतु जब हम यह सोचते हैं कि वे सर्वत्र हैं, वे ही सब कुछ हैं और केवल हमारा बोध ही हमें उन्हें देखने और उनको अनुभव करने से रोकता है; और हमें केवल इतना करना है (माताजी अपने हाथ अंदर की ओर मोड़ती हैं); यह इस प्रकार की और इस प्रकार की क्रिया है (माताजी बारी-बारी से हाथ अंदर और बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ओर मोड़ती हैं), तो चीज एकदम मूर्तरूप ले लेती है। तुम ऐसा करते हो (बाहर की ओर की क्रिया), और सब कुछ कृत्रिम, कठोर, रूखा, गलत, मिथ्या, हां, कृत्रिम हो जाता है। तुम ऐसा करते हो (अंदर की ओर की क्रिया); तब सब कुछ विशाल, शांत, आलोकमय, प्रशांत, असीम और आनंदमय हो जाता है। और केवल यह, केवल यह (माताजी बारी-बारी से अपने हाथों को अंदर और बाहर की ओर मोड़ती हैं)। कैसे ? कहां ? इसका वर्णन नहीं किया जा सकता, किंतु यह केवल, चेतना की केवल एक क्रिया है, और कुछ नहीं। चेतना की एक क्रिया। और सच्ची चेतना और झूठी चेतना के बीच का अंतर अधिकाधिक यथार्थ होता जाता है, साथ ही क्षीण भी — इससे बाहर निकलने के लिये तुम्हें कोई "बहुत बड़े" काम नहीं करने पड़ते। इसके पहले तुम्हारी ऐसी धारणा थी कि तुम किसी वस्तु में निवास करते हो और उससे बाहर निकलने के लिये तुम्हें एक तीव्र अंतर्मुखता की, एकाग्रता और तल्लीनता की आवश्यकता होती है। किंतु अब तुम्हें प्रतीत होता है कि यह एक ऐसी वस्तु है जिसे तुम स्वीकार करते हो (माताजी अपने मुख को अपने हाथ की ओट में कर लेती हैं), एक ऐसी वस्तु जो पतले छिलके के समान है, पर है बहुत कड़ी — बहुत कड़ी, पर लचीली, अत्यधिक शुष्क, किंतु बहुत महीन, बहुत ही महीन, मानों एक नकाब पहन रखा हो; और तब तुम ऐसा करते हो; (माताजी संकेत करती हैं) वह लुप्त हो जाती है।

तुम उस समय का पूर्व ज्ञान पा सकते हो, तब तुम्हें इस नकाब के बारे में अभिज्ञ होने की आवश्यकता नहीं रहेगी, वह इतना महीन हो जायेगा कि व्यक्ति उसमें से देख सकेगा, अनुभव और कार्य कर सकेगा। और नकाब को फिर से पहनने की आवश्यकता न होगी। यह कार्य अभी-अभी शुरू हुआ है।

किंतु समस्त वस्तुओं में यह 'उपस्थिति'... यह एक स्पंदन है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किंतु एक ऐसा स्पंदन है जिसमें सब कुछ मौजूद है — स्पंदन, जिसमें एक प्रकार की अनंत शक्ति, अनंत आनंद और अनंत शांति है और है विशालता, विशालता, विशालता जिसकी कोई सीमा नहीं...। किंतु है यह एक स्पंदन ही, यह... ओह, प्रभु ! इसके बारे में सोचा नहीं जा सकता, इसलिये कुछ कहा भी नहीं जा सकता। यदि व्यक्ति सोचे तो सोचते ही सारी खदबद फिर से शुरू हो जाती है, इसी कारण उसके संबंध में कहा भी नहीं जा सकता।

नहीं, वे बहुत दूर हैं, क्योंकि तुम उन्हें बहुत दूर मानते हो। तब भी जब तुमने यह सोचा कि वे इस प्रकार (अपने मुख के पास संकेत करती हैं) मौजूद हैं, तुम्हारा स्पर्श कर रहे हैं... यदि तुमने उनकी उपस्थिति अनुभव की हो। यह किसी व्यक्ति के स्पर्श जैसा नहीं होता। यह वैसा नहीं है। यह कोई बाह्य या परकीय वस्तु नहीं है, जो बाहर से अंदर की ओर आती है। यह वैसी नहीं है... यह सर्वत्र है।

फिर तुम सर्वत्र, सर्वत्र, सर्वत्र, — अंदर बाहर सर्वत्र, सर्वत्र केवल उन्हें ही अनुभव करते हो — उन्हें, उनके सिवाय कुछ नहीं। वे, उनके 'स्पंदन'।

नहीं, तुम्हें यह बंद करना होगा (सिर की ओर संकेत करती हैं), जबतक तुम इसे बंद न करोगे, तबतक 'सच्ची वस्तु' को नहीं देख सकोगे — तुम तुलनाएं ढूंढ़ते हो, तुम कहते हो : "यह ऐसा है, यह वैसा है," ओह !

(मौन)

और तुम्हें कितनी बार, कितनी बार यह प्रतीत होता है... कोई रूप नहीं है — रूप है भी और नहीं भी, इसे शब्दों में नहीं रखा जा सकता। दृष्टि का आभास होता है पर आंखें नहीं हैं — आंखें नहीं हैं, किंतु दृष्टि है — दृष्टि है, मुस्कुराहट है और मुंह नहीं है, चेहरा नहीं है ! पर फिर भी मुस्कुराहट है, दृष्टि है और (माताजी हंसती हैं) तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कहे बिना नहीं रह सकते : "हां, प्रभु, मैं मूर्ख हूं !" किंतु वे हंसते हैं, और तुम भी हंसते हो और आनंदित होते हो।

तुम इसकी व्याख्या नहीं कर सकते ! इसकी व्याख्या की भी नहीं जा सकती, इसे शब्दों में नहीं रखा जा सकता। तुम कुछ नहीं कह सकते। तुम जो कुछ कहते हो वह कुछ नहीं है, कुछ नहीं !

*

सुन्दर और कुरूप की सापेक्षता

जब मेरे अंदर विभाजनकारी तर्क-बुद्धि थी तो मैं बहुत-सी वस्तुओं से पीछे हट जाता था। पर जब मैंने इसे आंखों से ओझल कर दिया तो मैंने सारे संसार में कुरूप और अनाकर्षक वस्तुओं की खोज की पर उन्हें न पा सका।

(श्रीअरविन्द, विचार और सूत्र)

क्या दुनिया में सचमुच ऐसी कोई चीज नहीं है जो कुरूप और अनाकर्षक ना हो? क्या हमारी तर्क-बुद्धि ही चीजों को इस ढंग से देखती है?

श्रीअरविन्द यहां जो कहना चाहते हैं उसे सच्चे रूप में समझने के लिये व्यक्ति को अपने अंदर तर्क-बुद्धि से ऊपर उठने और अपनी चेतना को मानसिक बुद्धि से अधिक ऊंचे जगत् में स्थापित करने का अनुभव होना चाहिये। क्योंकि ऊपर की चेतना से तुम यह देख सकते हो कि जो कुछ जगत् में अस्तित्व रखता है वह सब सच्चिदानन्द — सत्-चित्-आनन्द — की अभिव्यक्ति है, यह पहली बात है। और इसलिये, यदि तुम बाह्य रूप के पीछे, वह चाहे जो भी हो, काफी गहराई में जाओ तो सच्चिदानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को पा सकते हो, जो सर्वोच्च सौन्दर्य का तत्त्व है। दूसरे, तुम देखते हो कि इस अभिव्यक्त जगत् में प्रत्येक वस्तु सापेक्ष है, यहांतक कि कोई भी ऐसा सौन्दर्य नहीं है जो अपने से बड़े सौन्दर्य की तुलना में कुरूप न लगे, और न ही कोई ऐसी कुरूपता है जो अपने से बहुत बड़ी कुरूपता की अपेक्षा सुन्दर न प्रतीत हो।

जब तुम ऐसा देख और अनुभव कर सको तो तुम तत्काल एक पूर्ण दृष्टिकोण से इन प्रभावों की और इनकी अवास्तविकता की चरम सापेक्षता को जान लेते हो। फिर भी, जबतक हम तर्क-बुद्धि की चेतना में निवास करते हैं, तो यह एक प्रकार से स्वाभाविक ही होता है कि जो कुछ हमारी पूर्णता की अभीप्सा को, हमारे विकास के संकल्प को धक्का पहुंचाता है या जिस चीज से हम ऊपर उठना या उसे वश में करना चाहते हैं वह हमें कुरूप और अनाकर्षक प्रतीत होती है, क्योंकि हम एक उच्चतर आदर्श की खोज में लगे हैं और अधिक ऊपर चढ़ना चाहते हैं।

पर फिर भी, यह एक अर्ध-ज्ञान ही है जो कि सच्चे ज्ञान से कोसों दूर है। यह एक ऐसी बुद्धिमत्ता है जो अज्ञान और अचेतनता के बीच बुद्धिमान् प्रतीत होती है।

'सत्य' में सब कुछ इससे भिन्न है और भगवान् ही प्रत्येक वस्तु में चमकते हैं।

— श्रीमां

*

भगवान् ने मेरी आंखें खोल दी हैं। कारण, मैंने असंस्कृत की उदात्तता, घृणास्पद का आकर्षण, अपंगता की पूर्णता और वीभत्स का सौंदर्य देखा।

(श्रीअरविन्द, विचार और सूत्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बुद्धि' और उसकी शुद्धि का अर्थ

फिर भी गहराई से और स्पष्टता के साथ हमें यह विचार करना होगा कि बुद्धि से हमारा क्या अभिप्राय है और उसकी शुद्धि से हमारा क्या मतलब है। दर्शन में प्रयुक्त संस्कृत के बुद्धि शब्द के अर्थ में ही हम यहां बुद्धि शब्द का प्रयोग कर रहे हैं। इसलिये इसके कार्य-क्षेत्र से हम इन्द्रिय-मानस के व्यापार को अलग कर देते हैं। इस इन्द्रिय-मानस का व्यापार है सभी वस्तुओं के निरीक्षण को – चाहे वे अच्छी हों या बुरी, वास्तविक हों या भ्रमात्मक, दिल को छूनेवाली हों या ऊपरी – बिना कोई फर्क किये अंकित कर लेना। और फिर हमारे अंदर अर्ध-स्पष्ट रूप से विद्यमान ऐसे कितने ही बोध होते हैं जो इन निरीक्षणों का बस, उलथा मात्र होते हैं और उन्हीं की तरह चीजों में जांच करने और विवेक करने के उच्चतर तत्त्व से सर्वथा रहित होते हैं, उन्हें भी हम इसके क्षेत्र से बाहर कर देते हैं। न ही हम इस बुद्धि शब्द में उन अभ्यासगत विचारों को शामिल कर सकते हैं जो हमारे अंदर निरंतर उमड़ते-घुमड़ते रहते हैं और औसत अविचारशील मानव में बुद्धि का काम भी देते हैं पर असल में होते हैं केवल अभ्यस्त संस्कारों, कामनाओं, पक्षपातों, पूर्वधारणाओं और अपनायी हुई या जन्मजात पसंदगियों की निरंतर पुनरावृत्ति मात्र ही। यद्यपि इर्द-गिर्द से प्रवाह रूप में आने वाले बोधों के ताजा माल से उनमें निरंतर वृद्धि की जा सकती है फिर भी वे होते हैं ऐसे कि जो सर्व-प्रधान विवेकशील बुद्धि की रोक-टोक के बिना ही स्वीकार कर लिये गये होते हैं। निःसंदेह यह भी एक प्रकार की बुद्धि ही है जो पशु से मानव के विकास में बहुत उपयोगी रही है, पर यह पशु-मन से बस, एक कदम हट कर है। यह अर्ध-पाशविक बुद्धि है जो आदतों, कामनाओं और इन्द्रियों की दासी है और जो वैज्ञानिक या दार्शनिक या आध्यात्मिक ज्ञान की खोज में कतई सहायक नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमें इसके परे जाना होगा। इसकी शुद्धि केवल तभी साधी जा सकती है जब या तो इसे त्याग दिया जाये या इसे एकदम चुप कर दिया जाये या इसे सच्ची बुद्धि में रूपांतरित कर दिया जाये।

बुद्धि की परिभाषा

बुद्धि से हमारा मतलब उस चीज से है जो एक ही साथ देखती, जांचती और विवेक करती है। मनुष्य की सच्ची बुद्धि इन्द्रियों की, कामनाओं की या आदतों की अंध प्रबलता के अधीन नहीं है, बल्कि निज के अधिकार से प्रभुत्व के लिये, ज्ञान के लिये काम करती है। निश्चय ही, मनुष्य जैसा कि वह आज है, उसकी बुद्धि अपनी सर्वोत्तम अवस्था में भी इस तरह स्वतंत्र रूप से और सर्व-प्रधानता के साथ पूरी तरह कभी काम नहीं करती। ऐसा करने से यदि वह चूकती है तो इसलिये चूकती है क्योंकि अब भी वह निम्न अर्ध-पाशविक क्रिया में घुली-मिली होती है, क्योंकि वह अशुद्ध होती है और निरंतर अपनी विशिष्ट क्रिया से रोकी जाती और नीचे खींच ली जाती है। अपनी शुद्ध अवस्था में उसे इन निम्न गतियों में उलझा हुआ नहीं रहना चाहिये बल्कि विषय से पीछे हट कर खड़ा होना चाहिये और निष्पक्षता के साथ उसका निरीक्षण कर उसे समग्र में उसके सही स्थान पर रखना चाहिये। इसके लिये उसे वस्तु की तुलना के द्वारा, विषमता और सादृश्य के अवलोकन के द्वारा और तर्क की शक्ति के द्वारा अध्ययन करना चाहिये, फिर निगम, व्याप्ति[1]

---

[1] निगम — एक व्यापक सूत्र को किसी विशिष्ट घटना पर घटा कर निष्कर्ष निकालना।

व्याप्ति — कुछ विशिष्ट घटनाओं के आधार पर किसी व्यापक सूत्र की कल्पना करना। — संपादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

और अनुमान के आधार पर प्राप्त तथ्य-सामग्री का अच्छी तरह निरीक्षण करना चाहिये, इस प्राप्त ज्ञान को स्मृति में संजोकर, उसमें शोधित एवं सुनिर्देशित कल्पना का पुट देकर सारी चीज को सधी हुई और शिक्षित हुई-हुई विवेचन-शक्ति के प्रकाश में देखना चाहिये। ऐसी है शुद्ध ज्ञानात्मक बुद्धि, इसका स्वधर्म और इसकी विशिष्ट क्रिया है : निष्पक्ष निरीक्षण, विवेचन और तर्क।

उच्चतर बुद्धि

पर बुद्धि शब्द एक दूसरे और गहरे अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। ज्ञानात्मक बुद्धि तो केवल निम्न बुद्धि है, एक दूसरी, उच्चतर बुद्धि भी है, जो मानसिक ज्ञान नहीं है पर स्फुरित प्रकाशमय दृष्टि है; बुद्धि नहीं है बल्कि ज्ञान में ऊर्ध्व-स्थित[1] है, वह ज्ञान की खोज नहीं करती, तथ्यों का अनुगमन कर ज्ञान पर नहीं पहुंचती बल्कि वह सत्य को पहले से ही अपने अधिकार में किये होती है, और अन्तःप्रकाशित और अंतःप्रेरित विचार के रूप में उसे बाहर प्रकट करती है।

— श्रीअरविन्द

---

[1] भागवत सत्ता को अध्यक्ष कहा गया है, जो सबके ऊपर परम व्योम में अवस्थित है और सब चीजों को ऊपर होकर देखता है, ऊपर से दृष्टि में और नियंत्रण में रखता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धि में अशुद्धि के कारण और उनकी शुद्धि

सारी अशुद्धि क्रिया में गड़बड़ी का — स्वधर्म से, वस्तुओं की अपनी उचित और सहज, सही क्रिया से, परे हट जाने का — परिणाम होती है। यह सहज, सही क्रिया अपने-आपमें शुद्ध होती है और हमारी पूर्णता में सहायक होती है। इससे परे हटने का सामान्यतः कारण होता है क्रिया के स्वधर्म में अज्ञानयुक्त अस्त-व्यस्तता,[1] जिसकी वजह से क्रिया अपनी निज प्रवृत्ति का अनुसरण न कर दूसरी प्रवृत्ति की मांग का अनुसरण करने लगती है।

बुद्धि की अशुद्धता का प्रथम कारण है विचार-क्रिया में कामना का मिश्रण, स्वयं कामना भी दिव्य इच्छा-शक्ति की अशुद्धि है, जब वह हमारी सत्ता के प्राणिक और भावनामय भागों में उलझी होती है, जब प्राणिक और भाविक कामनाएं शुद्ध ज्ञानेच्छा में घुस आती हैं तो विचार-क्रिया उन्हीं की सहायक बन जाती है और अपनी अभीष्ट चीजों का अनुसरण करने के बजाय अन्यान्य अभीष्ट चीजों की प्राप्ति के लिये चेष्टा करती है। इससे उसका ज्ञान अटक जाता और अस्तव्यस्त हो जाता है। बुद्धि को अपने-आपको कामनाओं और भावों के घिराव से ऊपर उठाना होगा और उनके प्रभाव से पूरी तरह मुक्त होने के लिये उसे इन प्राणिक भागों और भावनाओं को भी अपने-आपमें शोधित करना होगा। सुख-भोग की इच्छा प्राणिक सत्ता का निज धर्म है पर सुख का चुनाव और उसका पीछा करना उसका काम नहीं है, इसे उच्चतर शक्ति के द्वारा ही निर्धारित होना चाहिये और उसी के द्वारा प्राप्त भी किया जाना चाहिये। इसलिये प्राणिक सत्ता को यह प्रशिक्षण देना चाहिये कि जो भी फल या सुख-भोग — दिव्य इच्छाशक्ति की कार्य-प्रणाली के

---

[1] संकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुगत जीवन के सही व्यापार में — उसे मिलता है उसी को वह स्वीकार करे और लालसा, उत्सुकता एवं आसक्ति से अपने-आपको मुक्त कर ले। इसी प्रकार हृदय को प्राण और इन्द्रियों की चाहना के एवं मांगों के दबाव में आने से मुक्त कराना होगा और इस प्रकार उसे मिथ्या भावों से — भय, क्रोध, घृणा, वासना आदि के मिथ्या भावों से — अपने-आपको मुक्त कर लेना होगा, ये चीजें ही हृदय की मुख्य अशुद्धियां हैं। प्रेम करना हृदय का निज स्वभाव है, पर यहां भी प्रेम का चुनाव करना या उसका अनुसरण करना, उसे त्याग देना या उसे शांत कर देना होगा। अवश्य ही, हृदय को गहराई से और तीव्रता के साथ प्रेम करना सिखाना होगा, पर ऐसी गहराई से जो शान्त हो और ऐसी तीव्रता के साथ जो सुस्थिर और समान हो, न कि विकल और अव्यवस्थित तीव्रता के साथ। इन अंगों को (प्राण और हृदय को) एकदम शांत कर देना और इन पर प्रभुत्व[9] पा लेना पहली शर्त है ताकि बुद्धि को भूल, अज्ञान और विकृति से पूरी तरह अछूता रखा जा सके। यह शुद्धि स्नायविक सत्ता और हृदय में पूरी समता ले आती है।

बुद्धि में अशुद्धि का दूसरा कारण है इन्द्रियजनित भ्रान्ति और विचार-क्रिया में इन्द्रिय मानस का मिश्रण। कोई भी ज्ञान सत्य ज्ञान नहीं हो सकता यदि वह अपने-आपको इन्द्रियों के अधीन कर ले या उनका उपयोग और तरह से करे, ऐसे प्राथमिक संकेत के रूप में न करे कि जिसकी प्रस्तुत सामग्री को निरंतर सुधारना और पीछे छोड़ देना होता है। विज्ञान का आरंभ होता है जागतिक शक्ति के प्रतीयमान कार्य-व्यापार को इन्द्रियां जिस रूप में हमारे सामने प्रस्तुत करती हैं उसके पीछे विद्यमान सत्यों की जांच-पड़ताल करने से; दर्शन का प्रारंभ होता है वस्तुओं के मूल नियमों का निरीक्षण करने से, जिन्हें इन्द्रियां गलत

---

[9] शम और दम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तौर पर हमारे सामने प्रस्तुत करती हैं; आध्यात्मिक ज्ञान की शुरुआत होती है इन्द्रियाश्रित जीवन की सीमाओं को मानने से जब वह इंकार करता है या दृश्य एवं इन्द्रियग्राह्य वस्तुएं सद्वस्तु का ही रूप होने से अधिक कुछ हैं ऐसा मानने से जब वह इंकार करता है।

इसी प्रकार इन्द्रिय-मानस को भी शांत रहना होगा और उसे सिखाना होगा कि वह विचार का काम उस मन पर छोड़ दे जो विवेचन करता और अर्थ समझता है। जब हमारी बुद्धि इन्द्रिय-मानस के व्यापार से पीछे हट कर स्थित हो जाती है और इसके मिश्रण को पीछे धकेल देती है तो इन्द्रिय-मानस अपने-आपको बुद्धि से अलग कर लेता है और इसके पृथक् व्यापार का निरीक्षण किया जा सकता है। तब वह अपने-आपको इस रूप में प्रकट करती है कि यह उमड़ते-घुमड़ते अभ्यासगत सामान्य विचारों, संस्कारों, प्रत्यक्ष बोधों और कामनाओं का ऐसा प्रवाह है जो अविरत रूप से सतह के नीचे बह रहा है। इसमें न कोई सच्चा सिलसिला है, न कोई क्रम है, न ही प्रकाश का कोई नियम है। यह नासमझी की और बेकार की बातों को एक दायरे में बराबर दुहराते रहना भर है। सामान्यतः मानव बुद्धि नीचे-नीचे चल रहे इस प्रवाह को अपना लेती है और इसमें एक आंशिक क्रम और सिलसिला बिठाने की कोशिश करती है। पर ऐसा करते हुए यह स्वयं उसके प्रभाव में आ जाती है और उसी गड़बड़झाले में, अस्थिरता में, आदतों की अंध दासता में, और बस बेसमझे निरर्थक रूप से चीजों को दुहराते जाने में भाग लेने लगती है। यही चीज है जो सामान्य मानव बुद्धि को गलत रास्ता दिखानेवाला, सीमित, यहां तक कि तुच्छ और बेकार का यंत्र बना देती है। इस चंचल, अस्थिर, जबरदस्त और अशांतिजनक तत्त्व के साथ कुछ करने को नहीं है सिवाय इसके कि इससे छुटकारा पा लिया जाये। और वह पाया जा सकता है या तो इससे अपने-आपको अलग करके और फिर धीरे-धीरे इसे शांत करके या फिर विचार में ऐसी एकाग्रता और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकनिष्ठा लाकर जो बुद्धि से विजातीय और घपला पैदा करनेवाले इस तत्त्व को अपने-आप हटा दे।

अशुद्धि का जो तीसरा कारण है उसका मूल स्वयं बुद्धि में ही है, और यह ज्ञानेच्छा की गलत क्रिया में पाया जाता है। ज्ञानेच्छा बुद्धि का निज स्वभाव है, परंतु यहां भी ज्ञान का चुनाव करना या असमानभाव से उसकी खोज करना ज्ञान को रोक देता और विकृत कर देता है। ये चीजें पक्षपात और आसक्ति की ओर ले जाती हैं। परिणामतः बुद्धि कुछेक विचारों और सम्मतियों के साथ ऐसी चिपट जाती है कि दूसरे विचारों और सम्मतियों के सत्य की ओर, कम या अधिक दुराग्रहपूर्ण इच्छा के साथ, ध्यान नहीं देती, कुछ सत्यांशों को पकड़ लेती है और उनके सामने सत्य के दूसरे पक्षों को — जो उसकी अपनी पूर्णता के लिये उतने ही जरूरी होते हैं — सकारने में संकोची होती है, ज्ञानविपयक अपनी पहली मान्यताओं से चिपट जाती है और उस सब ज्ञान को जो विचारक की अतीत में बनी विचार-प्रक्रिया से मेल नहीं खाता, दूर-दूर रखती है। इसका उपाय है : मन की पूर्ण समता, सम्पूर्ण बौद्धिक सत्यशीलता का उपार्जन और पूरी-पूरी मानसिक निष्पक्षता। शुद्ध बुद्धि जैसे किसी इच्छा या लालसा का साथ न देगी, वैसे ही वह न तो किसी पूर्व मान्यता को और न ही किसी खास विचार या खास सत्य के प्रति नापसंदगी को बने रहने देगी। उन विचारों से भी, जिनके बारे में वह एकदम सुनिश्चित होती है, आसक्त होने से इंकार कर देगी और न ही उन पर ऐसा अनावश्यक बल देगी जो सत्य के संतुलन को बिगाड़ दे या समूचे और संपूर्ण ज्ञान के अन्यान्य तत्त्वों का मूल्य कम कर दे।

— श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रीय विद्यालय के विद्यार्थियों को परामर्श

('बंगाल राष्ट्रीय विद्यालय' के विद्यार्थियों और अध्यापकों ने २३ अगस्त, १९०७ को एक सभा बुलायी जिसमें उन्होंने श्रीअरविन्द के उक्त विद्यालय के प्रधानाचार्य के उच्च पद से त्याग-पत्र देने पर अत्यधिक खेद प्रकट किया। इसमें उनके प्रिय विद्यार्थियों ने उनसे निवेदन किया कि वे उन्हें परामर्श-रूप कुछ शब्द कहें। इसपर श्रीअरविन्द ने उन्हें संबोधित किया।)

मुझसे कहा गया है कि मैं तुमलोगों से परामर्श के कुछ शब्द कहूं। किंतु इन दिनों मुझे लगता है कि युवा लोग हम बड़ों से प्रायः अधिक अच्छा परामर्श दे सकते हैं। तुम मुझसे उन भावनाओं को व्यक्त करने के लिये भी न कहो जो तुम्हारे कार्यों, और तुम्हारे प्रेम-प्रदर्शन के फलस्वरूप मेरे अंदर उत्पन्न हुई हैं। उन्हें व्यक्त करना असंभव है। तुम सब जानते हो कि मैंने अपने पद से त्याग-पत्र दे दिया है। कल की सभा में तुमने, जिसे तुम मेरा वर्तमान संकट कहते हो, उसमें मेरे साथ सहानुभूति प्रकट की है। मुझे पता नहीं कि मैं इसे संकट कह भी सकता हूं या नहीं। क्योंकि जिस अनुभव में से मुझे गुजरना है उसका मुझे पहले से पता था। मैंने जिस कार्य को बचपन से अपने सिर पर लिया है उसके लिये यह अनिवार्य था और मैं बिना किसी खेद के उसकी ओर अग्रसर हो रहा हूं। मैं जिस बात का आश्वासन चाहता हूं वह यह नहीं है कि तुम लोगों को मेरे साथ सहानुभूति है बल्कि उसकी अपेक्षा कहीं अधिक इस बात के लिये कि तुम्हें उस कार्य के साथ सहानुभूति है जिसे करने में मुझे ये सब तथाकथित संकट उठाने पड़ेंगे। यदि मुझे यह पता लग जाये कि नवीन पीढ़ी ने इस कार्य को अपने हाथों में ले लिया है और यह भी कि मैं चाहे जहां जाऊं अपने पीछे दूसरों को इस कार्य को आगे बढ़ाने के लिये छोड़ता जाऊंगा तो मुझे जाते हुए जरा भी खेद न होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं तो मानता हूं कि आज तुमने जो सम्मान मेरे प्रति प्रदर्शित किया है वह मेरे प्रति नहीं, मात्र प्रधानाचार्य के प्रति नहीं, बल्कि अपने देश के प्रति, मेरे अंदर स्थित भगवती मां के प्रति प्रदर्शित किया है। क्योंकि, मैंने जो कुछ थोड़ा-बहुत किया है, उन्हीं के लिये किया है और मुझे इसमें जो थोड़ा-सा कष्ट सहना पड़ेगा वह भी उन्हीं के लिये सहा जायेगा। तुम्हारी सहानुभूति को इसी रूप में लेकर मैं यह अनुभव कर सकता हूं कि यदि मैं अपना काम आगे बढ़ाने के लिये असमर्थ हो जाऊं तो मेरे पीछे बहुत से व्यक्ति बचे होंगे। मेरे प्रसन्न होने का एक और कारण यह भी है कि मेरे प्रायः सभी देशवासी तुम लोगों की ही तरह और एक ही कारण से मेरे लिये सहानुभूति और भ्रातृभाव रखते हैं। सभी वर्गों ने समान रूप से और एक ही कारण से जिस प्रकार मेरे प्रति सहानुभूति दिखायी है तथा इस परीक्षा-काल में मेरी सहायता करने के लिये भी तैयार हुए हैं, वह भी बड़ी प्रसन्नता की बात है। क्योंकि, मैं स्वयं नगण्य हूं, और मैंने जो कुछ किया है वह भी नगण्य है। वस्तुतः मुझे यह प्रेम-भावना इसलिये मिली है कि मैं उस कार्य को कर रहा हूं जो मेरे सभी देशवासियों को प्रिय है।

मैं इस समय तुम्हें जो एकमात्र परामर्श दे सकता हूं वह यह है — कार्य को आगे बढ़ाओ, जिस उद्देश्य से इस विद्यालय की स्थापना हुई थी उसे पूरा करो। मुझे इसमें जरा भी संदेह नहीं है कि अब तक तुम सब इस उद्देश्य के अर्थ को समझ गये होगे। जब हमने इस विद्यालय की स्थापना की थी, जब हमने अपने अन्य सब कार्यों एवं जीवन की अन्य संभावनाओं को छोड़कर अपने-आपको इस संस्था को अर्पित किया था तो वह इसलिये कि हमने इसमें एक राष्ट्र की, एक नवीन भारत की नींव को, उसके केंद्रीय बिंदु को देखने की आशा की थी — उस भारत की जो दुःख और संकट की इस रात्रि के बाद अपना नया जीवन आरंभ करनेवाला है, वह दिन गौरवपूर्ण और महान् होगा जब भारत संसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये कार्य करेगा। यहां हम तुम्हें बस थोड़ी-सी जानकारी ही नहीं देना चाहते, न तुम्हें केवल अपनी आजीविका के साधन सिखाना चाहते हैं बल्कि हम मातृभूमि के सपूतों को तैयार करना चाहते हैं जो उसके लिये काम कर सकें, कष्ट उठा सकें। इसीलिये हमने इस विद्यालय की स्थापना की थी और भविष्य में मैं तुम सबको इसी काम में लगा हुआ देखना चाहता हूं। जिस कार्य को हमने अपर्याप्त और अपूर्ण रूप में आरंभ किया है उसे अब तुम्हें ही समाप्त करना है और पूर्णता तक ले जाना है। जब मैं वापिस आऊं तो तुममें से कुछ को समृद्ध देखना चाहूंगा, अपने लिये नहीं बल्कि इसलिये कि तुम अपनी समृद्धि से मां को समृद्ध कर सको। मैं तुममें से कुछ को महान् देखना चाहूंगा, स्वयं अपने लिये नहीं, इसलिये भी नहीं कि तुम अपने अहं को तुष्ट कर सको, बल्कि उसके लिये महान्, भारत मां को महान् बनाने के लिये, उसे पृथ्वी के राष्ट्रों के बीच अपना सिर ऊंचा करके खड़े होने के योग्य बनाना है, जैसे कि वह बीते युगों में खड़ी होती थी जब सारा संसार प्रकाश के लिये उसकी ओर ताकता था। तुम में से जो गरीब और गुमनाम रहें उनके लिये भी मैं चाहूंगा कि उनकी गरीबी और गुमनामी मातृभूमि के अर्पित हो। राष्ट्र के इतिहास में ऐसा समय भी आता है जब भगवान् उसके आगे एक कार्य, एक लक्ष्य रख देते हैं, एक ऐसा कार्य और लक्ष्य जिसके लिये सब कुछ, चाहे वह कितना भी ऊंचा और महान् क्यों न हो, बलिदान कर देना पड़ता है। और अब हमारी मातृभूमि के लिये ऐसा समय आ गया है, जब उसकी सेवा से बढ़कर कोई चीज प्रिय नहीं है, जब हमें हर चीज को उसी उद्देश्य की प्राप्ति में लगा देना चाहिये। यदि तुम पढ़ते हो तो उसके लिये पढ़ो, अपने तन, मन और आत्मा को उसी की सेवा के लिये प्रशिक्षित करो। जीविका भी इसीलिये कमाओ कि तुम उसके लिये जी सको। विदेश भी जाओ तो उस ज्ञान को प्राप्त करने के लिये जिससे तुम उसकी सेवा कर सको। काम करो ताकि वह समृद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो सके। कष्ट सहन करो ताकि वह प्रसन्न हो सके। इस एक ही परामर्श में सब कुछ आ जाता है। तुमसे मेरी अंतिम बात यह है कि यदि तुम्हें मुझसे सहानुभूति है तो मैं उसे केवल व्यक्तिगत भावना के रूप में नहीं, उस कार्य के लिये सहानुभूति के रूप में देखने की आशा करता हूं जिसे मैं कर रहा हूं। मैं इस सहानुभूति को कार्य में अनूदित होते हुए देखना चाहता हूं, ताकि भविष्य में, जब मैं तुम्हारे गौरवपूर्ण कार्य-काल को देखूं तो मैं गर्व से याद कर सकूं कि मैंने इसे शुरू करने के लिये और इसकी तैयारी के लिये कुछ किया था।

— श्रीअरविन्द

सोच की परम्परागत लीक से बाहर निकलना

जिसे मनुष्य ज्ञान कहते हैं वह मिथ्या बाह्य रूपों को युक्ति द्वारा स्वीकार करना है। 'प्रज्ञा' पर्दे के पीछे तक दृष्टि दौड़ाती और देखती है। तर्क-बुद्धि विभक्त करती, ब्योरों को निश्चित करती और उनकी विषमता दिखलाती है। और 'प्रज्ञा' विभेदों को एकत्र कर अखंड सामंजस्य के अंदर पिरो देती है।

(श्रीअरविन्द, विचार और सूत्र)

श्रीअरविन्द ने जो चीजें ज्ञान, तर्क-बुद्धि और प्रज्ञा के विषय में लिखी हैं उनका उद्देश्य है सामान्य चिन्तन-पद्धति की लीक से हमें बाहर निकाल लाना तथा, यदि संभव हो तो, हमें बाह्य रूपों के पीछे विद्यमान सद्वस्तु की एक झांकी देना।

साधारणतया, बहुत थोड़े-से विरल अपवादों को छोड़कर, अधिकतर मनुष्य अपने चारों ओर तथा कभी-कभी अपने अंदर होनेवाली चीजों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम या अधिक यथार्थ रूप में देखकर ही संतुष्ट हो जाते हैं और अपने अवलोकनों को छिछले न्याय की किसी-न-किसी पद्धति के द्वारा श्रेणीबद्ध कर लेते हैं, और इन्हीं पद्धतियों को, इसी व्यवस्थापना को 'ज्ञान' के नाम से पुकारते हैं। उन्हें इस बात का जरा भी ख्याल नहीं होता, उनमें इस बोध का आरंभ तक नहीं होता कि जिन चीजों को वे देखते, छूते, अनुभव करते और स्वीकार करते हैं, वे मिथ्या बाह्य-रूप हैं, स्वयं सद्वस्तु नहीं।

यह एक सामान्य और अटल तर्क है : "परंतु मैं इसे देखता हूं, मैं इसे छूता हूं, मैं इसे अनुभव करता हूं, इसलिये यह सत्य है।"

परंतु, इसके विरुद्ध, कहना यह चाहिये : "मैं इसे देखता हूं, मैं इसे छूता हूं, मै इसे अनुभव करता हूं, इसलिये यह अवश्य ही मिथ्या होगा।" हम दो विपरीत छोरों पर हैं और हमारे लिये समझने का कोई उपाय नहीं।

श्रीअरविन्द के लिये सच्चा ज्ञान है ठीक तादात्म्य द्वारा प्राप्त ज्ञान, और प्रज्ञा है वह स्थिति जो सच्चा ज्ञान होने पर प्राप्त होती है। वे यहां कहते हैं : 'प्रज्ञा' मिथ्या बाह्य रूपों के पर्दे के पीछे देखती है, वह पीछे विद्यमान सद्वस्तु को देखती है। फिर श्रीअरविन्द इस बात पर जोर देते हैं कि जब तुम छिछले, बाह्य ज्ञान के द्वारा किसी वस्तु का वर्णन करते हो तो तुम हमेशा उसके विरोध में किसी दूसरी वस्तु को रखते हो, तुम जो देखते, छूते और अनुभव करते हो उनकी विषमता दिखाकर ही सर्वदा उनकी व्याख्या करते हो — और तब तुम उन्हें बिलकुल नहीं समझते।

बुद्धि सदा वस्तुओं को एक-दूसरी के विपरीत रखती है और तुम्हें चुनाव करने के लिये बाध्य करती है। जिनके विचार और तर्क सुस्पष्ट होते हैं वे लोग वस्तुओं के बीच विद्यमान समस्त भेदों को देखते हैं। यह बात विशेष रूप से देखने लायक है कि तर्क-बुद्धि विभिन्नता के द्वारा ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्य करती है। चूंकि तुम इस वस्तु और उस वस्तु में, इस कार्य और उस कार्य में, इस विषय और उस विषय में अंतर देखते हो, इसीलिये निर्णय करते हो और तर्क-बुद्धि अपना कार्य करती है।...

अत्यंत अनिवार्य और प्रथम पग यह है कि जो कुछ हमसे कहा गया है उसे कम या अधिक यांत्रिक रूप में, अच्छी तरह समझे बिना न दुहराएं, जैसे, हम कहते हैं कि "बाह्य रूप मिथ्या है," हम ऐसा कहते हैं क्योंकि श्रीअरविन्द ने ऐसा कहा है, पर हम इसे समझते नहीं, और इस सबके बावजूद जब कुछ जानना चाहते हैं तो उस चीज की ओर ताकना, उसका निरीक्षण करना, उसे छूना, चखना और सूंघना आरंभ कर देते हैं, क्योंकि हमें विश्वास नहीं है कि हमें देखने-समझने का और भी कोई दूसरा साधन प्राप्त है। जब हमें "चेतना के पलटने" का अनुभव प्राप्त होता है, जब हम इन चीजों के पीछे चले जाते हैं और इन बाह्य रूपों की भ्रांति को पूर्णतः वास्तविक रूप में अनुभव करते हैं और जानते हैं, केवल तभी हम समझना आरंभ करते हैं। परंतु तुम्हें जबतक यह अनुभव नहीं प्राप्त हो जाता तबतक तुम समस्त सूत्रावली को पढ़ सकते हो, उसे बार-बार दुहरा सकते और कंठस्थ कर सकते हो, और विश्वास करो, फिर भी तुम्हें यथार्थ बोध नहीं प्राप्त होगा, तुम्हारे लिये यह सब सत्य नहीं होगा, और ये सब बाह्य रूप ही तुम्हारे लिये एकमात्र साधन बने रहेंगे जिनकी सहायता से तुम बाहरी जगत् के साथ अपना संपर्क स्थापित करोगे और यह जान सकोगे कि वह क्या है। और कभी-कभी तो तुम्हारा सारा जीवन ही यह सीखने में बीत जाता है कि वस्तुएं अपने बाह्य रूप में कैसी हैं और यदि तुम उन सब चीजों को खूब बारीकी से, पूरे ब्योरे के साथ देखते हो तथा जो कुछ तुम देखते हो या सीखते हो उसे याद रखते हो तो तुम एक बहुत सुशिक्षित, बुद्धिमान व्यक्ति, ज्ञान-वारिधि समझे जाते हो...।

यदि कोई बहुत अधिक परिश्रम करे तो इन बाह्य रूपों पर थोड़ी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सी क्रिया कर सकता है, अधिक-से-अधिक, उनमें जरा-सा परिवर्तन ला सकता है— बस, इसी तरह विज्ञान तुम्हें जड़तत्त्व का व्यवहार करना सिखाता है,— पर यह कोई सच्चा परिवर्तन नहीं है और यह कोई सच्ची शक्ति भी नहीं है। और, जब तुम उस स्थिति में हो, तुम यह पूरा-पूरा विश्वास करते हो कि तुम कुछ नहीं कर सकते, अपना स्वभाव बदलने के लिये भी कुछ नहीं कर सकते, तुम अनुभव करते हो कि तुम एक प्रकार की नियति से आक्रांत हो जो तुम्हारे लिये बहुत भारी है, तुम यह नहीं जानते कि यह नियति कहां से या कैसे आयी है : तुम समझते हो कि तुम वैसे ही पैदा हुए हो, उस स्थान में या उस परिवेश में, उस स्वभाव के साथ पैदा हुए हो, तुम्हें जीवन में यथाशक्ति अच्छे-से-अच्छे रूप में चलते जाना होगा, जिन सब चीजों पर अपना विशेष प्रभाव नहीं उनके साथ समझौता करते हुए तथा अपने स्वभाव को बदलने की शक्ति के अभाव में स्वभाव की कठिनाइयों को क्षीण करते हुए आगे बढ़ना होगा। तुम अनुभव करते हो मानों तुम एक जाल में आबद्ध हो गये हो, तुम एक ऐसी चीज के गुलाम हो गये हो जिसकी तुम अवहेलना करते हो, तुम किन्हीं अज्ञात परिस्थितियों और शक्ति के हाथ का खिलौना बन गये हो, एक ऐसी संकल्प-शक्ति के हाथों नाचते हो जिसकी वश्यता तो तुम नहीं स्वीकार करते पर जो तुम्हें बाध्य करती है। अत्यन्त विद्रोही लोग भी गुलाम ही होते हैं, क्योंकि मुक्त होने का एकमात्र पथ है बस पर्दे के पीछे चले जाना और यह देखना कि उसके परे क्या है। जब तुम देख लेते हो तब तुम उसके साथ एक हो सकते हो और जब तुम तादात्म्य स्थापित कर लेते हो तब तुम्हें सच्चे रूपांतर की चाबी मिल जाती है।

हम पढ़ते हैं, हम समझने की चेष्टा करते हैं, हम व्याख्या करते हैं, हम ज़ानने की कोशिश करते हैं, पर सच्चे अनुभव का एक ही क्षण हमें हजारों शब्दों और सैकड़ों व्याख्याओं से कही अधिक सिखा देता है।

(शेषांश आवरण पृष्ठ-३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

सन्देश

ऐसा लगता है कि हर रोज चीजें ज्यादा खराब होती जा रही हैं। वास्तव में हम पुराने सड़ते हुए जगत् से ज्यादा-से-ज्यादा निराश होते जा रहे हैं और हमें अधिकाधिक विश्वास होता जा रहा है कि इन्हीं घिसे-पिटे मार्गों के बाहर जीवन के एक नये केन्द्र की स्थापना की जाये जिसमें एक नूतन और सत्यतर प्रकाश अभिव्यक्त हो सके, एक ऐसा नवीनतम जगत् जो अब स्वार्थपूर्ण प्रतियोगिताओं और अहंकारपूर्ण संघर्ष पर नहीं बल्कि व्यापक और उत्सुकता-भरे प्रयासों पर आधारित हो, जो व्यापक कल्पना, ज्ञान और सबकी प्रगति पर आधारित हो – एक ऐसा समाज हो जो धन या भौतिक शक्ति की लिप्सा पर नहीं, आध्यात्मिक अभीप्सा पर आधारित हो।

– श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

‘संपादकीय’ :

सरल उपाय

माताजी ने मनुष्य की प्राण-शक्ति की जितनी प्रशंसा की उतनी ही उसकी आलोचना भी की है। वे कहती हैं कि मनुष्य के अंदर जो साहसिक कार्य की शक्ति, खेल-कूद की शक्ति, अनथक काम करने की शक्ति, अध्ययन की शक्ति — मतलब हर कार्य के पीछे जो शक्ति है वह प्राण से ही आती है। यही प्राण-शक्ति मनुष्य से हत्या, अपहरण, झगड़े, दंगे करवाती है और यही यातना, यंत्रणा भी दिलवाती है। हम मनुष्यों में बहुत से व्यक्तित्व हैं, जैसे प्राण-शक्ति हमारा एक व्यक्तित्व हुआ वैसे ही मानसिक शक्ति — जो आदर्श, विचार, भले-बुरे को देखती, समझती है — वह हमारा मानस है। यही मानस कुटिल विचार, हर परिस्थिति को वक्र दृष्टि से देखता है, हमेशा षड्यंत्र करता रहता है। अंत में हमारा शरीर है जिसकी अपनी शक्ति है। वह भूख, प्यास, आराम, एकदम स्थूल आवश्यकता का दास है। उसका सहयोग न हो तो न प्राण, न मन कुछ कर पाता है। वे कहती हैं, “मनुष्य के प्राणिक व्यक्तित्व में छोटी-सी विजय भी महान् परिणाम ला देती है।”

अब हम एक दृष्टांत देखें। हमारे यहां एक किशोर था, बहुत चटोरा और मनपसंद व्यंजन हो तो बिना सोचे खाता ही रहता। परिणाम यह होता कि बदहज़मी का शिकार बनता। शरीर बेचारे की हालत ऐसी रहती कि प्रायः बीमार रहता। फिर उसका मिजाज बिगड़ता, मन पढ़ाई में न रहता, न खेल-कूद में। एक दिन उसने अपनी इस आदत की बात माताजी से कही, उन्होंने उससे कहा कि अगर वह प्राण की इस कमजोरी को जीत न पायेगा तो जीवन में बहुत कष्ट भोगने पड़ेंगे। उस किशोर ने दृढ़ निश्चय किया और एक साल के अंदर चटोरेपन को जीत लिया। मानों इस छोटी-सी जीत ने उसका जीवन बदल दिया। बीमारियां गायब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गयीं, पढ़ाई में मन ऐसा लगा कि अध्यापक खुश हो गये और नियमित कसरत से उसका शरीर सुडौल और सुदृढ़ बन गया। यह तो एक ही प्राणिक कमजोरी की विजय की कहानी है।

माताजी हमें और एक उपाय बताती हैं। वे कहती हैं, "रात को सोते समय अगर हम अपनी समस्या अपने सामने रखें तो हमारी सत्ता के उच्चतर क्षेत्र में हमारी समस्या चली जाती है। सवेरे हमें अपनी समस्या का हल मिल जाता है, उत्तर चाहें तो वह भी मिल जाता है। इसका कारण यह है कि हमारी चेतना की गहराई में हम ऐसी बातें जानते हैं जिन्हें हमारी बाह्य चेतना नहीं जानती।"

क्या हम इस सरल उपाय को आज़मा कर देखें ? मुझे विश्वास है इस प्रयोग से हमें अच्छा मार्ग-दर्शन मिलेगा।

— अनुबेन

दैनन्दिनी

जून

१. संगीत का काम है चेतना की, अपने-आपको आध्यात्मिक ऊंचाइयों तक उठाने में सहायता करना।
वह सब जो चेतना को नीचा करता है, कामनाओं को प्रोत्साहित करता और आवेगों को जगाता है, संगीत के सच्चे लक्ष्य के विरुद्ध है और उससे बचना चाहिये।
२. कविता आत्मा की संवेदनशीलता है।
३. अगर तुम्हारे अंदर सच्ची वृत्ति हो तो हर चीज कुछ सीखने का अवसर होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. हमें संपूर्ण जीवन का, उसमें अभीतक बाकी समस्त कुरूपता, मिथ्यात्व और क्रूरता का सामना करना चाहिये, लेकिन हमें अपने अंदर समस्त शिव और सुन्दर, समस्त ज्योति और समस्त सत्य को खोजने की सावधानी बरतनी चाहिये ताकि हम सचेतन रूप से इस स्रोत का बाकी संसार के साथ नाता जोड़ सकें और उसे रूपांतरित करें।

यह, भाग जाने या न देखने के लिये आंखें मूंद लेने की अपेक्षा कहीं अधिक कठिन है, लेकिन यही एकमात्र सच्चा प्रभावकारी उपाय है — यह उन लोगों का मार्ग है जो सचमुच बलवान् और शुद्ध हैं और जो परम सत्य को अभिव्यक्त करने में समर्थ हैं।

५. जब हमारे पास ज्ञान की मजबूत पृष्ठभूमि हो तभी हम सफलता के साथ जीवन का सामना कर सकते हैं।

६. यौवन इस बात पर निर्भर नहीं है कि हम कितने छोटे हैं, बल्कि इसपर कि हमारे अंदर विकसित होने की क्षमता और प्रगति करने की योग्यता कितनी है। विकसित होने का अर्थ है अपनी अंतर्निहित शक्तियां, अपनी क्षमताएं बढ़ाना; प्रगति करने का अर्थ है अबतक अधिकृत योग्यताओं को बिना रुके निरंतर पूर्णता की ओर ले जाना।

७. मनुष्य का मूल्य उसके केंद्रित मनोयोग की क्षमता के अनुपात में होता है, एकाग्रता जितनी अधिक होती है परिणाम भी उतना ही असाधारण होता है, यहांतक कि पूर्ण और अविरत एकाग्र मनोयोग अपने काम पर प्रतिभा की मुहर लगा देता है।

८. किसी खिलाड़ी को यौगिक साधना से जो सबसे बड़ी सहायता मिल सकती है वह यह है कि साधना उसे यह सिखा सकती है कि विश्व-ऊर्जा के अक्षय स्रोत से शक्ति खींचकर अपनी शक्ति को नया और ताजा कैसे बनाया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. नेताओं को हमेशा उदाहरण रखना चाहिये, जो लोग उनकी देख-रेख में हैं उनसे वे जिन गुणों की मांग करते हैं स्वयं उन्हें उन गुणों को आचरण में लाना चाहिये; उन्हें समझदार, धीर, सहनशील, सहानुभूतिपूर्ण होना चाहिये, उनमें ऊष्मा और मैत्रीपूर्ण सद्भावना होनी चाहिये, लेकिन अपने लिये मित्र जुटाने की अहंकारपूर्ण वृत्ति से नहीं, बल्कि उदारता के द्वारा, ताकि वे औरों को समझ सकें और उनकी सहायता कर सकें।

१०. प्रतीत होने की अपेक्षा होना कहीं अच्छा है। अगर हमारी सच्चाई पूर्ण हो तो हमें अच्छा प्रतीत होने की जरूरत नहीं। और पूर्ण सच्चाई से हमारा अभिप्राय यह है कि हमारे सभी विचार, अनुभव, इंद्रिय-बोध और कर्म हमारी सत्ता के केंद्रीय 'सत्य' के सिवा और किसी चीज को अभिव्यक्त न करें।

११. प्रभु अपने कार्यकर्ताओं में से उन्हीं को "श्रेष्ठ" कहेंगे जो अपने अंदर की पाशविकता को पूरी तरह जीत लेंगे और उसके परे चले जायेंगे।

१२. आगे बढ़ो, हमेशा आगे बढ़ो, भय के बिना और संकोच के बिना आगे बढ़ो।

१३. हमेशा निष्ठावान् और अध्यवसायी रहो तो तुम्हें उपलब्धि में अपना भाग मिलेगा।

१४. ऐसा अनुभव करो, ऐसी इच्छा करो, ऐसा कार्य करो कि तुम नये जगत् की सिद्धि के लिये नयी सत्ताएं बनो और इसके लिये मेरे आशीर्वाद हमेशा तुम्हारे साथ रहेंगे।

१५. साहसी, सहनशील और जागरूक बनो, और सबसे बढ़कर, पूरी ईमानदारी के साथ सच्चे बनो।

तब तुम सभी कठिनाइयों का सामना कर सकोगे और विजय तुम्हारी होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६. अपनी आवश्यकताओं और क्षमताओं के अनुकूल कोई भी युक्ति-युक्त व्यायाम-पद्धति व्यायाम करनेवाले को अपना स्वास्थ्य सुधारने में सहायता देगी। और फिर मनोवृत्ति का महत्त्व ज्यादा है। यौगिक वृत्ति से अपनायी गयी, कोई भी सुनियोजित वैज्ञानिक रूप से व्यवस्थित व्यायाम-पद्धति यौगिक कसरत हो सकती है और उसमें भाग लेनेवाला शारीरिक स्वास्थ्य और नैतिक तथा आध्यात्मिक उत्थान की दृष्टि से पूरा लाभ उठा सकता है।

१७. सच्चा प्रेम केवल **एक** ही है, भगवान् का प्रेम, जो मनुष्यों में भगवान् के लिये प्रेम में बदल जाता है।

१८. तुम्हारी श्रद्धा तुम्हें 'परम पुरुष' के रक्षण में रख देती है और वे सर्वशक्तिमान् हैं।

१९. सब शब्दों से ऊपर, सब विचारों से ऊपर अभीप्सा करती हुई श्रद्धा की प्रकाशमान नीरवता में अपने-आपको पूरी तरह, बिना कुछ बचाये हुए, समस्त जीवनों के परम प्रभु के अर्पण कर दो और वे तुम्हें जो बनाना चाहते हैं वही बना देंगे।

२०. मानव जीवन का लक्ष्य है भगवान् को खोजना और उन्हें अभिव्यक्त करना। स्वभावत: इस खोज से सुख मिलता है; परंतु यह सुख अपने-आपमें लक्ष्य न होकर एक परिणाम है। एक सामान्य अनुवर्ती परिणाम को जीवन का लक्ष्य मान बैठने की यह भूल ही मनुष्य जाति पर आनेवाली अधिकतर विपदाओं का कारण है।

२१. महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम जिस आदर्श को चरितार्थ करना चाहते हैं उसे कभी आंखों से ओझल न होने दें और इसी उद्देश्य से सभी परिस्थितियों का लाभ उठायें।

२२. सच्ची शिक्षा को उस चीज को **विकसित करना** और **खोलना चाहिये** जो पहले से ही ग्रहण करनेवाली सत्ताओं में विद्यमान है। जिस तरह फूल सूर्य के प्रकाश में खिलते हैं, उसी तरह बच्चे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनंद में खिलते हैं। यह कहने की जरूरत नहीं कि आनंद का मतलब कमजोरी, अस्तव्यस्तता और गड़बड़ है, बल्कि एक प्रकाशमय सद्भावना है जो अच्छे को प्रोत्साहन देती है और बुरे पर कठोरता से जोर नहीं देती।

'कृपा' हमेशा न्याय की अपेक्षा 'सत्य' के ज्यादा नजदीक होती है।

२३. मेरे प्रिय बच्चो, काम पसंद करो और तुम सुखी रहोगे। सीखना पसंद करो और तुम प्रगति करोगे।

२४. जो कुछ करना हो उसे ध्यान देकर करना हर प्रकार की प्रगति का आधार है।

२५. दिन बीत जाते हैं, सप्ताह बीत जाते हैं, महीने बीत जाते हैं, साल बीत जाते हैं और काल अतीत में विलुप्त हो जाता है। और बाद में, जब वे बड़े हो जाते हैं, जिन्हें अब बालक रहने का परम सौभाग्य प्राप्त नहीं रहता, तो उन्हें इस बात का खेद होता है कि उन्होंने अपना समय खो दिया, वे उसका उपयोग जीना जानने के लिये जो चीजें आवश्यक हैं उन सबको सीखने में कर सकते थे।

२६. कोई महत्त्वाकांक्षा न रखो, और सबसे बढ़कर यह कि किसी चीज का दिखावा न करो, हर क्षण, तुम अधिक-से-अधिक जो हो सकते हो वह बनो।

२७. अपनी सत्ता के सत्य में तुम क्या हो, यह अलंघ्य रूप से निश्चित कर दिया गया है, कोई व्यक्ति या कोई चीज तुम्हें वह होने से नहीं रोक सकती, लेकिन यह तुम्हारे स्वतंत्र चुनाव पर छोड़ा गया है कि तुम वहां तक पहुंचने के लिये कौन-सा रास्ता अपनाओ।

२८. ऊपर उठते हुए विकास में हर एक अपनी दिशा चुनने के लिये स्वतंत्र है : वह चाहे तो 'सत्य' के शिखरों की, परम उपलब्धि की ओर जानेवाली तेज और खड़ी चढ़ाई अपनाये या शिखरों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुंह मोड़कर, उतरते हुए अनंत जन्मों के अनिश्चित, सरल, सर्पिल मार्ग को स्वीकारे।

२९. काल की गति में, बल्कि इसी जीवन में तुम एक ही बार, हमेशा के लिये, अटल रूप में अपना चुनाव कर सकते हो, और तब तुम्हें हर नये अवसर पर उसका अनुमोदन करना होगा; या फिर, अगर आरंभ में तुमने अंतिम निर्णय न लिया हो तो तुम्हें हर क्षण सत्य और मिथ्यात्व के बीच चुनाव करना होगा।

३०. ज्ञान के लिये सीखना, प्रकृति और जीवन के रहस्यों को जानने के लिये पढ़ना, चेतना को विकसित करने के लिये अपने-आपको शिक्षित करना, आत्म-प्रभुत्व पाने के लिये स्वयं को अनुशासित करना, अपनी दुर्बलताओं, अक्षमताओं और अज्ञान का अतिक्रमण करने के लिये पढ़ना, जीवन में अधिक उच्च, अधिक विशाल, अधिक उदार और अधिक सच्चे उद्देश्य की ओर बढ़ने के लिये अपने-आपको तैयार करना — यही है विद्यार्थी का लक्ष्य।

अशुद्धि संशोधन

अग्निशिखा के मई २००३ के अंक के २६ पृष्ठ पर मूल में और पाद टिप्पणी में निगम छपा है। यह **निगमन** होना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

परिचारक गण

श्रीअरविन्द के एक और सेवक थे डॉ. सान्याल, वे कलकत्ते के प्रतिष्ठित सर्जन थे और उनकी सेवा की तब तत्काल जरूरत पड़ी जब १९५० के दिसम्बर के पहले सप्ताह में श्रीअरविन्द की स्थिति नाज़ुक हो उठी थी। उन्हें तुरन्त तार द्वारा सूचित कर जल्द से जल्द बुलाया गया। इसके पहले उन्होंने श्रीअरविन्द के व्यक्तिगत रूप से दो बार दर्शन किये थे। पहली बार जब वे आश्रम में आये थे, तब मैंने उनसे श्रीअरविन्द की बीमारी के बारे में परामर्श किया था। अगले वर्ष जब वे फिर आश्रम आये तो उनका श्रीअरविन्द के साथ सम्पर्क उसी बीमारी के कारण हुआ। वे जब भी आते एक सप्ताह तक रहते और रोज गुरु के दर्शन पाते। सफेद धोती और पंजावी में वे कमल या गुलाब का गुलदस्ता लिये शान्त भक्ति-भाव से उसे गुरु को अर्पित कर प्रणाम करते। श्रीअरविन्द विस्तर पर बैठते और डॉक्टर फर्श पर घुटनों के बल बैठकर उनके पांव की मालिश करते-करते उनसे बातें भी करते रहते। श्रीअरविन्द का व्यवहार मिलनसार और आकर्षक था। वे मुस्कुराते हुए डॉक्टर को बात करने के लिये प्रोत्साहित करते रहते। मैंने एक बार दूर से माताजी को श्रीअरविन्द के साथ डॉक्टर के विषय में बात करते हुए सुना था। जो थोड़े-वहुत शब्द मेरे कान में पड़े उनसे मैं समझा कि माताजी डॉक्टर के आचरण और शरीर-विज्ञान के अनुसार उनकी जो आकृति थी उससे काफी प्रभावित थीं। मैं जान गया कि उन्होंने डॉक्टर को अपने भावी यंत्र के रूप में चुन लिया है। तो प्रभु की अंतिम समय की सेवा और माताजी की स्थायी सेवा के लिये डॉक्टर का पथ तैयार हो चुका था।

पवित्र और द्युमान् दोनों श्रीअरविन्द के कमरे के कालीन की सफाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने आते थे, पवित्र केवल सवेरे ही आते। एक और साधक की बात मैं करना चाहता हूं। वे थे उदार जो १९४७ से श्रीअरविन्द के कमरे में फर्नीचर को पोंछने आते थे। श्रीअरविन्द के अंतिम दिनों में उन्होंने विदेश से दवाइयां मंगवाकर हमारी बड़ी सहायता की थी। श्रीअरविन्द के महाप्रस्थान के समय वे उपस्थित थे। अपनी सेवा के बारे में उन्हीं से सुनें –

"१९३९ में जब श्रीअरविन्द की दुर्घटना हुई तब यह सोचा गया कि उनका फर्नीचर जो पुराना हो चुका था और कामिनी (एक तरह की लकड़ी) से बनाया गया था उसे बदलना चाहिये। माताजी ने श्रीअरविन्द के कमरे के फर्नीचर का नया डिज़ाइन बनाया और उसे बनवाने का काम मुझे देकर मुझे निहाल कर दिया। मैंने कमरे का फर्नीचर शीशम की लकड़ी से बनवाया और श्रीअरविन्द का पलंग सागौन की लकड़ी से।

"फर्नीचर जब मोम से अच्छी तरह चमका कर (फ्रेंच पॉलिश से नहीं) श्रीअरविन्द के कमरे में आ गया, तब माताजी ने मुझे विशेष अधिकार दिया – वह था नये फर्नीचर को साफ रखने का और उसे पॉलिश करने का काम। मुझे दिन में एक घण्टे के लिये उस कमरे में जाने की अनुमति दी गयी थी। दर्शन के दिनों के अतिरिक्त मुझे इस तरह श्रीअरविन्द के साथ व्यक्तिगत संबंध रखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

"मेरे लिये वे बड़े सुखद दिन थे। मैं वह एक घण्टा अलग-अलग समय पर चुनता। कभी माताजी और अन्य सेवक श्रीअरविन्द के साथ होते तो कभी वे नीरद को 'सावित्री' का श्रुतलेख लिखवाते। यह एक घण्टा मेरे लिये बहुत बड़ी सौगात थी। और उसकी स्मृति को मैं अपने हृदय में संजोकर रखे हुए हूं।

"श्रीअरविन्द ज्यादा बोलते न थे फिर भी मैंने उन्हें विभिन्न विषयों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर बोलते हुए सुना था। वे मुझसे वैसे तो कभी बात नहीं करते थे किन्तु जब भी उन्होंने मुझसे बात की, वे क्षण मेरे लिये अमूल्य थे। दर्शन के दिनों में भी मेरा सौभाग्य था कि मैं व्यक्तिगत रूप से उनके दर्शन पाता था, मैं उनकी गोद में सिर रख देता और बाद में उनकी आंखों में ताकता रहता। रोज एक घण्टे के लिये उनकी उपस्थिति में रहना कितना सुखद अनुभव था।

"उनके महाप्रस्थान के कुछ दिन पहले मैंने उनको अपनी ओर इतने प्रेम और अनुकम्पा से निहारते पाया कि मैं उसका वर्णन न कर पाऊंगा। उस दिन उनके सामने मैं अकेला ही था। मुझे पता न था कि वे मुझे इस तरह क्यों देख रहे थे किन्तु मेरे ऊपर जो प्रेम की वर्षा उन्होंने की उससे मैं आनन्द-विभोर होकर ऐसा मस्त हो गया कि मैंने सोचा ही नहीं कि इसका क्या कारण हो सकता है। बहुत बाद में जब मैंने उनके अन्य सेवकों के साथ अपनी अनुभूति की तुलना की तभी मैं समझ पाया कि श्रीअरविन्द प्रस्थान से पहले विदाई ले रहे थे। औरों के साथ भी उन्होंने वैसा ही किया था — उन्होंने हर एक के साथ भिन्न-भिन्न ढंग से व्यवहार किया था और प्रत्येक उस मुद्रा से असमंजस में पड़ गया था! जब वे भौतिक रूप से हमसे अलग हुए तभी हम उनके अप्रत्याशित स्नेह-प्रदर्शन का कारण समझ पाये।"

— नीरदवरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसदीय शासन-प्रणाली के बारे में

पार्थसारथी को लिखे १३ जुलाई १९११ के पत्र का एक अंश

मेरे आदेशों का पालन करते समय तुम्हें पुराने ढर्रे की राजनीति से सावधानी से बचना चाहिये। आध्यात्मिकता ही भारत की एकमात्र राजनीति है, सनातन धर्म का पूर्ण विकास और उसकी स्थापना ही उसका स्वराज है। निःसंदेह, हमें पश्चिमी संसदीय शासन-प्रणाली के अनुभव से गुजरना पड़ेगा ताकि हम यह देख सकें कि वह राष्ट्रों को पूर्ण रूप से विकसित करने में कितनी असहाय है। इस समय भारत सचमुच एक तरह के राष्ट्रीय योग की प्रथम अवस्था से गुज़र रहा है। इस योग के प्रारंभ में दिव्य शक्ति का तीव्र प्रवाह १९०५ में अबाध गति से उतर कर राष्ट्र के ऊपर छा गया और उसने राष्ट्र को पूर्ण तामसिक 'अज्ञान' से झकझोर कर जगा दिया। जैसा व्यक्तियों के साथ होता आया है वैसा ही राष्ट्र के साथ भी हुआ। राष्ट्र में जो कुछ अशुभ था, उसके सारे अनुचित 'संस्कार' उसकी दोषपूर्ण भावनाएं, मानसिक और नैतिक आदतें; सब की सब उभर कर आ गयीं और उन्होंने दिव्य शक्ति का दुरुपयोग किया। इसी कारण राजनीतिक प्रभावशाली भाषण, संसदीय सरगर्मियां, सभाएं, जुलूस, सत्याग्रह वगैरह आ पहुंचे और उनके पीछे-पीछे आये बम, रिवॉल्वर और हमें मजबूर करनेवाले नियम-कानून। वह था अशुद्ध राजसिक आंदोलन की सरगर्मी का समय और उसके बाद हताश रजोगुण की तामसिक प्रतिक्रिया के समय का आना अनिवार्य हो गया। तब आयी अंग्रेजी उदारवाद की दोगली संतान — हमारा नरम पंथ, यूरोप और एशिया की वर्णसंकर संतति — राष्ट्रीयता, बाकुनिन[1] और मेज़िनी[2]

[1] बाकुनिन : बम-निर्माता और अराजकता का पिता, रूसी नागरिक।

[2] मेज़िनी : इटली का प्रसिद्ध विप्लवी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की अकाल-प्रसूत संतान — आतंकवाद — इन सबको भगवान् ने पटक गिराया। हां, आतंकवाद अभीतक जीवित है, किन्तु वह भी धीरे-धीरे टुकड़ों में पीसा जा रहा है। इस समय वही हमारा एकमात्र शत्रु है, क्योंकि मैं ब्रिटिश सरकार के अत्याचारी कानून को शत्रु नहीं मानता, बल्कि उसे सहायक समझता हूं। ब्रिटिश सरकार की अत्याचारी हुकूमत हमें बेतहाशा पैम्फ्लेटबाज़ी द्वारा प्रचार से, हमारे नाटकीय छल से की गयी हत्याओं से, वैर और घृणा से भरे उन्मादी, आवेशपूर्ण नारों — 'फिरंगी को मारो' — से मुक्त कर दे तो वह सहायक ही होगी। अफीमची रजोगुण के उन्मत्त स्वप्न, उसके बचकाने षड्यंत्र, आधुनिक हथियारों से लैस सेना का आधी दर्जन बन्दूकों और कई सौ लाठियों से सामना करने की योजना — इन सबसे हमें मुक्ति मिले तो मैं कहता हूं, "अंग्रेज सरकार के हाथ में अधिक शक्ति आती रहे।" क्योंकि जब हम इस मूर्खता से पार पाएंगे तभी सत्य को उभरने का अवसर मिलेगा, तब भारत में सात्त्विक मन उठ खड़ा होगा और भारत के पुनरुद्धार के आरंभ में सचमुच शक्तिशाली आध्यात्मिक आंदोलन शुरू होगा। उसके बाद भी हमें बहुत-सी मुसीबतों और गलतियों का सामना करना पड़ेगा, लेकिन फिर भी हमें सच्चे और उचित मार्ग पर कदम रखने का अवसर अवश्य मिलेगा। मैं मानता हूं कि हमें आवश्यक अनुभव देते हुए, हमारे लिये उचित परिस्थितियां प्रस्तुत करते हुए प्रभु ही हमारा मार्गदर्शन कर रहे हैं।

*

१९३८ नवंबर में, श्रीअरविन्द की जांघ की हड्डी टूटने की दुर्घटना के बाद कुछ शिष्य उनकी सेवा करने जाया करते थे। उस समय श्रीअरविन्द के साथ विविध विषयों पर अनौपचारिक बातचीत संध्या के समय हुआ करती थी। नीरदवरण और ए. बी. पुराणी ने इन बातों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकतर स्मृति से याद कर लिपिबद्ध कर लिया था और ये स्मृति-लेख बाद में पुस्तकों के रूप में छप गये थे। उनमें से कुछ अंश यहां उद्धृत किये जा रहे हैं।

दिसम्बर २७, १९३८

भारतीय व्यवस्था सीधी जीवन से उभर आयी थी, उसमें हर चीज के लिये, हर रुचि के लिये स्थान था। सरकारी तंत्र में महाराजा का तंत्र, अभिजात-वर्ग का तंत्र, लोकतंत्र भी था, इस तरह सरकार में हर तरह की रुचि का प्रतिनिधित्व रहता था; जब कि यूरोपीय तंत्र का विकास मन में हुआ; वे तर्क और सोच-विचार के मार्ग-दर्शन में काम करते हैं। वे चाहते हैं कि किसी भी स्वतंत्रता या रूप-भेद के बिना ही हर चीज कटी-छंटी और रूखी-सूखी ही रहे। अगर जनतंत्र बनता है तो बस जनतंत्र ही रहना चाहिये — और किसी चीज के लिये स्थान न होना चाहिये। वे नमनीय नहीं बन पाते।

इस समय भारत पश्चिम की नकल करने की कोशिश कर रहा है। संसदीय शासन-प्रणाली भारत के लिये अनुकूल नहीं है किंतु हम हमेशा पश्चिम जिसे फेंक देता है उसी को उठा लेते हैं।

भारत के लिये आदर्श शासन-प्रणाली के बारे में आपका क्या मत है?

मेरा विचार कुछ-कुछ रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार उसके विषय में जो लिखा था उससे मिलता-जुलता है। सबसे ऊंचा स्थान राष्ट्रपति का हो जिनके हाथ में काफी शक्ति रहनी चाहिये ताकि सरकार की नीति सतत एक-सी बनी रहे और वह राष्ट्र की 'एसेम्बली' का प्रतिनिधित्व करे। सारे प्रदेश एक साथ मिलकर एक संघ बनाएंगे। वह संघ स्थानीय समूह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को अपनी विशेष समस्याओं के अनुकूल कानून बनाने का कार्यक्षेत्र देता रहेगा।

जनवरी १८, १९३९

मेरा सुझाव है एक आध्यात्मिक समाधान का, लेकिन उसका ध्येय है मानव प्रकृति के पूरे आधार को बदलना। यह किसी आंदोलन को आगे बढ़ाने का प्रश्न नहीं है, न ही यह कुछ वर्षों का प्रश्न है, जब तक कि तुम आध्यात्मिकता को अपने जीवन का सच्चा आधार नहीं बना लेते तब तक कोई सच्चा समाधान पा ही नहीं सकते।

यह स्पष्ट है कि मानव प्रकृति को मूलतः बदलने में मन सक्षम नहीं हुआ है। अनंत काल तक तुम मनुष्य की संस्थाएं बदलते जाओगे, फिर भी अपूर्णताएं तुम्हारी सभी संस्थाओं से फूट पड़ेंगी।

जनवरी २९, १९३९

क्या तुम्हें पता है कि सी. आर. दास ने अपराधियों के विषय में क्या कहा ? उन्होंने कहा, "मैंने अपने सारे कानूनी पेशे में राजनीति में जितने खराब अपराधी देखे हैं वैसे कहीं नहीं देखे।"

फरवरी २, १९३९

पुराणी : भारतीय राजा-महाराजाओं और रजवाड़ों का प्रश्न गंभीर हो उठा है।

श्रीअरविन्द : हां, अगर राजा कांग्रेस के साथ समझौता कर लें तो सब कुछ बहुत अच्छा होगा। जैसा कि कई राजाओं ने सुझाव दिया है, मेरी भी राय यही है कि जिस तरह पुरानी भारतीय संसदीय व्यवस्था में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक मंत्रणा-मंडल हुआ करता था उसी तरह का मंडल हो जिसमें सबके हितों को ध्यान में रखा जाये। लेकिन आजकल लोग आधुनिक संसदीय प्रणाली चाहते हैं, सरकारी संसदीय प्रणाली चाहते हैं। यह अंग्रेजी संसदीय प्रणाली सर्वनाश करेगी। यह प्रणाली यूरोप को वर्तमान दुःखद अवस्था तक ले आयी है। यह केवल उत्तरीय यूरोप में इंग्लैण्ड और स्कैन्डीनेविया के देशों में ही सफल रही। उसका कारण यही है कि वे व्यवहार-कुशल भौतिकवादी लोग हैं : वे विचारों और सिद्धांतों पर नहीं जीते। फ्रांस में तुम तीस विभिन्न दल देखोगे और अगर एक नया व्यक्ति आ गया तो वह इकत्तीसवां दल खड़ा कर देगा। फिर भी इन दलों में कौन-सा दल दूसरों से भिन्न है यह समझना मुश्किल होता है... ।

अंग्रेज सरकार के आने से पहले गांवों में जैसी पंचायत-सरकारें हुआ करती थीं उन्हीं को दुबारा शुरू करके हमें ऊपर उठना चाहिये। पंचायत-सरकार और ग्राम-संघ लोगों का अच्छा प्रतिनिधित्व करते हैं और लोगों के साथ उनका जीवंत संपर्क भी होता है। वे संस्थाएं लोगों की विचार-धारा का अंग होती हैं। इसके विपरीत, संसदीय प्रणाली, जिसमें नगर-पालिका की स्थानीय समितियां होती हैं, वे भी व्यावहारिक नहीं होतीं। इन समितियों के सभासद मंच पर केवल भाषण देते हैं और उसके बाद कोई नहीं जानता कि बाकी के तीन-चार वर्षों में वे क्या करते हैं। समिति का समय पूरा हो जाने के बाद वे फिर से हेर-फेर कर, फिर से हर चीज की व्यवस्था बदल कर, जबतक उनका अधिकार रहता है अपनी गड्डी बना लेते हैं। ब्रिटेन की पुरानी संसद-प्रणाली ज्यादा प्रतिनिधित्व करती थी। जिस व्यक्ति का चुनाव होता था, वह उसी राष्ट्र का निवासी होता था और उसका अपने मतदाताओं के साथ जीवन्त स्पर्श रहता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्योतिष और अन्तर्दृष्टि की भविष्यवाणियां

भाग्य और कर्मफल

क्या भावी घटनाओं के बारे में भविष्यवाणी करना संभव है? क्या भाग्य जैसी कोई वस्तु है?

इतना तो स्पष्ट है कि होनेवाली घटनाओं में एक ऐसा तत्त्व होता है जिसके बारे में पहले से बताया जा सकता है, केवल बड़े-बड़े नुक्तों को ही नहीं बल्कि बारीक ब्योरे तक को भी सही-सही बताया जा सकता है। पर यह सच नहीं है कि सब कुछ की भविष्यवाणी की जा सकती है या यह कि जीवन में भाग्य ही एकमात्र निश्चायक तत्त्व है, न ही यह सच है कि स्वतंत्र इच्छा ही संपूर्ण तथ्य है। इस बारे में प्रचलित लोकमत कि भाग्य ही सब कुछ है या फिर स्वतंत्र इच्छा ही सब कुछ है, एक अत्यंत संक्षिप्त एवं अनिश्चायक कथन है।

कीरो की इतनी भविष्यवाणियां भला कैसे सच निकलीं?

कीरो के विचारों और भविष्यवाणियों पर हम बहुत भरोसा नहीं कर सकते। कुछ सच निकली हैं तो बहुत सारी गलत भी रही हैं। वस्तुतः उन भविष्यवाणियों की संख्या चकरानेवाली है जो पूरी नहीं उतरीं। अतः कीरो का प्रमाण देकर यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि सब कुछ पहले से ही निश्चित है या यह कि हर चीज और हर व्यक्ति अटल नियति के अधीन है।

यह जानी हुई बात है कि ज्योतिष की भविष्यवाणियां काफी बड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या में सच रही हैं। इससे क्या यह सावित नहीं होता कि तारे हमारी नियति को बनानेवाले हैं?

ज्योतिष-संबंधी सब भविष्यवाणियों को यदि हम एक साथ लें तो यह मानना होगा कि उनमें से काफी सच रही हैं, पर इसका यह मतलब नहीं कि तारे हमारी नियति को बनानेवाले हैं। तारे तो, हमारी पहले से बनी हुई नियति को अंकित भर करते हैं, वे संकेत-लिपिक हैं न कि परम शक्ति, उनकी क्रिया यदि शक्ति पैदा करती भी है तो वह संचार-शक्ति है न कि रचनाकारी परम शक्ति। कोई तो है यहां जिसने यह सब निश्चित कर रखा है या कोई चीज है यहां हम कह सकते हैं कि वह भाग्य है, तारे तो बस, उसकी सूचना देनेवाले हैं।

यह कैसी बात है कि कुछ मामलों में ज्योतिष की भविष्यवाणियां एक खास आयु तक तो पूरी-पूरी ठीक उतरती हैं, बाद में वे सच्ची नहीं रहतीं? अन्तर्दृष्टि की भविष्यवाणियों में भी कुछ तो अक्षरशः ठीक होती हैं, दूसरी नहीं — वे या तो आधी ठीक होती हैं या पूरी तरह चूक जाती हैं।

हां, ऐसा बहुत बार होता है, पर इसका यह मतलब नहीं कि भविष्यबोध की क्षमता अवास्तविक है या यह कि सबकी सब भविष्यवाणियों की व्याख्या संभावना, दैव-योग या संयोग के रूप में ही की जा सकती है। उनका स्वरूप और उनकी संख्या बहुत अधिक है जिनकी व्याख्या इस रूप में नहीं की जा सकती। भविष्यवाणियों के पूरे होने में जो हरक-फ़रक देखने में आता है उसकी व्याख्या इस तरह की जा सकती है कि हो सकता है कि भविष्यवक्ता की क्षमता में अपूर्णता हो — वह कभी तेज हो तो कभी क्षीण, या इस तथ्य के द्वारा की जा सकती है कि चीजों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Central Library Gurukul Kangri University Hardwar-249404 (U.A.)

भविष्यवाणी अंशतः की जा सकती है, कि वे अंशतः ही पूर्वनिश्चित होती हैं या फिर इस तरह कि उन्हें निश्चित करनेवाले विभिन्न कारण होते हैं या शक्ति की विभिन्न धाराएं होती हैं या संभाव्यता और वास्तविकता की विभिन्न श्रेणियां होती हैं। जबतक कोई किसी धारा के संपर्क में रहता है, उसकी भी भविष्यवाणी सही रहती है अन्यथा नहीं — या यदि शक्ति की धारा ही बदल जाये तो व्यक्ति की भविष्यवाणी भी पटरी से उतर जाती है। तथापि, हम यह कह सकते हैं, यदि चीजों की भविष्यवाणी करना कदाचित् संभव हो तो, कोई ऐसी शक्ति या कोई ऐसा स्तर अवश्य होना चाहिये जिसमें या जिस पर स्थित रहते हुए सब कुछ को पहले से देखा जा सकता हो। यदि कोई सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् भगवान् है तो ऐसा होना ही चाहिये।

क्या मनुष्य की इच्छा-शक्ति भाग्य या नियति के आगे एकदम निरुपाय है?

ज्योतिषी स्वयं कहते हैं कि दो शक्तियां हैं : दैव और पुरुषकार, भाग्य और व्यक्ति की कर्मशक्ति, और व्यक्ति की कर्मशक्ति भाग्य में हेर-फेर कर सकती है, बल्कि उसे रद्द भी कर सकती है। यहां तक कि भाग्य द्वारा जो कुछ निश्चित हो चुका है उसे कार्यान्वित करना होता है और सचमुच शक्तियों की क्रीड़ा के द्वारा वह कार्यान्वित किया भी जाता है और शक्तियों की इस लीला में कोई अपरिवर्तनीय कठोरता देखने में नहीं आती। व्यक्ति की इच्छा-शक्ति या प्रयास उन्हीं शक्तियों में से एक है। नैपोलियन से जब पूछा गया कि तुम भाग्य को मानते हो फिर क्यों सारे समय योजना बनाने और काम करने में लगे रहते हो ? उसने उत्तर दिया, "क्योंकि मेरे भाग्य में बदा है कि मैं काम करूं और योजनाएं बनाऊं," दूसरे शब्दों में, उसका योजना बनाना और काम करना भाग्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का ही एक अंग था, भाग्य द्वारा पूर्वदृष्ट परिणामों को लाने में सहायक था।

भाग्य की व्याख्या क्या है ?

भारतीय व्याख्या के अनुसार भाग्य है कर्मफल। हम अपने कर्मों के द्वारा अपना भाग्य स्वयं बनाते हैं। पर हमारे द्वारा बना भाग्य हमें बांधता है, क्योंकि हम जैसा बोयेंगे वैसा पायेंगे — इस जीवन में या अगले जीवन में।

हमारे पिछले कर्म चाहे जैसे भी रहे हों, क्या हमारी आज की इच्छा-शक्ति आनेवाली घटनाओं को कुछ हद तक निर्धारित नहीं कर सकती ?

निश्चय ही कर सकती है, क्योंकि हम भविष्य के लिये अपने भाग्य का तब भी सृजन कर रहे होते हैं जब कि वर्तमान में हम भूतकाल के अपने पुराने भाग्य को भोग रहे होते हैं। यह चीज हमारी इच्छा-शक्ति और कर्म को एक अर्थ प्रदान करती है और भाग्यवाद को एक कठोर और निरर्थक चीज नहीं बनने देती, जैसा कि यूरोपियन आलोचक इसे गलत रूप में समझते हैं।

क्या हम भूतकाल के अपने कर्मों के परिणामों को भोगने के लिये पूरी तरह बंधे हुए हैं ? क्या हमारी वर्तमान इच्छा-शक्ति भूतकाल के हमारे कर्मों के वर्तमान में मिलनेवाले परिणामों को बदल या रद्द नहीं कर सकती ?

ऐसा होना असंभव नहीं है, हमारी वर्तमान इच्छा-शक्ति और क्रिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूतकाल के कर्मों को रद्द कर सकती या बदल सकती है। केवल कुछ प्रबल कर्म ऐसे होते हैं, जिन्हें उत्कट कर्म कहा जाता है, उन्हें बदला नहीं जा सकता। आध्यात्मिक चेतना, उदाहरणार्थ, यदि पा ली जाये तो वह भूतकाल के कर्मों को रद्द कर सकती है अथवा उन्हें रद्द करने की क्षमता प्रदान करती है, क्योंकि तब हम वैश्व या परात्पर भागवत इच्छा-शक्ति के साथ एक हो जाते हैं जिसके पास अपने विहित विधान को रद्द करने की, कर्मफल के संकरे और बंधे-बंधाये नियमों को तोड़ने की शक्ति है और जो अधिक अनुकूलनीय स्वतंत्रता और विशालता को संभव बना सकती है। इस प्रकार न तो कर्मवाद और न ही ज्योतिष कठोर एवं अटल भाग्य की ओर इंगित करते हैं।

सुख की खोज

कहा जाता है कि मनुष्यों के सभी कर्मों और प्रयासों के पीछे जो प्रेरक हेतु होता है वह है सुख की खोज। क्या यह सच है?

यह एक बहुत आसान-सी मानसिक स्थापना है जो तथ्यों की उपेक्षा करके ही टिक सकती है। यदि तुम कहो कि पर्दे के पीछे विद्यमान आनंद ही व्यक्ति को कर्म में प्रवृत्त करता है, वह उसे प्रचालित करनेवाली शक्ति है उसका "प्रेरक हेतु" नहीं, तो यह चल सकता है। पर तब यह एक आत्मिक सूत्र होगा, न कि मानसिक। जब एक साम्यवादी नाज़ी बंदी-शिविर में यातना सह रहा होता है तो वह आनंद या सुख की खातिर ऐसा नहीं करता, वह ऐसा करता है किसी दूसरी चीज के लिये जो उसे आनंद या सुख की ओर से उदासीन बना देती है या फिर इनकी क्षति को ही नहीं बल्कि इनसे उल्टी चीजें सहने को भी बाधित करती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहे वे कितनी भी कष्टकर क्यों न हों।

पर यह तो स्पष्ट ही है कि अधिकतर लोग सुख की तलाश में रहते हैं और उसी को जीवन का उद्देश्य समझते हैं।

यह कहना कि सभी मनुष्य सर्वदा विषाद-रहित सुख चाहते हैं एक अतिव्यापक सूत्र है। जो चीज सही रूप से स्वीकार की जा सकती है वह है कि यह मानव प्रकृति में एक बहुत प्रबल प्रवृत्ति है। परंतु ऐसे भी बहुत से मनुष्य हैं जो सुख के पीछे नहीं हैं और जो यह विश्वास नहीं करते कि यह जीवन का सच्चा उद्देश्य है। और देखो, मनुष्य की यह केवल भौतिक चेतना ही है जो सुख की खोज में रहती है। मनुष्य का प्राण तो बल्कि ऐसे सुख को नकार देना चाहता है जिसमें दुःख मिला हुआ न हो, उसे वह एकरस और उबाऊ चीज लगती है। यहांतक कि यदि वह इसे स्वीकार कर भी लेता है तो कुछ समय बाद उसे ठुकरा कर किसी नयी कष्टकर या जोखिमभरी चीज की ओर चल पड़ता है। उच्चतर प्राण अपने आवेगों की तुष्टि, शक्ति की खोज, महत्त्वाकांक्षा, यश या किसी दूसरी प्रेरक अभिरुचि के लिये सुख को छोड़ने को तैयार रहता है। यदि तुम कहो कि ऐसा वह उस सुख के लिये करता है जो शक्ति, यश आदि उसे लाकर देते हैं तो यह भी फिर सार्वजनिक रूप से सच नहीं है। शक्ति भले ही कुछ और चीज बेशक दे दे पर सुख कदापि नहीं देती; यह एक ऐसी चीज है जो अपने स्वरूप से दुःसाध्य है, उसे पाना, रखना, और उसका उपयोग करना क्लेश और परेशानी से भरा है (निश्चय ही मैं शक्ति को यहां सामान्य अर्थ में ले रहा हूं)। एक आदमी को भले यह पता हो कि इस जीवन में उसे यश नहीं मिलनेवाला है, फिर भी वह लगा रहता है इस आशा से कि मरने के बाद उसे यश मिल जायेगा या कम-से-कम इसके आसार तो हैं। उसे पता होता है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवेगों की तुष्टि उसे और कोई चीज भले दे दे पर सुख कदापि नहीं देगी – वह उसके लिये दुःख, यातना, विनाश ला सकती है – फिर भी वह अपनी अंध-प्रेरणा का ही अनुसरण करता है। इसी प्रकार मन बल्कि विस्तृत प्राण भी सुख की खोज से बंधा नहीं होता। वह सत्य की खोज में या किसी ऊंचे आदर्श की विजय में अपने को लगा सकता है। सारी चीज को घटा कर एक ही कड़े सूत्र का रूप दे देना एक बहुत उथला मनोविज्ञान प्रतीत होता है। न तो प्रकृति, न ही यहां विद्यमान विशाल आत्मा इतनी सीमित और एक ही पटरी का अनुसरण करनेवाली है जितनी कि यह मनोविज्ञान समझता है।

कुछ लोग कहते हैं कि पापी और अपराधी जैसे लोग भी जो कुकर्म करते हैं वह इसलिये कि वे अपने किये कुकर्मों में अंतःसुख पाने की कोशिश कर रहे होते हैं। क्या यह सच है ?

यह वस्तुतः एक सरसरी तौर से बना भ्रामक अपराधी-मनोविज्ञान है। यह कहना कि धूर्त, बदमाश या गुण्डा चोरी करने, ठगने या हत्या करने के सुख के लिये ऐसा करते हैं जरा चौंकानेवाला कथन है। वे ऐसा करते हैं एकदम दूसरे ही कारणों से, वे ऐसा करते हैं अपने धंधे के तौर पर, ठीक ऐसे ही जैसे डॉक्टर अपना पेशा करता है। क्या सदा ही यह कहा जा सकता है कि डॉक्टर अपनी डॉक्टरी इसलिये करता है कि ऐसा करने में उसे सुख मिलता है ?

विषाद और दुःख पर विजय पाना इतना कठिन क्यों है ?

इसलिये कि मनुष्य के प्राण में कोई चीज दुःख से चिपटे रहना चाहती है, जीवन-नाटक के एक अंग के तौर पर इसकी करीब-करीब एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरत-सी महसूस करती है। वाह्य चेतना — मनुष्य का भौतिक मन और उसकी भौतिक चेतना — अपने दुःख से घृणा करती है और यदि उसे अपने पर छोड़ दिया जाये तो दूसरे में भी दुःख देखना नहीं चाहती। परंतु यदि हम काफी गहरे जायें तो हमें पता लगेगा कि प्राण में कोई चीज है जो जीवन में नाटकीयता की खातिर दुःख को पसंद करती है, उससे चिपटती है। यह चीज उपरितल के नीचे होती है, पर होती है बहुत प्रबल, मानव प्रकृति में लगभग सर्व-सामान्य है। इससे निकलना कठिन है जबतक कि कोई इसका पता लगाकर आंतरिक रूप से अपने-आपको इससे अलग न कर ले। मनुष्य का मन और उसकी भौतिक सत्ता दुःख-कष्ट नहीं चाहते, यदि वे चाहते होते तो फिर यह दुःख ही न रहता। पर प्राण के अंदर की यह चीज इसकी मांग करती है जीवन को चटपटा बनाने, उसमें मिर्च-मसाले की लज़्ज़त भरने के लिये। यही कारण है कि उदाहरणार्थ अवसाद की घड़ियां निरन्तर लौट-लौट आती हैं जब कि मन उनसे छुटकारा पाने को छटपटाता है, क्योंकि प्राण में यह चीज उसका स्वागत करती है और उसी प्रवृत्ति को दोहराती चली जाती है, जैसे कि ग्रामोफोन एक बार ज्यों ही बजना शुरू होता है, तो बहुत बार सुने रिकार्ड को पूरा बजाकर ही रहता है। यह वस्तुतः उन युक्तियों पर निर्भर नहीं करता जिन्हें प्राण उदासी के इस चक्र को चलाने के लिये देता है, वे बहुत मामूली किस्म की होती हैं और उसे उचित ठहराने के लिये काफी नहीं होतीं। केवल एक जबर्दस्त इच्छा-शक्ति के द्वारा ही, अपने-आपको इससे अलग कर लेने, कभी इसे उचित न ठहराने, उसे झटकने और कभी इसका स्वागत न करने की प्रबल इच्छा-शक्ति के द्वारा ही ऐसा हो सकता है कि मानव प्रकृति की इस अत्यंत दुःखदायी, खतरनाक लीक-चढ़ी प्रवृत्ति से अंत में छुटकारा पाया जा सके। इस प्रकार प्राण के प्रहसन की, प्राण के नाटक की चर्चा करते हुए हम एक मनोवैज्ञानिक ज्ञान की चर्चा में पहुंच गये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम की संभावनाएं

फरासीसी भाषा के जाने-माने लेखक आनातोल फ्रांस कहते हैं : "जब मनुष्य सचमुच प्रेम करता है तब वह कुछ भी गलत काम नहीं कर पाता, किंतु कामुक भावावेश में प्रेम के साथ-साथ वैर, द्वेष, अहंकार और कोप का भी संमिश्रण रहता है।" लेकिन मनुष्यों के बीच जैसा प्रेम होता है क्या वह अपने चरित्र से ही अधिकतर अहंकारी और स्वार्थी नहीं होता ?

हां, प्रेम की मानव भावना हमेशा अहम् पर आधारित होती है या वह प्रबल रूप से अहं से मिश्रित रहता है, इसी कारण वह शुद्ध नहीं रह पाता। उपनिषद् में कहा गया है, "पत्नी से पति इसलिये प्रेम नहीं करता कि वह पत्नी है बल्कि अपने लिये पत्नी से प्रेम करता है।" साधारणतः अपने प्रेम के प्रत्युत्तर में मनुष्य प्रेमपात्र से भी प्रेम पाने की आशा रखता है, या फिर किसी तरह के लाभ की या सुविधा की आशा करता है। प्रेमपात्र से मानसिक, प्राणिक या शारीरिक सुख या संतोष की भी व्यक्ति आशा रखता है। इन सब बातों को हटा दो तो पाओगे कि प्रेम डूब गया है, कम हो गया है, या क्रोध में बदल गया है, भर्त्सना में, उदासीनता में, कभी-कभी घृणा में बदल गया है। मानव प्रेम में प्राणिक अंश बहुधा अहम् और कामना से प्रभावित रहता है। वह लालसा और अपेक्षाओं से भरा होता है। अपेक्षाओं की तृप्ति जबतक होती रहे तबतक वह प्रेम चलता रहता है। उसे जिसकी प्यास हो वह प्राप्त न हो या अगर प्राण कल्पना करे कि उसकी योग्यता के अनुसार उसको मान नहीं दिया जा रहा – क्योंकि वह कल्पना से, गलतफहमी से, ईर्ष्या से, भ्रम से भरा होता है – तब वह तुरन्त दुःख, आहत भावना, क्रोध, हर प्रकार की अव्यवस्था की ओर मुड़ जाता है और अंत में व्यक्ति का प्रेम समाप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होकर चला जाता है। इस तरह के प्रेम से केवल दुःख, मुसीबत, निराशा, निष्फलता और विच्छेद का स्रोत फूट पड़ता है और अपनी प्रकृति में वह क्षणभंगुर और अविश्वसनीय होता है।

मानव प्रेम क्या हमेशा ऐसा होता है? वह अधिक शुद्ध, और अधिक उदात्त नहीं हो सकता?

साधारणतः मानव प्रेम में अज्ञान, आसक्ति, आवेश और कामना का मिश्रण होता है। लेकिन उसे चैत्य-स्पर्श प्राप्त हो तो वह निःस्वार्थ, उदात्त और शुद्ध रूप लेकर अपने-आपको अभिव्यक्त कर सकता है। उच्चतम और गभीरतम प्रेम में यह चैत्य तत्त्व रहता है जो हृदय और आत्मा के अन्तरतम क्षेत्र से आता है। यह एक तरह का आंतरिक ऐक्य या आत्म-दान या कम-से-कम उसके लिये एक खोज होती है। वह खोज किसी भी शर्त या तत्त्व से स्वतंत्र होकर केवल अपने लिये अस्तित्व रखती है, वह किसी मानसिक, प्राणिक या शारीरिक सुख, संतोष, रुचि या आदत से बंधी नहीं रहती, वह केवल आंतरिक ऐक्य का बंधन चाहती है। मानव प्रेम में अगर चैत्य तत्त्व हो भी तो वह पूर्ण रूप से शुद्ध नहीं होता। वह प्रेम इतना अधिक मिश्रित, अन्य तत्त्वों से इतना ज्यादा लदा और छिपा हुआ होता है कि वहां चैत्य अपने-आपको चरितार्थ करने का अवसर ही नहीं पाता, न ही वह अपनी सहज पवित्रता और पूर्णता को ही प्राप्त कर पाता है। जिसे प्रेम कहा जाता है, वह कभी एक चीज होती है और कभी कुछ और। प्रेम बहुधा उलझा हुआ मिश्रण होता है।

चैत्य प्रेम प्राणिक प्रेम से अधिक शुद्ध हो सकता है, लेकिन प्राणिक प्रेम में जो प्रज्वलित तीव्रता और भावप्रवण उष्मा होती है उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चैत्य प्रेम में कमी होती है, प्राणिक प्रेम मानव हृदय को भरपूर शक्ति के साथ आकर्षित करता है।

यह मानना भूल है कि केवल प्राण में ही ऊष्मा होती है और चैत्य ठंडा, उदासीन होता है, जिसमें किसी तरह की ऊष्मा नहीं होती। चैत्य प्रेम की ऊष्मा और ज्वाला उतनी ही तीव्र होती है, — या उससे भी तीव्र — जितनी प्राण की होती है। फर्क बस यही है कि वह शुद्ध अग्नि है जो अहम् की कामना की संतुष्टि पर आश्रित नहीं रहती, वह अग्नि जिसको आलिंगन में ले लेती है उसका भक्षण भी नहीं करती। वह ज्वाला श्वेत है, लाल नहीं, किंतु श्वेत अग्नि अपनी तीव्रता में लाल प्रकार की तीव्रता से किसी तरह कम नहीं होती। यह बात सच है कि चैत्य प्रेम मानव संबंधों और मानव प्रकृति में अपना पूरा रंग नहीं भर पाता। वह अपनी अग्नि और अपने आनंद की पूर्णता अधिक आसानी से तब पाता है जब उसे भगवान् की ओर उठाया जाता है। मानव संबंध में चैत्य प्रेम कई अन्य तत्त्वों से घुल-मिल जाता है जो तुरंत उसका उपयोग करके उस पर छा जाते हैं। अपनी तीव्रताओं के साथ पूरा खुलकर खेलने का अवसर उसे दुर्लभ क्षणों में ही मिलता है। अन्यथा वह केवल एक अंश के रूप में ही आ पाता है, फिर भी मूलरूप से जो प्राणिक प्रेम होता है उसमें भी सभी उच्चतर चीजों को लाने में चैत्य का सहयोग होता है। सारा सूक्ष्म माधुर्य, कोमलता, वफादारी, आत्म-दान, आत्म-बलिदान, आत्मा से आत्मा तक पहुंचने का प्रयास, मानव प्रेम के उदात्तीकरण को आदर्श तक पहुंचा कर प्रेम को अपनी सीमा से ऊपर उठा देना — यह सब चैत्य की ही देन है। अगर ऐसा मानव प्रेम मनुष्य के अन्य तत्त्वों, जैसे, मन, प्राण और शरीर पर शासन कर पाये, उन्हें रूपांतरित कर पाये तो प्रेम पृथ्वी पर सच्ची वस्तु का प्रतिबिंब या तैयारी हो सकता है, तब द्विविध जीवन में आत्मा और उसके साधनों के साथ सर्वांगीण ऐक्य सिद्ध हो सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। लेकिन ऐसी परिस्थिति का अपूर्ण आविर्भाव भी विरल है।

क्या स्वयं प्राणिक प्रेम में चैत्य के जैसा कोई तत्त्व नहीं होता? क्या वह केवल अहम् और लालसा से ही बना है?

स्वयं प्राण में दो तरह का प्रेम होता है — एक ऐसा जो हर्ष और विश्वास से परिपूर्ण, बेफिक्र, स्वच्छंद, उदार, हर तरह के सौदे से मुक्त, खुले दिल का और समर्पण में परिशुद्ध होता है, और यह प्रेम चैत्य प्रेम के सदृश होता है। दूसरी तरह का प्राणिक प्रेम सामान्य मानव स्वभाव के जैसा यानी अहम् और कामना से बना होता है और जो प्रायः मुसीबत और दुःख का कारण बनता है। वह न संतुष्ट करता है और न ही टिका रहता है।

मानव प्राणिक प्रेम इतना क्षणभंगुर क्यों है?

इसका कारण यह है कि यह एक ऐसा आवेश है जिसे प्रकृति ने अपने अल्पकालिक उद्देश्य को पूरा करने के लिये उसपर फेंका है। इस अल्पकालिक उद्देश्य के लिये यह अच्छा ही है और इसका सामान्य झुकाव यह होता है कि जब प्रकृति का उद्देश्य पूरा हो जाता है तो वह प्रेम भी क्षीण हो जाता है। चूंकि मनुष्य की सत्ता अधिक जटिल होती है इसलिये प्रकृति स्वयं आगे बढ़ने के लिये कल्पना और आदर्शवाद को संग-संग ले आती है। प्रकृति उत्साह, सुंदरता, जोश तथा प्रशंसा और गौरव का भाव भी ले आती है, किन्तु सब कुछ समय के साथ-साथ मंद पड़ जाता है। वह प्रेम चिरस्थायी नहीं हो पाता क्योंकि उसमें दीप्ति और शक्ति उधार लिये हुए होते हैं। उधार का अर्थ यह कि वह सब उस पार की किसी चीज का प्रतिबिंब मात्र होता है, वह स्वयं उस प्राणिक माध्यम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का सहज स्वाभाविक प्रतिबिंब नहीं होता जिसका उपयोग कल्पना करती है। इसके अतिरिक्त मन और प्राण में कुछ भी चिरस्थायी नहीं रहता, वहां सब कुछ निरंतर होता रहता है। एक ही तत्त्व स्थायी है और वह है आत्मा और जीवात्मा। अतः जो प्रेम आत्मा और जीवात्मा में स्थित हो, अगर उस प्रेम का मूल उनमें हो तभी वह प्रेम स्थायी होता है और संतुष्ट करता है। इसका अर्थ है कि व्यक्ति को आत्मा और जीवात्मा में ही निवास करना चाहिये, प्राण में नहीं।

अपनी स्वाभाविक न्यूनताओं से प्राणिक प्रेम मुक्त कैसे हो पायेगा और अपनी गुह्य प्रेरणा की पूर्ति को कैसे प्राप्त करेगा?

मन और शरीर की तरह प्राण भी आत्मा और जीवात्मा का यथार्थ यंत्र है। जब वह अपने ही लिये काम करता है तब वह अज्ञानपूर्ण और अपूर्ण परिणाम लाता है। किंतु अगर उसे चैत्य और जीवात्मा का सचेतन यंत्र बनाया जाये तो वह अपनी दिव्य परिपूर्ति प्राप्त करता है। रूपांतर के योग के पीछे यही विचार निहित है।

मेक्टागार्ट के अनुसार "चाहे उसका कारण महान् हो या नगण्य, प्रेम वास्तविक और न्यायसंगत होता है।" मानव संबंध में प्रेम के लिये यह बात कितनी सच है?

मेक्टागार्ट जो कहते हैं वह बहुधा मानव व्यवहार में सच नहीं होता; क्योंकि प्रेम की नियति और उसका न्यायसंगत होना बहुत कुछ निर्भर करता है (यद्यपि हमेशा नहीं) प्रेम के कारण पर या प्रेमपात्र पर। प्रेम-पात्र इस अर्थ में क्षुद्र हो सकता है कि वह ऐक्य की भावना को चरितार्थ करने में अनुपयुक्त हो। मेक्टागार्ट के अनुसार प्रेम का मुख्य तत्त्व है इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐक्य को चरितार्थ करना। जब प्रेमपात्र ऐक्य को चरितार्थ करने में असमर्थ होता है, तब प्रेम निराश होकर पीछे हट जाता है। हां, अगर प्रेम अपने अस्तित्व से ही संतुष्ट हो, वह किसी बदले की आशा के बिना, स्वयं प्रेमपात्र पर अपने-आपको अपने ही ढंग से निछावर कर दे, किसी ऐक्य की आशा न करे तो प्रेम की व्याख्या अपने तत्त्व में सच होगी।

प्रेम की प्रकृति अपने तत्त्व और स्रोत में कैसी है ?

अपने स्रोत में प्रेम एक स्वयंभू, परिशुद्ध, परात्पर शक्ति है जो अपने प्रेमपात्र पर निर्भर नहीं रहती। प्रेम केवल अपने ऊपर या भगवान् पर निर्भर रहता है क्योंकि वह भगवान् की स्वयंभू शक्ति है। अगर वह स्वयंभू न होता तो वह अपने प्रेमपात्र की प्रकृति या उसकी प्रतिक्रिया से स्वतंत्र न रह पाता। जब हम परात्पर प्रेम की बात करते हैं तब उसका अंशतः, यही अर्थ होता है — हालांकि वह परात्परता का केवल एक ही पक्ष है। स्वयंभू परात्पर प्रेम सबके ऊपर छाया रहता है, हर दिशा में घूमकर सबको घेरे रहता है, सबका आलिंगन करके, उन्हें संयुक्त करके, प्रेम और आनंद तथा ऐक्य की ओर उठने में सहायता करके वह परात्पर प्रेम दिव्य प्रेम का रूप धारण कर लेता है। वह स्वयं एक व्यक्ति या दूसरे व्यक्ति से अत्यंत तीव्रता से जुड़ कर स्वयं को खोजता है। जब वह सक्रिय एकीकरण के लिये या पृथ्वी पर प्रभु के साथ आत्मा के ऐक्य की ओर प्रयत्नशील होता है, तब वह व्यक्तिगत दिव्य प्रेम बन जाता है। खेद की बात है कि मानव मन में, प्राण में और स्थूल शरीर में उसंका ह्रास हो जाता है। तब दिव्य प्रेम दूसरी चीजों के साथ घुल-मिल जाता है, वह मद्धिम पड़ जाता है, छिप जाता है या विभाजन और अज्ञान से उत्पन्न विकृत गतिविधियों में गुमराह हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम और काम-वासना

महान् जर्मन दार्शनिक शॉपनहार का विचार है कि प्रेम एक भ्रम है। उसके अनुसार जब एक युवक और युवती अपने प्रेमोल्लास में एक-दूसरे की भुजाओं में जकड़े होते हैं तो वे कल्पना कर रहे होते हैं कि इसमें वे अपना सुख पा रहे हैं, पर बात ऐसी नहीं है। यह विश्वास रखने में कि वे अपने वैयक्तिक अभीष्ट को खोज रहे हैं, वे केवल जाति की निर्वैयक्तिक इच्छा-शक्ति द्वारा छले जाते हैं ताकि वे जाति की वृद्धि के एक अधिक बड़े निर्वैयक्तिक उद्देश्य को पूरा कर सकें। तो प्रेम, शॉपनहार के मत में, प्रकृति के उद्देश्यों को पूरा करने के लिये प्रेमियों का प्रकृति को दिया गया एक असचेतन उपहार है। यह बात कहां तक सच है?

यह पूरी तरह सत्य है, न केवल प्रेम के बारे में, जैसा कि शॉपनहार का कहना है, बल्कि सभी मानव प्रवृत्तियों और प्रकृति की गतियों के बारे में भी सत्य है। सभी प्रवृत्तियां अपने सामूहिक रूप में प्रकृति की जागतिक शक्तियां हैं, वे वैश्व प्रकृति की गतियां हैं। व्यष्टिरूप व्यक्ति उन सामूहिक प्रवृत्तियों की किसी चीज को, एक तरंग को या जागतिक शक्ति के किसी दबाव को ग्रहण कर लेता है और उसके द्वारा परिचालित होता है, पर सोचता है कि यह उसकी अपनी चीज है, उसके अंदर स्वतंत्र रूप से उत्पन्न हुई है, पर बात ऐसी नहीं है। यह तरंग एक व्यापक गति का भाग होती है, जो उसमें उसी तरह क्रिया करती है जैसे कि दूसरों में। कामवासना, उदाहरणार्थ, सामान्य प्रकृति की एक गति अपनी आनन्द-लीला की तलाश में इस या उस व्यक्ति का उपयोग करती है। जब कोई मनुष्य प्राणिक या भौतिक रूप से किसी स्त्री के "प्रेम में पड़ जाता" है – जैसा कि इसे कहा जाता है – तो वह कामवासना की बस, जागतिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गति को ही दोहरा रहा या संतुष्ट कर रहा होता है। यदि वहां वह स्त्री न होती तो कोई दूसरी होती। वह तो बस, प्रकृति की मशीन का एक साधनरूप यंत्र होता है। यह प्रवृत्ति उसकी कोई स्वतंत्र गति नहीं होती। यही चीज क्रोध के साथ एवं प्रकृति की अन्य प्रवृत्तियों के साथ भी होती है। एक कार्य-संचालिका जागतिक शक्ति ही हमें गढ़ती है, इस प्रकार गढ़ चुकने पर, अर्थात् जागतिक शक्तियों को व्यष्टिरूप में लाकर हमारा स्वरूप गढ़ चुकने पर वह हमारे स्वभाव, हमारी परिस्थिति और हमारी मानसिकता के द्वारा हमारे कर्मों और उनके परिणामों को निर्धारित करती है। सचमुच में, हम नहीं सोचते, हम इच्छा या कर्म नहीं करते, बल्कि विचार हममें घटित होता है, इच्छा हममें घटित होती है, आवेग और कर्म हममें घटित होते हैं। प्राकृतिक क्रिया-प्रवृत्तियों के इस प्रवाह को हमारा अहंभाव अपने चारों ओर एकत्र कर लेता है, इनसे अपना नाता जोड़ बैठता है। असल में यह वैश्व शक्ति है, प्रकृति है जो विचार को उत्पन्न करती है, इच्छा-शक्ति को हम पर मढ़ती है, प्रेरणा या आवेग के सुझाव हम में भर देती है। हमारा शरीर, मन और अहंकार इस शक्ति-सागर की एक तरंग मात्र हैं, वे इसे नियंत्रित नहीं करते बल्कि स्वयं उसी के द्वारा नियंत्रित और निर्देशित होते हैं।

व्यक्ति में उत्पन्न वैश्व काम-वासना की क्रिया के द्वारा विश्व-प्रकृति का कौन-सा प्रयोजन सिद्ध होता है?

पार्थिव कामुक-प्रवृत्ति आधारभूत भौतिक ऊर्जा का एक रूप है जिसे प्रकृति प्रजनन के प्रयोजन के लिये इस्तेमाल करती है। कामुक प्रवृत्ति अपने सच्चे स्वरूप में जीवन की आधारभूत ऊर्जा है। अज्ञान में स्थित भौतिक सृष्टि की मितव्ययता में पाशव कामुक-ऊर्जा, इस प्रकार, विशेष प्रयोजन के लिये एक साधन है। यह एक बहुत बड़ी शक्ति है जिसके दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घटक तत्त्व हैं : एक तो है प्रजनन और उसकी आवश्यक प्रक्रिया के लिये, दूसरा है शरीर, मन, प्राण की सामान्य ऊर्जा को — साथ ही शरीर की आध्यात्मिक ऊर्जाओं को भी — पोषण प्रदान करने के लिये। इस प्रकार कामुक-ऊर्जा शरीर में प्रकृति की सभी आध्यात्मिक, मानसिक, प्राणिक और शारीरिक ऊर्जाओं का सहारा है। इसका दुरुपयोग, इसलिये, शक्तियों में अस्तव्यस्तता और विघटन लाता है और शरीर की क्षमता में भी।

कामुक-आवेग की पकड़ मानव प्रकृति पर इतनी जबर्दस्त क्यों होती है? उसकी पकड़ से मुक्त होना इतना मुश्किल क्यों है जब कि कामभोग जुगुप्सा की प्रतिक्रिया ले आता है?

इसका कारण यह है कि प्राणिक स्तर पर कामुक-आवेग सबसे जबर्दस्त शक्ति है। वह जिस रोमांच को अपने साथ लिये रहता है वह भागवत आनंद की बहुत ही भद्दी विकृति और अधोपतन है। उसके साथ जो सुखोपभोग जुड़ा रहता है वही प्रकृति का वह छलावा है जिसके द्वारा प्रकृति प्राण को इसकी ओर इतना आकर्षित करती है, अन्यथा यह असुखकर प्रक्रिया अस्वीकृत हो जाती। कई ऐसे हैं जो कामुक क्रिया के बाद घृणा का अनुभव करते हैं, और इस जुगुप्सा के कारण अपने साथी से एकदम से विकर्षित हो जाते हैं। लेकिन फिर उस घृणा के झड़ जाने के बाद, फिर से छलावे के जाल में फंस जाते हैं।

यह एक आम धारणा है कि स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में काम-वासना की चाह कहीं अधिक होती है। इसमें कहाँतक सच्चाई है?

कोई वैश्व नियम नहीं है। नारियां भी पुरुषों के जितनी या उनसे अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामुक हो सकती हैं। लेकिन ऐसी कई नारियां हैं जिन्हें कामकेलि से एकदम अरुचि होती है, लेकिन ऐसे पुरुष कम संख्या में मिलेंगे। लाखों में एक सुखदेव मिलेगा लेकिन डायना और एथीनी कई मिल जायेंगी। अक्षतयोनि सचमुच स्त्रीसंबंधी धारणा है और पुरुष अनन्त कुंआरेपन के विचार से ही जुगुप्सा करता है। अगर पुरुष स्त्री पर जोर न डाले तो कई स्त्रियों के अंदर कामुक प्रवृत्ति के प्रति कोई आकर्षण ही न उभरेगा, यह बात पुरुषों पर, शायद किसी पुरुष पर लागू न हो। लेकिन चित्र का एक दूसरा पहलू भी है। शायद, कुल मिलाकर स्त्रियां भौतिक रूप से पुरुषों से कम कामुक हों, लेकिन प्राणिक कामुकता के बारे में क्या कहा जाये ? अधिकार करने, अधिकृत होने इत्यादि की जो प्रवृत्तियां होती हैं वे सब स्त्रियों में कहीं अधिक पायी जाती हैं।

भौतिक प्रेम और प्राणिक प्रेम में क्या अंतर है ?

दोनों एक ही चीज नहीं हैं। प्राण के लिये यह संभव है कि वह प्रेम के बिना, केवल विभिन्न प्राणिक कारणों से किसी नारी की कामना करे— ताकि वह स्वामित्व और अधिकार करने की अपनी सहज प्रवृत्ति को संतुष्ट कर सके, ताकि वह अपने प्राण के पोषण के लिये नारी की प्राणिक शक्तियों को आकर्षित करे, यानी प्राणिक शक्तियों का आदान-प्रदान हो, ताकि वह अपने दर्प की, शिकार के पीछे भागने की शिकारी-भावना की संतुष्टि कर सके इत्यादि, इत्यादि (यह हुई नर के दृष्टिकोण से बात, लेकिन नारी के भी प्राणिक उद्देश्य होते हैं) इसे बहुधा प्रेम कहा जाता है, लेकिन यह केवल प्राणिक कामना होती है, एक प्रकार की कामुकता होती है। हां, अगर हृदय के भाव जाग उठें तो वह प्राणमय प्रेम बन जाता है — यह एक मिला-जुला मामला होता है जिसमें एक या अनेक सबल प्राणिक उद्देश्य होते हैं, लेकिन वह होता है फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी प्राणिक प्रेम ही।

लेकिन भौतिक प्रेम इससे भिन्न होता है। यह सौन्दर्य के प्रति आकर्षण है, भौतिक कामुक-प्रवृत्ति होती है या इसी तरह की कोई और चीज जो हृदय के भावों को जगाती है। अगर ऐसा न हो तो वह बस भौतिक आवश्यकता होती है और वह होती है केवल कामुकता, इससे अधिक कुछ नहीं। लेकिन कामुकता के बिना भौतिक प्रेम संभव है।

प्रेम तो सचमुच हृदय की क्रिया है; तब फिर मानसिक प्रेम जैसी चीज कैसे हो सकती है ?

क्यों नहीं ? मन विचार और अनुभूति का आधार है, हृदय प्रेम का और प्राण कामना का आधार है — लेकिन इस सबसे मानसिक प्रेम के अस्तित्व में क्यों रोड़ा आयेगा ? जिस तरह मन संवेदनात्मक या प्राणिक भावनाओं से अभिभूत हो सकता है, उसी तरह हृदय भी मन और मानसिक शक्तियों से संचालित और अभिभूत हो सकता है। अतः मानसिक प्रेम हो सकता है। वह अपने आदर्श को दूसरे में पाने के प्रयास से या अहोभाव और प्रशंसा के किसी मानसिक आवेग से उभर सकता है, अथवा मन द्वारा किसी साथी, किसी पूरक या अपनी प्रवृत्ति के अनुकूल किसी व्यक्ति, सहधर्मी, पथ-प्रदर्शक, सहायक, नेता और स्वामी या अन्य सैकड़ों मानसिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किसी की तलाश से प्रकट हो सकता है। अपने-आपमें यह चीज प्रेम के समतुल्य नहीं होती, लेकिन बहुधा यह चाहत इतनी तीव्र होती है कि प्रेम और इसमें भेद करना बहुत ही मुश्किल हो जाता है और यह चीज प्राणोत्सर्ग, पूर्ण आत्मोत्सर्ग आदि तक व्यक्ति को धकेल सकती है। लेकिन जब यह चाहत हृदय के आवेगों को जगाती है तो यह बहुत जोरदार और प्रबल प्रेम की ओर ले जाती है जो अपने मूल और प्रमुख लक्षणों से होता तो वस्तुतः मानसिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही है। बहरहाल, सामान्यतः मन और प्राण का सम्मिश्रण होता है यह।

अधिकतर आधुनिक मनोवैज्ञानिकों का मत है कि कामुक-प्रवृत्ति के बिना नर और नारी के बीच प्रेम हो ही नहीं सकता, और कई तो यहां तक कहते हैं कि प्रेम और कुछ नहीं, केवल सेक्स है। क्या प्रेम का ऐसा तीव्र संबंध नहीं हो सकता जहां कामुकता का एकदम से अभाव हो?

यह एक अज्ञानी मनोविज्ञान है जो सभी चीजों को कामुक-प्रवृत्ति और कामुक-संवेग में निचोड़ कर रख देता है। यद्यपि नर-नारी के बीच संबंधों में कामुक-प्रवृत्ति सामान्य तौर पर प्रवेश पा ही जाती है, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि यह अनिवार्य होती है। जैसा कि पहले कहा गया है, ऐसी कई नारियां हैं जो मन से, चैत्य से, प्राण (हृदय) से प्रेम कर सकती हैं, लेकिन वे किसी भी शारीरिक स्पर्श से कतराती हैं, स्पर्श को सह भी लें लेकिन भौतिक क्रिया उनके लिये बहुत घृणित होती है। हो सकता है कि दबाव तले वे झुक जायें, लेकिन वे इस क्रिया से कभी संगति नहीं बिठा सकतीं, वह उन्हें हमेशा पाशविक और अपमानजनक लगती है। प्रबल मानसिक और प्राणिक प्रकार का प्रेम हो सकता है जिसमें भौतिक और उसकी संलग्न क्रियाओं के प्रति अरुचि ही नहीं, निश्चित रूप से विरक्ति होती है। निस्सन्देह, अगर नर दबाव डाले तो बहुत संभव है कि नारी स्वीकार कर ले, लेकिन यह होता है उसके हृदय और उसकी गहनतम प्रवृत्तियों के विरुद्ध। नारियां इस तथ्य को जानती हैं, लेकिन पुरुषों के लिये इस बात पर विश्वास करना कठिन होता है, लेकिन बात है पूरी तरह से सच।

आधुनिक मनोवैज्ञानिक कामुकता को मनुष्यों की सहज-प्रवृत्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानते हैं, वे तो उसे भोजन और नींद की तरह अनिवार्य समझते हैं। और काम-वासना की अनुपस्थिति को वे अस्वाभाविक अवस्था मानते हैं। क्या यह सच है?

अस्वाभाविक एक ऐसा शब्द है जिसे तुम ऐसी किसी भी चीज पर चिपका सकते हो जो पूरी तरह से साधारण या सामान्य न हो। इस तरह से तो प्रतिभा भी अस्वाभाविक है, आध्यात्मिकता भी तथा उच्चतर आदर्शों को जीवन में उतारने का प्रयास करना भी असामान्य है। नारियों में भौतिक शुचिता की प्रवृत्ति असामान्य चीज नहीं है, काफी सामान्य ही है और ऐसी नारियां संख्या में भी काफी हैं।

सोसायटी समाचार

२९ मार्च १९१४ को माताजी श्रीअरविन्द से पहली बार पांडिचेरी में मिली थीं। ४ अप्रैल आश्रम में नये वर्ष के रूप में मनाया जाता है। इसी दिन १९१० में श्रीअरविन्द पहली बार पांडिचेरी आये थे।

२४ अप्रैल भी आश्रम में दर्शन-दिवस के रूप में मनाया जाता है। इसी दिन १९२० में माताजी हमेशा के लिये पांडिचेरी आ गयी थीं। उनकी वापसी "विरोधी शक्तियों पर उनकी ठोस विजय थी।" इस दर्शन-दिवस पर आश्रम में यह सन्देश बांटा गया —

तुम अपनी खुशियां और अपने हर्ष केवल भगवान् में ही पा सकोगे। केवल उन्हीं में सहायता औरं सहारा खोजो — ये दोनों चीजें तुम्हें वहीं मिलेंगी। वे तुम्हें सभी दुःखों में सान्त्वना प्रदान करेंगे, तुम्हारा मार्ग-दर्शन करेंगे, अगर तुम ठोकरें खाओ तो तुम्हें ऊपर उठा लेंगे, और अगर तुम्हारे जीवन में असफलताओं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्लांति के क्षण टूट पड़ें तो वे तुम्हें अपने प्रेम की मजबूत बांहों में भर लेंगे और अपनी आरामदेह मधुरता में तुम्हें लपेट लेंगे।

२१ फरवरी, २९ मार्च, ४ अप्रैल और २४ अप्रैल — विशेष दिवसों पर विभिन्न केन्द्रों तथा शाखाओं ने अपने-अपने यहां विशेष कार्यक्रमों का आयोजन किया। सोसायटी के दो नये केन्द्र कडलोर (तमिलनाडु) और मलकनगिरि (उड़ीसा) में खुले।

डॉ. नाडकर्णी ने 'सावित्री'-अध्ययन का पहला दौर समाप्त कर लिया। अब उनके अगले दो शिविरों का ब्यौरा इस प्रकार है—

१ — २६ नवम्बर से ४ दिसम्बर २००३ तक — गीता-प्रबन्ध।

२ — २३ फरवरी से ५ मार्च २००४ तक — 'सावित्री' (बुक-१)।

'श्रीअरविन्द इंस्टिट्यूट ऑफ रिसर्च इन सोशल साइंसेज़' नामक श्रीअरविन्द सोसायटी का शोध-केन्द्र श्रीअरविन्द तथा माताजी के ग्रंथों के अध्ययन, शोध-कार्य इत्यादि का केन्द्र है। इसके बारे में जानकारी के लिये संपर्क करें — निदेशक SAIRSS, श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी — ६०५००२।

सोसायटी ने नेक्स्ट फ्यूचर (Next Future) नामक एक नयी मासिक ई-पत्रिका आरम्भ की है। इसका वेबसाइट पता है — http:/nextfuture.sriaurobindosociety.org.in

उपर्युक्त वेबसाइट के पते पर आप इसकी पूरी जानकारी पा सकते हैं।

B

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

***House of
Solvents & Coaltar By-products***

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो सन्देश

श्रद्धा, अधिक श्रद्धा ! अपनी संभावनाओं पर श्रद्धा, परदे के पीछे कार्य करनेवाली शक्ति पर श्रद्धा, जो कार्य करना है उसपर श्रद्धा और जो मार्गदर्शन दिया जा रहा है उसपर श्रद्धा।

– श्रीअरविन्द

यह विश्वास रखो कि जो अच्छे-से-अच्छा है वही होगा और सारा संसार अपने सुनहरे रूपांतर की ओर जितनी तेजी से हो सके उतनी तेजी से जा रहा है।

८-१-१९६६ – श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'संपादकीय' :

मां

माताजी केवल आश्रमवासियों की मां न थीं। उनके लिये सारे विश्व में जितनी सत्ताएं थीं, वे सब उनकी सन्तान थीं।

श्रीअरविन्द ने 'माता' पुस्तक में माताजी के विशेष रूपों का वर्णन किया है। उसमें महेश्वरी के रूप का वर्णन देखें, "... वे अपने संकल्प में सम, धीर और अविचल हैं। वे मनुष्यों के साथ उनकी शक्ति और उनमें छिपे सत्य के अनुसार व्यवहार करती हैं... वे सबसे ऊपर हैं, किसी से बंधी नहीं हैं। उन्हें विश्व की किसी चीज से लगाव नहीं है। फिर भी उनके अंदर विश्वजननी का मातृ-हृदय है। क्योंकि उनकी करुणा अनंत और अखूट है। उनकी नजर में सभी, यहांतक कि असुर, राक्षस, पिशाच, विद्रोही और विरोधी भी, उनके बच्चे हैं और उस 'एक' के अंश हैं।"

माताजी के इस रूप का एक उदाहरण मुझे याद आ रहा है। आश्रम के कई खेत और फल-वाटिकाएं हैं। उनमें आश्रमवासी कुछ नौकरों की सहायता से धान, तरकारियां और फल-फूल लगाते हैं। एक दिन एक आश्रमवासी माताजी से जब मिला तब उसने कहा कि फल-वाटिका में आम का एक पेड़ है, किंतु उसमें कभी आम नहीं लगते। उसने पूछा कि क्या वह उसे काट सकता है ? माताजी का उत्तर सुनकर वह अवाक् रह गया। उन्होंने कहा, "फिर उस पेड़ पर रहती, विश्राम करती हुई सत्ताओं को मैं कहां भेजूंगी ?" वे समझ गये कि जो सत्ताएं किसी कारण से मृत्यु के बाद भी पूरी-पूरी मुक्त नहीं हुई थीं, वे उस पेड़ पर विश्राम करती थीं और मां अपनी करुणा के कारण उनको परेशान करना न चाहती थीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी एक घटना दूसरे विश्व-युद्ध के समय हुई थी। जैसा महेश्वरी का हमने वर्णन पढ़ा उसके अनुसार असुर भी उनके बच्चे थे। तो दूसरे विश्व-युद्ध में एक असुर ने हिटलर को अपने अधीन रखा था। देखिये इन असुरों का भी साहस ! उसने माताजी के पास जाकर कहा कि मैं हिटलर को आदेश देता हूं और उसके द्वारा आपके कार्य में बाधा डालूंगा। माताजी मुस्कुराईं। हिटलर का ऊधम सारे संसार को थर्रा रहा था। ऐसा लग रहा था कि हिटलर सारे संसार का विजेता बन कर रहेगा। असुर हिटलर के सामने एक चमचमाते कवच में चमकता हुआ आता, हिटलर समझता था कि यह कोई दिव्य सत्ता है और उसका हुकुम मान कर चलता। लेकिन 'सब दिन होत न एक समान' के अनुसार एक दिन माताजी हिटलर के समक्ष पहुंच गयीं और उसे ऐसा आदेश दिया जिससे असुर की बाज़ी पलट जाये। माताजी के आदेश का हिटलर ने पालन किया। असुर जब माताजी के पास गया तो माताजी ने कहा, "मैं आदेश दे आयी हूं।" दिव्य मां के आदेश को उलटाने की शक्ति असुर में नहीं थी। और दूसरे विश्व-युद्ध में मित्र-राष्ट्रों की विजय हुई और संसार भयंकर यंत्रणा, पतन से बच गया।

तो मां की करुणा असीम है। बस, हम उनकी शरण में रहें। उनके बनाये स्वर्णिम पथ पर चलें तो संसार की प्रगति विद्युत् गति से होगी।

— अनुबेन

ध्यान और चिंतन की सहायता से जब मनुष्य सच्ची बौद्धिक शक्ति की महान् विश्वव्यापी लहर के सीधे संपर्क में आ जाता है तब कोई ज्ञान उससे छुपा नहीं रहता।

— श्रीमां

Central Library
Gurukul Kangri University
Hardwar-249404 (U.A.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

जुलाई

१. निश्चय ही पूर्णयोग का पथ कोई आसान पथ नहीं है। भगवान् को जीतना एक कठिन काम है, परंतु सच्चाई और लगन होने पर मनुष्य अवश्य सफल हो सकता है।

२. योग की दृष्टि से देखें तो यह कहीं अधिक अच्छा है कि भगवान् में आश्रय ग्रहण करके और भगवान् के साथ सच्चे संबंध को ही केवल महत्त्व देते हुए उपरितलीय चीजों को कोई महत्त्व न दिया जाये और एक आंतरिक स्थिति बनाये रखी जाये, तथा मन को अचंचल रखा जाये।

३. सच्चा पथ है आत्मसमर्पण, भगवान् के प्रति संपूर्ण, अखंड और बिना शर्त आत्मसमर्पण।
यदि तुम भगवान् के हाथों में अपने-आपको संपूर्ण दे दो और बदले में कोई चीज न मांगो, यदि तुम भगवान् के अंदर अपनी चेतना को निमज्जित कर दो तो इससे तुम्हारे कष्टों का अंत हो जायेगा – परंतु समर्पण सर्वांगपूर्ण, बिना शर्त के होना चाहिये; उसमें मोल-तोल नहीं होना चाहिये और वह अखंड होना चाहिये। तुम्हारी सभी कामनाएं, आवश्यकताएं, पसंदगियां, नापसंदगियां, इच्छाएं, अभाव, संकल्प, सब कुछ, तुम्हारे तुच्छ व्यक्तित्व को जो कुछ गठित करता है वह सब उस समर्पण में शामिल होना चाहिये और तब तुम शांति पाओगे तथा तुम्हारी यातनाओं का अंत हो जायेगा।

४. धैर्य, अध्यवसाय, सहनशीलता और सुदृढ़ संकल्प साधना के लिये आवश्यक हैं, और इन सबसे अधिक भागवत कृपा पर पूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरोसा रखना एकदम अनिवार्य है।

५. ऊंचे-से-ऊंचे काम से लेकर अत्यंत मामूली काम तक में, चाहे तुम जो कुछ भी क्यों न करो, दिव्य जीवन यापन करना किसी बाहरी कार्य या परिस्थिति पर नहीं निर्भर करता। यदि तुम सत्य-चेतना में रहो और समुचित मनोभाव बनाये रखो तो तुम दिव्य जीवन यापन कर सकते हो।

६. अभीप्सा हमेशा संभावना की द्योतक होती है और अध्यवसाय सिद्धि की निश्चयता तक पहुंचा देता है।

७. एकमात्र वस्तु जो महत्त्वपूर्ण है वह है तुम्हारी खोज और भगवान् की प्राप्ति — बाकी सब कुछ शून्य है।

८. विश्वास के सूर्य को अपने हृदय में प्रवेश करने दो और प्रत्येक चीज आसान हो जायेगी।

९. पूर्णयोग में साधना और बाहरी जीवन के बीच कोई भेद नहीं है; दैनिक जीवन के प्रत्येक क्षण में सत्य को खोजना और जीवन में उतारना होगा।

१०. सच्चे बनो, यही भागवत शांति के पथ पर चलने का सर्वप्रथम अनिवार्य पग है।

११. सद्हृदयता यानी दिल की सचाई ही हमारी संरक्षिका है।

१२. मैं बस यही कह सकती हूं कि सफलता के लिये दृढ़ता और अध्यवसाय अनिवार्य हैं — पर सभी अवस्थाओं में भागवत कृपा-शक्ति उन लोगों की सहायता कर रही है जो श्रद्धा-विश्वास के साथ उसे पुकारते हैं।

१३. जब मैं 'नवीन जन्म' की बात कहती हूं तब मैं सर्वदा एक नयी चेतना के जन्म की बात कहती हूं।

१४. हां, मेरे बच्चे, योग का अभ्यास करने से प्रकृति बदल सकती है और पूर्ण रूप से बदल सकती है — भागवत कृपाशक्ति के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ भी असंभव नहीं है — वह इतने पूर्ण रूप से रूपांतरित कर सकती है कि जो कुछ उसे संपूर्ण असंभव प्रतीत होता था वह केवल संभव ही नहीं बन जाता बल्कि संपन्न भी कर दिया जाता है।

इस रूपांतर के लिये भगवत्कृपा कार्य कर रही है।

१५. एकमात्र एक ही सत्य है और एकमात्र एक ही भगवान् हैं।

१६. शीघ्र हो या देर से, सत्य की विजय अनिवार्य है।

१७. सत्य को अपने अंदर जन्म ग्रहण करने दो; अपनी अंतरात्मा के विषय में सचेतन होओ।

१८. सत्य की स्मृति को सर्वदा अपने साथ बना रहने दो।

१९. सत्य सर्वोच्च सामंजस्य और सर्वोच्च आनंद है।
समस्त अव्यवस्था, समस्त दुःख-क्लेश एक मिथ्या वस्तु है।
दुःख-संताप और अस्तव्यस्तता का यह जगत् मिथ्यात्व का जगत् है। इस जगत् की अवस्थाएं केवल तभी बदल सकती हैं जब चेतना में एक परिवर्तन होगा और मिथ्यात्व के ऊपर विजय प्राप्त होगी।

२०. भगवान् का प्रेम सदा तुम्हारे साथ है और वही एकमात्र वस्तु है जो जीवन में कभी निराश नहीं करती।

२१. भगवान् के प्रति अपनी अभीप्सा और प्रेम को अपनी सभी कामनाओं और सभी कठिनाइयों पर विजयी हो जाने दो।

२२. गभीर प्रेम की शांति को अपनी समूची सत्ता में प्रविष्ट हो जाने दो और सुस्थिर हर्ष और शक्ति से अपने-आपको सराबोर कर लेने दो।

२३. प्रेम अत्यंत पवित्र वस्तु है जिसके साथ खिलवाड़ नहीं किया जा सकता।
और मैंने कहा है शाश्वत प्रेम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४. अपने हृदय को प्रेम की मधुरिमा की ओर से बंद मत कर लो — एकमात्र वही तुम्हारे सभी संतापों को मिटा सकती और उसके स्थान पर एक सतत और शांतिपूर्ण आनंद को स्थापित कर सकती है।

२५. भागवत कृपा का एक दिन विजयी होना सुनिश्चित है।

२६. भागवत कृपा सच्ची प्रार्थनाओं को सर्वदा पूरा करती है।

२७. जहांतक संभव हो उद्विग्न और अधीर होना बंद करो, क्योंकि स्थिरता और शांति के अंदर ही भागवत कृपा की शक्तियां सबसे अधिक कार्य करती हैं।

२८. कृपाशक्ति के लिये 'योग्य' या 'अयोग्य' जैसी कोई चीज नहीं है और वह जो कुछ कहती या करती है उसमें सर्वदा एक ही अपरिवर्तनीय प्रेम और करुणा विद्यमान रहते हैं।

२९. सभी चीजों के बावजूद भागवत कृपा में पूर्ण श्रद्धा बनाये रखो, वह तुम्हें तुम्हारे सच्चे लक्ष्य — भगवान् तक पहुंचा देगी।

३०. भगवान् से मुंह मोड़ लेना और भागवत कृपा को अस्वीकार कर देना सबसे बड़ी मूर्खता की बात है जिसे मनुष्य कर सकता है।

३१. भागवत कृपा और प्रेम तुम्हारे साथ हैं — उन्हें दूर मत फेंक दो।

*
* *

किसी महापुरुष ने ठीक ही कहा है : "जो सत्य के पथ पर बढ़ रहा है उसको कोई भूल कष्ट नहीं पहुंचा सकती, क्योंकि वह जानता है कि यह भूल सत्य-पथ पर अग्रसर होनेवाले जीवन की प्रारंभिक चेष्टा है।"

परंतु पूर्ण अविचलता की इस स्थिति को पाने के लिये मनुष्य को विचार के उच्चतम शिखर तक पहुंचना होगा।

— श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविन्द के साथ बारह वर्ष

बातचीत

जिन लोगों ने "टॉक्स विद श्रीअरविन्द" या "ईवनिंग टॉक्स" पढ़ी होगी वे समझ चुके होंगे कि श्रीअरविन्द न महर्षि की भांति ब्रह्म की भाव-समाधि की शांति में लीन रहते थे न ही बातचीत करते समय रामकृष्ण की भांति हमेशा आध्यात्मिक विषयों पर ही बोलते थे। हमारे साथ जो बातें होती थीं उनमें विविध विषयों का समावेश होता था। उनकी बातों का विस्तार सार्वभौम रहता। उनका विविध विषयों पर जो प्रचुर ज्ञान था उससे हम आश्चर्यचकित रह जाते। हमारी उनसे यह पूछने की इच्छा होती थी कि बाह्य जगत् में अपने अत्यंत अल्पकालिक हालांकि कठोर संबंध के कारण उन्होंने इतने कम समय में इतना व्यावहारिक और सांसारिक ज्ञान कैसे प्राप्त कर लिया ? या फिर यह ज्ञान योग का परिणाम है ? मेरे एक पत्र में उन्होंने लिखा था, "महाशय, मेरी आंखों में एलोपेथ की मिट्टी मत डालो ! काफी लंबे समय से मैं जीवन को देखता आया हूं। अपनी निवृत्ति से पहले मैंने संसार को काफी अच्छी तरह देखा था और निवृत्ति के बाद तो और भी अच्छी तरह देख रहा हूं।" तो फिर योग ने ही उनकी अन्तर्दृष्टि को खोल दिया होगा, जैसा कि उन्होंने अपने एक सॉनेट में लिखा है, "ऐसे विचार जो अनन्तता के आरपार भ्रमण करते रहते हैं।" इस तरह उस भ्रमण ने उनको अनन्त ज्ञान का स्वामी बना दिया होगा, फिर वह ज्ञान सांसारिक हो या आध्यात्मिक ! एक और सॉनेट में वे वर्णन करते हैं, "उसकी जाग्रत् दृष्टि के सामने जगत् के बाद जगत् फूटने लगे।" आज श्रीअरविन्द जिस ऊंचाई पर पहुंच चुके हैं, उसका श्रेय वे योग को देते हैं। यह सुन कर हम सब स्तब्ध रह गये जब उन्होंने कहा कि जितना उन्होंने लिखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है उससे दस गुना लिखते तो भी उनका ज्ञान-भंडार अक्षय ही रहता। और फिर हम दुःखी होकर बुदबुदाने लगे कि हम कितने विशाल ज्ञान-भंडार से वंचित रह गये। उन्होंने कहा, "मैंने जितना लिखा है पहले उसे तो अपने आचरण में उतारो।" एक साधक ने उनसे पूछा कि 'आर्य' पत्रिका में सात विविध विषयों पर वे एक साथ कैसे लिख पाते थे तो उनका उत्तर था कि वे ७० वर्ष तक 'आर्य' के लिये लिखते रहते तब भी उच्चतर क्षेत्र से उतरता ज्ञान निःशेष न होता। माताजी ने भी कहा था कि श्रीअरविन्द जब 'आर्य' के लिये लिखते थे तो पूर्ण नीरव मन से लिखा करते थे जो सीधा टंकण-यंत्र पर उतरता रहता था, वरना हर महीने ६४ पृष्ठ की सामग्री लिखना संभव न होता। सामग्री भी वे केवल महीने के अंतिम सप्ताह में लिखना आरंभ करते। अमृत से कहा गया था कि जब पाण्डुलिपि प्रेस में भेजने के लिये एक ही सप्ताह बच रहे तब वे श्रीअरविन्द को 'आर्य' के लिये लिखने की याद दिलायें। अमृत का संकेत पाते ही श्रीअरविन्द अपना "भगीरथ-कार्य" शुरू करते और आसानी से एक सप्ताह में उसे समाप्त कर देते। विस्मय जगानेवाली इस घटना का प्रमाण उनके एक सॉनेट के शब्दों में मिलता है, "मैंने शाश्वत का पान दानव की शराब की न्याई किया है।"

तो, हमें कई वर्षों तक दिन-रात प्रज्ञा के इस मूलस्रोत और यौगिक प्रदीप्ति से लाभान्वित होने का विरल अवसर प्राप्त था। अगर हम अधिक ज्ञान प्राप्त नहीं कर पाये तो कारण यह नहीं था कि उन्होंने अपनी ज्ञान-धारा रोक दी थी, बल्कि इसलिये कि हमारे छोटे-छोटे पात्र अधिक ज्ञान धारण नहीं कर पाये। आप समझ गये होंगे कि उनकी नीरव मानव-दिव्य उपस्थिति के बाद हम जिसके लिये लालायित रहते थे वह थी उनके साथ हमारे घनिष्ठ संबंध में चलती बातें।

फिर भी बातचीत का यह अवसर हमारे लिये कितना अप्रत्याशित था! कारण यह था कि श्रीअरविन्द को हमने दर्शन के समय जैसा देखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और समझा था, "दिव्य जीवन" को पढ़कर हमारे मन में उसके लेखक का स्थान भी उतना ही उच्च स्तर पर बन गया था, या फिर हमें "योग-समन्वय" के लेखक के रूप में वे अपनी पहुंच से दूर, अतिदूर लगते थे, वे देवगण के समकक्ष अधिक लगते थे। "गीता-प्रबन्ध" में भगवान् के साथ जैसा निकट का और घनिष्ठ संबंध का हम वर्णन पढ़ते हैं, वह भी हमारी मर्त्य लालसा के लिये असंभव दीखता था। हां, हममें से कई असाधारण भाग्यशाली व्यक्ति भी थे जिन्हें उनके साथ अमूल्य पत्र-व्यवहार करने का अवसर मिला और इससे हम श्रीअरविन्द के मानवीय पक्ष से भी परिचित हो चुके थे। इस परिचय के बल-बूते पर मैंने उन्हें लिखा, "मैंने आपको दर्शन के समय गंभीर और कठोर देखा था और जब उसका उल्लेख किया तो आपने मेरी अच्छी शाब्दिक पिटाई की, लेकिन देखिये न, जब हम माताजी के पास जाते हैं तो वे कैसी देवदूत-सी मुस्कुराती हैं, जब कि आपकी भव्य सत्ता पास रहती हुई भी ओलम्पिक की किसी ऊंचाई पर दूर-दूर दीखती है। उतनी ऊंचाई से चेहरे की गंभीरता या उसपर उल्लास को पहचानना मुश्किल होता है। मैं सोचता हूं कि हमने देवों की कल्पना ऐसी ही आकृति के अन्तर्दर्शन से की होगी।" उन्होंने उत्तर दिया, "उस समय न गंभीरता, न उल्लास बल्कि एक विशाल, सहज, शांत, सौम्य और स्नेहिल अवस्था होती है। देवगण क्या सौम्य, स्नेहिल नहीं हो सकते?" उनका वही सौम्य रूप बातचीत के समय हमारे सामने आता था। हमें बहुत देर के बाद पता लगा कि आश्रम की स्थापना से पूर्व अपने कई अनुयायियों के साथ श्रीअरविन्द 'प्लैनचेट' के माध्यम से बातें करते थे। मैं मानता हूं कि हमारी बातचीत 'प्लैनचेट' से काफी अच्छी थी। जिन विशेष परिस्थितियों में हमारी बातचीत हुआ करती थी, उनके कारण बातें चैन से, अनौपचारिक ढंग से और विचारों के आदान-प्रदान में स्वाभाविक विविधता और घनिष्ठता से होती थीं। हमारे ऊपर आने से पहले श्रीअरविन्द को अपने-आपको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाणी द्वारा अभिव्यक्त करने की आवश्यकता ही न थी। मेरा दृढ़ विश्वास है कि हमारे साथ जो विनिमय होता था, वह उनकी अनुकंपा के कारण हो रहा था, वे जानते थे कि हम उनकी परिचर्या कर रहे थे। मैं एक बात और कहना चाहता हूं कि हम भगवान् की कितनी भी छोटी सेवा क्यों न करें, उसका पर्याप्त पुरस्कार वे हमें देते हैं।

शुरू की असुविधा और चिकित्सा इत्यादि की अन्य कठिनाइयों के बाद, जब श्रीअरविन्द नयी दिनचर्या से परिचित हो गये तब बातचीत शुरू हुई। बातचीत का आरंभ चिकित्सा के विषय में पूछताछ से हुआ। डॉ. मणिलाल सवेरे ऊपर आ जाते (वे आश्रम के अहाते के बाहर रहते थे) और हाथ जोड़कर लेटे हुए श्रीअरविन्द के सामने खड़े रहते। प्रणाम करने के बाद मुस्कुराते हुए पूछते, "सर, आपको कैसा लग रहा है? अच्छी तरह सोये थे?" श्रीअरविन्द के प्रसन्नचित्त संक्षिप्त उत्तर होते।

इन छोटी प्रस्तावनाओं के बाद आये बातों के प्रपात ! तो उस दिन शाम के सात बजे थे, हमारा काम हो चुका था। श्रीअरविन्द अपने बिस्तर पर लेटे थे। केवल बिजली का मद्धिम प्रकाश ही था। मैं थोड़ी देर के लिये बाहर गया था। जब लौटा तो देखा कि हमारा दल श्रीअरविन्द के चरणों के पास बिस्तर के बांयीं ओर बैठा था, कुछ बातें हो रही थीं। सब लोग फुसफुसा कर बातें कर रहे थे। श्रीअरविन्द बोल रहे थे, मैं तुरंत दल में शामिल हो गया। किंतु उनके पास न जा पाया। सब बहुत एकाग्र होकर सुन रहे थे। अगर उन लोगों को मेरे आने का पता भी लग जाता फिर भी वे मुझे जगह न दे पाते। यह पहला अवसर था श्रीअरविन्द को बहुत देर तक सुनने का। चूंकि हम उनकी शांत, मंद आवाज के लहजे से परिचित न थे, हमें सब शब्दों को सुनने के लिये पूरा ध्यान देना पड़ रहा था, फिर भी कई शब्द मेरे लिये खो ही गये। कई लोगों ने हमें उनकी आवाज की विशेषता के बारे में पूछा है। मुझे खेद है कि ऐसे नाजुक विषयों के बारे में अपनी अभिव्यक्ति की शक्ति के अभाव के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण मैं उसकी परिभाषा नहीं कर पाता, न ही उसकी ठीक-ठीक स्वर-छाया ही दे पाता हूं। उस स्वर की सबसे नजदीकी जिस विशिष्टता का मैं वर्णन कर सकता हूं वह यह है कि स्वर पौरुषपूर्ण था फिर भी कोमल – कुछ लोग उसे श्रुतिमधुर कहते हैं – धीमा, शांत, संयत स्वर जिसमें स्पष्ट अंग्रेजी का स्वराघात सुनाई देता था। धीरे-धीरे श्रीअरविन्द के निकट आने के बाद भी मेरी यही राय बनी रही। "प्रार्थना और ध्यान" में माताजी परम प्रभु की आवाज का जैसा वर्णन करती हैं वह श्रीअरविन्द की आवाज के साथ सटीक बैठता है। माताजी २७ जून १९१३ की प्रार्थना में लिखती हैं : "तेरी आवाज इतनी विनीत, निष्पक्ष, अपने धैर्य और दया में इतनी उत्कृष्ट है कि वह अपने-आपको किसी अधिकार, किसी इच्छा-शक्ति के सामर्थ्य के साथ नहीं सुनाती, बल्कि वह शीतल, कोमल, शुद्ध समीर की तरह है। वह एक बिल्लौरी मर्मर की तरह है जो बेसुरी संगीत-गोष्ठी को सामंजस्य की धुन प्रदान करता है। वह आदमी जो इस धुन को सुनना जानता है, उस समीर में सांस लेना जानता है, उसके लिये वह सौंदर्य का ऐसा खजाना, शुद्ध स्वच्छता और उदात्त महानता की ऐसी सुगंध देता है कि सभी फालतू भ्रम गायब हो जाते हैं या जिस अद्भुत सत्य की झांकी मिली है उसकी आनंदमय स्वीकृति में बदल जाते हैं।" बड़े खेद की बात है कि हमारे पास श्रीअरविन्द की आवाज टेप में ध्वन्यांकित नहीं हुई। इस क्षति के कारण लोगों ने हमारे ऊपर कठोर उदासीनता का आरोप लगाया है, किंतु हम निरुपाय थे। उस समय आश्रम में न रेडियो था, न छत-पंखा ही, और तो और, माताजी के फोटो खींचने पर भी कड़ा प्रतिबंध लगा था। मुझे किसी ने बताया कि जब माताजी आश्रम के खिलाड़ियों और बाहर के खिलाड़ियों के बीच वॉली-बॉल की प्रतियोगिता देखने गयी थीं, तब किसी ने उनकी फोटो खींच कर हमारे परिचित स्थानीय फोटोग्राफर को छापने के लिये दे दी। परंतु माताजी ने कुछ ऐसी व्यवस्था कर दी कि फोटो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छपने न पायी। इसके अतिरिक्त कौन सपने में भी सोच सकता था कि श्रीअरविन्द का इस तरह हठात् देहावसान हो जायेगा ? अदृष्ट के प्रबंध से ही उनके अन्तिम वर्ष में कुछ फोटो खींची गयी थीं। हम उनकी आश्रम-स्थापना से पहले की जो फोटो थीं उनकी तुलना उनके वर्तमान रूप से करते और चाहते कि साधकों को भूतकालीन फोटो के स्थान पर नयी फोटो बांटी जायें। एक बार किसी ने श्रीअरविन्द की भूतकालीन फोटो देखकर, उनकी नकल कर चित्र बनाये और उन्हें श्रीअरविन्द के पास भेज दिया। उन्हें देखकर वे बोले, "मैं इसमें अपराधी-सा दीखता हूं। मैं क्या इतना बुरा दीखता हूं ?" नयी फोटो खींचने के हमारे अनुनय-विनय को वे सौम्यता से या मज़ाक में घुमाकर उत्तर देते कि केवल अतिमानस के अवतरण के बाद ही उनकी नयी फोटो खींची जायेंगी। ऑंरी कार्तिए ब्रसौं द्वारा ली गयी फोटो हालांकि प्रभावशाली हैं फिर भी वे श्रीअरविन्द के सच्चे शारीरिक सौंदर्य का निकृष्ट विद्रूप ही हैं। वे क्या श्रीअरविन्द के देवोपम प्रताप, सौंदर्य और शीतल प्रशांति को फोटो में उतार पाते, उसे न्याय दे पाते ? जिन लोगों ने श्रीअरविन्द के कंधे से कमर तक के अनावृत शरीर को कई भंगिमाओं में भिन्न-भिन्न समय पर देखा है, वे उन फोटो में उनकी प्रतिकृति देखकर खेद से बुदबुदाते हैं, "क्या यही वह रूप था जिससे हमें प्रेम था और जिसे हम पूजते थे ?" माताजी ने एक दिन चंपकलाल को किसी के द्वारा बनाया श्रीअरविन्द का रेखांकन दिखा कर उनकी राय पूछी। वे एकदम चुप रहे। माताजी ने दोहराया, "तुम्हें अच्छा नहीं लगता ?" वे फट पड़े, "इसे कैसे पसंद करूं, माताजी ? यह केवल उपहास है। उसे देखूंगा ही नहीं !" माताजी मुस्कुरायीं। फिर भी लोग कहेंगे, "ना मामा से काना मामा ही सही।" बात तो सच है, श्रीअरविन्द की स्मृति बनाये रखने में ये अन्तिम फोटो न रहतीं तो हमारे लिये बड़ा शून्य बना रहता !

— नीरदवरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगमुक्ति

(श्रीमां के वचन)

हम पृथ्वी के इतिहास के एक संक्रमणकालीन क्षण में हैं। यह शाश्वत काल में केवल एक क्षण है, लेकिन मानव जीवन की तुलना में यह मुहूर्त लंबा है। जड़-भौतिक अपने-आपको नयी अभिव्यक्ति के लिये तैयार करने के लिये बदल रहा है, परंतु मानव शरीर काफी नमनशील नहीं है और प्रतिरोध करता है; इसी कारण अबोधगम्य अव्यवस्थाओं और रोगों की संख्या बढ़ती जा रही है और चिकित्साशास्त्र के लिये एक समस्या बन गयी है।

इसका उपाय है कार्यरत दिव्य शक्तियों के साथ ऐक्य और विश्वास तथा शांतिभरी ग्रहणशीलता, जो कार्य को ज्यादा सरल बना देती है।

*

तुम्हें डरना नहीं चाहिये। तुम्हारी अधिकतर कठिनाइयां भय से आती हैं। वास्तव में, ९० प्रतिशत बीमारियां शरीर के अवचेतन भय का परिणाम होती हैं। शरीर की सामान्य चेतना में छोटी-से-छोटी शारीरिक गड़बड़ के परिणामों के बारे में एक न्यूनाधिक गुप्त चिंता होती है। इसे भविष्य के बारे में संदेहभरे इन शब्दों में हम अनूदित कर सकते हैं : "अब क्या होगा?" इसी चिंता को रोकना होगा। निश्चय ही यह चिंता भागवत कृपा में भरोसे के अभाव, और इस बात का अचूक चिह्न है कि उत्सर्ग सर्वांगीण और पूर्ण नहीं है।

इस अवचेतन भय पर व्यावहारिक रूप में विजय पाने के लिये यह करो कि जब-जब इसका कोई भाग सतह पर आये, तब-तब सत्ता का अधिक प्रदीप्त अंश इसपर, भागवत कृपा पर पूर्ण विश्वास की आवश्यकता का और इस निश्चिति के होने का दबाव डाले कि यह भागवत कृपा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमेशा हमारे अंदर और साथ ही औरों के अंदर भी अच्छे-से-अच्छे के लिये कार्य कर रही है, और भागवत संकल्प के प्रति पूरी तरह और बिना कुछ बचाये अपने-आपको दे देने का दृढ़ निश्चय होना चाहिये।

शरीर को यह जानना और यह विश्वास रखना चाहिये कि उसका सार-तत्त्व भागवत है और यह कि अगर भागवत कार्य के रास्ते में कोई बाधा न डाली जाये तो हमें कोई भी चीज हानि नहीं पहुंचा सकती। इस प्रक्रिया को स्थिरता के साथ तबतक दोहराते रहना चाहिये जबतक भय का आना एकदम बंद न हो जाये और तब अगर बीमारी प्रकट होने में सफल हो जाये तो भी उसकी शक्ति और उसकी अवधि कम, बहुत कम हो जायेगी जबतक कि उसपर निश्चित रूप से विजय न पा ली जाये।

*

जब शारीरिक अव्यवस्था आये तो तुम्हें डरना नहीं चाहिये, तुम्हें उससे निकल भागना नहीं चाहिये, तुम्हें उसका सामना साहस, शांति, भरोसे और इस निश्चिति के साथ करना चाहिये कि बीमारी एक मिथ्यात्व है और अगर तुम पूरे भरोसे के साथ, पूरी तरह भागवत कृपा की ओर पूर्ण अचंचलता के साथ मुड़ो तो वह कृपा इन कोषाणुओं में उसी तरह पैठ जायेगी जिस तरह वह सत्ता की गहराइयों में पैठती है, और स्वयं कोषाणु शाश्वत सत्य और आनंद के भागीदार होंगे।

*

अगर तुम नीरोग होना चाहते हो तो दो शर्तें हैं। पहली, तुम्हें भयरहित होना चाहिये, एकदम से भयरहित, समझ रहे हो ना, और दूसरी, तुम्हें भागवत सुरक्षा में पूर्ण विश्वास होना चाहिये। ये दोनों चीजें आवश्यक हैं।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी सलाह है : चिंता न करो। तुम उसके बारे में जितना अधिक सोचते हो उतना अधिक तुम उसपर एकाग्र होते हो, और सबसे अधिक, तुम जितना अधिक डरते हो उतना ही उस चीज को बढ़ने का अवसर देते हो।

इसके विपरीत, अगर तुम अपना ध्यान और अपनी रुचि किसी और चीज की ओर मोड़ दो तो तुम रोगमुक्त होने की संभावनाओं को बढ़ाते हो।

*

अगर तुम बीमार पड़ते हो तो तुम्हारी बीमारी की इतनी व्याकुलता और भय से देख-रेख की जाती है, तुम्हारी इतनी परिचर्या की जाती है कि तुम उस एकमेव से सहायता लेना भूल जाते हो जो तुम्हारी सहायता कर सकता है और तुम एक कुचक्र में पड़ जाते हो और अपनी बीमारी में एक अस्वस्थ रुचि लेने लगते हो।

*

तुम्हें इन छोटी-छोटी चीजों से अपने-आपको संत्रस्त नहीं करना चाहिये — अपने-आपमें इन चीजों का कोई मूल्य नहीं है और इनका उपयोग हमें यह दिखाना होता है कि अभीतक हमारे स्वभाव में अवचेतना कहां पायी जाती है ताकि हम वहां प्रकाश डाल सकें।

*

शायद तुमसे कहा गया होगा कि शरीर के अमुक रोग से तुम्हें बहुत दर्द होगा। इस तरह की चीजें प्रायः कही जाती हैं। तब तुम डर की एक रचना बना लेते हो और दर्द की आशा करने लगते हो। और दर्द तब भी आ जाता है जब उसके आने की कोई आवश्यकता नहीं होती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन अगर अन्ततः दर्द है ही तो मैं तुमसे एक बात कह सकती हूं। अगर चेतना ऊपर की ओर मुड़ी हो, तो दर्द गायव हो जाता है। अगर वह नीचे की ओर मुड़ी हो तो दर्द का अनुभव होता है, यहांतक कि वह बढ़ भी जाता है। जव तुम उपरले और निचले मोड़ के साथ परीक्षण करते हो, तो तुम देखते हो कि शारीरिक रोगों का यूं दर्द के साथ कोई संबंध नहीं है। शरीर बहुत अधिक कष्ट पा सकता है या उसे बिलकुल कष्ट नहीं होता यद्यपि उसकी अवस्था एकदम वह-की-वही होती है। चेतना का घुमाव सारा भेद करता है।

मैं "ऊपर मुड़े" होने की बात कह रही हूं क्योंकि भगवान् की ओर मुड़ना सबसे अच्छा तरीका है, लेकिन सामान्य तौर पर यह कहा जा सकता है कि अगर चेतना दर्द से हटकर किसी काम या किसी ऐसी चीज की ओर मुड़ जाये जिसमें तुम्हें रस है तो दर्द बंद हो जाता है।

और केवल दर्द के लिये ही नहीं, बल्कि अंगों की किसी भी क्षति को उस समय अधिक आसानी से ठीक किया जा सकता है जब चेतना को कष्ट से दूर हटा लिया जाये और तुम भगवान् की ओर खुले रहो। भगवान् का एक रूप 'सत्' है – ब्रह्माण्ड के ऊपर, परे या पीछे शुद्ध परम 'सत्' है। अगर तुम उसके साथ संपर्क बनाये रख सको तो सभी शारीरिक रोगों को दूर किया जा सकता है।

*

मेरे प्रिय बालक, अब समय आ गया है कि श्रद्धा सचमुच क्रियाशील हो और सभी असंगतियों के विरुद्ध अचल खड़ी रहे। श्रद्धा रखो, सच्ची श्रद्धा कि तुम रोगमुक्त हो जाओगे और तुम रोगमुक्त होकर रहोगे।

*

तुम्हें धीरज नहीं खोना चाहिये, इससे बीमारी ज्यादा जल्दी ठीक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होती। इसके विपरीत, तुम्हें इस बात की शांतिपूर्ण श्रद्धा रखनी चाहिये कि तुम नीरोग हो जाओगे।

*

अचंचल रहना और एकाग्र होना, ऊपर से शक्ति को अपना काम करने देना, यह किसी भी बीमारी और हर एक बीमारी को ठीक करने का सबसे निश्चित तरीका है। अविचल श्रद्धा और मजबूत संकल्प के साथ अगर इसे समय पर और पर्याप्त समय के लिये किया जाये तो ऐसी कोई भी बीमारी नहीं जो इसका प्रतिरोध कर सके।

*

मेरे प्यारे बच्चे, मैं तुम्हारी इस बात से बिलकुल सहमत हूं कि चिकित्सकों और दवाइयों से कहीं अधिक समर्थ एक और शक्ति है और मुझे यह देखकर खुशी हुई कि तुम उसपर विश्वास करते हो। निश्चय ही सभी भयंकर चेतावनियों के बावजूद यह तुम्हें सभी कठिनाइयों से पार ले जायेगी। अपनी श्रद्धा को बनाये रखो और सब कुछ ठीक हो जायेगा।

*

बीमारी के बारे में एकमात्र चीज जिसका मैं सुझाव दे सकती हूं वह है, शांति को नीचे बुलाना। मन को किसी भी तरीके से शरीर से दूर रखो — चाहे श्रीअरविन्द की किताबें पढ़कर या ध्यान करके। इस स्थिति में भागवत कृपा कार्य करती है। और एकमात्र भागवत कृपा ही नीरोग बनाती है। दवाइयां शरीर के अंदर केवल एक श्रद्धा जगाती हैं। बस इतना ही।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने अंदर शांति को पकड़ो और उसे शरीर के कोषाणुओं में प्रवेश कराओ। शांति के साथ-ही-साथ स्वास्थ्य लौट आयेगा।

*

(ऐसे व्यक्ति से जो आमाशय और आंतों के कष्ट से पीड़ित था)

यह बेचैनी और विक्षोभ के कारण है। बात क्या है ? शांति, **भागवत शांति** को अपने आमाशय के अन्दर उतारो और वह ठीक हो जायेगा।

*

सिर-दर्द और सिर के चक्करों से पिंड छुड़ाना बहुत कठिन नहीं है। तुम्हारी अवस्था कितनी भी खराब क्यों न हो, ऊपर से प्रकाश को पुकारो। यह अनुभव करने की कोशिश करो कि तुम्हारे सिर के ऊपर से प्रकाश तुम्हारे अंदर प्रवेश कर रहा है और अपने साथ स्थिरता और शांति ला रहा है। अगर तुम गंभीरता के साथ ऐसा करो तो तुम्हारा सिर-दर्द और चक्कर छू-मंतर हो जायेंगे।

*

इसका (कोई बीमारी या दुर्घटना) दंड के साथ कोई संबंध नहीं होता; यह किसी भूल-भ्रांति, त्रुटि, या दोष का सामान्य और स्वाभाविक परिणाम होता है जिसके अपने अनिवार्य परिणाम होते हैं। वास्तव में, जगत् में हर चीज संतुलन और असंतुलन, सामंजस्य और अव्यवस्था का प्रश्न होती है। सामंजस्य के स्पंदन सामंजस्यपूर्ण घटनाओं को निमंत्रण देते और प्रोत्साहित करते हैं; असंतुलन के स्पंदन परिस्थितियों में असंतुलन (रोग, दुर्घटना आदि) पैदा करते हैं। यह व्यक्तिगत भी हो सकता है और सामुदायिक भी, लेकिन सिद्धांत एक ही है और उपचार भी एक :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने अंदर भागवत इच्छा के प्रति अबाध रूप में समर्पण द्वारा व्यवस्था, शांति और संतुलन बढ़ाते चलो।

*

अपने मन को कठिनाई की ओर से पूरी तरह मोड़ लो, ऐकांतिक रूप से ऊपर से आनेवाली शक्ति और प्रकाश पर एकाग्र होओ; परम प्रभु तुम्हारे शरीर के लिये जो चाहते हैं उन्हें वही करने दो। अपनी भौतिक सत्ता का समस्त उत्तरदायित्व पूरी तरह से उनके हाथों में सौंप दो।

यही उपचार है।

*

शरीर की बीमारी हमेशा आंतरिक सत्ता के किसी असामंजस्य, किसी अव्यवस्था का अनुवाद, उसकी बाहरी अभिव्यक्ति होती है; जबतक यह आंतरिक अव्यवस्था ठीक नहीं हो जाती, तबतक बाहरी इलाज पूर्ण और स्थायी नहीं हो सकता।

*

अंततः बीमारी केवल शरीर के किसी भाग द्वारा ली गयी गलत वृत्ति है।

*

शारीरिक कष्ट हमेशा ऐसे पाठ के रूप में आते हैं जो हमें समता सिखलाते हैं और यह प्रकट करते हैं कि हमारे अन्दर कौन-सी चीज इतने पर्याप्त रूप में शुद्ध और दीप्त है जो अप्रभावित रहे। समता में ही तुम उपचार पाते हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक महत्त्वपूर्ण बात : समता का अर्थ उदासीनता नहीं होता।

*

सबसे अच्छा उपाय है सत्य और सामंजस्य की दिव्य उपस्थिति को पुकारना ताकि वह अव्यवस्था और अस्तव्यस्तता के स्पंदनों को बदल दे।

*

सत्य परम सामंजस्य और परम आनंद है।
समस्त अव्यवस्था, समस्त कष्ट मिथ्या है।

*

मेरे बच्चे, नीरोग होने के लिये केवल इन अनुचित अभ्यासों को पूरी तरह बंद करना ही अनिवार्य नहीं है बल्कि अपने विचार और संवेदना से इन सभी अस्वस्थ **कामनाओं** से छुटकारा पाना भी अनिवार्य है, क्योंकि कामनाएं ही इन्द्रियों और अवयवों को क्षुब्ध करती और उन्हें बीमार बनाती हैं। तुम्हें कठोरता के साथ सब कुछ साफ कर देना होगा और इसके लिये तुम्हारा संकल्प पर्याप्त शक्तिशाली नहीं है; मेरे संकल्प का आवाहन करो, सचाई के साथ उसे बुलाओ और वह तुम्हारी सहायता के लिये मौजूद होगा। तुम्हारा यह कहना ठीक है कि मेरी सहायता से तुम निश्चय ही जीत सकोगे। यह सच है, लेकिन तुम्हें सचाई के साथ इस सहायता को चाहना होगा और सब परिस्थितियों में अपने अंदर काम करने देना होगा।

*

अर्बुद हमेशा प्रकृति में किसी कठिनाई के सूचक होते हैं। कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोषाणु शरीर के नियंत्रण से स्वतंत्र होने का निश्चय कर लेते हैं। वे शरीर के अन्य भागों के साथ सामंजस्य में नहीं रहते और समस्त अनुपात छोड़कर बढ़ना शुरू करते हैं। साधारणतः यह प्रकृति में बहुत अधिक लोभ का लक्षण होता है। वह भौतिक चीजों के लिये लालच हो सकता है या शक्ति अथवा सूक्ष्म चीजों के लिये लोभ हो सकता है।

*

यहां जो सलाहें दी गयी हैं (धम्मपद में) उनमें से एक सलाह है कि हमेशा सद्भावनापूर्ण बने रहो। इसे आमतौर पर दी जानेवाली घिसी-पिटी सलाहों में से एक न मान लेना चाहिये। यहां एक काफी मजेदार बात कही गयी है, इसे बहुत मजेदार भी कह सकते हैं। मैं टीका करती हूं : "हमेशा सद्भावनापूर्ण बने रहो और तुम दुःख से मुक्त हो जाओगे, हमेशा संतोषी और सुखी रहो और तुम अपना शांत सुख चारों ओर फैलाओगे।"

यह खास ध्यान देने योग्य बात है कि पाचन की सभी क्रियाएं आलोचनापूर्ण, दुर्भावनापूर्ण, तीखे मनोभाव के प्रति और कटु निर्णय के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं। उसके सिवा पाचन का कार्य और किसी भी वस्तु से इतना नहीं बिगड़ता। यह एक दुष्चक्र है : जितनी अधिक पाचनक्रिया बिगड़ती है, उतने ही अधिक तुम दुर्भावनापूर्ण, आलोचनापूर्ण होते हो और जीवन से, चीजों से और मनुष्यों से असंतुष्ट होते हो। इस तरह तुम उसमें से निकल नहीं पाते। और इसके लिये बस एक ही उपचार है, वह है समझ-बूझ कर इस मनोवृत्ति से निकल आना, उसे एकदम अस्वीकार करना और सतत आत्म-संयम द्वारा सर्व-समावेशी सद्भावना का अभीष्ट मनोभाव अपने ऊपर आरोपित करना। कोशिश करो और तुम देखोगे कि तुम अधिक स्वस्थ अनुभव कर रहे हो।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीरिक व्याधियों के इस विषय में हमें दो बातों पर विचार करना चाहिये – एक वह चीज जो बाहर से आती है और दूसरी वह जो तुम्हारी आंतरिक अवस्था से आती है। तुम्हारी आंतरिक अवस्था रोग का कारण तब बनती है जब उसमें कोई प्रतिरोध या विद्रोह हो अथवा जब तुम्हारे अंदर कोई ऐसा भाग हो जो भागवत संरक्षण का प्रत्युत्तर नहीं देता; अथवा उसमें कोई ऐसी चीज भी हो सकती है जो इच्छापूर्वक, जान-बूझकर विरोधी शक्तियों को अंदर बुलाती है। तुम्हारे अंदर इस प्रकार की कोई मामूली-सी गति हो तो वह भी पर्याप्त है; विरोधी शक्तियां तुरत तुम पर चढ़ आती हैं और उनका आक्रमण बहुधा रोग का रूप धारण कर लेता है...।

तुम्हारे शरीर में और तुम्हारे चारों ओर रोग की संभावनाएं सदा बनी रहती हैं, तुम्हारे अंदर या तुम्हारे चारों तरफ सब प्रकार की बीमारियों के कीटाणु या रोग-जन्तु रहते हैं, वे तुम्हारे चारों ओर मंडराते रहते हैं। तुम्हें जो रोग वर्षों से नहीं हुआ उसके तुम एकाएक शिकार क्यों हो जाते हो? तुम कहोगे कि इसका कारण "प्राण-शक्ति का मन्द पड़ जाना" है। परंतु यह मन्दता कहां से आती है? यह सत्ता में किसी प्रकार का असामंजस्य होने से, भागवत शक्तियों के प्रति ग्रहणशीलता के अभाव से आती है। जब तुम उस शक्ति और ज्योति से, जो तुम्हारा धारण-पोषण करती है, अपने-आपको अलग कर लेते हो तब यह मन्दता आती है। तब जिसको चिकित्सा-शास्त्र "रोग के लिये अनुकूल क्षेत्र" कहते हैं वह तैयार हो जाता है और कोई चीज इसका फायदा उठा लेती है। सन्देह, निरुत्साह, विश्वास का अभाव, स्वार्थ के साथ अपनी ओर ही मुड़ना – ये चीजें हैं जो ज्योति और दिव्य शक्ति से तुम्हें अलग कर देती हैं और आक्रमण के लिये लाभकर होती हैं। तुम्हारे बीमार पड़ने का असली कारण यही है, न कि रोग के कीटाणु।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्पना वास्तव में मानसिक रचनाएं बनाने की शक्ति है...। तथापि, अवास्तविक रचना जैसी किसी वस्तु का अस्तित्व ही नहीं है, क्योंकि प्रत्येक आकृति मानसिक स्तर पर एक सत्य ही होती है। उदाहरणार्थ, एक उपन्यास का सारा कथानक मानसिक स्तर पर भौतिक स्तर से स्वतंत्र रूप में विद्यमान रहता है। हममें से हर एक कुछ हद तक उपन्यासकार है और उसमें मानसिक स्तर पर आकार बनाने की क्षमता है; वास्तव में, हमारे जीवन का बहुत-सा भाग हमारी कल्पना-सृष्टि का ही मूर्त रूप है। प्रत्येक बार जब तुम किसी अस्वस्थ कल्पना में रस लेते हो, अपने भयों की रूप-रेखा बनाते हो, दुर्घटनाओं और विपत्तियों की आशंका करते हो, तब तुम अपने भावी विनाश के लिये खाई खोदते हो। इसके विपरीत, तुम्हारी कल्पना जितनी अधिक आशापूर्ण होगी, अपने लक्ष्य को पूरा करना तुम्हारे लिये उतना ही अधिक संभव होगा। कूए महोदय को इस शक्तिशाली सत्य का ज्ञान हो गया था और उन्होंने सैकड़ों लोगों को केवल यह सिखा कर अच्छा कर दिया कि वे अपनी कष्टमुक्त स्थिति की कल्पना करें। एक बार उन्होंने एक स्त्री की घटना सुनायी जिसके बाल झड़ते जा रहे थे। उसने अपने-आपको सुझाव देना शुरू किया कि मैं दिन-पर-दिन अच्छी हो रही हूं और मेरे बाल निश्चय ही बढ़ रहे हैं। लगातार ऐसी कल्पना करने से उसके बाल सचमुच बढ़ने लगे, यहांतक कि अधिक आत्म-प्रेरणा से वह जितना चाहती थी उतने लंबे हो गये।

*

अधिकतर प्रसंगों में दवा का उपयोग (जब उसे उचित मात्रा में लिया जाता है, अर्थात् व्यक्ति उससे अपने-आपको विषाक्त नहीं करता) बस, इतना ही है कि वह शरीर में आत्म-विश्वास पैदा करने में सहायता पहुंचाती है। शरीर ही अपने-आपको नीरोग करता है। जब यह अच्छा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होना चाहता है तो अच्छा हो जाता है। और इस बात को अब काफी बड़ी संख्या में लोग मानने लगे हैं, यहांतक कि बहुत-से परंपरावादी डॉक्टर भी कहते हैं : "हां, हमारी दवाइयां सहायता करती हैं, पर दवाइयां नीरोग नहीं करतीं, शरीर ही नीरोग होने का निश्चय करता है।" ठीक है, जब शरीर से कहा जाता है "यह लो" तो यह अपने-आपसे कहता है, "अब मैं अच्छा हो जाऊंगा" और जब यह कहता है कि "मैं नीरोग हो रहा हूं" तो हां, वह नीरोग हो जाता है !

लगभग सभी रोगों के लिये ऐसी चीजें हैं जो सहायता करती हैं – थोड़ी-सी – बशर्ते कि उनका उपयोग उचित मात्रा में किया जाये। यदि उचित रूप में न किया गया तो निश्चय रखो कि तुम पूरी तरह टूट जाओगे। तुम एक चीज का इलाज करोगे और दूसरी के शिकार हो जाओगे जो साधारणतया उससे भी बुरी होगी। पर फिर भी, यह थोड़ी-सी सहायता, बस, थोड़ी-सी कोई चीज जो तुम्हारे शरीर को यह विश्वास दिला दे : "अब ठीक होगा, अब चूंकि मैंने यह ले ली है इसलिये निश्चय ही सब कुछ बिलकुल ठीक हो जायेगा," यह चीज शरीर को बहुत सहायता पहुंचाती है और वह अच्छा होने का निश्चय कर लेता है और अच्छा हो जाता है।

*

दवाई की रोगमुक्ति की शक्ति रोगी के विश्वास से आती है।

यदि मनुष्यों को भगवत्कृपा में पूर्ण विश्वास होता तो वे शायद बहुत-सी व्याधियों से बच जाते।

*

यदि तुम कहते हो, "मैं जो कुछ कर सकता था वह सब कर चुका हूं और सभी चीजों के बावजूद वह चीज बनी हुई है, इसलिये मैं अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोड़ रहा हूं," तो तुम इस विषय में बिलकुल निस्संदिग्ध हो सकते हो कि तुम्हें जो कुछ करना चाहिये था वह सब तुमने नहीं किया। जब "सभी चीजों के बावजूद" कोई भूल-भ्रांति ज्यों-की-त्यों बनी रहती है तो इसका मतलब है कि तुम्हारी सत्ता में छिपी कोई चीज एकाएक शैतान की तरह बाहर निकल आती है और तुम्हारे जीवन की पतवार अपने हाथ में ले लेती है। अतएव, करने लायक बस एक ही चीज है और वह है, जो छोटे-छोटे अंधकारपूर्ण कोने तुम्हारे अंदर छिपे हैं उन्हें ढूंढ़ निकालो और यदि ठीक इस अंधकार के ऊपर अपनी सदिच्छा की छोटी-सी चिनगारी डाल दो तो वह हार मान लेगा और विलीन हो जायेगा, और जो चीज तुम्हें असंभव प्रतीत होती थी वह केवल संभव और सुसाध्य ही नहीं बन जायेगी बल्कि 'ऐसी चीज बन जायेगी जो संपन्न हो चुकी है'। इस तरह तुम एक मिनट में उस कठिनाई से छुटकारा पा सकते हो जो अन्यथा तुम्हें वर्षों हैरान-परेशान कर सकती थी। मैं इस विषय में तुम्हें पूरा आश्वासन देती हूं। यह बात केवल एक चीज पर निर्भर है और वह यह है कि तुम्हें सचमुच, सच्चे हृदय से उससे छुटकारा पाने की इच्छा करनी होगी। और प्रत्येक चीज के लिये बस यही बात है, शारीरिक बीमारियों से लेकर बड़ी-से-बड़ी मानसिक कठिनाइयों तक के लिये। चेतना का एक भाग कहता है, "मैं यह नहीं चाहता," पर उसके पीछे ऐसी चीजों का एक अम्बार छिपा रहता है जो कुछ नहीं कहतीं, अपने को सामने नहीं प्रकट करतीं और साधारणतया अज्ञानवश ही बस यह चाहती हैं कि चीजें जैसी हैं वैसी ही बनी रहें, वे यह विश्वास नहीं करतीं कि कठिनाई से मुक्त होना आवश्यक है, वे विश्वास करती हैं कि प्रत्येक चीज संसार के हित में सर्वोत्तम होती है।

*

तुम्हारे अंदर भौतिक अभीप्सा भी हो सकती है, शरीर एक प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का संतुलन पाना चाहे जिसमें सत्ता के सभी भाग भली-भांति संतुलित हों और तुम्हारे अंदर रोग को दूर रखने की शक्ति हो या अगर वह चालाकी से घुस आये तो उसपर तेजी से विजय पाने की क्षमता हो और शरीर हमेशा सामान्य रूप से, सामंजस्य के साथ पूर्णतया स्वस्थ रहे। यह हुई भौतिक अभीप्सा...।

जबतक मन सोचता है, तुम्हारा मन तीन-चौथाई जड़ रहता है जिसकी अपनी चेतना नहीं होती। लेकिन एक यथातथ्य भौतिक चेतना है, शरीर की चेतना। शरीर अपने बारे में सचेतन होता है और उसकी अपनी अभीप्सा होती है। जबतक तुम अपने शरीर के बारे में सोचते हो तबतक तुम अपनी भौतिक चेतना में नहीं हो। शरीर की अपनी निजी चेतना होती है जो मन से एकदम स्वतंत्र होती है। शरीर को अपनी क्रियाओं का, अपने संतुलन या असंतुलन का पूरी तरह पता होता है और अगर कहीं कोई गड़बड़ हो तो वह पूरी तरह यथातथ्य रूप में सचेतन हो जाता है (इसे कैसे कहूं?), उसका उस चीज के साथ संपर्क होता है और बाहरी लक्षण न हो फिर भी वह बहुत स्पष्ट रूप में अनुभव करता है। शरीर को भान होता है कि सारी क्रियावली सामंजस्य के साथ, संतुलित, नियमित रूप में उसी तरह चल रही है जैसे उसे चलना चाहिये। उसमें एक तरह की प्रचुरता, आनंद और शक्ति की प्रचुरता का भाव होता है – कुछ-कुछ जीवन जीने के आनंद का, कार्य करने और जीवन से भरे और ऊर्जा से भरपूर संतुलन में गति करने के आनंद का भाव होता है।

*

... अगर तुम सामान्य रूप से रहते हो, बिलकुल सामान्य परिस्थितियों में – ऊलजलूल विचारों और अवसाद लानेवाली शिक्षा के बिना – तो, सारी जवानी में और सामान्यतः जबतक तुम तीस के न हो जाओ, तुम्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन पर पूरा-पूरा विश्वास होता है। उदाहरण के लिये, यदि तुम ऐसे लोगों से न घिरे हो जो तुम्हें जरा-सा जुकाम या सिर-दर्द होने से ही घबरा दें और दौड़े-दौड़े डॉक्टर के पास जायें और तुम्हें दवाइयां दें – अगर तुम साधारण परिस्थितियों में हो और तुम्हें कुछ हो जाये, कोई दुर्घटना या जरा-सी बीमारी, तो शरीर में यह निश्चिति रहती है, पक्का विश्वास रहता है कि वह ठीक हो जायेगी : "यह कुछ नहीं है। यह चली जायेगी। यह जरूर चली जायेगी। मैं कल, या कुछ दिनों में बिलकुल ठीक हो जाऊंगा। यह निश्चय ही ठीक हो जायेगी" – फिर तुम्हें चाहे कुछ क्यों न हुआ हो। वास्तव में, शरीर की यही स्वाभाविक दशा है। एक पक्का विश्वास कि सारा जीवन सामने है और सब कुछ ठीक होगा। और यह बहुत बड़ी सहायता करता है। तुम दस में से नौ बार रोगमुक्त हो जाते हो। तुम इस विश्वास के साथ बहुत जल्दी रोगमुक्त हो जाते हो: "यह कुछ भी नहीं है, आखिर यह है क्या? एक छोटी-सी दुर्घटना, यह गुजर जायेगी। यह कुछ भी नहीं है।" और ऐसे लोग हैं जो इसे बहुत लंबे समय तक बनाये रखते हैं, बहुत लंबे समय तक, एक प्रकार का विश्वास – उन्हें कुछ नहीं हो सकता। उनका सारा जीवन उनके सामने है, पूरा-पूरा, उन्हें कुछ नहीं हो सकता। और उन्हें जो भी हो उसका कोई महत्त्व नहीं है। सब कुछ ठीक हो जायेगा। उसे ठीक होना पड़ेगा। सारा जीवन उनके सामने है। स्वाभाविक है कि यदि तुम ऐसे वातावरण में रहते हो जहां रुग्ण विचार हैं और लोग अपना समय अनर्थकारी, संकटकारी बातों को दोहराते रहने में लगाते हैं, तो तुम गलत तरीके से सोचोगे और अगर तुम गलत तरीके से सोचो तो शरीर पर इसकी प्रतिक्रिया होती है। अन्यथा अपने-आपमें शरीर इस विकास को चालीस-पचास की अवस्था तक रख सकता है – यह व्यक्तियों पर निर्भर है – कुछ लोग स्वाभाविक संतुलित जीवन जीना जानते हैं। लेकिन शरीर को अपने जीवन के बारे में पूरा विश्वास होता है। केवल, जैसा कि मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा, यदि विचार बीच में आकर सब प्रकार की रुग्ण और अस्वस्थ कल्पनाएं ले आये, तो उससे सब कुछ बदल जाता है...।

यह वास्तव में पूरा-पूरा विश्वास है।

अब जब तुम "क्रियाशील श्रद्धा" की बात कर रहे हो : क्रियाशील श्रद्धा कुछ भिन्न वस्तु है। अगर आदमी के अंदर भागवत कृपा पर श्रद्धा है कि भागवत कृपा उसपर नजर रखे हुए है और चाहे कुछ भी क्यों न हो जाये, भागवत कृपा तो है ही, उसकी निगरानी कर रही है। आदमी इसे हमेशा सारे जीवन रख सकता है और यह हो तो खतरों में से गुजर सकता है, सब प्रकार की कठिनाइयों का सामना कर सकता है और कोई उसका बाल भी बांका न कर सकेगा, क्योंकि उसे श्रद्धा है और भागवत कृपा उसके साथ है। यह अनंतगुना शक्तिशाली, अधिक सचेतन, और अधिक स्थायी शक्ति है जो तुम्हारे शारीरिक गठन की अवस्था पर निर्भर नहीं है, जो भागवत कृपा के सिवा किसी और पर निर्भर नहीं है और इसलिये सत्य का सहारा लेती है और कोई चीज उसे हिला नहीं सकती। यह बिलकुल भिन्न है।

*

जो कोई अपनी शारीरिक अवस्था को परिवर्तित करना, किसी रोग का निवारण करना अथवा किसी शारीरिक अपूर्णता को दूर करना चाहता हो, उसे क्या करना चाहिये? क्या उसे अपने प्राप्त लक्ष्य के प्रति तन्मय हो जाना चाहिये और अपने कार्य की पूर्ति के लिये अपनी संकल्प-शक्ति का प्रयोग करना चाहिये, अथवा केवल इस दृढ़ विश्वास में निवास करना चाहिये कि यह सब हो ही जायेगा या यह भरोसा रखना चाहिये कि भागवत शक्ति अपने समय पर और अपने तरीके से वांछित परिणाम ले आयेगी?

ये सभी एक ही काम को करने के अनेक उपाय हैं और अवस्था-विशेष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अनुसार प्रत्येक फलदायक हो सकता है। तुम किस पद्धति का उपयोग करके अधिक-से-अधिक सफलता प्राप्त कर सकोगे यह तुम्हारी चेतना के विकास पर अथवा तुम जिन शक्तियों को कार्यक्षेत्र में उतार सकते हो उनपर निर्भर है। तुम पूर्ण रोग-मुक्ति की चेतना में रह सकते हो या पूर्ण और आंतरिक गठन की शक्ति के द्वारा धीरे-धीरे उसका बाह्य परिवर्तन भी सिद्ध कर सकते हो। अथवा यदि तुम उस शक्ति को जानते हो जो ऐसे कार्यों को सिद्ध कर सकती है, यदि तुम्हें उसकी दृष्टि प्राप्त है और यदि तुम उस शक्ति का उपयोग करने में कुशल हो तो तुम उसका आवाहन कर सकते हो और जिन अंगों में उसकी क्रिया की आवश्यकता हो वहां उपयोग कर सकते हो और वह उस परिवर्तन को कार्यान्वित कर देगी। अथवा, भागवत शक्ति में विश्वासपूर्ण भरोसा रखते हुए अपनी कठिनाई को भगवान् के सामने उपस्थित कर दो और उनसे रोग-मुक्ति मांग लो।

परंतु तुम जो कुछ करो, जिस किसी प्रक्रिया का उपयोग करो, चाहे उस प्रक्रिया का उपयोग करने में तुम्हें बड़ा भारी कौशल या सामर्थ्य ही क्यों न प्राप्त हो, तुम्हें उसके फल को भगवान् के हाथों में ही छोड़ देना चाहिये। तुम्हें सदा प्रयत्न करते रहना चाहिये, किंतु तुम्हारे प्रयत्न का फल देना या न देना भगवान् का काम है। यहांपर तुम्हारी अपनी ताकत बंद हो जाती है, यदि कोई परिणाम आता है तो उसे तुम्हारी अपनी शक्ति नहीं, बल्कि भागवत शक्ति लाती है। तुम पूछते हो कि भगवान् से इन चीजों को मांगना उचित है या नहीं। यदि किसी नैतिक दोष को दूर करने के लिये भगवान् से प्रार्थना करने में कोई हर्ज नहीं है, तो किसी भौतिक अशुद्धि या अपूर्णता को दूर करने के लिये भगवान् की ओर मुड़ने में क्या हर्ज है? परंतु तुम जो कुछ मांगो, तुम्हारा जो कुछ भी प्रयास हो, उस समय भी जब तुम भरपूर प्रयास कर रहे हो, फिर चाहे इस चेष्टा में तुम ज्ञान का प्रयोग करते होओ या शक्ति का, तुम्हें सदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह अनुभव करना चाहिये कि परिणाम भगवान् की कृपा पर निर्भर है। एक बार यदि तुमने इस योग को स्वीकार कर लिया है तो फिर तुम्हारे समस्त कार्य पूर्ण आत्म-समर्पण के भाव से होने चाहियें। तुम्हारा भाव यह होना चाहिये : "मैं अभीप्सा करता हूं, मैं अपनी अपूर्णताओं को दूर करना चाहता हूं, मैं अपनी ओर से अधिक-से-अधिक प्रयास करता हूं, किंतु फल के लिये मैं अपने-आपको संपूर्ण रूप से भगवान् के हाथों में सौंपता हूं।"

यदि कोई कहे : "मुझे परिणाम के विषय में निश्चय है, मैं जानता हूं कि मैं जो चाहता हूं वह भगवान् मुझे देंगे," तो क्या इससे कोई सहायता मिलती है?

तुम इस रूप में ले सकते हो। तुम्हारी श्रद्धा की तीव्रता या अटलता का यह अर्थ हो सकता है कि भगवान् ने यह निर्धारित कर रखा है कि तुम्हारी श्रद्धा जिसका निर्देश करती है वह अवश्य पूर्ण हो। अचल श्रद्धा भागवत संकल्प के विद्यमान होने का चिह्न होती है, जो होनेवाला है उसकी निदर्शिका होती है।

*

आध्यात्मिक तरीके से किसी रोग को दूर करने के दो तरीके हैं। एक तरीका है चेतना और सत्य की शक्ति को शरीर के उस स्थान पर प्रयुक्त करना जो रोगाक्रांत हो। इस हालत में प्रभाव का उत्पन्न होना स्वभावतः व्यक्ति की ग्रहणशीलता पर निर्भर करता है...। दूसरे तरीके में, यदि शरीर में ग्रहणशीलता का एकदम अभाव हो, अथवा उसकी ग्रहणशीलता अपर्याप्त हो, तब यह देखा जाता है कि मनोवैज्ञानिक अवस्था के साथ वह आंतरिक मेल क्या है जिसने बीमारी पैदा की है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उसपर कार्य किया जाता है। परंतु बीमारी का कारण यदि कठिन हो तो विशेष कुछ नहीं किया जा सकता। ... परंतु कोई यदि एक साथ कारण और प्रभाव दोनों पर कार्य कर सके, और कारण इतनी पर्याप्त मात्रा में ग्रहणशील हो कि परिवर्तन के लिये सहमत हो जाये तो फिर मनुष्य पूर्ण रूप से, सदा के लिये नीरोग हो जाता है।

*

... यदि तुम स्वाभाविक तरीके से इस मुहूर्त में मानों किसी मंत्र के द्वारा आह्वान करने का, किसी शब्द को दुहराने का अभ्यास डाल लो तो उसका बड़ा असाधारण प्रभाव होता है। तुम अपना मंत्र चुनते हो; अथवा यों कहें कि, एक दिन वह अपने-आप किसी कठिन क्षण में तुम्हारे पास आ जाता है। ऐसे समय जब चीजें बहुत कठिन हो जाती हैं, जब तुम्हें एक प्रकार का मानसिक कष्ट, दुश्चिंता होती है, जब तुम यह नहीं जानते कि क्या होने जा रहा है, एकाएक यह तुम्हारे अंदर फूट पड़ता है, शब्द तुम्हारे अंदर प्रकट हो जाता है। प्रत्येक व्यक्ति के लिये यह अलग-अलग हो सकता है। परंतु तुम यदि इसे ध्यान में रखो और जब-जब तुम्हारे सम्मुख कोई कठिनाई उपस्थित हो तब-तब उसे दुहराओ तो यह अदम्य बन जाता है। उदाहरण के लिये, यदि तुम्हें अनुभव हो कि तुम बीमार होने जा रहे हो, यदि तुम अनुभव करो कि जो कुछ तुम कर रहे हो उसे बुरी तरह कर रहे हो, यदि तुम अनुभव करो कि कोई अशुभ वस्तु तुम पर आक्रमण करने जा रही है, तो...। परंतु यह चीज तुम्हारी सत्ता में सहज रूप से होनी चाहिये, इसे तुम्हारे अंदर से, इसके बारे में सोचने की आवश्यकता के बिना, फूटना चाहिये। तुम अपना मंत्र चुनते हो क्योंकि वह तुम्हारी अभीप्सा की एक स्वाभाविक अभिव्यक्ति होता है; यह एक शब्द, दो या तीन शब्द हो सकते हैं, एक वाक्य हो सकता है, यह प्रत्येक व्यक्ति पर निर्भर करता है, परंतु इसे एक ऐसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्वनि होना चाहिये जो तुम्हारे अंदर एक विशेष स्थिति को जाग्रत कर दे। फिर, जब वह तुम्हें प्राप्त हो जाये तब, मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूं कि तुम बिना कठिनाई के प्रत्येक अवस्था को पार कर सकते हो। यहांतक कि किसी सच्चे, यथार्थ खतरे के आने पर भी, जैसे किसी व्यक्ति के द्वारा आक्रमण होने पर जो तुम्हें मार डालना चाहता है, यदि, उत्तेजित हुए बिना, घबड़ाये बिना, चुपचाप अपने मंत्र का जप करो तो तुम्हारे विरुद्ध कोई कुछ नहीं कर सकता। स्वभावतः तुम्हें वास्तव में अपने ऊपर प्रभुत्व होना चाहिये; सत्ता का कोई भाग ऐसा नहीं होना चाहिये जो एक पत्ते की तरह कांपता हो; नहीं, तुम्हें इसे पूर्णतः सच्चाई के साथ करना होगा, फिर यह सर्वशक्तिसंपन्न होगा। सबसे उत्तम होता है जब शब्द अपने-आप तुम्हारे पास आता है। तुम महान् कठिनाई के एक क्षण में (मानसिक, प्राणिक, भौतिक, भावात्मक वह चाहे जो भी हो) पुकारते हो और अचानक वह तुम्हारे अंदर फूट पड़ता है, दो या तीन शब्द, जादुई शब्दों की तरह। तुम्हें इन शब्दों को याद रखना चाहिये और जिन मुहूर्तों में कठिनाइयां आती हैं उन्हें जपने का अभ्यास डालना चाहिये। यदि तुम यह अभ्यास डाल लो तो वह एक दिन अपने-आप तुम्हारे पास आयेगा : जब कठिनाई आयेगी तो उसके साथ-ही-साथ मंत्र भी आयेगा। तब तुम देखोगे कि परिणाम अद्‌भुत होते हैं।

*

अच्छी तरह सोने के लिये तुम्हें पीठ पर सीधे लेट जाना चाहिये और अपनी सभी मांसपेशियों और सभी स्नायुओं को ढीला छोड़ देना चाहिये – यह सीखना आसान है – एकदम ऐसा होना चाहिये जिसे मैं बिस्तर पर पड़े लत्ते जैसा होना कहती हूं; और कुछ भी नहीं रहता। और अगर तुम मन के साथ भी यही कर सको, तो तुम उन सभी मूर्खताभरे सपनों से पिंड छुड़ा सकते हो जो तुम्हें जागने पर, बिस्तर पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते समय की अपेक्षा ज्यादा थका देते हैं। मस्तिष्क की कोषीय गतिविधि ही बिना नियंत्रण के निरंतर चलती रहती है और यह तुम्हें बहुत थका देती है। अतः एक पूर्ण शिथिलता, एक तरह की पूर्ण निश्चलता जिसमें कोई तनाव न हो, जिसमें सब कुछ थम जाये, होनी चाहिये। लेकिन यह तो आरंभ मात्र है।

बाद में, तुम अधिकाधिक पूर्ण आत्मदान करो, सभी चीजों का, ऊपर से लेकर नीचे तक, बाहर से लेकर अंदर तक सबका। और अपने अहं के सारे प्रतिरोध का अधिकाधिक पूर्ण रूप से उन्मूलन करो। और बादमें तुम अपना मंत्र जपना शुरू करो – तुम्हारा अपना मंत्र, अगर तुम्हारे पास कोई हो तो, या कोई भी शब्द जिसमें तुम्हारे लिये शक्ति हो, ऐसा शब्द जो प्रार्थना की तरह, सहज रूप में हृदय से प्रकट हो, ऐसा शब्द जो तुम्हारी अभीप्सा को समाहित करे। उसे निश्चित बार दोहराने के बाद, अगर तुम अभ्यस्त हो तो समाधि में चले जाओ। और उस समाधि से होकर नींद में प्रवेश करो।

*

रोग चाहे किसी कारण से क्यों न हुआ हो, वह चाहे स्थूल भौतिक हो या मानसिक, बाह्य हो या आंतरिक, उसे भौतिक शरीर पर असर करने से पहले सत्ता के उस स्तर में से प्रवेश करना पड़ता है जो शरीर के चारों ओर लिपटा हुआ है और उसकी रक्षा करता है। इस सूक्ष्मतर स्तर के भिन्न-भिन्न धर्मों में भिन्न-भिन्न नाम हैं, – कोई उसे आकाश-शरीर कहता है तो कोई नाड़ी-कवच। यह है तो सूक्ष्म शरीर, फिर भी लगभग दृष्टिगम्य है। किसी अत्यंत उष्ण और उबलते हुए द्रव्य के चारों ओर जो घने कंपन दिखायी देते हैं यह उन्हीं के जैसा घना होता है। यह भौतिक शरीर में से ही पैदा होता है और उससे सटा हुआ रहकर उसे चारों ओर से ढंके रहता है। बाह्य जगत् के साथ समस्त व्यवहार इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के माध्यम द्वारा होता है और इस कवच-शरीर पर आक्रमण करके इसका भेदन करने पर ही कोई चीज स्थूल शरीर तक असर पहुंचा सकती है। यदि यह कवच पूर्ण रूप से सशक्त और अखण्ड हो तो तुम बुरे-से-बुरे रोगों से आक्रान्त स्थानों में भी, यहांतक कि प्लेग और हैज़ा के स्थानों में जाकर भी सर्वथा रोगमुक्त रह सकते हो। जबतक यह समग्र और पूर्ण रहता है, इसकी बनावट अखण्ड रहती है और इसके तत्त्व पूर्ण संतुलन में रहते हैं तबतक यह रोग के समस्त संभावित आक्रमणों से हमारी संपूर्ण रक्षा करता रहता है। एक ओर तो यह कवच-शरीर जड़-प्रकृति के आधार पर या यों कहें कि स्थूल-भौतिक द्रव्य के नहीं, बल्कि जड़ प्राकृतिक अवस्थाओं के आधार पर बना है, दूसरी ओर इसके निर्माण-तत्त्व हमारी मनोवैज्ञानिक अवस्थाओं के कंपन हैं। यह दूसरा पार्श्व शांति, समचित्तता और विश्वास, स्वस्थता में श्रद्धा, क्षोभरहित विश्रान्ति की अवस्था और प्रफुल्लता तथा तेजोमय हर्ष के तत्त्वों द्वारा बना होता है, और ये ही तत्त्व इस कवच-शरीर को शक्ति और द्रव्य प्रदान करते हैं। यह कवच-शरीर अत्यन्त संवेदनशील माध्यम है और इसमें प्रतिक्रियाएं सहज और तुरंत होती हैं; यह समस्त सुझावों को तुरंत अंगीकार कर लेता है और इनके कारण इसकी अवस्था में द्रुत परिवर्तन हो सकते हैं, इसका ढांचा तक बदल सकता है। इसपर किसी बुरे सुझाव का बहुत जोर का असर पड़ता है, उसी प्रकार यदि कोई अच्छा सुझाव हो तो वह उसी बल के साथ इसपर अच्छाई की दिशा में काम करता है। उदासी और निरुत्साह का इस पर बहुत बुरा असर होता है; वे मानों इसमें जगह-जगह छेद कर देते हैं, इसे दुर्बल और शक्तिविहीन बना देते हैं, फलतः विरोधी आक्रमणों के लिये एक सहज मार्ग खुल जाता है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणिक शरीर एक प्रकार के आच्छादन के रूप में भौतिक शरीर को घेरे रखता है और उसकी घनता लगभग उतनी होती है जितनी कि गर्मी के स्पंदनों की, जो उस समय दिखायी देते हैं जब दिन बहुत गर्म होता है। और यही वह चीज है जो सूक्ष्म शरीर और अत्यंत स्थूल प्राण-शरीर के बीच, मध्यस्थ है। यही चीज सब प्रकार की छूत, थकावट, अशक्तता और यहांतक कि दुर्घटनाओं से शरीर की रक्षा करती है। अतएव, यदि यह आवरण पूरी तरह अक्षत रहे तो यह प्रत्येक वस्तु से तुम्हारी रक्षा करता है, परंतु कोई थोड़ा-सा अतिप्रबल भावावेग, मामूली थकावट, कोई असंतुष्टि अथवा किसी प्रकार का कोई मानसिक आघात उसको मानों खरोंच देने के लिये पर्याप्त होता है और बिलकुल थोड़ी-सी खरोंच किसी भी प्रकार की चीज के लिये तुम्हारे अंदर प्रवेश करने का द्वार बन जाती है। चिकित्सा-विज्ञान भी अब यह स्वीकार करता है कि यदि तुम पूर्ण प्राणिक संतुलन की स्थिति में रहो तो तुम्हें कोई बीमारी नहीं लगती या हर हालत में तुम छूत की बीमारी से एक प्रकार से सुरक्षित रहते हो। यदि तुम्हारे अंदर यह संतुलन हो, यह आंतरिक सामंजस्य हो जो आवरण को अक्षुण्ण बनाये रखता है तो यह हर चीज से तुम्हारी रक्षा करता है। ऐसे लोग होते हैं जो बिलकुल साधारण जीवन यापन करते हैं, जो यह जानते हैं कि कैसे सोना चाहिये, कैसे खाना चाहिये और उनका स्नायविक आवरण इतना अभेद्य होता है कि वे सभी खतरों में से मानों आंखें मूंदकर बाहर निकल आते हैं। यह एक ऐसी क्षमता है जिसे मनुष्य अपने अंदर उत्पन्न कर सकता है। यदि कोई अपने आवरण के दुर्बल स्थल के विषय में सचेतन हो जाये तो कुछ मिनटों की एकाग्रता, शक्ति का आवाहन, आंतरिक शांति उस स्थल को ठीक कर देने, स्वस्थ बना देने तथा अनिष्टकारी चीज के विलीन होने के लिये पर्याप्त हैं।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

श्रीअरविन्द सोसायटी का वार्षिक सम्मेलन पाण्डिचेरी में १२, १३ तथा १४ अगस्त २००३ को होगा।

धार (मध्य-प्रदेश) में श्रीअरविन्द के पवित्र देहावशेष ११ अप्रैल २००३ को वहां के नवनिर्मित भवन में पधराये गये।

चण्डीगढ़ में श्रीमां की १२५वीं वर्ष-जयन्ती पर विशेष कार्यक्रम हुआ। पंजाब के गवर्नर जनरल जे. एफ. आर. जैकब ने इसमें भाग लिया। उन्होंने वहां सोसायटी की एक नयी इमारत की नींव में पाण्डिचेरी-आश्रम की समाधि की कुछ बालू डाली। इस विशेष अवसर पर जनरल जैकब ने श्रीमां के साथ अपने व्यक्तिगत अनुभव सुनाये। श्री प्रदीप नारंग भी इस अवसर पर बोले। मुख्य विषय था – श्रीमां की १२५वीं वर्ष-जयन्ती का महत्त्व तथा श्रीअरविन्द के योग की अद्वितीयता।

सूरत (गुजरात) शाखा ने ४, ५ तथा ६ अप्रैल २००३ को युवा परिषद् नामक युवकों का तीन दिन का शिविर लगाया जिसमें विभिन्न केन्द्रों तथा शाखाओं के युवाओं ने हिस्सा लिया। इसमें भाषणकर्ता थे – श्री अनिरुद्ध स्मार्त, श्री दिलावरसिंह जाडेजा, श्री हंसकुमार मांकड, श्री प्रदीप नारंग तथा श्री कैवल्य स्मार्त।

उज्जैन (मध्य-प्रदेश) शाखा में ९ अप्रैल को एक दिन के लिये श्रीअरविन्द के देहावशेष दर्शनार्थ रखे गये। वैसे ये धार ले जाये जा रहे थे।

२४ अप्रैल को उज्जैन में डॉ. श्याम सुन्दर निगम ने भाषण दिया। विषय था – चैत्य का जागरण और साधना में उसका अर्थ।

तिरुपति (आन्ध्र-प्रदेश) शाखा ने श्रीअरविन्द विद्यालय का ५वां वार्षिक दिवस २९ मार्च २००३ को मनाया जिसमें श्रीगोपाल भट्टाचार्य मुख्य अतिथि थे। अगले दिन ३० अप्रैल को श्री भट्टाचार्य ने 'सर्वांगीण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योग का अभ्यास कैसे किया जाये' विषयक भाषण दिया।

मुम्बई (महाराष्ट्र) की पेडर रोड शाखा में श्री प्रदीप नारंग ने १० अप्रैल २००३ को भाषण दिया। विषय था, 'श्रीअरविन्द के योग में अभिव्यक्ति का महत्त्व।'

चेन्नई में (ओल्ड वाशरमैनपैट में) १४ मार्च को एक अध्ययन-केन्द्र खुला। १६ मार्च को कडलोर में एक केन्द्र का उद्घाटन हुआ। चेंगलपेट्टु केन्द्र ने २० अप्रैल को अपनी पांचवी जयन्ती मनायी जिसमें करीब २५० भक्तों ने भाग लिया। इसमें भाषण हुए श्रीमती मालिनी नारायणन तथा श्री प्रदीप नारंग के। इस अवसर पर एक स्मारिका भी निकाली गयी।

*

एक लघु कथा

एक जमाना हुआ, कठिनाइयों से घिरे एक राजा ने तंग आकर आखिर एक दिन अपने सुधी सभासदों को बुलाकर कहा – बन्धुओ, आप मुझे एक ऐसा आदर्श वाक्य सुझाइये, कुछ ऐसे जादुई शब्द दीजिये जो मुझे अपने दुःख-दर्द में, उदास क्षणों में सांत्वना दें, मदद पहुंचायें। ये शब्द मेरी अंगूठी में उंकेर दिये जायें ताकि रात-दिन मेरी आंखों के सामने रहें। राजा ने एक बार फिर जोर देकर कहा – मित्रो, ये शब्द सभी परिस्थितियों में – समृद्धि में, निर्धनता में, – मुझे दिलासा दें। ऐसा आदर्श-वाक्य हो जो बुद्धिमत्तापूर्ण, सच्चा और शाश्वत हो, जिसके प्रकाश तले मनुष्य जीवन की हर परिस्थिति में आगे ही आगे बढ़ता जाये।

सुधीजनों ने सोचा, बहुत सोचा और अंत में वे अपने जादुई शब्दों के साथ राजा के सामने उपस्थित हुए। उनमें से एक ने घोषणा की – राजन्, ये कुछ शब्द हर परिवर्तन, जीवन के हर एक उतार-चढ़ाव में सटीक बैठते हैं, हृदय और मन को राहत पहुंचाते हैं। और महाराजा की अंगूठी में खुदवाने के लिये वे शब्द थे – **यह अवस्था भी चली जायेगी...।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments
From:

ENBEE ENTERPRISES

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, Room No. 69, 3rd Floor
CALCUTTA - 700 007

Ph. 232-2940/2944
Cable - AUROENBEE

House of
Solvents & Coaltar By-products

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH BEST
COMPLIMENTS
FROM

Spintex Private Limited

301, Harsha House, Karampura
New Delhi - 110015

Phone : 530537
Telex : 31-76124 STEXIN Gram . SPINTEX

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Entered in Database

Signature with Date
10/5/08

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri